अर्वाचीन यूरोप

अर्वाचीन यूरोप

प्रथम खण्ड : फ्रांस की राज्यक्रान्ति तथा नैपोलियन
(१७८९–१८१५)

द्वितीय खण्ड: लोकतन्त्र तथा राष्ट्रीयता का विकास
(१८१५–१८७०)

तृतीय खण्ड : साम्राज्यवाद तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठन
(१८७०–१९५०)

यूरोप

(प्रथम खण्ड)

फ्रांस की राज्यक्रान्ति तथा नैपोलियन

(१७८९—१८१५)

लेखक

बी० एन० शर्मा एम० ए०, एल-एल० बी०
एसोशियेट प्रोफेसर, इतिहास एवं राजनीति-विज्ञान विभाग
आगरा कालेज, आगरा

तथा

आर० के० माथुर एम० ए०,
'विश्व-इतिहास (इण्टर)', 'विश्व-इतिहास (हाई स्कूल)', 'इंग्लैंड का इतिहास', 'भारतवर्ष का सांस्कृतिक इतिहास'
आदि के रचयिता

प्रस्तावना-लेखक

डा० ए० एल० श्रीवास्तव
एम० ए०, पी० एच० डी०, डी० लिट्० (लखनऊ),
डी० लिट्० (आगरा),
(एशियेटिक सोसाइटी के 'सर यदुनाथ सरकार' स्वर्ण-पदक विजेता)
अध्यक्ष, इतिहास एवं राजनीति-विज्ञान विभाग
आगरा कालेज, आगरा

प्रकाशक

गोपाल प्रिंटिंग प्रेस

परेड—कानपुर

प्रथम संस्करण]   १९५४   [मूल्य [illegible] रुपये

प्रकाशक :

गोपाल प्रिंटिंग प्रेस,

परेड — कानपुर

मुद्रक :

शुभ कामना प्रेस,

७/२६, तिलक नगर, कानपुर।

FOREWORD

I have been asked to introduce this book to the reading public and I do so with great pleasure. It gives a connected and detailed history of France from the Great Revolution of 1789 down to the fall of Napoleon Bonaparte and is the first of the proposed series of three volumes on Europeon History from 1789 to the present day. The merit of this lucid work is that it is written in plain good Hindi and the personalities, events and movements are explained in detail and in a manner easily intelligible to the average under-graduate student in our colleges. I believe the book will prove useful to the general reader as well as to the B. A. students in this and other universities.

Agra College, Agra.
June 21, 1954.

A. L. Srivastava

प्राक्कथन

यूरोप के इतिहास पर अँगरेज़ी तथा अन्य यूरोपीय भाषाओं में अगणित प्रामाणिक तथा रोचक ग्रन्थ उपलब्ध हैं, किन्तु हिन्दी में अभी तक उनका बहुत अभाव है। पिछले कुछ वर्षों में जब से विश्वविद्यालयों में हमारी भाषा को शिक्षा और परीक्षा का माध्यम स्वीकार कर लिया गया है, कुछ विद्वानों ने इस दिशा में कदम उठाया है और ऐतिहासिक साहित्य के इस उपेक्षित अंग को परिवर्धित करने का प्रयत्न किया है। किन्तु विषय इतना विशद और गम्भीर है कि उस पर विभिन्न दृष्टिकोणों से कितनी ही पुस्तकें लिखी जा सकती हैं। इसी चीज़ को ध्यान में रख कर हमने भी इस विषय के द्वारा अपनी राष्ट्रभाषा की कुछ सेवा करने का संकल्प किया। यह पुस्तक उसी संकल्प का परिणाम है।

विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों को ध्यान में रख कर हमने फ्रांस की राज्य-क्रान्ति से यूरोपीय इतिहास के कथानक को आरम्भ किया और १९५० तक उसको जारी रक्खा है। पूर्वोक्त क्रान्ति यूरोप के ही नहीं, अपितु आधुनिक विश्व के इतिहास की एक महानतम घटना मानी जाती है, इसलिये वहीं से इतिहास के सूत्र को उठाना उचित ही जान पड़ता है। पुस्तक के तीन भाग हैं। पहले में फ्रांस की राज्यक्रांति तथा नेपोलियन का, दूसरे में सन् १८१५–१८७०, और तीसरे में सन् १८७०—१९५० के युग का इतिहास वर्णित है।

इस बात को इतिहास के साधारण विद्यार्थी भी जानते हैं कि वर्तमान मानव सभ्यता एवं तत्सम्बन्धी अगणित समस्याओं को समझने और सुलझाने के लिये आधुनिक यूरोप के इतिहास का अध्ययन अपरिहार्य है। आधुनिक यूरोप में विभिन्न राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक, साहित्यिक और कलात्मक आन्दोलनों ने जन्म लिया और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्पूर्ण संसार को प्रभावित किया। लोकतन्त्र, समाजवाद, साम्यवाद और फासीवाद, व्यक्तिवाद और निष्कासवाद, उद्योगवाद और साम्राज्यवाद, [illegible] तथा अन्तर्राष्ट्रवाद सभी आधुनिक यूरोप की उपज हैं। यूरोप के ही स्वर्ण-लोलुप किन्तु निर्भीक और दुर्दम सौदागरों और उद्योगपतियों ने विश्व की चप्पा-चप्पा भूमि को छान डाला और किसी न किसी रूप

में उसे प्रभावित किया। संसार का शायद ही कोई देश हो जो यूरोप के प्रभाव से अछूता बच सका हो। हमने उपर्युक्त सभी विचारधाराओं और आन्दोलनों और संस्थाओं का संक्षेप में किन्तु सही मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया है। उसमें हमें कहां तक सफलता मिली है, इसका निर्णय स्वयं पाठक करेंगे।

विषय को सरल और सुबोध बनाने का हमने विशेष प्रयत्न किया है। कथानक में उकताने वाले तथ्यों और आंकड़ों की भरमार नहीं है, केवल आवश्यक तथ्य ही समाविष्ट किये गये हैं। भाषा भी यथासम्भव सरल है। मानचित्रों की उपेक्षा नहीं की गई है, और पुस्तक के अन्त में दिये सारांश आदि विद्यार्थियों के लिये विशेष उपयोगी सिद्ध होंगे।

ग्रन्थ को लिखते समय हमें यूरोपीय नामों के उच्चारण के सम्बन्ध में विशेष कठिनाई का अनुभव हुआ। अँगरेज़ी में तो उच्चारण की सदैव अव्यवस्था रहती है और सभी कुछ चल जाता है किन्तु हिन्दी में इस कमज़ोरी को छिपाना असम्भव है। इस विषय में हमने 'दि सेंचुरी साइक्लोपीडिया ऑव नेम्स' नामक ग्रन्थ का सहारा लिया है; इसका संपादन श्री बेंजामिन ई० स्मिथ ए० एम०, एल० एच० डी०, ने और प्रकाशन दि टाइम्स, लन्दन ने किया है।

ग्रन्थ के इस भाग के सम्बन्ध में अलग दो शब्द लिखना अनुपयुक्त न होगा। फ्रांस की राज्यक्रान्ति तथा उसकी उपज नेपोलियन—इन दोनों का इतिहास में विशेष महत्व है। इसलिये इन विषयों पर हमने कुछ विस्तार से लिखा है, और पृष्ठों की किफ़ायत का विशेष ध्यान नहीं रक्खा। फलतः यह भाग कुछ मोटा हो गया है; किन्तु विषय के महत्व को ध्यान में रखते हुये उसे अनुचित नहीं कहा जा सकता। नेपोलियन तथा उसके कार्यों का ऐतिहासिक महत्व अभी तक विवाद का विषय बना हुआ है। हमने यथा सामर्थ्य निष्पक्ष भाव से उसका मूल्यांकन किया है और सम्भवतः अधिकतर पाठक उससे सहमत होंगे। अन्त में हमने फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति की विरासत को स्पष्ट शब्दों में समझाने का प्रयत्न किया है और पूरी कहानी रोचक ढंग से लिखी गई है।

यदि इस पुस्तक से जिज्ञासु विद्यार्थियों की आवश्यकता की पूर्ति हो सकी तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे।

बी० एन० वर्मा
आर० के० माथुर

विषय-सूची

मानचित्र

'प्रथम कौंसल' के पद पर नैपोलियन बोनापार्ट

प्रथम अध्याय

विषय प्रवेश

साधारणत: इतिहास की उपमा एक सरिता से दी जाती है। जिस प्रकार एक सरिता का प्रवाह निरन्तर गतिमान रहता है, उसी प्रकार ऐतिहासिक प्रवाह भी कभी समाप्त नहीं होता। निस्सन्देह कुछ सरितायें ऐसी भी होती हैं जो केवल वर्षा-काल में अपनी शक्ति प्रदर्शित करती हैं और इसके बाद वे जलविहीन हो जाती हैं। ऐसी सरिताओं का उल्लेख न करना ही अच्छा है; इन्हें हम एक प्रकार से सरिताओं की श्रेणी से पृथक कर सकते हैं। अस्तु ऐतिहासिक प्रवाह एक ऐसा प्रवाह अथवा धारा है जो कभी विलुप्त नहीं होती तथा जिसका महत्व नित्य प्रति बढ़ता जाता है। इस प्रसंग में हम इंग्लैंड के विख्यात कवि टेनिसन की उन दो पंक्तियों को विस्मरण नहीं कर सकते जिनमें उसने सरिता की ओर से यह विचार प्रकट किया था कि मानव जाति की सैकड़ों पीढ़ियां आयेंगी और चली जायेंगी किन्तु उसकी अविराम गति से चलने वाली धारा में कोई अन्तर नहीं होगा। इसी प्रकार हम इतिहास के विषय में भी कह सकते हैं कि यद्यपि पृथ्वी पर सभी प्रकार की उथल पुथल होगी अर्थात् राष्ट्रों का उत्थान तथा पतन होगा, शासक आयेंगे और चले जायेंगे, भिन्न आन्दोलनों का ज़ोर बढ़ेगा और फिर घट जायेगा किन्तु ऐतिहासिक सरिता के अविरल प्रवाह में किसी प्रकार का अन्तर न पड़ेगा।

ऐतिहासिक निरन्तरता

उपरोक्त पंक्तियों में ऐतिहासिक निरन्तरता को बहुत महत्व दिया गया है। किन्तु सुविधा के विचार से हम उसे तीन युगों में विभक्त करते हैं,—प्राचीन युग, मध्ययुग तथा अर्वाचीन युग। इन युगों को बहुधा हम महत्वपूर्ण तिथियों के द्वारा उसी प्रकार एक दूसरे से पृथक कर देते हैं जिस प्रकार दीवारों के द्वारा किसी मकान के कमरे एक दूसरे से पृथक कर दिये जाते हैं। किन्तु यह बात प्राकृतिक

नियम के विरुद्ध है। दूसरा मनोरंजक विषय यह है कि उपरोक्त युगों को भी विभिन्न भागों में विभक्त कर दिया जाता है, जिसके कारण उन विद्यार्थियों के मस्तिष्क पर, जिन्होंने इतिहास का अध्ययन हाल ही में प्रारम्भ किया है, बड़ा भ्रमपूर्ण प्रभाव पड़ता है। सभी विद्वानों ने ऐतिहासिक निरन्तरता पर ज़ोर दिया है, और बतलाया है कि प्राकृतिक रूप से उसके मार्ग में किसी प्रकार का अवरोध नहीं होता। इसके प्रतिकूल एक युग दूसरे युग के लिये पूर्वाधार बन जाता है अर्थात् एक युग दूसरे के लिये पृष्ठभूमि तैयार करता है। युग परिवर्तन इतने धीरे-धीरे तथा स्वाभाविक रूप से होता है कि जो लोग उस समय मौजूद होते हैं उनको इस परिवर्तन का आभास भी नहीं होता। हाँ, बहुत सी घटनायें अवश्य ऐसी होती हैं जिनका महत्व अधिक होता है और जिनके द्वारा युग परिवर्तन में विशेष रूप से सहायता मिलती है। लेकिन इनका प्रभाव एक साथ प्रकट नहीं होता; उनके द्वारा धीरे-धीरे तत्कालीन दशा में परिवर्तन होता है और बहुत बाद को इसका पता चलता है कि युग बदल गया है। उदाहरण के रूप में हम एक प्रसिद्ध घटना को भारतवर्ष के इतिहास से ले सकते हैं। सन् १९२१ में महात्मा गान्धी ने असहयोग आन्दोलन किया था। इस आन्दोलन से भारतवर्ष के इतिहास में एक नये युग का उदय हुआ जिसका महत्व बाद को प्रकट हुआ। यूरोप के इतिहास में भी इस वर्ग के प्रकट उदाहरण विद्यमान हैं, जैसे जर्मन जातियों के रोमन साम्राज्य पर भयंकर आक्रमण जो प्रबल रूप में ईसा की चौथी शताब्दी में प्रारम्भ हुये थे। इनके कारण यूरोप के इतिहास में ऐसी कायापलट तबदीली हुई कि अतीत युग ने विदा ली तथा मध्यकालीन युग ने उसके स्थान पर पदार्पण किया।

ऐतिहासिक विभाग आवश्यक तथा सुविधाजनक होते हैं

ऐतिहासिक विभागों के बिना हमारा काम चलना कठिन है। इस संबंध में यदि हम इतिहास की उपमा किसी विशाल सागर से दें तो कुछ अत्युक्ति न होगी। उसको तथा उसके महत्व को ठीक प्रकार से समझने के लिये यह आवश्यक है कि हम उसे कुछ उचित भागों में विभाजित करें। ऐसा करना इसलिये और भी वांछनीय है कि भिन्न युगों में भिन्न विषयों का महत्व अधिक होता है तथा एक युग की विशेषतायें दूसरे युग से भिन्न होती हैं। किन्तु इस विषय में दो बातों को विस्मरण न करना चाहिये। एक तो यह कि ऐतिहासिक युगों को विशेष तिथियों से सम्बद्ध न करना चाहिये। दूसरे, किसी खास युग का वर्णन करते समय उसकी सबसे बड़ी विशेषता अथवा उसकी किसी गम्भीर घटना को इतना अधिक महत्व न देना चाहिये कि अन्य विशेषतायें एवं घटनायें दृष्टि से ओझल हो जायें। कोई भी एक

विशेषता अथवा एक घटना किसी युग विशेष के इतिहास का पूर्ण रूप नहीं बन सकती है। शताब्दियों तक यूरोप का इतिहास पेचीदा एवं कठिनाइयों से युक्त रहा था। अतएव हम इसका वर्णन सुन्दरता के साथ एक दृष्टिकोण को रखकर नहीं कर सकते।

यूरोपीय इतिहास के युग तीन बड़े भाग

दूसरे देशों की भांति यूरोप के इतिहास को भी हम तीन उचित भागों में विभक्त कर सकते हैं,---प्राचीन युग, मध्ययुग तथा अर्वाचीन युग। कुछ विशेष घटनायें और आन्दोलन ऐसे हैं जो इन्हें एक दूसरे से पृथक करते हैं। अगले पृष्ठों में हम इन पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

(१) प्राचीन युग—यूनानी सभ्यता व संस्कृति

यूरोप का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। असीरिया, मिस्र, भारतवर्ष, चीन और फ़ारस आदि में सबसे प्रथम सभ्यता का उदय हुआ था। इस से बहुत बाद को यूनान और रोम में उसकी किरणें प्रस्फुटित हुई थीं। अन्य देशों में तो उसका विकास इसके कई शताब्दियों पश्चात् हुआ था। भूमध्य सागर के पूर्वीय भाग में एक साधारण कोटि का द्वीप है जिसे हम क्रीट के नाम से पुकारते हैं। २४०० पू० ई० से १२०० पू० ई० तक उसकी सभ्यता उन्नति की चरम सीमा पर थी। क्रीट के निवासी बड़े कुशल कारीगर थे एवं मिट्टी और धातु के चित्ताकर्षक पात्र बनाते थे। वे कुशल एवं साहसी नाविक भी थे। उन्होंने साइप्रस, यूनान और शायद सिसली में उपनिवेश स्थापित किये थे।

क्रीट द्वीप से सभ्यता का प्रवाह यूनान में पहुँचा। विद्वानों ने इसका ठीक समय १६०० एवं १२०० ई० पू० के बीच निर्धारित किया है। अस्तु यूरोप के प्रदेशों में यूनान सबसे प्राचीन तथा सभ्यता व संस्कृति से सम्पन्न देश माना जाता है। सर्वप्रथम वहां नगर-राज्यों (City States) का आविर्भाव हुआ था। इसके पश्चात् वहां सिकन्दर आदि सम्राटों का शासन प्रारम्भ हुआ। प्रत्येक नगर राज्य में एक मुख्य नगर एवं उसके आसपास का प्रदेश सम्मिलित रहता था। उसका शासन पूर्ण रूप से प्रजातंत्रीय आधार पर होता था। नगर-राज्यों में सबसे प्रतिष्ठित स्पार्टा एवं एथेन्स थे। प्रथम ने प्रशंसनीय सैनिक चमत्कार उत्पन्न किया तथा द्वितीय ने विद्या व कला में सबसे अधिक उन्नति की। यूनान निवासी धार्मिक जीवन व्यतीत करते थे और खेलकूद तथा व्यायाम के विशेष रूप से प्रेमी थे। वे नक्क़ाशी, निर्माणकला तथा भास्कर शिल्प के लिये भी विख्यात थे। साहित्य तथा दर्शन में उन्होंने इतनी अधिक उन्नति की थी कि

यूरोप के अन्य देशों पर उनका प्रकट प्रभाव पड़ा। सुकरात, प्लेटो और अरस्तू यूनान के सबसे विख्यात दार्शनिक थे। उनके नामों को हम विस्मरण नहीं कर सकते।

यूरोप का दूसरा प्राचीन एवं सभ्यतापूर्ण देश रोम है। प्रारम्भ में यह भी एक नगर-राज्य था परन्तु बाद को वहां बहुधा किसी न किसी सम्राट का शासन स्थापित रहा। ऑगस्टस (२६ ई० पू०–१४ ई०) के शासन-काल के कुछ समय पश्चात् रोमन साम्राज्य में इंग्लैंड, फ्रांस, स्पेन, इटैली, बालकन प्रायद्वीप, एशियाई कोन्चक, सिरिया, तथा अफ्रीका का उत्तरी तट आदि सम्मिलित थे। सन् ३०६ ई० से उस पर असभ्य जर्मन जातियों के आक्रमण प्रारम्भ हुये तथा सन् ४७६ ई० में जिन्होंने सम्राट को सिंहासन से वंचित करके रोमन साम्राज्य के पश्चिमी भाग पर अधिकार कर लिया। परन्तु उसका पूर्वी भाग दीर्घकाल तक किसी न किसी सीमा तक अपने अस्तित्व को बनाये रखने में सफल हुआ। रोम निवासियों का प्रमुख उद्यम कृषि था। उनके यंत्र तो अवश्य प्राचीन ढंग के थे किन्तु वे फ़सल बदलते रहने के रहस्य से परिचित थे। वे बनावटी खादों का प्रयोग भी जानते थे। कृषि की तुलना में व्यापार व कला की दशा अधिक उत्तम थी। इटैली के व्यापारी उत्तम प्रकार के मिट्टी के पात्र, मदिरा, ज़ैतून का तेल एवं खनिज पदार्थ अन्य देशों को भेजते थे और अनाज, बहुमूल्य पत्थर, कपड़ा, शीशे का सामान, मसाले, सुगन्धि तथा मुक्ता आदि वहां से मंगाते थे। उद्योग धन्धों का बहुत सा कार्य दासों की सहायता से होता था। उस काल में सिक्कों की प्रथा बहुत कम थी। किसी प्रकार के बैंक आदि भी न थे। यूनानियों की भांति रोमन जाति के लोग भी भवन निर्माणकला, भास्कर शिल्प तथा नक्काशी में यथेष्ट उन्नतिशील थे लेकिन उनके भवन तथा मूर्तियां, यूनानी भवन तथा मूर्तियों की तुलना में कम चित्ताकर्षक थीं। वे सड़कें, पुल, स्नानागार, महल एवं नाटकगृह निर्माण करने के लिये भी विख्यात थे। उन्होंने इतिहास, ज्योतिष, नाटक एवं दर्शन की उत्कृष्ट पुस्तकें लिखीं और वर्ष को ३६५ दिनों में विभाजित करके एक तिथिपत्र का निर्माण भी किया। वे क्रीड़ा तथा व्यायाम सम्बन्धी प्रदर्शनों के भी प्रेमी थे। स्त्री, पुरुष, वृद्ध तथा युवक सभी उनमें दिलचस्पी लेते थे।

रोम की सभ्यता तथा संस्कृति

यूरोपीय इतिहास के मध्ययुग का प्रारम्भ चौथी शताब्दी ई० में माना गया है। इस शताब्दी में प्रारम्भ में जर्मन जातियों के आक्रमणों का सबसे अधिक ज़ोर रहा था तथा उनके कारण रोमन साम्राज्य को भीषण हानि उठानी पड़ी थी। लगभग ३५० ई० से हम इस युग का प्रारम्भ निश्चित कर सकते हैं। इसकी समाप्ति के विषय में मत स्थिर

(२) मध्ययुग

करना दुष्कर है। सन् १४५० ई० और सन् १५०० ई० के बीच कुछ ऐसे आन्दोलन तथा परिवर्तन हुये जिनका पश्चिमी यूरोप पर प्रकट प्रभाव पड़ा तथा जिनसे युग परिवर्तन में अत्यधिक सहायता मिली। उदाहरणार्थ धार्मिक क्रांति, निरंकुश सत्ताओं का स्थापित होना, नवीन आविष्कार एवं नवीन व्यापारिक मार्गों और देशों की खोज इत्यादि। इन बातों के आधार पर हम कह सकते हैं कि मध्यकालीन युग लगभग ३५० ई० से सन् १५०० ई० तक चलता रहा था।

जर्मन जातियां

जर्मन जातियों ने रोमन साम्राज्य के पश्चिमी अर्धभाग पर अधिकार करके अनेक स्वतन्त्र शासन सत्तायें स्थापित कीं। इटैली, फ्रांस, स्पेन, इंग्लैंड, पश्चिमी जर्मनी, सैक्सनी एवं डेन्मार्क आदि सभी देशों में उनका शासन स्थापित हो गया। यह एक अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि रोमन सम्राट एवं उनके योद्धा, जो उत्तम प्रकार के शस्त्रों से सुसज्जित थे और सुदृढ़ पंक्ति बनाकर उत्तम ढंग से युद्ध करते थे, उनका सामना सफलता के साथ न कर सके। जर्मन जातियां युद्ध प्रिय तथा सभ्यता से बिल्कुल वंचित थीं। उनके आगमन से रोमन सभ्यता तथा समाज को भयंकर क्षति सहन करनी पड़ी। यूरोप के इतिहास में एक अंधयुग प्रारम्भ हुआ जो छठी शताब्दी ई० से ८वीं शताब्दी ई० तक स्थापित रहा। इस अंधयुग में भी जर्मन जाति के कई प्रसिद्ध सम्राट हुये, जिन्होंने सभ्यता एवं संस्कृति की उन्नति में कोई बात शेष न रक्खी, जैसे फ्रांस का सम्राट चार्लमैन अथवा चार्ल्ज़ महान् जिसने सन् ७६८ ई० से सन् ८१४ ई० तक राज्य किया। दूसरा प्रमुख उदाहरण इंग्लैंड के सम्राट एल्फ्रेड महान् का है जिसने सन् ८७१ ई० से सन् ९०१ ई० तक शासन किया था। एक अन्य ज्योति ईसाई धर्म एवं उसके भक्त पादरियों के रूप में प्रकट हुई। इन सब के प्रयत्नों से जर्मन जातियों ने असभ्यता के जगत से बाहर आकर सभ्यता के जगत में प्रवेश किया और विद्या व कला के सीखने का प्रयत्न किया। अतः उनके सामाजिक जीवन में प्रकट अन्तर हो गया। अंधयुग के व्यतीत होने के पश्चात् जर्मनों में राष्ट्रीय जागृति हुई। अतएव वे इस बात का प्रयत्न करने लगे कि कोई भी विदेशी शक्ति उनके काम में हस्तक्षेप न करे। अन्ततः विदेशी प्रभाव से उनकी शासन सत्तायें पूर्ण रूप से स्वाधीन होगईं। इस प्रकार इंग्लैंड, फ्रांस तथा डेनमार्क आदि में राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना हुई। जर्मन जातियों की भाषायें भी ज़ोरदार होगईं तथा वे इस योग्य बन गईं कि साहित्य की स्थापना के लिये प्रयोग की जायें।

होली रोमन सम्राट एवं पोप यह दो ऐसी महान् शक्तियां थीं जिनके प्रभाव में यूरोप के अधिकतर देश थे। मध्यकालीन युग के इतिहास में इनका नाम अक्सर सुनाई पड़ता था। होली रोमन साम्राज्य की स्थापना के कुछ समय बाद तक

दोनों में मित्रता स्थापित रही। इसके पश्चात् तीन शताब्दियों तक उनमें विद्वेष स्थापित रहा। होली रोमन साम्राज्य को स्थापित करने का श्रेय फ्रांस के सम्राट चार्लमेन (Charlemagne) अथवा चार्ल्स महान्

होली रोमन सम्राट

(Charles the Great) को प्राप्त था। उसने प्राचीन रोमन साम्राज्य का जीर्णोद्धार करने तथा रोमन सम्राट के सम्मानित पद को प्राप्त करने के विचार से उसकी स्थापना ८०० ई० में की थी। इसके पश्चात् सन् ९६२ ई० में जर्मनी के सम्राट ओटो प्रथम (Otto I) ने उसकी पुनः स्थापना की। ईसाई धर्म के सर्वोच्च पदाधिकारी पोप ने रोम में दोनों को मुकुट पहनाया था। होली रोमन सम्राट ने इस बात का प्रयत्न किया कि उसके साम्राज्य में समस्त ईसाई देश सम्मिलित हो जायें। वह प्राचीन रोमन सम्राट का उत्तराधिकारी होने का दावा करता था। अतएव वह होली रोमन सम्राट (Holy Roman Emperor) और उसका साम्राज्य होली रोमन साम्राज्य (Holy Roman Empire) के नाम से प्रसिद्ध हुये। जिस समय उक्त साम्राज्य अपनी उन्नति की चरम सीमा पर था, उस समय उसमें जर्मनी, नैदरलैंड्ज़, बोहीमिया (ज़ेकोस्लोवेकिया), आस्ट्रिया, स्विटज़रलैंड, बर्गण्डी तथा इटेली का अधिकतर भाग सम्मिलित था। फ्रांस, इंग्लैंड, स्पेन, नार्वे, स्वीडन तथा हंग्री उसमें कभी भी सम्मिलित नहीं हुये।

उन्नीसवीं शताब्दी तक जर्मनी कई स्वाधीन राज्यों में विभक्त रहा। इनके शासनाधिकारी होली रोमन सम्राट का निर्वाचन करते थे। निर्वाचन करने वालों की संख्या घटती बढ़ती रहती थी। किन्तु १३५६ ई० में वह सदा के लिए सात नियत कर दी गई। निर्वाचन के पश्चात् सम्राट 'जर्मन सम्राट' अथवा 'रोमनों का सम्राट' कहलाता था। जब उसका राज्याभिषेक पोप के हाथ से हो जाता था तो वह 'रोमन सम्राट' अथवा 'होली रोमन सम्राट' कहलाता था। सम्राट यह प्रयत्न करता था कि उसके पश्चात् उसका पुत्र इस उच्च पद पर सुशोभित हो। अतएव दीर्घकाल तक पिता के पश्चात् पुत्र को होली रोमन सम्राट के पद पर निर्वाचित होने का श्रेय प्राप्त हुआ।

कहने को होली रोमन सम्राट के अधिकार बहुत विस्तृत थे। कहने को वह कौन्स्टैनटाइन (Constantine) एवं थियोडोसियस (Theodosius) जैसे शक्तिशाली रोमन सम्राटों का उत्तराधिकारी था किन्तु वास्तविक रूप में उसके अधिकार कभी फ्यूडल लार्डज़ अथवा जागीरदारों (Feudal Lords) से अधिक नहीं रहे। अथवा यों कहिये कि उसको वही अधिकार प्राप्त होते थे जो उसके अधीन शासक स्वतन्त्रतापूर्वक उसको प्रदान करते थे अथवा जो उसे व्यक्तिगत जागीर से उप-

लब्ध होते थे, और यह एक साधारण बात है कि अधीन शासक कभी भी इस बात को सहन न कर सकते थे कि वह उन पर पूर्ण रूप से प्रभुत्व प्राप्त करे।

बहुधा स्पेन तथा आस्ट्रिया के शासन सत्ताधारियों को होली रोमन सम्राट के पद पर सुशोभित होने का गौरव प्राप्त हुआ। सन् १८०६ ई० में नैपोलियन बोनापार्ट ने होली रोमन साम्राज्य का अन्त कर दिया। इसके साथ साथ होली रोमन सम्राट के पद को भी समाप्त कर दिया गया।

मध्यकालीन युग में होली रोमन सम्राट के समतुल्य एक महाशक्ति 'रोम के बिशप' या पोप की थी। वह ईसाई धर्म का पथ-प्रदर्शक था। यों तो प्रत्येक नगर में एक बिशप रहता था किन्तु रोम के बिशप का पद सर्वोच्च समझा जाता था। कारण यह था कि ईसाई धर्म के दो महान् धर्मगुरु सेंट पीटर तथा सेंट पाल यहां पधारे थे तथा यहीं उनका बलिदान हुआ था। यदि रोम की समता किसी नगर से हो सकती थी तो वह जेरूसेलम था, लेकिन यह नगर रोमन साम्राज्य के एक कोने में स्थित था। इसके अतिरिक्त वह एक समय रोमन सेना के विध्वंस का लक्ष्य भी बन चुका था। अतएव वह रोम नगर की समता न कर सकता था। 'पोप' शब्द का अर्थ है 'पापा' अथवा 'पिता'। सन् १०७३ ई० तक साधारण रूप से प्रत्येक नगर का बिशप इसी नाम से प्रसिद्ध था। इसके बाद यह नाम केवल रोम के बिशप के लिये निश्चित कर दिया गया। जब कोई पोप मर जाता है तो बड़े पादरियों की एक असाधारण सभा की ओर से एक पोप का निर्वाचन कर लिया जाता है। सोलहवीं सदी ईस्वी के पूर्व तक धार्मिक विषयों में पोप का निर्णय अन्तिम निर्णय माना जाता था। वह बड़े से बड़े सम्राट को भी ईसाइयों के बान्धुत्व से निर्वासित कर सकता था। यह किसी भी व्यक्ति के लिये भयंकर अपमान तथा पतन का कारण बन जाता था। एक समय पोप ग्रेगोरि (१०७३-१०८०) किसी कारण वश होली रोमन सम्राट हेनरी चतुर्थ से अप्रसन्न हो गया। अतएव उसने उसे ईसाइयों के बान्धुत्व से वंचित कर दिया। जब हेनरी क्षमा याचना के विचार से इटैली आया उस समय ग्रेगोरि अपीनायन पर्वत पर कानोस्सा (Canossa) की गढ़ी में उपस्थित था। उस ठंडे स्थान में उसने हेनरी को नंगे पैर तथा टाट लपेटे तीन दिन तक खड़ा रक्खा। तब कहीं अपराधी को क्षमा प्रदान की गई और वह ईसाइयों के भ्रातृ-जगत में सम्मिलित कर लिया गया। यह एक ऐसा मामला था जो अनुशासन-हीन शासकों के लिये सावधान रहने का कारण बना।

रोम का बिशप अथवा पोप

मध्यकालीन युग में इस्लाम की शक्ति भी बहुत बढ़ी हुई थी। मुहम्मद साहब

की मृत्यु के केवल साठ वर्षों के अन्दर, अरबों ने रोमन साम्राज्य के उन समस्त प्रान्तों पर अधिकार कर लिया जो एशिया एवं अफ्रीका में थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने स्पेन, फारस, अफगानिस्तान तथा सिन्ध आदि पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया। उन्होंने कुस्तुन्तुनिया का घेरा डालकर पूर्व दिशा से तथा पश्चिम की ओर स्पेन को शक्तिकेन्द्र बनाकर रोमन साम्राज्य को गम्भीर क्षति पहुंचाने का भी प्रयत्न किया, लेकिन वे सफलमनोरथ न हुये। सन् ७१८ ई० में रोमन सम्राट लियो तृतीय (Leo III) ने उन्हें पूर्ण रूप से परास्त किया। अतएव वे कुस्तुनतुनिया छोड़ कर भाग गये। इससे इस्लाम को गहरी क्षति पहुंची और कुछ काल के लिये यूरोप पूर्व दिशा की ओर इस्लामी आक्रमणों से सुरक्षित हो गया। इसी प्रकार सन् ७३२ ई० में फ्रैंक जाति के नेता, चार्ल्ज़ मार्टेल (Charles Martel) ने, जो चार्लमैन या चार्ल्ज़ महान् का दादा तथा फ्रांस के तत्कालीन सम्राट का मन्त्री था, टूर (Tours) के युद्ध में अरबों के दांत ऐसे खट्टे किये कि उन्होंने यूरोप में इस्लामी साम्राज्य के स्थापित करने का स्वप्न देखना बन्द कर दिया।

इस्लाम

ग्यारहवीं सदी ई० में सलजूक तुर्कों का उत्कर्ष हुआ। उन्होंने पश्चिमी एशिया के बहुत बड़े भाग पर अधिकार कर लिया और ईसाइयों के पवित्र स्थान जेरूसेलम आदि उनके अधिकार में आ गये। कुछ काल तक उन्होंने ईसाई यात्रियों के साथ सद्व्यवहार किया। इसके पश्चात् वे उन पर अत्याचार करने लगे। अतएव ईसाइयों ने पोप तथा होली रोमन सम्राट की संरक्षता में १२ वीं तथा १३ वीं शताब्दी में उनके विरुद्ध आठ युद्ध किये, जो इतिहास में सलीबी युद्धों (Crusades) के नाम से प्रसिद्ध हैं। परन्तु वे अपने उद्देश्य में कृतकार्य न हुये अर्थात् तीर्थस्थानों पर अरबों का ही अधिकार बना रहा।

रोमन साम्राज्य में बस जाने से जर्मन जातियों को रोमन लोगों से सभ्यता व संस्कृति सीखनी पड़ी। उन्होंने बहुत कुछ विध्वंस किया था, किन्तु उन्होंने बहुत कुछ सीख भी लिया। धीरे-धीरे उन्होंने यूनान व रोम की प्राचीन सभ्यताओं से लाभ उठाया एवं उनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके एक नवीन सभ्यता को जन्म दिया। इसे हम मध्ययुग की सभ्यता के नाम से विख्यात करते हैं। यों तो उसकी कई विशेषतायें थीं किन्तु उसमें सबसे उच्च स्थान जागीरदारी की प्रथा (Feudalism) को प्राप्त था। यूरोप के पश्चिमी देशों में इसका खूब प्रचार था। जागीरदार कहने को तो सम्राट के अधीन थे, किन्तु वास्तव में वे अत्यन्त शक्तिशाली थे तथा सम्राट की बहुत कम परवाह करते थे। वे किसानों के साथ भी

सभ्यता व संस्कृति की उन्नति

बहुत खराब व्यवहार करते थे। कहीं कहीं बड़े जागीरदारों के अधीन छोटे जागीरदार भी थे। फ्रांस में राज्यक्रांति होने का एक प्रमुख कारण यह था कि वहां जागीरदारी की प्रथा में कई दोष उत्पन्न हो गये थे तथा कृषकों की अवस्था शोचनीय थी।

अर्वाचीन युग का आरम्भ

जैसा कि हमने पहले बतलाया था, ऐतिहासिक भागों को हम सुरक्षित तिथियों से सम्बद्ध नहीं कर सकते। परन्तु सुविधा के विचार से हम सन् १५०० ई० से अर्वाचीन युग का प्रारम्भ मान सकते हैं। यूरोप के इतिहास में कई बातें ऐसी हुई हैं जिन्होंने नवीन युग की प्रगति का संदेश दिया। निम्न पृष्ठों में हम इन पर संक्षेप रीति से प्रकाश डालेंगे।

सांस्कृतिक पुनरुत्थान (Renaissance)

यह एक बहुत बड़ा आन्दोलन था जो चौदहवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी ई० तक जारी रहा था। इसके द्वारा यूनान तथा रोम की प्राचीन विद्या व कला का प्रसार नये सिरे से यूरोपीय देशों में हुआ। जर्मन जातियों ने रोमन साम्राज्य पर अधिकार करके प्राचीन सभ्यता व संस्कृति को बहुत हानि पहुँचाई थी। उनके आतंक से विद्या व कला के विशारद विलुप्त हो गये तथा उनकी अमूल्य निधि अर्थात् अगणित पुस्तकें, मूर्तियाँ, चित्र तथा नक्काशी के नमूने आदि जो हटाये जा सकते थे हटा दिये गये। इस प्रकार वे विध्वंस व विनाश से सुरक्षित रहे। दीर्घ काल तक विलुप्त रहने के पश्चात् चौदहवीं शताब्दी में उनका पुनरुत्थान हुआ और धीरे धीरे उनका प्रचार यूरोप के विभिन्न देशों में हो गया। इसका प्रमुख कारण यह था, कि पूर्व में उस्मानी तुर्कों की शक्ति बहुत बढ़ गई थी तथा सन् १४५३ ई० में उन्होंने होली रोमन साम्राज्य की पूर्वी राजधानी कुस्तुनतुनिया पर अधिकार कर लिया था। विद्या व कला के प्रसार के कारण यूरोप के निवासी अपने जीवन में सुधार करने की आवश्यकता अनुभव करने लगे। अतएव उन्होंने सुन्दर एवं आराम देने वाले भवन निर्मित किये, कविता तथा संगीत की उन्नति की, नक्काशी व चित्रकारी के चित्ताकर्षक नमूने तैयार किये तथा उनके नाविक नवीन व्यापारिक मार्गों की खोज में बाहर गये। कुछ काल के पश्चात् उनके जीवन में प्रकट अन्तर हो गया।

नवीन युग की दूसरी विशेषता इस समय के आविष्कार हैं। इनमें तीन का महत्व अत्यधिक है,—मुद्रण-यंत्र, बारूद तथा कुतुबनुमा। मुद्रण-यंत्र के आविष्कार

से पुस्तकें सहस्रों की संख्या में प्रकाशित होने लगीं। अतएव प्रत्येक व्यक्ति उन्हें सरलता से मोल ले सकता था। बारूद एवं बन्दूकों के निर्माण से जागीरदारी प्रथा के अन्त करने में सहायता मिली। कारण यह था कि सम्राट अब जागीरदारों का सामना आसानी से नहीं कर सकते थे। कुतुबनुमा से नाविकों का कार्य सरलता से चलने लगा। इसलिये उन्हें अपने आश्चर्यजनक अन्वेषण करने में सफलता प्राप्त हुई।

नवीन आविष्कार

इस सम्बन्ध में कोलम्बस एवं वास्को डि गामा के नाम अमर हैं। प्रथम ने सन् १४६२ ई० में अमेरिका को तलाश किया था और दूसरे ने सन् १४६८ ई में अफ्रीका का चक्कर लगा कर भारतवर्ष पहुँचने में सफलता प्राप्त की थी। इसके पश्चात् यूरोप के अन्य नाविक मैदान में उतरे और भारतवर्ष पहुचने के लिये नये मार्गों को ज्ञात करने की कोशिश की। इस सम्बन्ध में जॉन कैबट, कैबरल, डेविस तथा फ्रोबिशर के नाम उल्लेखनीय हैं। मगालेन तथा ड्रेक ने विश्व का चक्कर लगा कर सबको आश्चर्य में डाल दिया।

नवीन मार्गों की खोज तथा व्यापारिक उन्नति

इस आन्दोलन का प्रमुख नेता मार्टिन लूथर नाम का एक साधारण कोटि का व्यक्ति था। इसका प्रारम्भ जर्मनी में हुआ था। इसके पश्चात् इसका प्रचार इंग्लैंड, स्विटज़रलैंड, नार्वे, स्वीडन एवं हालैंड इत्यादि देशों में हुआ। इसके द्वारा यूरोप में एक नवीन धर्म की स्थापना हुई जिसे हम प्रोटेस्टैंट धर्म (Protestantism) कहते हैं। प्राचीन ईसाई धर्म कैथोलिक धर्म (Catholicism) कहलाता है। इसका सब से बड़ा नेता पोप है।

धर्मसुधार

मध्ययुग में शासकों के अधिकार कई प्रकार से सीमित थे, लेकिन चौदहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दियों के बीच आवश्यकतानुसार अधिकतर देशों में निरंकुश शासन सत्तायें स्थापित हुईं। इस प्रकार के शासकों के कुछ राजवंश अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। उदाहरणार्थ, इंग्लैंड का स्टुअर्ट राजवंश, जिसमें चार्ल्ज़ प्रथम (१६२५—१६४६) तथा चार्ल्ज़ द्वितीय (१६६०—१६८५) के समान स्वतन्त्र प्रकृति के बादशाह हुये; फ्रांस का बूरबन वंश जिसमें चौदहवें लूई (१६४३—१७१५) का नाम सबसे अधिक विख्यात है; प्रशा का हेहैनज़ोलिरन राजवंश जिसमें फ्रेड्रिक विलियम प्रथम (१७१३ ई०—१७४०) एवं फ्रेडरिक महान् (१७४०—१७८६) जैसे शक्तिशाली सम्राट हुये; अस्ट्रिया का हैप्सबर्ग राजवंश, जिसमें

निरंकुश शासनों की स्थापना

दूसरा अध्याय

सन् १७८९ ई० में यूरोप की राजनैतिक व सामाजिक अवस्था

आजकल यूरोप के देशों की गणना संसार के सबसे अधिक उन्नतिशील तथा सभ्यतापूर्ण देशों में की जाती है। राजनैतिक व्यवस्था, व्यापार तथा उद्योग, विज्ञान, साहित्य और यातायात के साधन आदि में उन्होंने न केवल स्वयं उन्नति की है वरन् संसार के दूसरे देशों में भी जहाँ उनका अधिपत्य स्थापित था, उनका प्रचार करके सभ्यता व संस्कृति के कार्य को बहुत आगे बढ़ाया है। यूरोपीय देशों की यह ईर्ष्या करने योग्य उन्नति उन्नीसवीं व बीसवीं शताब्दी में सम्भव हो सकी थी। इसके पूर्व अर्थात् सत्रहवीं व अठारहवीं शताब्दी में उनकी अवस्था पूर्णतया भिन्न थी। उस काल में वे उपरोक्त बातों में इतने अधिक पिछड़े हुये थे कि दोनों कालों की उन्नति व सभ्यता में बहुत कम समता थी। यह आश्चर्यकारी अन्तर दो बड़े महत्वपूर्ण कारणों से सम्भव हो सका था। एक तो व्यावसायिक क्रांति (Industrial Revolution) और दूसरा, फ्रांस की राज्यक्रांति (French Revolution)।

व्यावसायिक क्रांति का प्रारम्भ सत्रहवीं शताब्दी में अथवा सम्भवत: इससे भी पूर्व इंग्लैंड में हुआ था। अठारहवीं शताब्दी में उसका प्रभाव प्रकट रूप से प्रकाशित हुआ और उन्नसवीं तथा बीसवीं शताब्दियों में इसका विकास संसार के अन्य देशों में हुआ। व्यावसायिक क्रांति तथा फ्रांस की राज्यक्रांति ने यूरोपनिवासियों के जीवन क्रम तथा संसार की अवस्था में कायापलट परिवर्तन कर दिया है। अठारहवीं

व्यावसायिक तथा फ्रांसीसी क्रांतियां

शताब्दी के अंधविश्वास, पुराने ज़माने की शासन प्रणाली तथा रीति रिवाज, ईश्वर, माता पिता तथा अनुचर आदि के प्रति लोगों का दृष्टिकोण, उनके पेशे, उनके शौक तथा उनके विचार, व्यापार तथा कलाकौशल के ढंग आदि सभी बातों में अन्तर हो गया है। बहुत सी बातें ऐसी थीं जिनके विषय में यूरोप के निवासियों का विचार था कि वे किसी अदृश्य शक्ति के द्वारा सम्पादित होती हैं, किन्तु अब वे उनके वास्तविक रहस्य से अवगत हो गये हैं। अब वे इस बात को भली भांति

समझते हैं कि ये सब विज्ञान के चमत्कार हैं। नित्य प्रति के प्राकृतिक दृश्य अब उनके लिये केवल प्राकृतिक दृश्यों का महत्व रखते हैं। वे ईश्वर अथवा किसी अन्य देवता के कार्य नहीं माने जाते। मानव ने अब एक दूसरे पर विश्वास करना भी सीख लिया है। न केवल यूरोपवरन् अन्य देशों में भी अब लोग संगठित जीवन व्यतीत करते हैं तथा एक दूसरे के प्रति उदारता का व्यवहार करते हैं। अमेरिका के अध्यक्ष के निर्वाचन का समाचार कुछ ही क्षणों में समस्त संसार में प्रकाशित हो जाता है। सारायेवो की किसी हत्या से समस्त संसार में बवंडर उठ सकता है। निष्कर्ष यह कि यूरोप निवासियों का जीवन अब वह नहीं है जो अठारहवीं शताब्दी में था। उसमें प्रकट रूप से अन्तर हो गया है और इसका विशेष कारण यह है कि व्यावसायिक क्रांति तथा फ्रांसीसी राज्यक्रांति ने अब अपने प्रभाव को पूर्ण रूप से प्रकट कर दिया है।

फ्रांसीसी राज्यक्रांति का वर्णन लेखनी बद्ध करने के पूर्व यह आवश्यक मालूम होता है कि हम यूरोप की सन् १७८९ की राजनैतिक व सामाजिक अवस्था पर संक्षेप से प्रकाश डालें। उस समय से यूरोपीय देशों की सीमाओं में बहुत से परिवर्तन हो चुके हैं। आधुनिक काल में यूरोप के मानचित्र पर हमें कई देश ऐसे नज़र आते हैं जो उस समय उपस्थित न थे। इसके प्रतिकूल अठारहवीं शताब्दी में कई देश ऐसे भी थे जो अपने विस्तार तथा महत्व के लिये प्रसिद्ध थे किन्तु अब उनका अस्तित्व तक अवशेष नहीं है। यही दशा होली रोमन साम्राज्य की भी थी जिसका उल्लेख हमने पिछले अध्याय में किया था। सन् १७८९ ई० में उसमें ३५० से भी अधिक राज्य सम्मिलित थे। इनमें से अधिकतर अत्यन्त छोटे थे लेकिन कुछ का क्षेत्रफल काफ़ी बड़ा था और इतिहास के दृष्टिकोण से उनका महत्व भी अधिक था। ये सब राज्य एक दूसरे से पृथक तथा स्वतन्त्र थे। उनके शासकों की स्थिति बराबर थी किन्तु उनकी धमनियों में आवश्यक रूप से राजवंशों का रक्त प्रवाहित नहीं था। उनमें ड्यूक, आर्चड्यूक एवं आर्चबिशप आदि भी सम्मिलित थे। वे कहने को होली रोमन सम्राट के अधीन अवश्य थे परन्तु उन पर उसका कोई विशेष प्रभाव न था। वे युद्ध व सन्धि कर सकते थे, अपने नाम के सिक्के निकाल सकते थे एवं अपने राजदूत दूसरे देशों में भेज सकते थे। उपरोक्त राज्यों के अतिरिक्त होली रोमन साम्राज्य में लगभग ५० स्वतन्त्र नगर भी सम्मिलित थे। ये पद में राज्यों के बराबर थे और उनकी भांति साम्राज्य की बड़ी सभा के सदस्य भी थे।

यूरोप की राजनैतिक अवस्था : होली रोमन साम्राज्य

जैसा कि हमने पिछले अध्याय में बतलाया था, होली रोमन सम्राट की

प्रतिष्ठा अत्यधिक थी किन्तु उसके अधिकार नाम मात्र के लिये थे। वह 'विश्वपति' कहलाता था और उसका पद साधारण सम्राटों से अधिक ऊँचा था। सभी देशों में उसका राजदूत दूसरे सम्राटों के राजदूतों की तुलना में अधिक प्रतिष्ठित माना जाता था। होली रोमन सम्राट का अभी तक निर्वाचन किया जाता था। उसको निर्वाचित करने वाले उच्च प्रतिष्ठा के शासक थे लेकिन उनकी संख्या घटती बढ़ती रहती थी। तीन सौ वर्षों से भी अधिक तक यह सात पर ठहरी रही। सन् १६४८ ई० में बवेरिया और सन् १६९२ ई० में हनोवर निर्वाचित करने वालों के मण्डल में सम्मिलित हुये। अत: अब उनकी संख्या ९ हो गई। एक अवसर को छोड़कर सन् १४४० ई० के पश्चात् होली रोमन सम्राट के प्रतिष्ठित पद पर हैप्सबर्ग राजवंश के शासक ही निर्वाचित हुये।* सन् १८०६ ई० में नैपोलियन बोनापार्ट ने होली रोमन साम्राज्य का अन्त कर दिया।

सन् १७८९ ई० में फ्रांस की सीमायें लगभग वही थीं जो वर्तमान काल में हैं। उपरोक्त तिथि के पश्चात् उनमें कई बार परिवर्तन भी हुये। उदाहरण के लिये नैपोलियन बोनापार्ट के काल में उनमें प्रकट रूप से वृद्धि हो गई थी, किन्तु सन् १८१५ ई० में पेरिस की सन्धि से वे फिर संकुचित कर दी गईं। सन् १८७० ई० में जर्मनी के विख्यात मन्त्री बिस्मार्क ने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। इसमें फ्रांस पूर्णतया परास्त हुआ। अतएव उसकी सीमायें घटा दी गईं। किन्तु जो हानि उसे इस समय सहन करनी पड़ी वह विश्व के प्रथम महायुद्ध के समाप्त होने पर अर्थात् सन् १९१८ ई० में उसकी पूर्ति कर दी गई। अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस में अधिकतर बूरबन राजवंश के सम्राट पन्द्रहवें लूई तथा सोलहवें लूई ने शासन किया। फ्रांस के शासन ने यूरोप के लगभग सभी बड़े युद्धों में भाग लिया। दीर्घकाल तक उसका सामना इंग्लैंड से होता रहा। इसके अतिरिक्त फ्रांस का एक शक्तिशाली शत्रु अस्ट्रिया भी था। सोलहवें लूई एवं अस्ट्रिया की राजकुमारी *मेरी ऐंतोइनेत (Marie Antoinette)* के विवाह के कारण यह शत्रुता समाप्त हो गई थी। इसके विपरीत राज्यक्रांति के समय फ्रांस के निवासी मेरी से दोष मानते रहे।

फ्रांस

---

* यहां अस्ट्रिया की महारानी मैरिया थैरिसा के शासन की ओर संकेत है। जनवरी सन् १७४२ ई० में जब होली रोमन सम्राट का निर्वाचन हुआ तब मैरिया अस्ट्रिया के उत्तराधिकार के युद्ध (War of Austrian Succession) में संलग्न थी। उसके शत्रुओं ने, जिनमें फ्रांस प्रमुख था, प्रयत्न करके उसके स्थान पर बवेरिया के शासक चार्ल्स को होली रोमन सम्राट निर्वाचित करा दिया।

राज्यक्रांति के प्रारम्भ होने के समय फ्रांस के शासन एवं समाज दोनों ही में प्रकट दोष थे। दार्शनिकों तथा लेखकों के कारण उस समय देश में यथेष्ट जागृति थी। इसके अतिरिक्त शासन सम्बन्धी सुधारों के सम्बन्ध में इंग्लैंड और अमेरिका के उदाहरण भी फ्रांसीसियों के सम्मुख थे। अतः वे किसी नवीन परिवर्तन अर्थात् किसी प्रकार के सुधार आदि की इच्छा रखते थे। सभी वर्गों के लोग किसी न किसी सीमा तक इस नवीन जागृति से प्रभावित हो चुके थे। फ्रांस का सम्राट सोलहवां लुई स्वयं सुधारों के किये जाने का समर्थक था। लेकिन सुन्दर विचार रखने पर भी वह कुछ विशेष कारणों से अपने शासन को स्थापित न रख सका। फ्रांस के निवासी भी अन्य देशवासियों की भांति दो वर्गों में विभाजित थे। प्रथम में पादरी, कुलीन वर्ग के लोग तथा वे लोग सम्मिलित थे जिनका राज्यकुल से विशेष सम्बन्ध था। इनका एक अतिरिक्त समाज था, जिससे शेष निवासियों का कोई सम्बन्ध न था। एक विशेष बात यह है कि सम्राट ने अवसर पाकर कुलीन वर्ग के लोगों को शासन कार्य से पृथक कर दिया था। लेकिन उनके वैभव व प्रतिष्ठा में किसी भी प्रकार का अन्तर न हुआ था। समाज में उनका पद पूर्ववत् ही प्रतिष्ठापूर्ण था। वे अब भी कृषकों के साथ स्वेच्छानुसार व्यवहार करते थे। शासन ने उनके लिये कुछ थोड़ी सी विशेष सुविधायें रखी थीं जिनसे जनसाधारण के लोग वञ्चित थे। उदाहरण के रूप में, कुछ ऐसे कर थे जिनसे वे उन्मुक्त थे परन्तु उनके भार से निम्न श्रेणी वर्ग के लोग दबे जाते थे। सेना के उच्च पद भी कुलीन व प्रतिष्ठित लोगों के लिये सुरक्षित थे। वे अत्यन्त प्रतिष्ठा और वैभव के साथ राजकीय दरबार में बैठते थे एवं भोगविलास का जीवन व्यतीत करते थे।

अठारहवीं शताब्दी में यूरोप में आस्ट्रिया व प्रशा नाम के दो बड़े देश थे। इनके शासकों के कारनामों से यूरोप के इतिहास के पृष्ठ भरे पड़े हैं। प्रथम देश में हैप्सबर्ग वंश का शासन था। इसका उल्लेख पहले भी हो चुका है। आस्ट्रिया के अतिरिक्त इस वंश के शासक कुछ अन्य देशों में भी शासन करते थे जो इधर उधर फैले हुये थे। जैसे

आस्ट्रिया

बोहीमिया (Bohemia), इस्टीरिया (Styria), केरिन्थिया (Carinthia), कारनियोला (Carniola), तिरोल (Tyrol) एवं बेल्जियम अथवा आस्ट्रियन नैदरलैंड्ज़। ये सब देश होली रोमन साम्राज्य में सम्मिलित थे। इनके अतिरिक्त आस्ट्रिया के सम्राट हंग्री तथा लोम्बार्डी (Lombardy) में भी शासन करते थे, किन्तु ये देश उसमें शामिल न थे। जैसा कि लिख आये हैं, आस्ट्रिया के सम्राटों को दीर्घ काल तक होली रोमन सम्राट होने का सौभाग्य प्राप्त

हुआ था। अतएव उनकी शान शौक़त बहुत ज्यादा थी, किन्तु समस्त सम्मान व प्रतिष्ठा के होते हुये भी उन्हें होली रोमन सम्राट होने के नाते बहुत कम अधिकार दिये गये थे। उनकी शक्ति व अधिकारों का दारोमदार उनके निजी साम्राज्य पर था।

उपरोक्त बिखरे हुये राज्यों पर शासन करना कोई सरल कार्य न था। सम्राट जोज़ेफ़ द्वितीय (१७६५–१७६०) ने इस बात का यथाशक्ति प्रयत्न किया कि अपने साम्राज्य में सम्मिलित राज्यों के लिये एक शक्तिशाली केन्द्रीय शासन स्थापित करे। उसने अन्य सुधार करने का प्रयत्न भी किया, किन्तु वह कृतकार्य न हुआ। उसकी असफलता का प्रमुख कारण यह था कि उसके साम्राज्य में विभिन्न जातियों तथा विभिन्न धार्मिक विचारों के लोग निवास करते थे। वे सदा अपने स्वार्थ को ध्यान में रखते थे और दूसरों का बहुत कम विचार रखते थे। जोज़ेफ की सबसे बड़ी असफलता बेल्जियम में हुई। इस देश में एक प्रसिद्ध बन्दरगाह एण्टवर्प (Antwerp) का है। यह शेल्ड नदी के तट पर बसा हुआ है, किन्तु इंग्लैंड और हालैंड ने दीर्घकाल से उक्त नदी से व्यापार करने के सम्बन्ध में कुछ रुकावटें निश्चित कर दी थीं। अतएव उक्त बन्दरगाह उन्नति न कर सकता था। जोज़ेफ द्वितीय ने इन रुकावटों को हटाने का प्रयत्न किया, लेकिन वह बेल्जियम निवासियों के विरोध के कारण सफल न हुआ। उसके उत्तराधिकारी ल्योपोल्ड द्वितीय (१७६०–१७६२) के शासनकाल में भी बेल्जियम निवासियों का विरोध चलता रहा, किन्तु उसने ऐसी चतुरता और बुद्धिमानी से काम लिया कि कुछ काल के पश्चात् बेल्जियम निवासी शांत हो गये।

बहुत सी बातों में प्रशा का प्राचीन इतिहास आस्ट्रिया के प्राचीन इतिहास के तुल्य है। प्रशा के सम्राट के शासन में भी कई राज्य सम्मिलित थे, जो पश्चिम तथा दक्षिण-पश्चिम की दिशा में दूर तक फैले हुये थे। इनमें सबसे बड़ा राज्य ब्रांडनबूर्ग (Brandenburg) का था। एक अन्य बड़ा राज्य सिलीशिया (Silesia) का था, जिसे प्रशा के प्रसिद्ध सम्राट फ्रेड्रिक महान् (१७४०–१७८६) ने आस्ट्रिया से प्राप्त किया था। इनके अतिरिक्त कुछ प्रदेश राइन नदी के तट पर भी प्रशा के अधीन थे। प्रशा और आस्ट्रिया में दीर्घकाल तक वैमनस्य रहा था। सन् १७४० ई० में उनमें बाक़ायदा युद्ध प्रारम्भ हुआ जो कई वर्षों तक चलता रहा। उन्नीसवीं शताब्दी में उनका पारस्परिक सम्बन्ध फिर बिगड़ गया। अन्त में सन् १८६६ ई० में साडोवा (Sadowa) के स्थान पर आस्ट्रिया पूर्णतया पराजित हुआ। इसके पश्चात् दोनों देशों के विद्वेष का अन्त हो गया।

प्रशा

प्रशा में दीर्घकाल तक होयेनज़ोलर्न (Hohenzollern) वंश ने शासन किया। फ्रैड्रिक महान् (१७४०–१७८६) इस वंश का सबसे प्रसिद्ध शासक था। उसने देश की सैनिक शक्ति में यथेष्ट वृद्धि करके प्रशा को यूरोप की महान् शक्तियों की श्रेणी में स्थान दिलाया था। उसने यूरोप की महाशक्तियों के विरुद्ध दीर्घकाल तक दो युद्ध किये। इनमें आस्ट्रिया सर्वदा उसके विरुद्ध रहा, किन्तु प्रथम अवसर पर फ्रांस तथा दूसरे अवसर पर इंग्लैंड उसका साथी था। प्रथम युद्ध के समय में सिलीशिया पर उसका अधिकार होगया। सन् १७७२ ई० में उसने आस्ट्रिया और रूस से मिलकर पोलैंड का विभाजन किया और उसके उत्तरी भाग पर स्वयं अधिकार कर लिया। इसके प्राप्त हो जाने से प्रशा का पूर्वी भाग ब्रांडनबर्ग के राज्य से जा मिला। सैनिक शक्ति को उन्नति की चरम सीमा तक पहुंचाने के अतिरिक्त फ्रैड्रिक महान् ने अपनी प्रजा के कल्याण के लिये कुछ आवश्यक सुधार भी किये। इस प्रकार उसकी कीर्ति तथा प्रतिष्ठा अत्यधिक बढ़ गई। यूरोप के सम्राट तथा दार्शनिक प्रशा को एक आदर्श राज्य मानने लगे। किन्तु फ्रैड्रिक ने प्रजा को शासन में भाग लेने का अवसर नाम को भी न दिया था। उसने उससे किसी प्रकार की सम्मति भी न ली थी। उसकी सफलतायें व्यक्तिगत सफलतायें थीं। इनके कारण प्रशा आस्ट्रिया का सामना करने के लिये तैयार हो गया था। होली रोमन साम्राज्य में भी उसका प्रभाव बढ़ गया था, यद्यपि प्रशा उसमें सम्मिलित न था। जर्मनी व आस्ट्रिया के पारस्परिक सम्बन्ध पर जर्मनी का भविष्य निर्भर था।

ब्रिटिश द्वीपसमूह

फ्रांसीसी राज्यक्रांति के कुछ वर्षों पहिले अमेरिकन उपनिवेश ब्रिटिश द्वीपसमूह के अधिकार से निकल गये थे। अतएव उसको भयंकर हानि उठानी पड़ी थी। इसके अतिरिक्त उसकी अप्रतिष्ठा भी हुई थी। तथापि उसकी गणना यूरोप की महान् शक्तियों में होती रही। इसी काल में वहां व्यावसायिक क्रांति का ज़ोर बढ़ रहा था। अतएव जो हानि उसे सहन करनी पड़ी थी वह शीघ्र ही पूरी हो गई थी। इसके अतिरिक्त वह इतना समर्थ हो गया था कि फ्रांस के क्रान्तिकारियों और नैपोलियन बोनापार्ट से लम्बे समय तक युद्ध कर सके। सन् १६४२ ई० तथा सन् १६८८ ई० की क्रांतियों के कारण वहां वैधानिक शासन स्थापित हो चुका था। इसका उल्लेख हम इसके पूर्व भी कर चुके हैं। वहां पार्लेमेंट की शक्ति बहुत बढ़ गई थी तथा प्रेस को काफ़ी स्वतन्त्रता थी। वहां यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा शासक और साधारण वर्ग के बीच अच्छा सम्बन्ध स्थापित था। यही कारण है कि जब अन्य देशों के शासन क्रांतियों के कारण पतनगामी हो रहे थे, ब्रिटिश सरकार क्रांति की आंधी के झोंकों के सम्मुख दृढ़तापूर्वक खड़ी रही।

फ्रांस, आस्ट्रिया, प्रशा तथा ब्रिटेन ये यूरोप की सब से महान् शक्तियां थीं। इनका फ्रांस की राज्यक्रांति से गहरा सम्बन्ध था। इनके पश्चात् रूस की गणना होती है। उसे भी नैपोलियन बोनापार्ट के विरुद्ध युद्धों में यथेष्ठ भाग लेना पड़ा था। लेकिन रूस और उसके पश्चिमी सहयोगियों के बीच एक बड़ा अन्तर यह था कि वहां सभ्यता और संस्कृति का इतना विकास न हुआ था जितना कि पश्चिमी देशों में हुआ था। सत्रहवीं शताब्दी में रूस के शासन की बागडोर पीटर महान् (१६८२–१७२५) नामक एक अत्यंत वीर तथा स्वतन्त्र विचार के सम्राट के हाथ में आई। उसने अपने देश में पश्चिमी ढंग पर सुधार किये तथा सेना को नवीन रूप से सुदृढ़ बनाया। इसके अतिरिक्त उसने इस बात का प्रयत्न भी किया कि समुद्री मार्ग से रूस के निवासियों का आवागमन अन्य देशों से स्थापित हो जाय। अस्तु उसने रूसी सीमा को बाल्टिक सागर तक बढ़ाया, और कुछ काल के लिये उसे काले सागर तक पहुंचाया। पीटर महान् के पश्चात् कैथरिन द्वितीय (१७६२–१७९६) ने उसके काम को बहुत आगे बढ़ाया। उसने भी देश की सीमा में वृद्धि की और पश्चिमी ढंग के कुछ सुधार करके सभ्यता व संस्कृति का विकास किया। अतएव हम कह सकते हैं कि १७८९ ई० में जब फ्रांस की तपोभूमि में क्रांति की ज्वाला जगी उस समय रूस की गणना न केवल यूरोप के देशों में होती थी वरन् वह एक उन्नतशील व शक्तिशाली देश था एवं यूरोप के युद्धों में सफलता के साथ भाग ले सकता था।

रूस

अठारहवीं शताब्दी में पोलैंड की गणना यूरोप के सबसे विस्तृत देशों में होती थी। इसके साथ ही वह एक शक्तिहीन देश भी था। उसकी सीमा पर प्रशा, आस्ट्रिया एवं रूस के महाशक्तिशाली देश थे, जो अपने पड़ोसी की निर्बलता से लाभ उठाने के लिये सदा तत्पर रहते थे। पोलैंड में सम्राट का निर्वाचन होता था। बहुधा ऐसा भी होता था कि जब कोई सम्राट मर जाता था तो सिंहासन के अधिकारियों में युद्ध प्रारम्भ हो जाता था। फ्रांस की भांति पोलैंड में भी अमीर व कुलीन लोग भोगविलास का जीवन व्यतीत करते थे तथा दीन किसानों पर स्वेच्छापूर्वक अत्याचार करते थे। सीमाओं की निर्बलता के कारण किसी भी दिन पोलैंड अपने शक्तिशाली पड़ोसियों के लालच व अन्याय का लक्ष्य बन सकता था। अठारहवीं शताब्दी में तीन बार ऐसे अवसर आये। सन् १७७२ ई० में उसके तीनों शक्तिशाली पड़ोसियों ने उसका विभाजन करके थोड़ी बहुत भूमि अपने अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर ली। इसके पश्चात् सन् १७९३ ई० व सन् १७९५ ई० में इस निर्बल देश का पुनः विभाजन किया गया। परिणाम यह हुआ कि १२५ वर्षों के लिये स्वाधीन पोलैंड का अस्तित्व पृथ्वी से मिट गया।

पोलैंड

अब हम यूरोप के साधारण क्षेत्रफल वाले अथवा साधारण महत्व रखने वाले देशों का उल्लेख करते हैं। इनमें सबसे विस्तृत देश स्पेन का था।

स्पेन

सोलहवीं शताब्दी में वह सबसे शक्तिशाली देश माना जाता था, किन्तु सत्रहवीं शताब्दी के अन्त तक उसके महत्व का बिल्कुल अन्त होगया। सन् १७०० ई० में वहां बूरबन वंश का शासन प्रारम्भ हुआ और यह शासन वहां दीर्घकाल तक चलता रहा। अत: फ्रांस और स्पेन के बीच गहरा सम्बन्ध स्थापित होगया। अठारहवीं शताब्दी में उसने प्राय: उन युद्धों में, जो ब्रिटेन तथा फ्रांस के बीच हुये, फ्रांस की ओर से भाग लिया। स्पेन के शासन ने नैपोलियन बोनापार्ट का सामना भी पूरी शक्ति से किया। नैपोलियन के पतन का एक मुख्य कारण यह था कि उक्त देश में उसके कई प्रथम श्रेणी के सेनाध्यक्ष काम आ गये थे तथा उसकी सेना में सदा के लिये निर्बलता उत्पन्न होगई थी।

इटैली

इटैली का देश दीर्घकाल से कई राज्यों में विभक्त था। ये राज्य या तो पूर्णतया स्वतन्त्र थे अथवा किसी अन्य देश के शासन के अधीन थे। अत: इस काल के इतिहास में उक्त देश का महत्व अधिक न था। इटैली प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग में तथा सिसली के द्वीप में फ्रांस तथा स्पेन की भांति बूरबन वंश का शासन था। बीच के भाग में पोप की जागीर (Papal States) थी। इसके पश्चिम में टस्कनी (Tuscany) के राज्य में एक ड्यूक शासन करता था। इसमें दीर्घकाल तक सम्राट जोजेफ द्वितीय के भाई ल्योपोल्ड ने शासन किया था। पो नदी के दक्षिण में कुछ अन्य छोटे राज्य भी थे। उदाहरणार्थ पारमा (Parma) जहां बूरबन वंश का शासन स्थापित था, मोडेना (Modena) जहां हैप्सबर्ग वंश का एक ड्यूक शासन करता था एवं लूका (Lucca) जहां गणराज्य स्थापित था। इटैली के उत्तरी भाग में वेनिस का गण-राज्य था तथा उसके पश्चिमोत्तरीय भाग में जेनोआ का प्रजातन्त्र शासन था। जेनोआ के उत्तर में पीडमांट (Piedmont) और सेवाय (Savoy) थे। ये दोनों सार्डिनिया (Sardinia) के सम्राट के शासन के अधीन थे। लोम्बार्डी (Lombardy) के मैदान में आस्ट्रिया का शासन स्थापित था। इस प्रकार इटैली कई छोटे बड़े राज्यों में विभक्त था। इनमें लगभग एक शताब्दी से पूर्व पूर्ण एकता सम्भव न हो सकी।

हालैंड स्वीडन एवं स्विटज़रलैंड यूरोप के अन्य ऐसे देश हैं जिनका उल्लेख करना आवश्यक है। प्रथम देश में आरेंज वंश का शासन था। स्वीडन में

अन्य राज्य

सन् १७७१ ई० से सन् १७६२ ई० तक गस्तेवस तृतीय (Gustavas III) ने शासन किया। वह एक शक्तिशाली सम्राट था। उसने अमीर उमरा की शक्ति को निर्बल करके अपनी शक्ति में

अधिक वृद्धि की। स्विटज़रलैंड में दीर्घकाल से गणतंत्र शासन स्थापित था। उसमें कई कैंटन अथवा ज़िले (Cantons) थे, जिन्हें आन्तरिक शासन के पूरे अधिकार प्राप्त थे। सब ज़िलों को सम्मिलित करके एक संघ बना दिया गया था। गणतंत्र शासन के दृष्टिकोण से स्विटज़रलैंड की गणना प्रथम श्रेणी के राज्यों में की जाती थी। फ्रांस की राज्यक्रांति तथा नेपोलियन के युद्धों से सबसे अधिक सम्बन्ध हालैंड का था। स्वीडन तथा स्विटज़रलैंड से उनका सम्बन्ध बहुत कम था।

तुर्की साम्राज्य

सन् १७८९ ई० में यूरोप का बहुत बड़ा भाग तुर्की साम्राज्य में सम्मिलित था। मुख्यत: बालकन प्रायद्वीप पूर्ण रूप से उसका भाग था। यूरोप के सम्राट सुल्तान की निर्बलता से लाभ उठाना चाहते थे। विशेष रूप से आस्ट्रिया तथा रूस के शासक इस ओर अपने साम्राज्य की वृद्धि करने को तत्पर थे। सुल्तान के सौभाग्य से उसके शत्रुओं में कभी भी पूर्ण एकता स्थापित न हो सकी। अतएव यूरोप में तुर्की साम्राज्य किसी न किसी सीमा तक अभी तक स्थापित है।

शासन प्रणाली

फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रारम्भ होते समय यूरोप के देशों में साधारणतया निरंकुश शासन स्थापित था। कुछ देश ऐसे भी थे, जहां कुछ काल से प्रतिनिधि सभायें स्थापति थीं। किन्तु अठारहवीं शताब्दी तक वे या तो बिल्कुल समाप्त हो गई थीं अथवा उनका महत्व बहुत कम रह गया था। लगभग सभी देशों में जागीरदारी की प्रथा क़ायम थी, लेकिन कुलीन वर्ग के लोग एक विशेष श्रेणी की हैसियत से शासन में भाग न लेते थे। सभी देशों में उनके अधिकार विस्तृत थे एवं सभी देशों में वे उनसे अनुचित लाभ उठाते थे। ग्रेट ब्रिटेन का एक प्रकट उदाहरण ऐसा था जहाँ न तो जागीरदारी प्रथा का चलन ही था और न निरंकुश शासन ही स्थापित था। जैसा कि हमने इसके पूर्व वर्णन किया था, वहां वैधानिक शासन स्थापित था तथा ज़मींदार एवं कृषकों का सम्बन्ध अन्य देशों की अपेक्षा अच्छा था।

सन् १७८९ ई० तक सर्वसाधारण को राष्ट्रीय उद्गारों का अनुभव बहुत कम था। बहुधा ऐसा होता कि विभिन्न जातियों तथा भाषाओं के लोग एक ही सम्राट के अधीन रहते थे। ऐसा भी होता था कि एक ही राष्ट्र या नस्ल के लोग बहुत बड़ी संख्या में भिन्न देशों में निवास करते थे। आधुनिक युग का एक मुख्य सिद्धान्त यह है कि एक राज्य में एक ही जाति के लोग रहें और किसी जाति के सब लोगों को सम्मिलित करके एक राज्य स्थापित किया जाय। अठारहवीं शताब्दी में राष्ट्रीयता का प्रचार न होने कारण सर्वसाधारण इस उत्तम सिद्धान्त से परिचित न थे। जब उनको इसका ज्ञान हुआ तो शासन सत्ताओं के विरुद्ध भिन्न देशों में आन्दोलन किये गये।

अठारहवीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार का स्तर भी गिरा हुआ था। यूरोप के शासक भूमि के भूखे थे। अतएव वे किसी के अधिकारों की किन्चित परवाह न करते थे। वे व्यक्तिगत लाभ के लिये पूर्व निश्चित संधियां तथा प्रतिज्ञाओं को विस्मरण कर दिया करते थे। विश्व-इतिहास में शक्ति-संतुलन के सिद्धान्त का महत्व कभी कम नहीं हुआ। इस सिद्धान्त का यह अर्थ है कि किसी भी देश को इतना शक्तिशाली नहीं होना चाहिये कि वह दूसरे देशों के लिये चिन्ता का विषय बन सके। जब किसी देश की शक्ति अत्यधिक हो जाती थी तो उक्त सिद्धांत के अनुसार अन्य देशों के शासक पारस्परिक एकता स्थापित करके उसे नीचा दिखाने का प्रयत्न करते थे। अठारहवीं शताब्दी में यूरोप के शासकों ने इस सिद्धान्त से अनुचित रूप से लाभ उठाने का भी प्रयत्न किया। अत्यधिक शक्तिशाली होने के स्थान पर जब कोई देश अत्यधिक शक्तिहीन होता था तब भी उस पर आक्रमण करना वांछनीय ठहराया जाता था। इतिहास में इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। एक उदाहरण आस्ट्रिया की सम्राज्ञी मेरिया थेरिसा तथा प्रशा के सम्राट फ्रेड्रिक महान् का है। सन् १७४० ई० में जब मेरिया के पिता छठे चार्ल्स का अन्त हुआ तो उसकी निर्बलता से अनुचित लाभ उठा कर फ्रेड्रिक ने तुरन्त उस पर आक्रमण कर दिया एवं सिलीशिया के प्रांत को जीत कर अपने साम्राज्य में मिला लिया। पोलैंड की निर्बलता के कारण उसके पड़ोसियों ने उसका तीन बार विभाजन करके उसकी स्वतंत्रता का अंत कर दिया। इसी प्रकार रूस तथा आस्ट्रिया ने तुर्की की निर्बलता से भी लाभ उठाने का प्रयत्न किया।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार

यूरोप के सर्वसाधारण ग्रामों तथा छोटे कस्बों में निवास करते थे। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि था; किन्तु उसकी दशा संतोषजनक न थी। खेतों के चारों ओर चहारदीवारी बनाने की प्रथा न थी। हर दूसरे या तीसरे वर्ष खेत बिना जोते छोड़ दिया जाता था। फसल परिवर्तन के नियम से बहुत कम लोग लाभ उठा पाते थे। खेतों में किसी विशेष प्रकार की खाद भी न डाली जाती थी। पशुओं की दशा भी अच्छी न थी। बहुधा उन्हें पेट भर भोजन भी उपलब्ध न होता था। वे बहुधा विभिन्न प्रकार की बीमारियों का शिकार भी होते थे।

कृषि

देहात में दो प्रकार के लोग रहते थे। प्रथम, कुलीन वर्ग के लोग जो अधिकतर जागीरदार थे, किन्तु वे सरकारी महसूलों से मुक्त थे। दूसरे, कृषक जिनकी दशा अत्यन्त शोचनीय थी। पूर्वीय तथा मध्य यूरोप के अधिकतर भागों में उनकी अवस्था विशेष रूप से अवांछनीय थी। नियम के अनुसार उन्हें अपना अधिकतर
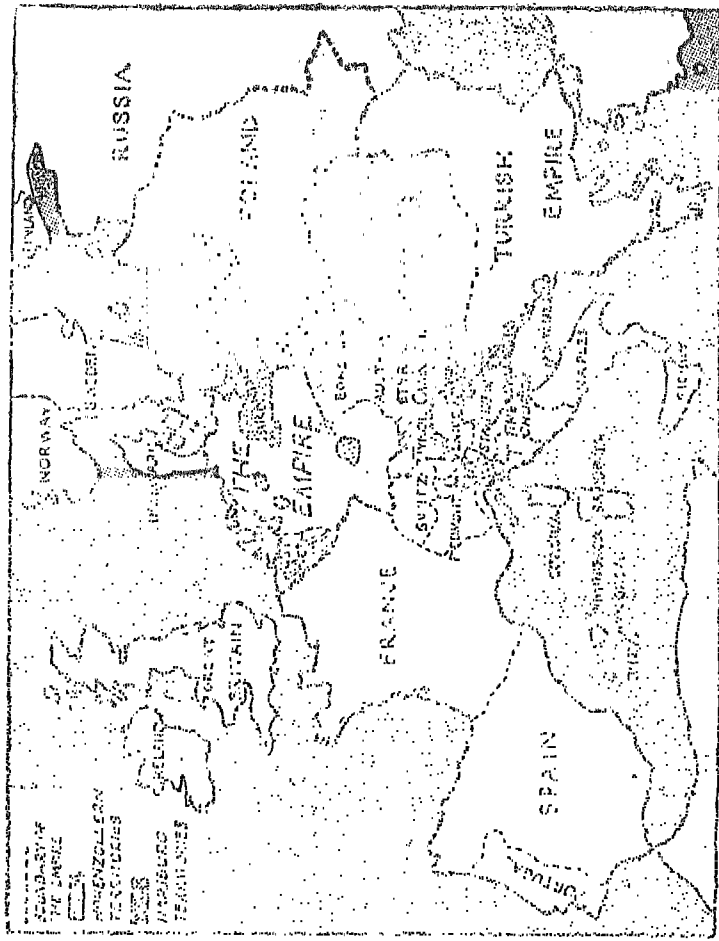
सन् १७८९ ई० में यूरोप की राजनैतिक अवस्था

समय जागीरदारों के खेतों पर बेगार करने में व्यतीत करना पड़ता था। जिन देशों के कृषक बेगार से मुक्त थे वहाँ वे महसूलों के भार से दबे जाते थे। शासन, कुलीन वर्ग एवं गिर्जा इन तीनों को वे महसूल देते थे। उन्हें शिकार खेलने तथा मछली पकड़ने तक का अधिकार प्राप्त न था। इस प्रकार के अधिकार जागीरदारों तथा कुलीन व प्रतिष्ठित लोगों के लिये सुरक्षित थे।

मध्यम वर्ग के लोग अधिकतर शहरों में पाये जाते थे। इनका मुख्य व्यवसाय व्यापार था। इनकी आर्थिक दशा तो अवश्य अच्छी थी पर समाज में उनका दर्जा कुलीन वर्ग के लोगों से कम था। कलाकौशल का प्रबन्ध समितियों (Guilds) के अधीन था। व्यापार की वस्तुयें अधिकतर हाथ से बनाई जाती थीं। जहाँ मशीनों का चलन प्रारम्भ हो गया था वहाँ मशीनें हाथ से चलाई जाती थीं। ग्रामों में कृषकों के घरों पर भी रुई की हस्तकला का कार्य होता था। व्यापार तथा उद्योग के मार्ग में कष्टप्रद नियम तथा महसूल बाधक थे। तिजारती वस्तुओं पर कभी कभी एक ही देश से गुजरने में पचास बार चुँगी देनी पड़ती थी।

व्यापार तथा कलाकौशल

उपरोक्त वर्णन से यह बात स्पष्ट है कि अठारहवीं शताब्दी में, यूरोप में, समाज की विभिन्न श्रेणियों का भेद बहुत बढ़ा हुआ था। कई दार्शनिकों तथा लेखकों ने सर्वसाधारण के लोगों की स्थिति में सुधार करने का प्रयत्न किया। इनमें सब से ऊँचा स्थान रूसो (Rousseau) को प्राप्त है। उसने तथा उसके सहयोगियों ने समाज की ऐसी व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठाई जिसमें कृषकों की दशा अधिक गिरी हुई थी एवं अमीर उमरा व पादरी भोग विलास का जीवन व्यतीत करते थे। द्वितीय की संख्या एक प्रतिशत से भी कम थी, किन्तु उनके अधिकार अत्यन्त विस्तृत थे। समस्त पूँजी के दो तिहाई पर उनका अधिकार था लेकिन वे परिश्रम करने से डरते थे। इंग्लैंड में कुलीन व प्रतिष्ठित लोगों के अधिकार में भूमि का अधिकतर भाग था। शासन, सेना, समुद्री बेड़े तथा चर्च में उनको उच्च पद प्राप्त थे तथा हाउस आफ़ कामन्स में भी उनका काफ़ी बोल बाला था। फ्रांस में कुलीन वर्ग के लोगों तथा पादरियों के अधिकार में भूमि का एक तिहाई भाग था। पर वे महसूलों से मुक्त थे तथा शान शौकत से जीवन व्यतीत करते थे। वहाँ कार्डिनल दी रोओं (Cardinal de Rohan) एक विख्यात पादरी था। वह काम तो बिल्कुल न करता था किन्तु उसकी वार्षिक आय २५ लाख डालर थी। इसके विरुद्ध एक साधारण पादरी की, जिसे गिर्जा का समस्त कार्य करना पड़ता था, वार्षिक आय केवल १५० डालर थी। कुछ अन्य देशों में उनकी इससे भी बुरी दशा थी। कुलीन वर्ग तथा पादरियों के व्यवहार के

सामाजिक दशा

विरुद्ध बहुत कुछ लिखा गया गया है। इसमें अतिशयोक्ति अवश्य है किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उनका नैतिक स्तर बहुत गिरा हुआ था।

मध्यम श्रेणी के लोग सर्वप्रथम अमीर उमरा तथा पादरियों का सामना करने के लिये खड़े हुये। इस वर्ग में व्यापारियों तथा दस्तकारों के अतिरिक्त डाक्टर, प्रोफ़ेसर, लेखक, न्यायाध्यक्ष तथा दार्शनिक आदि भी सम्मिलत थे। जो व्यापारी धनी मानी थे वे सम्राट तथा कुलीन लोगों को ऋण देकर अपने लिये विशेष अधिकार प्राप्त कर लिया करते थे। कुछ लोग अपने धन के बल सम्राट के दरबारी बन जाते थे। बहुधा ऐसा भी होता था कि साधारण कोटि के किसी धनी परिवार की पुत्री किसी प्रतिष्ठित अमीर के पुत्र से विवाह कर लेती थी। इंग्लैंड में सम्पत्तिशाली लोग व्यवस्थापिका सभा में स्थान पाने के अधिकारी थे। मध्यम श्रेणी के बहुत से लोग ऐसे भी थे जो इस प्रकार के अधिकारों से वंचित रहते थे। अत: वे कुलीन वर्ग व पादरियों के विरुद्ध बने रहे।

कृषकों की दशा संतोषजनक न थी। वे ग्रामों में झोपड़ियों में निवास करते थे, किन्तु वहाँ न तो किसी प्रकार का सुरक्षित प्रकाश ही का प्रबन्ध था एवं न स्वच्छता पर ध्यान दिया जाता था। उन्हें प्रात: उषा की प्रथम किरण से संध्या को देर तक कठिन परिश्रम करना पड़ता था। तब कहीं उन्हें भर पेट खाना प्राप्त होता था। अधिकतर कृषक वर्ग अशिक्षित थे और बाहरी दुनिया से कोई सम्बन्ध न रखते थे। इसी कारण सम्भवत: वे अपने कष्टों को कम अनुभव कर पाते थे। उनके विषय में साधारणतया यह विचार था कि वे केवल उच्च श्रेणी के लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये बनाये गये हैं।

तीसरा अध्याय

फ्रांस की राज्यक्रांति के जन्मदाता

दार्शनिक तथा लेखक

नेपोलियन ने एक समय कहा था कि यदि रूसो का जन्म न होता तो फ्रांस की राज्यक्रांति का होना असम्भव था। यूरोप के इस महान् व्यक्ति ने यह बात अवश्य बड़े विचार और ध्यान के पश्चात् कही होगी। इस में अति अधिक सत्यता का अंश है। इसमें न केवल उक्त क्रांति के उत्पन्न होने का महान् कारण ही उपस्थित है वरन् उसके सफलता की सीमा तक पहुँचने का सब से बड़ा रहस्य भी विलुप्त है। वास्तव में यदि फ्रांस में रूसो तथा अन्य दार्शनिक व लेखक न हुते तो सम्भवतः वहाँ क्रांति न होती, और यदि क्रांति उत्पन्न होती भी तो अन्य देशों की क्रांतियों की भाँति, जो सन् १८१५ ई० के पश्चात् उत्पन्न हुईं, शीघ्र ही समाप्त हो जाती और उसका महत्व भी बिल्कुल कम होता। राष्ट्रीय जागृति के इन वीरों ने मध्यम श्रेणी के लोगों को सब से अधिक प्रभावित किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने सर्वसाधारण के निर्जीव हृदयों में भी प्राण फूंक दिया, उन्हें बतलाया कि वे क्या हैं और क्या बन सकते हैं? और उन्हें स्वतंत्रता, समानता और बान्धुत्व का मन्त्र पढ़ाया। यह मन्त्र फ्रांस की राज्यक्रांति का मूल मन्त्र बन गया। दार्शनिकों तथा लेखकों के विचारों से प्रभावित होकर फ्रांस में मीराबो (Mirabeau), रोबेस्पेयर (Robespierre) तथा मध्यम श्रेणी के अन्य नेता तैयार हुये, जिन्होंने आम जनता के जोश, उत्साह और जागृति से लाभ उठा कर शासक तथा कुलीन वर्ग के लोगों को नीचा दिखाने का प्रयत्न किया।

फ्रांस की जागृति को, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, हम यूरोप की

उस असाधारण बौद्धिक जागृति (Enlightenment) से पृथक नहीं कर सकते जो वहाँ सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दियों में हुई। द्वितीय के कारण न केवल वैज्ञानिकों एवं दार्शनिकों वरन् आम लोगों के दृष्टिकोण तथा विचारों में इतना अधिक परिवर्तन हुआ कि उसे हम यदि बौद्धिक क्रांति (Intellectual Revolution) के नाम से पुकारें तो अधिक श्रेयस्कर होगा। इसका प्रभाव धीरे धीरे विभिन्न देशों में प्रकट हुआ। इसके प्रभाव से लोगों के हृदयों में ईसाई धर्म के प्रति श्रद्धा कम हो गई तथा वे उससे सम्बन्ध रखने वाले निराधार सिद्धान्तों व ढकोसलों को संदेह की दृष्टि से देखने लगे। इसके अतिरिक्त वे प्रत्येक विषय की वास्तविकता को समझने का प्रयत्न करने लगे तथा उसे बुद्धि तथा विज्ञान की कसौटी पर कसने लगे। इस आश्चर्यजनक बौद्धिक विकास में विज्ञान विहारों, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों एवं अजायबघरों आदि से यथेष्ट सहायता मिली। अधिकतर इनका कार्य शासन के संरक्षण में हुआ। इसका सबसे ज्वलन्त उदाहरण इंग्लैंड की 'रायल अकेडेमी' (Royal Academy of England) का है। इसकी स्थापना सन् १६६२ ई० में हुई थी। इसी प्रकार की एक ऐकेडेमी फ्रांस में सन् १६६६ ई० में स्थापित की गई थी। उस समय समाचारपत्र तथा मासिक पत्रिकायें भी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो चुकी थीं। इनसे भी बौद्धिक जागृति के कार्य में सहायता प्राप्त हुई।

असाधारण बौद्धिक जागृति

बौद्धिक जागृति के पथप्रदर्शकों तथा नेताओं ने किसी एक ही दिशा में क़दम नहीं बढ़ाया बल्कि उन्होंने विभिन्न दिशाओं में समालोचनात्मक दृष्टि डाली। कुछ ने चर्च के दोषों पर प्रकाश डाला। अन्य विद्वानों ने कुछ अन्य दिशाओं में सुधार करने का प्रयत्न किया, जैसे कानून और अदालत, महसूल, समाज की गिरी हुई अवस्था और उत्पत्ति आदि। किन्तु एक व्यक्ति ऐसा भी था जिसने प्रत्येक दिशा में समालोचना की दृष्टि डाली एवं सुधार करने का प्रयत्न किया। अतएव उसकी गणना बौद्धिक क्रांति के नेताओं में सब से आगे होती है। इसका नाम वोल्तेयर (Voltaire) है। उसने विज्ञान का अध्ययन अवश्य किया था परन्तु उसे आधुनिक दृष्टिकोण से वैज्ञानिक नहीं कह सकते। निस्सन्देह वह एक विख्यात दार्शनिक तथा सुधारक था। वोल्तेयर के अतिरिक्त फ्रांस में कुछ अन्य दार्शनिक तथा लेखक भी हुये जिनका जनसाधारण पर अधिक प्रभाव पड़ा। इन सबको हम फ्रांस की राज्यक्रांति का जन्मदाता कह सकते हैं। अगले पृष्ठों में हम उनका विशुद्ध वर्णन करेंगे।

वोल्तेयर (१६९४-१७७८)

वोल्तेयर क़लम का धनी था। जब वह एक बालक था तब भी उसका झुकाव कविता की ओर था। पर उसके पिता को यह अच्छा न लगता था। वह चाहता था कि उसका बेटा क़ानून के पढ़ने में चित्त लगावे किन्तु वोल्तेयर का मस्तिष्क एक विशेष ढाँचे में ढला हुआ था। उसे इस बात का शौक था कि रंगीन समाज में बैठकर अपनी विशेषताओं का प्रदर्शन करे। विशेषत: वह पादरियों तथा फ्रांस के उत्तराधिकारी ड्यूक आफ़ आर्लियंज़ को अपनी आलोचना का लक्ष्य बनाता था। द्वितीय ने अप्रसन्न होकर उसे एक साल के लिये बेस्तील (Bastille) के कारागृह में बन्द कर दिया। कुछ वर्षों के पश्चात् एक अमीर ने उसे दूसरी बार वहाँ बन्दी कराया और फिर उसे तीन वर्ष के लिये देश से निर्वासित कराके इंग्लैंड भिजवा दिया। कुछ समय तक वोल्तेयर फ्रैड्रिक महान् के संरक्षण में भी रहा था। किन्तु उसने इस बिगड़े दिमाग़ सम्राट के साथ व्यवहार करने में न तो दूरदर्शिता से ही काम लिया और न उसका उतना सम्मान ही किया जिसका कि वह अधिकारी था। अतएव उसे बर्लिन छोड़ने पर बाध्य होना पड़ा। वह रूस की सम्राज्ञी कैथरिन के दरबार में भी रहा था। अपने जीवन का कुछ भाग उसने स्विटज़रलैंड के प्रसिद्ध नगर जिनेवा में व्यतीत किया था। ८४ वर्ष की आयु में वह फ्रांस लौटा। यहीं उसकी मृत्यु हुई।

संक्षिप्त जीवनी

बेस्तील के कारागृह से उन्मुक्त होने पर वोल्तेयर के शिष्टाचार व व्यवहार में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ। उसने न्यूटन के बतलाये वैज्ञानिक सिद्धान्तों तथा लॉक के दर्शन का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया। उसने अपने चारों ओर के समाज का निरीक्षण किया तथा उस अत्याचार व कुप्रथाओं को देखकर दु:ख प्रकट किया जिनका सार्वजनिक रूप से चलन था। वह प्राचीन ऐतिहासिक ग्रंथों के अध्ययन में निमग्न हुआ तथा इस बात के ज्ञात करने का प्रयत्न किया कि क्या अन्य देशों तथा कालों में मानव की दशा अधिक संतोषजनक थी। इन समस्त अनुभवों का, जो वोल्तेयर ने प्राप्त किये थे, एक विशेष लाभ यह हुआ कि उसे सुधार करने की लगन लग गई। इस विषय में उसका नाम इतिहास में अमर है। एक अन्य लाभ यह हुआ कि उसके कारण इतिहास का रूप ही बदल गया। इसके पूर्व वह पारिवारिक घटनाओं तथा तिथियों के जाल में उलझा हुआ था। वोल्तेयर ने उसे इस दशा से आज़ाद करके सभ्यता व संस्कृति तथा सामाजिक विषय के महत्व पर ज़ोर दिया। उसकी पुस्तक 'चौदहवें लुई का युग' (Age of Louis XIV) से इतिहास का यह नया रूप भली भाँति प्रकट होता है।

प्रगतिशील इतिहासकार

वोल्तेयर के अगणित लेख

वाल्तेयर असाधारण योग्यता का पुरुष था किन्तु उसकी योग्यता एक सीमित क्षेत्र में आबद्ध न थी। उसने इसका प्रयोग विभिन्न दिशाओं में किया। उसने अगणित छोटी किताबें, व्यंगपूर्ण लेख, निबन्ध, कहानी तथा पत्र आदि रचे। केवल उसके पत्रों की संख्या लगभग १० सहस्र होगी। अतएव हम कह सकते हैं कि उसकी समता के लेखक बड़ी कठिनाई से मिलेंगे। वह एक कवि, इतिहासकार, दर्शन का पण्डित, नाटककार तथा सम्पादक अर्थात् सब कुछ था। किन्तु उसने सबसे अधिक प्रसिद्धि अपने व्यंगात्मक लेखों के कारण प्राप्त की थी। यों तो उसने अपनी ज़ोरदार लेखनी के द्वारा उस युग के अन्याय व अत्याचार, धार्मिक पक्षपात एवं निराधार विश्वासों के विरुद्ध युद्ध किया था। परन्तु उसके तरकश के सबसे अधिक तेज़ तथा विष में डूबे हुये वे बाण थे जो चर्च पर वार करने के लिये सुरक्षित थे। इनको उसने अत्यन्त सावधानी से प्रयोग किया। पादरियों ने भी उसका सामना बड़ी वीरता से किया। लेकिन समय बदल चुका था। अठारहवीं शताब्दी तक चर्च में भी निर्बलता उत्पन्न हो चुकी थी। अतएव पादरी वोल्तेयर का कुछ न बिगाड़ सके।

उसके क्रांतिकारी सिद्धांत

वाल्तेयर के सिद्धांतों से साधारण रूप में मध्यम तथा उच्च श्रेणियों के लोग सहमत थे। उनका न केवल फ्रांस बल्कि समस्त यूरोप के निवासी सम्मान करते थे। विशेषतया वह अपने धार्मिक सिद्धांतों के लिये सब जगह विख्यात था। वह चर्च को 'बदनाम चीज़' (*l'infame*) कह कर पुकारता था। उसका विचार था कि कैथोलिक और प्रोटैस्टैंट दोनों ही धर्मों में प्रकट दोष हैं। उसके लिये सभी पादरी ढोंगी थे। सभी चमत्कार मक्कारी से पूर्ण थे तथा सभी 'ईश्वरीय वाक्य' बनावटी थे। वह कहा करता था कि ईसाई गिर्जे कुछ समय के लिये क़ायम रह सकते हैं, क्योंकि उन से जाहिलों को शान्ति मिलती है और उनके भय से निम्न श्रेणी के लोग सिर नहीं उठा सकते। किन्तु मध्यम व उच्च श्रेणियों के लोगों के लिये प्राकृतिक धर्म जिसमें केवल ईश्वर के अस्तित्व तथा प्राकृतिक नियमों पर ज़ोर दिया जाता है, काफ़ी है। वोल्तेयर के सिद्धांत क्रांतिकारी थे। वे साधारण रूप से समस्त यूरोप में मध्यम तथा उच्च श्रेणी के लोगों के लिये उपयुक्त थे। उनके कारण वहां ईसाई धर्म के विरुद्ध जो हज़ारों वर्ष प्राचीन था एक लहर दौड़ गई। फ्रांस में ईसाई धर्म की जड़ें हिल गईं और सन् १७८९ ई० की क्रांति के लिये भूमि तैयार हो गई।

दिदरो तथा आलोंबेयर

बौद्धिक विकास का प्रभाव यूरोप के सभी देशों में प्रकट हुआ था किन्तु उसका सबसे अधिक प्रकाश फ्रांस में हुआ। वोल्तेयर के समान वहां कुछ अन्य विद्वान भी हुये जिन्होंने उससे कम कीर्ति प्राप्त नहीं की। इनमें दो उच्च कोटि के विद्वान तथा तत्ववेत्ता दिदरो (Diderot) तथा आलोंबेयर (Alembert) थे। उनके लेखों का इतना अधिक विकास तो नहीं हुआ जितना कि वोल्तेयर के लेखों का हुआ था, किन्तु बहुधा उसके निबन्ध अधिक महत्वपूर्ण तथा ज़ोरदार थे। प्राचीन काल के यूनानी दार्शनिक सुकरात की भांति उनका भी दृढ़ विश्वास था कि बौद्धिक विकास के साथ आध्यात्मिक उन्नति स्वयं हो जाती है और समाज की दशा भी सुधर जाती है। इस धारणा के अनुसार उन्होंने उपस्थित विद्याओं को इकट्ठा करके एक 'विश्व-कोष' (Encyclopedia) की रचना की जो सत्रह भागों में सन् १७५१ ई० व सन् १७७२ ई० के बीच प्रकाशित किया गया। उसके विषयों को भावपूर्ण बनाने के विचार से ग्यारह पुस्तकें चित्रों की भी प्रकाशित की गईं। दिदरो एवं आलोंबेयर को उस युग के योग्य गणितज्ञों, ज्योतिषियों, दार्शनिकों तथा विज्ञानवेत्ताओं आदि से काफ़ी मदद मिली, क्योंकि विभिन्न विषयों पर प्रकाश डालने वाले यही लोग थे। उनका विश्व-कोष न केवल उस युग की विद्याओं का कोष है वरन् उस काल की जागृति व उन्नत विचारों का स्रोत भी है। उसके प्रकाशित होने से वोल्तेयर के दार्शनिक सिद्धांतों तथा विचारों की नींव दृढ़ होगई।

फ्रांस की सरकार ने विश्व-कोष के प्रकाशन को रोकने का कई बार प्रयत्न किया किन्तु वह सफल न हुई। उक्त कोष का फ्रांस के शिक्षित लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। उनके मन में उन्नति व सुधार के पथ पर अग्रसर होने की आकांक्षा उत्पन्न हुई। इस प्रकार वे सन् १७८९ ई० की राज्यक्रांति के स्वागत के लिये तैयार हो गये।

मौन्तस्क्यू तथा रूसो

फ्रांस के दो अन्य विख्यात दार्शनिक मौन्तस्क्यू (Montesquieu) तथा रूसो (Rousseau) हैं। उनके दार्शनिक तत्वों का भी फ्रांस की राज्यक्रांति पर काफ़ी प्रभाव पड़ा। विशेषतया रूसो के बतलाये हुये सिद्धान्तों से तो सभी वर्गों के लोग प्रभावित हुये और जब तक क्रांति संचालित रही तब तक क्रांतिकारी बराबर रूसो तथा उसके सिद्धान्तों की दुहाई देते रहे। इन दार्शनिकों के नाम नये ढंग की वैधानिक शासन पद्धति के सिद्धान्त से सम्बद्ध हैं। इस सिद्धान्त के

व्यवहार में लाये जाने के पूर्व कुछ विद्वान उस पर अपने विचार प्रकट कर चुके थे। इन में अंगरेज़ी दार्शनिक लॉक (Locke) का नाम सबसे अधिक उल्लेखनीय है। जोन लॉक (१६३२-१७०४) सत्रहवीं शताब्दी के विनाशकारी युद्धों के समय में हुआ था। अतएव उसके विचारों पर इनका गहरा प्रभाव पड़ा था। उसके दार्शनिक सिद्धान्तों से लाभ उठाकर अठारहवीं शताब्दी में मौन्तस्क्यू तथा रूसो आदि ने अपने दार्शनिक सिद्धांत निर्मित किये। लॉक के दर्शन का सारभूत तत्व यह है कि जीवन, स्वतन्त्रता तथा सम्पत्ति ये तीन मनुष्य के प्राकृतिक अधिकार हैं। इन तीनों की सुरक्षा के लिये सब लोग मिलकर 'शासन' का सृजन करते हैं। यदि शासन ठीक प्रकार से अपना उत्तरदायित्व पूरा नहीं कर सकता तो ऐसी दशा में क्रांति के द्वारा उसको बदल देना प्राकृतिक अधिकार तथा बुद्धिमत्ता के अनुसार होगा। लॉक के दर्शन का न केवल इंग्लैंड वरन् अमेरिका व फ्रांस में भी गहरा प्रभाव पड़ा। यदि सच पूछिये तो उसने अपने दर्शन के द्वारा तीन बड़ी क्रांतियों अर्थात् सन् १६८८ ई० की अंगरेज़ी क्रांति, अमेरिकन क्रांति तथा फ्रांसीसी क्रांति का समर्थन किया था।

मौन्तस्क्यू

मौन्तस्क्यू (१६८९-१७५५) फ्रांस का एक बहुत बड़ा विद्वान तथा तत्ववेत्ता था। वह लॉक के विचारों एवं राजनैतिक सिद्धान्तों से अधिक प्रभावित हुआ था। उसका जन्म एक ऊँचे वंश में हुआ था तथा वह वकालत करता था। वह काफ़ी भ्रमण किये हुये था। अतएव उसे संसार का यथेष्ट अनुभव था। वह एक ऐसा व्यक्ति था जिसे सांसारिक कठिनाइयों का सामना बहुत कम करना पड़ा था। वह कैथोलिक धर्म का अनुयायी तथा राजसत्ता का पक्षपाती था। अतएव न वह अपने विचारों से क्रांतिकारी था और न उसका व्यवहार ही क्रांतिकारियों के समान था। उसने दबी ज़बान से शासन और चर्च के दोषों को प्रकट किया था। उसकी दो प्रसिद्ध पुस्तकें 'पर्शियन लैटर्स' (Persian Letters) तथा 'दि स्प्रिट आफ़ दि लाज़' (The Spirit of the Laws) हैं। इनके अध्ययन से प्रकट होता है कि उसके विचार बिल्कुल व्यक्तिगत थे और वह राजनीति का बहुत बड़ा पण्डित था।

उस काल के बहुधा दार्शनिकों के विरुद्ध मौन्तस्क्यू का कथन था कि राजनीति को न केवल तर्कशास्त्र का सहारा लेना चाहिये और न उसका आधार एक कृत्रिम 'प्राकृतिक दशा' (State of Nature) अथवा किसी काल्पनिक 'समाज- संविदा' (Social Contract) पर स्थापित करना चाहिये। वरन् हमारा कर्तव्य है कि पहले हम मनुष्य के इतिहास पर आलोचनात्मक दृष्टि डालें और तब

शासन पद्धति के सम्बन्ध में कोई मत स्थिर करें। सब राष्ट्रों के लिये एक ही प्रणाली का शासन प्रत्येक प्रकार से उचित प्रमाणित नहीं हो सकता। प्रत्येक राष्ट्र को अपना शासन संगठन अपनी आवश्यकता के अनुसार निश्चित करना चाहिये। कुछ बातें ऐसी भी हैं जो सभी शासनों के लिये आवश्यक हैं। उदाहरण के लिये कार्यपालिका (Eeecutive), विधान-मंडल (Legislature) तथा न्याय-पालिका (Judiciary) का एक दूसरे से पृथक होना तथा इस प्रकार संचालित होना कि उनमें से कोई भी परिमित सीमा से आगे न बढ़ सके। मौन्तस्क्यू के विचार बहुत ऊंचे थे। अतएव वे जनसाधारण की समझ के बाहर थे। सन् १७९१ ई० का संविधान निर्माण करते समय फ्रांस के निवासियों ने मौन्तस्क्यू के सिद्धान्तों से अधिक लाभ उठाया था।

रूसो (१७१२—१७७८) ने लॉक और मौन्तस्क्यू से अधिक ख्याति प्राप्त की। वह फ्रांस का रहने वाला था लेकिन उसका जन्म जेनीवा में हुआ था। उसका पिता वहां घड़ीसाज़ी का काम करता था। उसने नियमित रूप से किसी पाठशाला में शिक्षा प्राप्त न की थी। वह भ्रमण व यात्रा का प्रेमी था। उसने विभिन्न देशों का भ्रमण किया तथा जेनीवा, ट्यूरिन, पेरिस तथा वियेना आदि नगरों में मित्र उत्पन्न किये। उसने एक के पश्चात् दूसरे पेशे को ग्रहण किया। कुछ में उसे सफलता मिली किन्तु अधिकतर वह असफल रहा। रूसो का चरित्र अच्छा न था। वह द्यूत क्रीड़ा का प्रेमी था। उसने अपने बच्चों तक की चिन्ता न की थी। अतएव उसने उन्हें अनाथालय में छोड़ दिया था।

रूसो

इस आश्चर्यकारी पुरुष ने, जो अपने परिवार की व्यवस्था न कर सकता था, दूसरों को अपने आकर्षण से प्रभावित कर दिया था। उसके व्यक्तिगत जीवन की दशा जान कर आश्चर्य उत्पन्न होता है, परन्तु उसके मन में अत्यन्त श्रेष्ठ उद्गार छिपे हुये थे। वह ऐसे समय में प्रकृति से प्रेम करता था जब दूसरे विद्वान उसकी ओर केवल आकर्षित हुये ही थे। अन्य दार्शनिक मानवी उद्गारों के महत्व को न समझते थे और केवल मानवी मस्तिष्क की क़द्र और प्रशंसा करना जानते थे। इसके विपरीत रूसो प्रकृति का पुजारी था। वह नीले, स्वच्छ आकाश, लहलहाते चरागाहों एवं प्रकृति के चमत्कारों को देखा करता था और उसे इस बात के स्वीकार करने से परहेज़ न था। उसने अठारहवीं शताब्दी के लोगों को इस बात का स्मरण कराया कि सूर्यास्त को देखकर उतनी ही प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है जितनी कि बीजगणित के प्रश्नों को हल करने से। वास्तव में रूसो के हृदय में एक कवि के उद्गार छिपे हुये थे। यदि हम उसे छायावाद (Romanticism) का अग्रगामी कहें तो अधिक उचित होगा।

रूसो का प्रेम न केवल प्राकृतिक दृश्यों से वरन् प्राकृतिक अवस्था में मानव से भी था। उसका विचार था कि प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य एक 'भद्र पशु' के समान तथा अनेक गुणों से सम्पन्न था। इस विचार से रूसो ने अपने प्रथम निबन्ध (Discourse on Arts & Sciences) में, जो उसने सन् १७४६ ई० में लिखा था, प्राकृतिक अवस्था रखने वाले मानव की तुलना सभ्य मनुष्य से की है और बतलाया है कि यदि सब लोग प्राकृतिक अवस्था में लौट आवें तो वे सब स्वतंत्र और बराबर हो जायें। कोई भी व्यक्ति पृथ्वी को अपनी न बतलाये, क्योंकि ईश्वर ने उसे सबके लिये बनाया है। किसी को न कोई कर देना पड़े और न कानून की शरण ही लेनी पड़े। मनुष्य को भयंकर संग्रामों से भी सदा के लिये छुटकारा प्राप्त हो जाये। रूसो ने एक अन्य लेख (Original of Inequality Among Men) में, जो उसने सन् १७५३ ई० में लिखा था, इस विषय पर प्रकाश डाला था कि 'सीधे सादे पशुओं' के हृदयों में किस प्रकार घमंड, लालच और स्वार्थ ने अपना घर बनाया तथा उन्हें पथभ्रष्ट कर दिया। नौबत यहां तक आई कि सबसे शक्तिशाली लोगों ने खेतों के चारों ओर चहारदीवारी निर्माण की एवं निर्बलों को इस बात पर विवश किया कि उन्हें अपना स्वामी स्वीकार करें। यही वह रहस्य है जिस से मानव की गिरी हुई अवस्था तथा उसकी समस्त विपत्तियों की उत्पत्ति हुई थी।

रूसो के दो प्रसिद्ध निबन्ध

कुछ ही वर्षों के पश्चात् रूसो ने एक संक्षिप्त पुस्तक की रचना की, जो 'सोशल कन्ट्रैक्ट' अथवा समाज-संविदा (Social Contract) के नाम से विख्यात है (सन् १७६१)। इसका विषय भी वही है जो लॉक के दर्शन का मुख्य आधार है। अर्थात् इसमें भी इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि सभी शासन सत्ताओं की उत्पत्ति एक संविदा के द्वारा हुई है, जिसे लोगों ने प्राकृतिक दशा में रहते समय किया था और जिसे वे इच्छानुसार बदल भी सकते हैं। यदि शासन और शासित में से कोई इसके विरुद्ध कार्य करे तो दूसरे को इस बात का अधिकार होगा कि वह उसे उचित दंड दे। उपरोक्त पुस्तक की शीघ्र ही इतनी प्रतिष्ठा हुई कि उसे मालूम करके आश्चर्य होता है। लॉक को इतनी अधिक सफलता कभी भी न मिली थी। इसका कारण यह है कि समय का परिवर्तन हो गया था। सन् १६६१ ई० की अपेक्षा सन् १७६१ में लोग इस बात को सुनने के लिये अधिक तैयार थे कि शासन सत्ताओं की तुलना में जनसाधारण की श्रेणी अधिक उच्च है। एक विशेष बात यह थी कि रूसो ने अपने विचारों को अधिक ज़ोरदार, सुन्दर और जादू का

सोशल कन्ट्रैक्ट

असर रखने वाले शब्दों में प्रकट किया था। परिणाम यह हुआ कि वह नई प्रणाली के जनतंत्र तथा गण-राज्य का जन्मदाता स्वीकार किया जाने लगा।

रूसो का एक विशेष नारा यह था—'प्रकृति की ओर लौट चलो।' इसकी झलक उसकी बतलाई हुई शिक्षा प्रणाली से भी प्रकट होती है, जिसका प्रतिपादन उसने अपने एक विशेष उपन्यास (Emile) में किया था। इसकी रचना सन् १७६२ ई० में की गई थी। इसके अनुसार हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति में क्रांति की आवश्यकता है। उसका कथन था कि प्रारम्भ में विद्यार्थियों को उनकी प्राकृतिक रुझान के अनुसार शिक्षा दी जानी चाहिये। उन्हें बनावटी शिक्षा से जिसे वे घृणा की दृष्टि से देखते हैं और जो उनके चरित्र को दूषित करती है, दूर रखना चाहिये। लेटिन एवं ग्रीक के स्थान पर व्यावहारिक तथा उपयोगी बातें सिखाना चाहिये। "उन्हें वे बातें सिखलाओ जो उन्हें बड़े होकर करना हैं। ऐसी बातें मत सिखलाओ जो वे आवश्यक रूप से भूल जायेंगे।" यदि हम रूसो के मत का अक्षरश: पालन करें तो वर्तमान शिक्षा पद्धति के समस्त दोष दूर होजायें एवं समाज की दशा में भी सुधार हो जाये।

शिक्षा प्रणाली पर रूसो का मत

रूसो ने जो प्रभाव धनी व निर्धन, छोटे और बड़े पर पैदा किया था, उस पर ठीक प्रकार से प्रकाश डालना कठिन है। 'प्रकृति की ओर लौट चलो'—यह वाक्य शीघ्र ही समस्त फ्रांस का नारा बन गया तथा शाही दरबार के अमीर तक प्रकृति की ओर झुकाव दिखलाने लगे। सम्राज्ञी मेरी एन्तोयनेत ने अपने लिये एक छोटा सा बँगला बनवाया तथा ग्वालिन के काम में दिलचस्पी ली। उसकी दासियां बाहर आकर तालाबों में मछलियां पकड़ने लगीं। यूरोप के बड़े बड़े विद्वानों ने रूसो की प्रशंसा की तथा उसके सिद्धान्तों से लाभ उठाया। डेविड ह्यूम, टॉमस पेन, हर्डर और काँट सभी उसके समर्थक थे। फ्रांस में नई दृष्टि के सहस्त्रों व्यक्ति ऐसे थे जिन्होंने उसके दर्शन के कारण कुछ वर्ष के पश्चात् वहां एक बहुत बड़ी क्रांति उत्पन्न की, जिसका प्रभाव जीवन के प्रत्येक अंग पर पड़ा। इसके पश्चात् भी न केवल फ्रांस अथवा यूरोप वरन् समस्त संसार के देशों में भी स्वतंत्रता के पुजारियों को रूसो से प्रकाश प्राप्त होता रहा।

रूसो का प्रभाव

केने और तूर्गो

सन् १७८९ की क्रांति के पूर्व अथवा उसी काल में, फ्रांस में कुछ ऐसे विद्वान भी हुये जो आर्थिक जगत में हस्तक्षेप न किये जाने की नीति के पक्षपाती थे। इनका मुख्य सिद्धान्त यह था कि समस्त सम्पत्ति प्रकृति (ग्रीक भाषा में Physis)

से प्राप्त होती है। अतएव इस वर्ग के लोग इतिहास में निर्बाधावादी (Physiocrats) कहलाते हैं। इनमें केने (Quesnay) और तूर्गो (Turgot) का स्थान सबसे ऊँचा है। केने (१६६४-१७७४) एक मध्यम श्रेणी का व्यक्ति था और पन्द्रहवें लूई के दरबार में चिकित्सक के पद पर प्रतिष्ठित था। तूर्गो सन् १७७४ ई० से सन् १७७६ ई० तक सोलहवें लूई का मन्त्री रहा था। इन दोनों तथा अन्य निर्बाधावादियों की मुख्य शिक्षा यह थी कि किसी राष्ट्र की सम्पत्ति प्रकृति अर्थात् कृषि, जंगल व खानों आदि से प्राप्त होती है। व्यापारी तथा दस्तकार देश की सम्पत्ति में वृद्धि नहीं करते। वे तो केवल उसको एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित करते हैं अथवा एक प्रकार की सम्पत्ति देकर दूसरी प्रकार की सम्पत्ति प्राप्त करते हैं। ऐसी दशा में वे समस्त रुकावटें जो शासन की ओर से व्यापार तथा कलाकौशल के मार्ग में उत्पन्न कर दी गई हैं, प्रकृति के बिल्कुल विरुद्ध हैं। उनका परिणाम केवल यह हो सकता है कि वे कृषि को, जिस से किसी राष्ट्र को सबसे अधिक लाभ होता है, क्षति पहुंचायें। केने और उसके समर्थकों का नारा था 'सबको इच्छानुसार कार्य करने दो' (Laissez-faire)। उनका सिद्धान्त सरकारी हस्तक्षेप (Mercantilism) की नीति के बिल्कुल विरुद्ध था। सत्रहवीं शताब्दी में द्वितीय का खास ज़ोर था।

अन्य लेखक

वोल्तेयर, मौन्तस्क्यू एवं रूसो अपने युग के देव थे। उनके पश्चात् दिदरो, आलोंबेयर एवं केने आदि की गणना होती है। इन सब के बाद कुछ लेखक तृतीय श्रेणी के भी थे जिन्होंने किसी महान् सिद्धांत का प्रचार तो नहीं किया परन्तु जिनका जनसाधारण पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। उदाहरण के रूप में वे लोग जिन्होंने नाटकों की रचना की तथा रंगमंच के द्वारा सामाजिक प्रथाओं की खिल्ली उड़ाई; वे लोग जिन्होंने सहस्त्रों संक्षिप्त पुस्तकों अथवा पत्रों द्वारा देश में जागृति उत्पन्न की; रेनाल (Raynal) के समान इतिहासकार जिन्होंने फ्रांस के निरंकुश शासन की तुलना अन्य देशों के प्रजातंत्रीय शासनों से की; माबली (Mably) और उसकी श्रेणी के अन्य लेखक जिन्होंने सामाजिक दोषों पर प्रकाश डाला एवं जिनके नामों से सभी बड़े क्रांतिकारी परिचित थे। फ्रांस की राज्यक्रांति के लिये इस श्रेणी के लेखकों की सेवायें भी प्रशंसनीय हैं। अतएव हम इनकी किसी दिशा में भी उपेक्षा नहीं कर सकते।

नहीं है कि वैधानिक रूप से अपने अधिकारों को सीमित करके शासन कर सके। उसे यह बात पसन्द भी न थी कि सदैव विधान के शिकंजे में जकड़ा रहे। अतएव उसने २१ जून सन् १७९१ ई० को उत्तर-पूर्वीय दिशा में भागने का प्रयत्न किया, किन्तु वेरिनीज़ (Verennes) के स्थान पर बन्दी कर लिया गया। इस प्रकार हमारे नाटक का दूसरा अंक समाप्त हुआ।

तृतीय अंक:—तीसरा अंक २१ जून से १० अगस्त तक क़ायम रहा। फ्रांस के शत्रुओं की ओर भाग जाने का प्रयत्न लूई और उसके कुटुम्ब वालों के लिये नाशकारी सिद्ध हुआ। इस से क्रांति की प्रगति फिर से तेज़ हो गई, और गरम दल वालों को इस बात का अवसर मिल गया कि शासन को अपने अधिकार में लाने का प्रयत्न करें। अन्य देशों से युद्ध भी आरम्भ हो गया था। उधर सम्राट और उसके साथियों की गति विधि न बदली थी। वे शासन के कार्य में अनुचित रूप से हस्तक्षेप करते थे। उन्होंने देश के शत्रुओं से पत्रव्यवहार भी बन्द न किया था। इन समस्त कारणों से, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है, १० अगस्त सन् १७९२ ई० को पेरिस के सर्वसाधारण और उग्रवादियों ने शाही महल पर भीषण आक्रमण किया। उन्होंने अन्दर प्रवेश करके स्वेच्छापूर्वक लूटमार की तथा अन्य भयंकर कृत्य भी किये। जिस दिन ये सब कृत्य किये गये थे उसी दिन सम्राट सिंहासन से च्युत कर दिया गया और उसके भाग्य का निर्णय करने के लिये एक प्रसभा (Convention) बुलाई गई। इस प्रकार तीसरा अंक समाप्त हुआ।

चौथा अंक:—क्रांतिकारी नाटक का चौथा अंक प्रसभा की बैठक अर्थात् सितम्बर सन् १७९२ ई० से अक्टूबर सन् १७९५ ई० तक स्थापित रहा। इस बीच में कई महत्वपूर्ण मामले उसके सम्मुख रक्खे गये। उदाहरण के लिये, युद्ध का प्रबन्ध, सम्राट के भाग्य का निर्णय, पादरियों की समस्या तथा भोजन व मज़दूरी के प्रश्न आदि। जिरोंदिन दल (Girondin Party) ने, जिसके हाथों में शासन था, इस विषय में जब निर्बलता तथा अयोग्यता प्रदर्शित की तो जेकोबिन दल (Jacobin Party) के सदस्यों ने उसे हटाकर जून सन् १७९३ ई० में शासन पर स्वयं अधिकार कर लिया। उस समय ये दोनों दल* रेडिकल अथवा उन्मूलवादी सिद्धान्त के पक्षपाती थे। परन्तु प्रथम की तुलना में द्वितीय के विचार एवं सिद्धांत

*आरम्भ में 'जेकोबिन' और 'जिरोंदिन' दलों के नाम न थे। जेकोबिन एक क्लब का नाम था जिसकी इसी नाम की गली में बैठक होती थी और जिरोंदी फ्रांस के एक डिपार्टमेंट अथवा प्रान्त का नाम था जो पश्चिम की

अधिक उग्रवादी थे। जेकोबिन दल के प्रभुत्व प्राप्त करने के साथ साथ हमारे नाटक का चौथा अंक समाप्त हो जाता था।

पांचवां अंक :—हमारे नाटक का पाचवां एवं अन्तिम अंक जून सन् १७६३ ई० से जौलाई सन् १७६४ ई० तक चला। इसमें जेकोबिन दल का शासन और उसके द्वारा किये गये भयंकर वध व हत्याओं का वर्णन है। २८ जौलाई सन् १७६४ ई० को उपरोक्त दल के सबसे बड़े नेता रोवेस्पेयर (Robespierre) का सिर गेओतीं (Guillotine) पर उतार लिया गया। उसके साथ जेकोबिन दल के शासन एवं उस भयंकर हत्याकांड का भी अन्त हो गया जो फ्रांस की राज्यक्रांति के लिये अपकीर्ति का कारण था। इस प्रकार हमारे नाटक का पाचवां अंक समाप्त हुआ।

अन्त :—क्रांतिकारी नाटक के अंतिम भाग में वह प्रतिक्रिया सम्मिलित है जो रोवेस्पेयर एवं जेकोबिन दल के शासन के विरुद्ध हुई थी। इसके अतिरिक्त हम इसमें कन्वेंशन (Convention) का अन्तिम प्रभुत्वकाल अर्थात् अगस्त सन् १७६४ ई० से अक्टूबर सन् १७६५ ई० तक का हाल तथा डायरेक्टरी के आगमन को भी सम्मिलित कर सकते हैं।

सीएयेस (Sieyes)

फ्रांस की राज्यक्रांति के नेताओं में सीएयेस एवं मीराबो का स्थान सबसे ऊंचा है। सीएयेस ने सन् १७४८ ई० में मध्यम श्रेणी के एक कुटुम्ब में जन्म लिया था, किन्तु उसने मीराबो की भाँति सर्वसाधारण की ओर से स्टेट्स जनरल का सदस्य निर्वाचित होना स्वीकार किया। उसके माता पिता ने उसे पादरी का पेशा अपनाने के लिये मजबूर किया। इससे उसके चरित्र पर धार्मिक जीवन की गहरी छाप लगी। वह एक अत्यन्त ईमानदार तथा न्यायप्रिय व्यक्ति था। सीएयेस को दर्शन तथा राजनीति से विशेष अभिरुचि थी। वह अपनी तीव्र दृष्टि तथा बुद्धिमत्ता के लिये भी प्रसिद्ध था। उसमें एक विशेष गुण यह था कि वह प्रत्येक समस्या पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार करता और तब किसी निर्णय पर पहुंचता था। परन्तु एक विचित्र बात यह थी कि पादरी होते हुये भी चर्च के लिये उसके हृदय में

चरित्र

दिशा में स्थित था। धीरे धीरे जिरोंदी के नाम पर एक राजनैतिक दल का नाम, जिसमें वहां से आये हुये लोग सम्मिलित थे, 'जिरोंदिन' होगया। जेकोबिन क्लब, जिसमें सभी विचारों के लोग सम्मिलित थे, धीरे धीरे स्वयं को पेरिस के कुछ लोगों के साथ, जिनके विचार अत्यन्त उग्रवादी थे, अनुभूत करने लगा। इस प्रकार 'जेकोबिन दल' निर्मित हुआ।

कोई स्थान न था। वह फ्रांस की राज्यक्रांति का संविधान निर्माता कहलाता है। उस काल में जितने संविधान फ्रांस के लिये तैयार किये गये थे उनमें से अधिकतर सीएयेस की सहायता से बनाये गये थे।

दस वर्षों की धार्मिक शिक्षा एवं अन्य दस वर्षों तक पादरी के पद पर कार्य करने के पश्चात् सीएयेस ने एक साथ अपने को उस तूफ़ान में डाल दिया जो फ्रांस में सन् १७८६ ई० में उठा था। वह शासन और समाज के दोषों से भली भाँति परिचित था। वह इस बात को भी भली भाँति समझता था कि इन दोनों में पूर्ण सुधार किये बिना देश की अवस्था में सुधार सम्भव नहीं हो सकता। वह कहा करता था कि

राजनैतिक जीवन में प्रवेश

"उस समाज को अवश्य ही विचित्र तथा आश्चर्यकारी होना चाहिये, जिसमें अठारहवीं शताब्दी की उन्नति के बीच में चौदहवीं शताब्दी की विशेषतायें सदा के लिये निश्चित कर दी गई हों।" जब सन् १७८० तक फ्रांस की हालत में किसी प्रकार सुधार न हो सका तो सीएयेस के हृदय में भी कुछ तत्कालीन व्यक्तियों की भाँति, जो यूरोप के निवासी थे, एक ऐसे देश को चले जाने का विचार उत्पन्न हुआ जहां न दीनता थी और न सम्राट का एकशास्तृत्व, न विशेष अधिकार थे और न जागीरदारों के अत्याचार। वह अमेरिका के लिये कूच करने ही वाला था कि इसी बीच में फ्रांस में एक तूफान उठ खड़ा हुआ। इस प्रकार उसे अपने गुणों को प्रकाशित करने और अपने दृढ़ सिद्धान्तों पर कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। राज्यक्रांति के समय उसने ऐसी सुन्दरता और बुद्धिमत्ता से कार्य किया कि मीराबो जैसा बुद्धिमान राजनीतिज्ञ भी उसे अपना पथप्रदर्शक स्वीकार करने लगा। रोबेस्पेयर ने भी उसके जीवन से बहुत कुछ प्राप्त किया और निस्सन्देह नेपोलियन बोनापार्ट को उसी ने विधान पूर्वक ऊपर उठाया था।

इस समय सीएयेस की आयु ४० वर्ष की थी। परन्तु बहुत कम लोग उसके नाम से परिचित थे। जब नैकर ने स्टेटस जनरल को निमंत्रित करने का निर्णय किया तो सीएयेस को भी अपने जौहर दिखाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जनवरी सन् १७८६ ई० में उसने एक बहुत ही प्रसिद्ध पुस्तिका प्रकाशित की, जिसमें उसने यह प्रश्न किया था कि तृतीय श्रेणी (Third Estate) क्या है? और

सार्वजनिक जीवन के तीन वर्ष

स्वयं ही उसने प्रतिउत्तर दिया था, 'वह सब कुछ है।' फिर प्रश्न किया गया कि 'राजनैतिक जगत में उसकी अभी तक क्या स्थिति रही है?' 'कुछ भी नहीं।' 'वह क्या चाहती है?' 'कुछ प्राप्त करना चाहती है।' इस पुस्तिका के कारण सीएयेस ने बड़ी ख्याति प्राप्त की। तीसरी श्रेणी के व्यक्तियों ने उसके पथप्रदर्शन में

अपने लिये कार्यक्रम तैयार किया। १५ व १६ जून के प्रसिद्ध वादविवाद में, जो क्रांति के प्रश्न पर विचार करने के सम्बन्ध में किया गया था, सबसे अधिक बोलने का श्रेय मीराबो को प्राप्त है, किन्तु जिन विचारों पर वहाँ प्रकाश डाला गया था उनमें से अधिकतर सीएयेस की पुस्तिका से लिये गये थे। १७ जून को स्टेट्स जनरल राष्ट्रीय महासभा (National Assembly) के रूप में परिवर्तित होगया था। सीएयेस उसके प्रतिष्ठित सदस्य के नाते अपनी सेवायें प्रदान करता रहा। एक वर्ष पश्चात् अर्थात् जून सन् १७९० ई० में वह उक्त सभा का सभापति निर्वाचित किया गया, परन्तु उसे इससे संतोष प्राप्त न हुआ। कारण यह था कि वह एक मध्यम विचार का राजनीतिज्ञ था। अतएव क्रांति के प्रवाह के साथ तेज़ चाल से बहना उसे प्रिय न था। वह क्रांति का सहायक एवं पक्षपाती अवश्य था परन्तु वह राज्यतंत्र को स्थापित रखना चाहता था। वह दोनों का पक्षपाती था किन्तु इस बात को वह सहन न कर सकता था कि उन्हें मत प्रदान करने का अधिकार दिया जावे।

तीन वर्ष की उदासीनता

जून सन् १७९१ ई० में सीएयेस के राजनैतिक जीवन में अकस्मात एक ठेस लगी। मीराबो की मृत्यु के पश्चात् सम्राट के उन मित्रों ने, जो उसको गर्त में गिरने से बचाना चाहते थे और जो गत दस माह से धन के बदले मीराबो से सम्मति व आदेश प्राप्त कर रहे थे, इस बात का प्रयत्न किया कि शिष्य के स्थान पर गुरु को आसीन कर दिया जावे। लेकिन वे कृत-कार्य न हुये। फिर भी सीएयेस बुद्धिमत्तापूर्वक सोलहवें लुई को उचित मार्ग पर लाने की चेष्टा करता रहा। जब सम्राट उत्तर-पूर्व की दिशा में भाग गया और वैरिनीज़ से बन्दी की दशा में वापस लाया गया तो राष्ट्र की ओर से सीएयेस की उदार नीति का अन्त कर दिया गया। यह देखकर उसे कुछ काल के लिये शान्तिमय जीवन स्वीकार करना पड़ा।

जौलाई सन् १७९१ ई० से जौलाई सन् १७९४ ई० तक सीएयेस राजनीति सम्बन्धी कार्यों से दूर रहा। इस काल में फ्रांस के इतिहास में अति भयंकर कांड रचे गये लेकिन उसने स्वयं को हानि न पहुँचने दी। इस समय उसका सिद्धान्त था 'जी सुखो, जहान सुखो।' अतएव वह स्वयं को संकटों से सुरक्षित करता रहा। वह कन्वेंशन का सदस्य भी निर्वाचित किया गया, किन्तु उसने अपनी उदासीनता को बराबर क़ायम रखा। वह कई समितियों का सदस्य भी बनाया गया। लेकिन उसने अपना मार्ग न बदला। बाद को जब लोगों ने उस से प्रश्न किया कि इस काल में आप क्या करते रहे तो उसने केवल यह उत्तर दिया कि मैं सुरक्षित बना रहा। इसके विपरीत उसने शिक्षा सुधार में बड़ी कार्यशीलता प्रदर्शित की। यह एक ऐसा विषय था जिससे उसे किसी प्रकार की हानि की सम्भावना न हो सकती थी।

सीएयेस जैसे व्यक्ति के लिये यह उदासीनता कुछ आलोचना और मनोमालिन्यता क कारण बनी, किन्तु उसको इसकी बिल्कुल चिन्ता न थी।

जौलाई सन् १७६४ ई० में रोबेस्पेयर का पतन हुआ। इसके साथ साथ उन भयंकर घटनाओं का भी बड़ी सीमा तक अन्त हो गया जो कुछ काल से फ्रांस के वातावरण को दूषित किये हुये थीं। सीएयेस को भ संतोष प्राप्त हुआ। उसे उन स्वप्नों से मुक्ति मिली जिनमें वह बहुधा "अपने सिर को अपने ही क़ालीन पर लुढ़कता हुआ देखा करता था।" मार्च सन् १७६५ ई० से वा राजनैतिक विषयों में पुन: आनन्द लेने लगा। अतएव उसने "जनरक्षा समिति" (Committee of Public Safety) का, जिसमें सुधार कर दिया गया था सदस्य बनना स्वीकार कर लिया। कन्वेंशन अथवा प्रसभा में उसकी बात मानी जाती थी। उसके बाहर भी उसका काफ़ी प्रभाव था। अतएव उसकी अनेक योज नायें स्वीकार करली गई। उसके ज़ोर देने पर जिरोंदिन दल के नेताओं के कन्वेंशन में बैठने की दोबारा आज्ञा प्राप्त होगई। जेकोबिन दल के लोगों और सम्राट के पक्षपातियों के विरुद्ध एक कानून बनवाने में भी उसने सफलता प्राप्त की सन् १७६५ ई० के संविधान को निर्माण करने में उसने सब से अधिक भाग लिया तीन बार उसकी सहायता से कन्वेंशन ने अशांतिवादियों पर अधिकार प्राप्त किय और उसी के ज़ोर देने पर नैपोलियन बोनापार्ट ने अपनी बुद्धिमत्ता तथा तोपों की सहायता से अक्टूबर सन् १७६५ ई० में पेरिस के अशांतिवादियों के विरुद्ध कन्वेंशन की रक्षा की थी।

सार्वजनिक जीवन के अंतिम वर्ष

अब सीएयेस की आयु ४६ वर्ष की होचुकी थी। किन्तु अभी उसका लगभग आधा जीवन शेष था। उसे डाइरेक्टरों (Directors) एवं कौंसलों (Consuls के शासनकालों में देश की सेवा करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। सभी दिशाओं में उसने अपने कर्तव्यों का पालन योग्यता के साथ किया। जिस पद पर भी वह आसीन किया गया, वह सदा अपने देश के हित के लिये गौरव का कारण सिद्ध हुआ। कुछ काल तक वह स्वयं भी डाइरेक्टर और कौंसल रहा। जब नैपोलियन फ्रांस का सम्राट हुआ तो सीएयेस ने पुन: शासन की ओर से उदासीनता ग्रहण की सन् १८१५ ई० की संधि के पश्चात् जब फ्रांस में बूरबन वंश का शासन दोबार क़ायम हुआ तो उसे १५ वर्षों के लिये स्वदेश को नमस्कार कर के चला जाना पड़ा। सन् १८३० ई० में वह लौट कर आया और कुछ वर्ष पश्चात् इस नाशवान शरीर से मुक्ति प्राप्त की।

प्रकृति ने सीएयेस को पादरियों का कार्य करने के लिये नहीं बनाया था किन्तु उसने पादरियों की भाँति फ्रांस की राज्यक्रांति को दीक्षा दी थी और

उसे दफ़न भी किया था। वही राष्ट्रीय महासभा का निर्माणकर्ता था और उसी ने सन् १७९९ का संविधान बनाकर स्वाधीनता को दफ़न कर दिया था।

मीराबो (Mirabeau)

सीएयेस की भांति मीराबो भी स्टेट्स जनरल का सदस्य निर्वाचित हुआ था। उच्च वंश में जन्म लेने पर भी उसने तीसरी श्रेणी का प्रतिनिधित्व पसन्द किया। मीराबो (१७४९–१७९१) इस नाम के एक सुन्दर स्वभाव के मारकुइस का लड़का था, जो कुछ कारणों से अपने परिवार का उचित पालन पोषण न कर सकता था। युवक मीराबो ऐसा उद्दण्ड और स्वच्छन्द था कि उसके पिता को कई बार उसे जेल में रखने के लिये सरकारी आज्ञापत्र प्राप्त करना पड़ा था। जब फ्रांस में राज्यक्रांति सम्बन्धी जोशीली घटनायें हुई तो मीराबो बहुत प्रसन्न हुआ। उसे इस बात का सुअवसर प्राप्त हो गया कि वह अपने सिद्धान्तों के अनुसार फ्रांस में वैधानिक शासन स्थापित करने का प्रयत्न करे और उस असाधारण दैहिक व मानसिक शक्ति का भी प्रमाण दे जो उसमें कूट कूट कर भर दी गई थी। स्टेट्स जनरल की बैठक से अप्रैल सन् १७९१ ई० तक जब उसकी मृत्यु हुई वह सदा देशभक्तों एवं राजनीतिज्ञों की प्रथम श्रेणी में रहा। उसका हाथी जैसा शरीर, उसका बहुत बड़ा सिर और उसकी विशाल भौंहें इन सबको देखने से यही ज्ञात होता था कि वह एक रोबदार परन्तु कड़वे स्वभाव का व्यक्ति है। उसमें कई विशेषतायें थीं, जैसे असाधारण शारीरिक व मानसिक शक्ति, सम्भाषण की योग्यता, प्रत्येक दृष्टिकोण को समझने की आदत और कठिनाइयों से मुक्ति पाने के उचित साधनों को तुरन्त ही सोच लेना इत्यादि। इन गुणों के साथ मीराबो के चरित्र में कुछ दोष भी थे। उसमें एक विशेष अवगुण यह था कि वह भोगविलासी था तथा उसका व्यक्तिगत जीवन बड़ा ही दूषित था। यही कारण है कि वह उस ख्याति को प्राप्त न कर सका जिसका कि वह अधिकारी था।

चरित्र

स्टेट्स जनरल में मीराबो का प्रभाव दिन प्रति दिन बढ़ता ही गया। इसके अतिरिक्त वह सर्वसाधारण के हृदयों में भी स्थान पाता गया। सीएयेस ने उसी की सहायता से १७ जून को उपरोक्त सभा को राष्ट्रीय महासभा (National Assembly) का रूप दिया था। उसी ने एक सप्ताह पश्चात् राष्ट्रीय विधान-सभा की ओर से सम्राट के दूत को यह उत्तर दिया था कि "जिन लोगों ने तुमको भेजा है उनसे कह दो कि हम यहां सर्वसाधारण की इच्छा से एकत्रित हुये हैं। हम लोग उस समय तक यहां से न हटेंगे जब तक हमारे विरुद्ध संगीनों से काम न लिया जावे"। १५ जौलाई को फिर उसने एक उत्साहपूर्ण

उत्कर्ष की पहली सीढ़ी

भाषण दिया जिसमें इस बात पर ज़ोर दिया गया कि सम्राट की सेना, जिसे लूई ने पूर्वीय ज़िलों से बुलाकर नियुक्त किया था, सभा से हटा ली जावे। ३० अक्टूबर को उसने पादरियों की जागीरों पर अधिकार कर लेने के पक्ष में ज़ोरदार सिफ़ारिश की। इस प्रकार मीराबो अपने असाधारण उत्साह और स्पष्टवादिता का प्रमाण देता रहा। अनिवार्य रूप से सब लोग उसको उपरोक्त सभा का नेता स्वीकार करने लगे। सभा के बाहर भी उसने पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर ली थी, किन्तु ठीक इसी समय उसकी बढ़ती हुई उन्नति को एक बड़ी ठेस लगी।

सम्राट के साथ गुप्त सन्धि

मीराबो की हार्दिक इच्छा थी कि किसी प्रकार भी क्रांति को वैधानिक सीमा के अन्तर्गत रक्खा जाय। वह चाहता था कि सोलहवां लूई उसका नेतृत्व स्वीकार कर ले। ऐसी दशा में ज़रूरी था कि मीराबो मन्त्री के पद पर नियुक्त कर दिया जाय। लेकिन राष्ट्रीय महासभा के सदस्य इस नीति के विरुद्ध थे। वे अच्छी प्रकार से जानते थे कि सम्राट और महासभा में स्थायी आधार पर एक मत नहीं हो सकता। दूसरे, उन्हें इस बात का भी डर था कि कहीं मीराबो फ्रांस का एकशास्ता न बन जाय, जैसा कि इंग्लैंड में क्रॉम्वेल ने किया था। यह विचार करके उन्होंने ६ नवम्बर सन् १७८६ ई० को यह क़ानून बना दिया कि राष्ट्रीय महासभा का कोई भी सदस्य सम्राट के मन्त्री पद को स्वीकार नहीं कर सकता। इसका एक विशेष परिणाम यह हुआ कि मई सन् १७६० ई० में मीराबो ने सम्राट से गुप्त रीति से सन्धि कर ली तथा वह उसे धन के बदले में परामर्श देने पर राज़ी होगया। दूसरे, फ्रांस में कार्यपालिका तथा विधान-मण्डल में वह सुन्दर सम्बन्ध स्थापित न हो सका जो इंग्लैंड में दीर्घकाल से स्थापित है। यह भी सम्भव था कि यदि मीराबो सम्राट को अपने सिद्धान्त पर राज़ी कर लेता तो क्रांति का रूप ही बदल जाता। सम्राट से सन्धि करने में मीराबो ने उन सिद्धांतों का पालन किया था जिनका वह सदा से अनुगामी था। अतएव हम उसे इस विषय में अधिक दोषी नहीं ठहरा सकते। परन्तु इस सन्धि से मीराबो की बढ़ती हुई उन्नति को भारी धक्का लगा तथा लोग उसे सन्देह की दृष्टि से देखने लगे।

उसको सद्मार्ग पर लाने का प्रयत्न

सम्राट से गुप्त सन्धि करके मीराबो ने उसे समझा बुझाकर सद्मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया। इसी बीच में राष्ट्रीय महासभा अथवा संविधान-सभा (National or Constituent Assembly) कई आवश्यक सुधार करने में कृतकार्य हो चुकी थी तथा अब वह सन् १७६१ ई० के संविधान के निर्माण में व्यस्त थी। इसलिये आवश्यक था कि सोलहवां लूई अपने सम्बन्ध में कोई न कोई निर्णय स्वयं कर ले। मीराबो ने उसको सब बात समझाते

का प्रयत्न किया कि यदि आप वैधानिक शासन के सिद्धान्त को स्वीकार करके क्रांति का नेतृत्व करेंगे तो प्रत्येक प्रकार से आप का लाभ होगा। उपरोक्त सभा भी आपकी हितेच्छुक बन जायेगी और सर्वसाधारण के हृदयों पर भी आप विजय प्राप्त कर सकेंगे। परन्तु उसकी समझ में यह बात न आई। वह सदा की भांति स्वयं को अपनी प्रजा से पृथक समझता रहा एवं क्रांति को तलवार की शक्ति से रोकने का स्वप्न देखता रहा।

एक आलोचनात्मक योजना

दिसम्बर सन् १७६० ई० तक मीराबो इस बात को पूर्ण रीति से समझ गया था कि सम्राट उसकी राय को, जिस पर वह ज़ोर दे रहा था, स्वीकार न करेगा। इस समय तक राजनैतिक दशा भी परिवर्तित हो चुकी थी। शासन की आर्थिक दशा पहले से भी अधिक चिन्ताजनक थी। सूबों में लोग उसकी ओर से निराश हो चुके थे। पेरिस में अनाज की कमी के कारण कुव्यवस्था फैलने का डर था। उधर विदेशों से युद्ध होने की भी सम्भावना थी। इन बातों को दृष्टि में रख कर मीराबो ने बूरबन वंश के हित के लिये एक नवीन योजना तैयार की। पर यह एक आलोचनात्मक योजना थी। इसमें कुछ बातें ऐसी थीं जो मीराबो जैसे राजनीतिज्ञ और देशभक्त को शोभा नहीं देतीं। उदाहरण के रूप में, सम्राट की सहायता के लिये जान पर खेल जाने वाले वीरों की एक सेना का तैयार किया जाना, राष्ट्रीय सभा के काम में हस्तक्षेप करना, उसके सम्मुख ऐसे सुधारों का रखना जिन्हें वह किसी भी दशा में स्वीकार नहीं कर सकती थी, पेरिस के सर्वसाधारण और राष्ट्रीय सुरक्षा दल में झगड़ा कराना आदि। इन बातों को कोई भी धर्मनिष्ठ व्यक्ति पसन्द न करेगा। अपने जीवन के अन्तिम छः मास में उन पर किसी सीमा तक अमल करके मीराबो ने प्रमाणित कर दिया कि उस समय उसे अपने देश अथवा राष्ट्रीय संविधान-सभा की बिल्कुल पर्वाह नहीं थी। सम्भवतः उसने यह न सोचा था कि इनका अनुसरण करके कोई भी व्यक्ति अपने उद्देश्य में पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

मृत्यु, १७९१

इस प्रकार की योजनाओं को बनाकर मीराबो राष्ट्रीय संविधान-सभा में अपने प्रभाव को स्थापित न रख सकता था लेकिन भाग्य उसके साथ था। जनवरी सन् १७६१ ई० में वह उक्त सभा का सभापति निर्वाचित कर लिया गया। इसका एक विशेष कारण था। नवम्बर सन् १७६० ई० में पेरिस के सर्वसाधारण ने एक अमीर के घर में लूट की थी तथा राष्ट्रीय सुरक्षा दल, जिसका अधिकारी एक उच्च वंश का व्यक्ति लाफ़ेयत (Lafayette) था, दूर से तमाशा देखता रहा था। मीराबो

ने लाफ़ेयत को बदनाम करने के विचार से राष्ट्रीय महासभा में एक भाषण दिया। इसमें उसने सर्वसाधारण का पक्ष लिया। इससे वे प्रसन्न हो गये तथा उनके कारण वह उक्त सभा का अध्यक्ष निर्वाचित कर लिया गया। किन्तु वह इस पद पर अधिक समय तक न ठहर सका। इसी वर्ष अप्रैल के मास में उसकी मृत्यु हो गई। सीएयेस और मीराबो दोनों ही ने अपने सिद्धान्तों के अनुसार फ्रांस की राज्यक्रांति का नेतृत्व करने का प्रयत्न किया था किन्तु दोनों ही असफल प्रमाणित हुये। सीएयेस इसलिये कि उसके उद्देश्य अत्यन्त उच्च थे। मीराबो इसलिये कि उसके उद्देश्य आवश्यकता से अधिक गिरे हुये थे।

लाफ़ेयत (Lafayette)

सीएयेस और मीराबो की भाँति लाफ़ेयत ने भी स्टेट्स जनरल के सदस्य की हैसियत से विशेष महत्व प्राप्त किया था। किन्तु इसके पूर्व वह अमेरिका में उपनिवेशों की ओर से युद्ध करके प्रशंसा का भागी बन चुका था। उसका जन्म सन् १७५७ ई० में एक उच्च तथा प्राचीन वंश में हुआ था। इसके विपरीत उसके हृदय में साधारण स्थिति के लोगों के लिये बहुत स्थान था। स्टेट्स जनरल एवं राष्ट्रीय-संविधान सभा में उदार विचार के अमीर उमरा एवं मध्यम श्रेणी के बहुत से लोग उसे अपना नेता मानते थे। क्रांति के प्रारम्भिक काल में संविधान-सभा में अथवा उसके बाहर किसी भी अन्य नेता के इतने अधिक समर्थक न थे जितने कि लाफ़ेयत के थे। इसके प्रतिकूल वह सीएयेस और मीराबो की भाँति क्रांति की महान् आत्माओं की प्रथम श्रेणी में स्थान प्राप्त न कर सका। कारण यह था कि वह एक वीर तथा प्राणों पर खेल जाने वाला व्यक्ति था, किन्तु उसमें राजनीतिज्ञों के लक्षणों का अभाव था। वह इच्छानुसार अपने सद्गुणों का प्रयोग भी न कर सका। इसके अतिरिक्त उसने क्रांति के समय कुछ कार्य सर्वसाधारण के हित के विरुद्ध भी किये थे। अतएव उसकी ख्याति में कुछ कमी हो गई।

अमेरिका के स्वाधीनता युद्ध में भाग

लाफ़ेयत स्वाधीनता की देवी का सच्चा पुजारी था। इसलिये वह जीवन भर अमेरिका के उपनिवेशों और उनके निवासियों पर, जिन्होंने इंग्लैंड जैसे शक्तिशाली राष्ट्र के विरुद्ध मोर्चा लेकर स्वाधीनता प्राप्त की थी, प्राण न्योछावर करता रहा। सार्वजनिक जीवन से पृथक रहने की हालत में भी वह उनकी प्रशंसा करता रहा और बहुधा उसके हृदय में अमेरिका जाने की आकांक्षा भी आती रही। अतएव अमेरिका के स्वाधीनता युद्ध के समाप्त होने के पश्चात् वह दो बार वहाँ गया। सबसे पूर्व उसके दिल में इस देश को देखने और उसके निवासियों

की कठिनाइयों में भाग लेने का उत्साह उस समय पैदा हुआ था जब उपनिवेशों के निवासियों ने स्वाधीनता की घोषणा की थी। यह बात सन् १७७६ ई० की है। अपने पिता और अपनी पत्नी की, जिस से उसने कुछ ही काल पहले विवाह किया था, चिन्ता न करके उसने अमेरिका जाने का निर्णय कर लिया। बस वह भेष बदल कर स्पेन पहुंचा और वहां से जहाज़ पर बैठ कर सात सप्ताह के पश्चात् दक्षिणी करोलाइना (South Carolina) में उतरा। इस प्रकार वह बहु-मूल्य अनुभव प्रारम्भ हुआ जिस से न केवल लाफ़ेयत के जीवन पर गहरी छाप लगी वरन् जिसने उसे सदा के लिये एक विशेष सांचे में ढाल दिया।

लाफ़ेयत काफ़ी मालदार था। अतएव वह सेना में बिना किसी प्रकार के वेतन अथवा बदले के काम करने लगा। वाशिंगटन ने उसे एक अफ़सर के पद पर नियुक्त कर दिया। इस हैसियत से उसने ग्लस्टर, बैरनहिल, मॉनमथ एवं न्यूपर्ट आदि के युद्धों में जौहर दिखलाये। उसने योर्कटौन के युद्ध में भी भाग लिया था, जिसके पश्चात् ही अंगरेज़ों ने शस्त्र डाल दिये थे। वाशिंगटन उसकी वीरता व अन्य विशेषताओं को देख कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और वे दोनों सर्वदा के लिये घनिष्ठ मित्र बन गये। वाशिंगटन की उदार नीति को लाफेयत ने अपने जीवन का सिद्धान्त बनाया और इस पर जीवन भर अमल करने का संकल्प कर लिया। जिस समय लाफ़ेयत सन् १७७८ ई० में यूरोप लौट रहा था उस समय अमेरिका के एक मंत्री ने, जो फ्रांस का निवासी था उसकी प्रशंसा में यह शब्द कहे थे—"तुमको ज्ञात है कि मैं किसी की झूठी प्रशंसा करना बहुत कम पसन्द करता हूं, किन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि जिस खूबी, साहस और सद्व्यवहार से मारकुइज़ लाफ़ेयत ने काम किया है उसके कारण वह कांग्रेस, सेना और अमेरिका के लिये श्रद्धा का पात्र बन गया है।" इसी प्रकार वाशिंगटन ने लाफ़ेयत के विषय में लिखा था—"यह मेरी सबसे बड़ी इच्छा है कि हमारे बीच में मारकुइज़ लाफ़ेयत के अतिरिक्त कोई दूसरा विदेश का निवासी न होता।"

फ्रांस लौट कर लाफ़ेयत ने कुछ समय तक यूरोप के देशों की सैर की तथा वहां उदार विचार के लोगों से भेंट की। इसके बाद उसने सन् १७८६ ई० में,

स्टेट्स जनरल का सदस्य

जैसा कि बतला चुके हैं, कुलीन वर्ग के प्रतिनिधि की स्थिति से स्टेट्स जनरल के कामों में भाग लिया। परन्तु इस स्थिति से उसने कोई विशेष कार्य ऐसा नहीं किया जो प्रशंसा के योग्य हो। वह स्वयं उदार विचारों का व्यक्ति अवश्य था, लेकिन वह किसी भी मामले में तेज़ी से क़दम न बढ़ाना चाहता था। उदार विचार रखते हुये भी २७ जून से पूर्व, जबकि सोलहवें लूई ने तीनों श्रेणियों के

प्रतिनिधियों को एक साथ बैठने की आज्ञा प्रदान की थी, उसने इस बात का प्रयत्न नहीं किया कि कुलीन वर्ग के प्रतिनिधि जनसाधारण के प्रतिनिधियों के साथ बैठें। उसके विचारों का वास्तविक अनुमान उस मसवदे से होता है जिसे उसने मानव के प्राकृतिक अधिकारों के सम्बन्ध में तैयार किया था तथा जिसके आधार पर उक्त सभा ने बाद को उनको घोषित किया था। बेस्तील की विजय के अवसर पर पेरिस में जो कुव्यवस्था फैली थी उसे देखकर मनुष्यों के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा के लिये एक राष्ट्रीय सुरक्षा दल (National Guard) निर्मित किया गया था। लाफेयत इसका सरदार नियुक्त किया गया। इस प्रकार इस लम्बी नाक तथा पतले शरीर वाले नवयुवक के लिये, जिसकी आयु इस समय लगभग ३२ वर्ष थी, एक उचित पद निश्चित कर दिया गया।

लाफेयत सन् १७८९ ई० से सन् १७९१ ई० तक राष्ट्रीय सुरक्षा दल (National Guard) का अध्यक्ष रहा। इस स्थिति से फ्रांस के लिये उसका महत्व अति अधिक था। यदि हम यह कहें कि सम्राट के पश्चात् उसी का पद था तो अधिक उचित होगा। उसकी सहायता के बिना कोई भी व्यक्ति उस कुव्यवस्था तथा मारकाट पर विजय नहीं पा सकता था जो इस काल में नित्य प्रति की घटना थी। उसके अधीन लगभग ४८ हज़ार सैनिक थे। पेरिस की म्यूनिस्पल कौंसिल अथवा कम्यून (Commune) पर भी उसका पूरा प्रभाव था। फ्रांस की स्थायी सेना के अधिकतर पदाधिकारी जो प्राय: उच्च श्रेणी के थे, भाग गये थे और उसके सैनिक क्रांतिकारी विचार तथा आन्दोलन के प्रभाव में थे। ६ अक्टूबर सन् १७८९ ई० के पश्चात् सम्राट और उसका परिवार पेरिस के एक प्रासाद में बन्दी कर दिये गये थे। उनका संरक्षक भी लाफेयत ही था। इन समस्त कारणों से, जिनका उल्लेख यहां किया गया है, उसका तथा उसकी अधीन राष्ट्रीय सेना का महत्व बहुत बढ़ गया था। किन्तु बड़े खेद की बात है कि लाफेयत से इस समय अपने कर्तव्य के पालन करने में किसी विशेष नीति का पालन नहीं किया और न उसने उन लोगों का साथ ही दिया जिन्होंने अपने तथा सम्राट के सम्बन्ध में कोई विशेष नीति निश्चित कर ली थी।

राष्ट्रीय सुरक्षा दल का अध्यक्ष

स्टेट्स जनरल की बैठक के एक वर्ष पश्चात् कुछ घटनायें ऐसी हुई जिनमें लाफेयत ने शान्ति बनाये रखने के विचार से प्राणों को समर्पण करने वाले देश-भक्तों पर गोली चलाई अथवा उनके हृदयों में डर बिठाकर अपने इरादों से दूर रक्खा। जून सन् १७९१ ई० में सम्राट ने अस्ट्रिया की ओर भाग जाने का प्रयत्न किया। कुछ लोगों को सन्देह था कि इसमें लाफेयत का हाथ था। इन कारणों से

उसकी ख्याति बहुत कम हो गई। अन्त में जब उसने बाई से मिलकर १७ जौलाई सन् १७६१ ई० को पेरिस के बड़े मैदान में सर्वसाधारण के आन्दोलन को जो गण-राज्य स्थापित किये जाने के लिये किया गया था, कठोरता से दबा दिया तो लाफेयत बहुत बदनाम होगया। अच्छा ही हुआ कि जब सितम्बर सन् १७६१ ई० में राष्ट्रीय संविधान-सभा समाप्त हो गई तो लाफेयत राष्ट्रीय सुरक्षा दल की नौकरी छोड़कर देहात चला गया।

तीन मास के पश्चात् लाफेयत को एकांतवास से बाहर आना पड़ा तथा युद्धमंत्री नारबोन (Narbonne) के ज़ोर देने पर विदेशों से युद्ध करने के लिये एक सेना संगठित करनी पड़ी। वह स्वयं इसका

पूर्वी सेना का अध्यक्ष

अध्यक्ष नियुक्त किया गया। लाफेयत में योग्यता की अपेक्षा उत्साह अधिक था। अप्रैल सन् १७६२ ई० में युद्ध की घोषणा होते ही उसने दो अन्य सेनाओं के साथ बेल्जियम पर आक्रमण कर दिया, परन्तु उसे परास्त होकर वापस आना पड़ा। इस से उसकी बड़ी बदनामी हुई। इसी वर्ष १० अगस्त को जनसाधारण की ओर से त्वीलेरीज़ (Tuileries) के राज-प्रासाद पर ज़ोरदार हमला किया गया। इसके प्रति विरोध प्रकट करने के विचार से लाफेयत पेरिस आया परन्तु राजनैतिक वायुमंडल के अनुकूल न होने से वह उत्तर-पूर्व की ओर भाग गया। उसकी सहायता न करके प्रशा तथा आस्ट्रिया के शासकों ने उसे बन्दीगृह में डाल दिया। पांच साल बाद उसे मुक्ति मिली। सन् १७६६ ई० में वह फ्रांस लौटा, किन्तु अभी तक उसके सिद्धान्तों में कोई अन्तर न हुआ था। अत-एव उसने इस वर्ष प्रजातंत्र को क़ायम रखने के कार्य में नैपोलियन की सहायता करने से उसी प्रकार इन्कार कर दिया जिस प्रकार उसने दस वर्ष पूर्व राजतंत्र को क़ायम रखने के कार्य में मीराबो को सहायता करना अस्वीकार कर दिया था।

सन् १८२४ ई० में लाफ़ेयत अन्तिम बार अमेरिका गया। वहां सभी स्थानों में उसका असाधारण रूप से अभिनंदन किया गया। सन् १८३० ई० में जब उसकी आयु ७३ वर्ष की थी, उसने जौलाई मास की क्रांति का

अन्तिम वर्ष

नेतृत्व किया एवं अठारहवें लूई को सिंहासन से उतारकर लूई फ़िलिप को सिंहासनारूढ़ किया। यह लाफ़ेयत के जीवन का अन्तिम महत्व-पूर्ण कार्य था। मई सन् १८३४ ई० में पेरिस नगर में उसकी मृत्यु हुई। मीराबो की भांति लाफ़ेयत भी विधानवादी था। उसका भी यही कहना था कि सम्राट् को क्रांति का नेतृत्व करना चाहिये। उसकी हार्दिक इच्छा थी कि फ्रांस में अमेरिका की भांति शासन स्थापित हो जाये, परन्तु अध्यक्ष के स्थान पर वह सम्राट् को बिठाना चाहता था। वह बहुधा कहा करता था कि "यदि सम्राट् संविधान को

स्वीकार करने से इन्कार करेगा तो मैं उसका विरोध करूंगा। यदि वह उसको स्वीकार कर लेगा तो मैं उसकी रक्षा करूंगा।" दूसरे स्थान पर उसने लिखा था कि "राजतंत्र केवल क्रांति से एकता रखकर ही क़ायम रह सकता है, अन्यथा उसका अन्त कर देना आवश्यक होगा और मैं उसका अन्त करने के लिये सबसे पहले प्रयत्न करूंगा।"

ब्रीसो (Brissot)

सीएयेज़, मीराबो और लाफ़ेयत तीनों फ्रांसीसी राज्यक्रांति के एक विशेष दृष्टिकोण के नेता थे। इन तीनों ने उसे अपने सिद्धान्तों के अनुसार आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया था, किन्तु इनमें से कोई विधानवाद की सीमा के बाहर क़दम न बढ़ाना चाहता था। वे फ्रांस में एक ऐसा वैधानिक शासन स्थापित करना चाहते थे जिसका शिरमौर सम्राट हो तथा जिसके अधीन सर्वसाधारण के अधिकार सभी प्रकार से सुरक्षित हों। इसके विरुद्ध फ्रांस की राज्यक्रांति के कुछ नेता ऐसे भी थे जिनके विचार अत्यन्त स्वतन्त्र थे तथा जो समय की मांग के अनुसार शासनतंत्र में सर्वांग परिवर्तन करना चाहते थे। वास्तव में एक दो को छोड़कर उनका शासन स्तर यह था कि सम्राट को बिल्कुल हटा दिया जाये तथा देश में पूर्ण रूप में गण-राज्य स्थापित कर दिया जाय। किन्तु उन्होंने साम्प्रदायिक झगड़ों में पड़कर रक्त की नदियां प्रवाहित कीं तथा क्रांति को ऐसा रूप दिया जिसका वर्णन करने में लेखनी कांप उठती है। ब्रीसो (Brissot), दांतों (Danton), मारा (Marat) तथा रोबेस्पेयर (Robespierre) उनके प्रकट उदाहरण हैं।

ब्रीसो का जन्म जनवरी सन् १७५४ ई० में हुआ था। उसका पिता शार्त्र (Chartres) में एक जलपान-गृह का स्वामी था। फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रारम्भ होते समय ब्रीसो की आयु ३५ वर्ष थी। उसका पिता उसको वकालत पढ़ाना चाहता था किन्तु उसका इस पेशे की ओर कोई झुकाव न था। उसने अपने लिये समाचारपत्र के सम्पादन का काम पसन्द किया। बालपन ही से उसे पुस्तकों के पढ़ने का शौक़ था। उसने अंगरेज़ी तथा इटैलियन भाषाओं का अच्छा अभ्यास प्राप्त किया था। इसके अतिरिक्त उसने ग्रीक, स्पेनिश एवं जर्मन भाषाओं का ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था। रविवार के दिन वह लॉक और मौंतस्क्यू के दर्शन की पुस्तकों का अध्ययन किया करता था। अतएव हम कह सकते हैं कि उसका विद्या ज्ञान अत्यन्त विस्तृत था। उसने लन्दन में रहकर कई पुस्तकों तथा पुस्तिकाओं की रचना की थी। ब्रीसो एक बड़ा ही सीधा और सच्चा व्यक्ति था। वह अपने मित्रों पर भरोसा

ब्रीसो का विद्या ज्ञान

करता था, लेकिन अपने लाभ की उसे किंचित मात्र भी चिन्ता न थी। वह पुस्तकें केवल इसलिये लिखता था कि अपने विचारों का प्रकाशन करके संसार को लाभ पहुंचाये। उसकी पत्नी ने इसकी शिकायत करते हुये एक पत्र में अपनी बहिन को लिखा था—"मेरा पति अत्यन्त अधिक ख्याति प्राप्त कर रहा है, किन्तु रुपये का बहाव हमारी ओर नहीं है।"

ब्रीसो को विदेशों का अच्छा ज्ञान था। राज्यक्रांति के प्रारम्भ होने से पूर्व वह इंग्लैंड और अमेरिका हो आया था। द्वितीय देश में आये अभी छः मास भी न हुये थे कि फ्रांस में राज्यक्रांति होने का समाचार उसके कानों में पड़ा। वह तुरन्त पेरिस लौट आया और पुस्तिकाओं को प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया। वह स्टेट्स जनरल तथा राष्ट्रीय संविधान-सभा (Constituent Assembly) का सदस्य तो न बन सका, किन्तु उनके बाहर काफी असर पैदा किया। जौलाई सन् १७८९ ई० में उसने अपने पत्र पेट्रियट (Patriote) का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। इसके द्वारा उसने इतनी अधिक ख्याति प्राप्त की थी कि जब सन् १७९१ ई० में वह विधान-सभा (Legislative Assembly) का सदस्य निर्वाचित किया गया तो सभी ने यह कहा कि ब्रीसो वास्तव में इस प्रतिष्ठा का अधिकारी है। इसके दूसरे वर्ष वह कन्वेंशन अथवा प्रसभा (Convention) के निर्वाचन में सफल हुआ लेकिन साम्प्रदायिक वैमनस्य के कारण अक्टूबर सन् १७९३ ई० में उसका शीश उतार लिया गया।

विधान-सभा तथा कन्वेंशन के लिये निर्वाचन

विधान-सभा को कई महत्वपूर्ण समस्याओं पर विचार करना पड़ा। इनमें एक समस्या यह भी थी कि विदेशों के विरुद्ध युद्ध किया जाय अथवा नहीं। जेकोबिन दल का नेता रोबेस्पेयर तथा अन्य लोग युद्ध के विरुद्ध थे। फ्रांस की आर्थिक दशा भी अच्छी न थी। इसके प्रतिकूल राष्ट्रीय विधान-सभा ने कई बातों से बाध्य होकर अप्रैल सन् १७९२ ई० में अस्ट्रिया और प्रशा के विरुद्ध युद्ध का निर्णय किया। यह ब्रीसो तथा जिरोंदिन दल के अन्य नेताओं के प्रयत्नों का परिणाम था; क्योंकि इस समय शासनसूत्र इसी दल के हाथ में था तथा उसका एक प्रतिष्ठित सदस्य दूमूरिये (Dumouriez) वाह्यमन्त्री था। विधान-सभा का सदस्य होने के कारण ब्रीसो मन्त्री पद पर तो सुशोभित न हो सका था किन्तु मन्त्रियों की नियुक्ति उसके परामर्श से की गई थी। उसका तथा उसके सहयोगियों का यह विचार था कि युद्ध के निर्णय से वे सर्वसाधारण को अपनी ओर करने में सफल

युद्ध का निर्णय

हो सकेंगे एवं उनकी सहायता से वे अपनी शक्ति में प्रकट रूप से वृद्धि करने में भी कामयाब होजावेंगे। सफलता तथा पराजय दोनों ही दिशाओं में उनको अपना हित नज़र आता था। उनका तर्क यह था कि यदि युद्ध में विजय प्राप्त हुई तो उनकी खूब बन आयेगी और वे स्वेच्छापूर्वक सम्राट से काम करा सकेंगे। यदि फ्रांस की सेनाओं को पराजय मिली तो सम्राट को उसका कारण निश्चित कर देंगे तथा सर्वसाधारण को उसके विरुद्ध करके राजतन्त्र का अन्त कर देंगे और उसके स्थान पर गण-राज्य स्थापित कर देंगे।

ब्रीसो की नीति कार्यपटुता से परिपूर्ण न थी। उसने और उसके साथियों ने ऐसे अवसर पर युद्ध प्रारम्भ किया था जब फ्रांस उसके लिये तैयार न था। अतएव प्रथम छः मास में फ्रांस की पराजय होती रही। इसके कारण राष्ट्रीय क्रोध की कोई सीमा न रही। सर्वसाधारण ने इसका प्रदर्शन न केवल सम्राट तथा विधान-सभा के विरुद्ध वरन् ब्रीसो के लोकतन्त्रवादी दल के विरुद्ध भी किया। जेकोबिन दल को सुन्दर अवसर प्राप्त हुआ। सर्वसाधारण पर उनका प्रभाव बढ़ गया। उनकी सहायता से उसने १० अगस्त को राजप्रासाद पर ज़ोरदार आक्रमण किया। यह देखकर ब्रीसो और उसके साथियों ने सम्राट को स्थानच्युत करा दिया। इसके अतिरिक्त वे कर ही क्या सकते थे? विधान-सभा भी समाप्त कर दी गई एवं फ्रांस के लिये एक नये संविधान को तैयार करने के लिये प्रसभा अथवा कन्वेंशन (Convention) को निमन्त्रण दिया गया। विधानवाद का युग समाप्त हो चुका था। राजनैतिक परिस्थिति पर अधिकार प्राप्त करने के लिये किसी अधिक उपयुक्त तथा अधिक उग्रवादी शासन प्रणाली की आवश्यकता थी।

कन्वेंशन की बैठक सितम्बर सन् १७९२ ई० में प्रारम्भ हुई थी। ब्रीसो और रोबेस्पेयर दोनों उसके सदस्य निर्वाचित किये गये, और प्रारंभ में उसमें दोनों ही के दलों का काफ़ी प्रभाव था। प्रत्येक महत्वपूर्ण विषय जो कन्वेंशन के सम्मुख लाया जाता था उनके लिये विरोध का कारण बन जाता था। प्रथम दल के लोग अधिक गंभीर थे तथा उनका दृष्टिकोण भी विस्तृत था। उनका यह प्रयत्न था कि किसी भांति पेरिस के सर्वसाधारण और नेताओं की शक्ति कम करके कन्वेंशन को वास्तविक अर्थ में देश का शासक बना दिया जाय। इसके विरुद्ध उनकी शासन प्रणाली में कई प्रकट दोष भी थे। अतएव वे अधिक काल तक क़ायम न रह सके। उनके पतन के कई अन्य कारण भी थे, जैसे आन्तरिक कुव्यवस्था, युद्ध में फ्रांसीसी सेनाओं की पराजय तथा जिरोंदिन दल के सैनिक अफ़सर दूमूरिये की ग़द्दारी आदि। इन कारणों से जिरोंदिन दल के लोग देश के शत्रु निश्चित

पतन और वध, १७९३

किये गये तथा विरोधी दल व पेरिस के नेताओं के ज़ोर देने पर कन्वेंशन ने २ जून सन् १७६३ को ब्रीसो एवं उसके २१ साथियों की गिरफ्तारी की आज्ञा निकाल दी। किन्तु उनमें से १२ लुप्त हो गये। इनमें ब्रीसो भी सम्मिलित था। लेकिन वह कुछ साथियों के साथ बन्दी कर लिया गया और अक्टूबर मास में गेओतीं की भेंट चढ़ा दिया गया।

चरित्र

ब्रीसो के चरित्र में कई गुणों का समावेश था, किन्तु हम उसे एक चतुर, गंभीर राजनीति वेत्ता नहीं निश्चित कर सकते। वह एक सीधा और सच्चा पुरुष था। चाहे दूसरे लोग उसे धोखा क्यों न दें किन्तु वह किसी को भी धोखा न देना चाहता था। वह एक शिक्षित तथा योग्य व्यक्ति था। किन्तु उसमें दूरदर्शिता की कमी थी। वह सदा यह प्रमाणित करने का प्रयत्न करता कि वह ठीक मार्ग पर चल रहा है, किन्तु उसे अन्तिम समय तक यह ज्ञात न हो सका कि अपनी कार्यप्रणाली में वह किस प्रकार सफल मनोरथ हो सकता है। रोबेस्पेयर की भांति ब्रीसो का भी एक विशेष आदर्श था। वह फ्रांस में अमेरिका तथा स्विटज़रलैंड के आधार पर एक ऐसा संधानीय शासन (Federation) स्थापित करना चाहता था जो 'स्वतन्त्रता, समानता और बान्धुत्व' के सिद्धान्तों पर कार्य करे, किन्तु वह अपने उद्देश्य में कृतकार्य न हुआ। जिरोंदिन दल के लोगों का नाश करके रोबेस्पेयर तथा उसके साथियों ने केवल एक सम्प्रदाय को नष्ट किया था, किन्तु ब्रीसो को समाप्त करके उन्होंने एक उत्तम सिद्धान्त की अन्त्येष्टि कर दी थी।

दाँतों (Danton)

चरित्र की विशेषतायें

दाँतों (१७५६–१७६४) रोबेस्पेयर तथा मारा की भांति जेकोबिन दल का एक शक्तिशाली स्तम्भ था। कुछ लोगों ने उसे मध्यम श्रेणी का मीराबो कहकर पुकारा है। मीराबो का जन्म एक कुलीन वंश में हुआ था, किन्तु वह मध्यम श्रेणी के कल्याण के लिये हृदय से प्रयत्न करता था। दाँतों का जन्म मध्यम श्रेणी में हुआ था किन्तु उसे अपनी श्रेणी की अपेक्षा तृतीय श्रेणी के लोगों का अधिक ध्यान था। वह एक कृषक का पुत्र था। लेकिन कानून की शिक्षा ग्रहण करके उसने इस पेशे में ख्याति प्राप्त कर ली थी। उसे पुस्तकों के पठन का शौक़ था। मीराबो की भांति वह एक अत्यन्त स्वस्थ पुरुष था और उसकी आवाज़ भी अधिक तेज़ थी। उसी की भांति वह भी वादविवाद में दक्ष था तथा भाषण देने में जादू का असर पैदा करता था। उसमें एक विशेषता यह थी कि भाषण देते समय वह अपने ऊपर

अधिकार बनाये रखता था, पर सुनने वालों के उत्साह को अन्तिम सीमा तक पहुंचा देता था। राज्यक्रांति के प्रारम्भ में मीराबो ने उसे आगे बढ़ाया था, किन्तु इसके पश्चात् उसने शीघ्र ही अपने गुणों और विशेषताओं के कारण स्वयं ही ख्याति प्राप्त की। वह सर्वांगपूर्ण गणतन्त्रवादी था। सन् १७९० ई० में उसने मारा और देमूलँ (Desmoulins) से मिलकर कार्दीलियर क्लब (Cordelier Club) स्थापित की, जो सन् १७९१ ई० व १७९२ ई० में सम्राट के कुटुम्ब और राजतंत्र के विरुद्ध काम करती रही। कम्यून के शक्तिशाली सदस्य की स्थिति से दांतों ने पेरिस के निवासियों को गणतंत्र की स्थापना के लिये तैयार करने में सबसे अधिक प्रयत्न किया था।

१० अगस्त का मामला

राज्यक्रांति के दिनों में दांतों ने सबसे पहले १० अगस्त सन् १७९२ ई० के मामले के सिलसिले में महत्व प्राप्त किया। यह वह समय था जब पेरिस में सर्वसाधारण, लोकतंत्र के सिद्धान्त और युद्ध के जोश में अन्धे हो रहे थे। इसको अन्तिम सीमा तक पहुंचाने में रोबेस्पेयर, दांतों और कार्दीलियर क्लब के अन्य सदस्यों का हाथ था। वास्तव में उस दिन सम्राट के महल पर आक्रमण की पूरी ज़िम्मेदारी उपरोक्त क्लब तथा जेकोबिन दल पर लागू होती है, किन्तु उसके बड़े नेता स्वयं मैदान में न आकर पीछे ही से सब काम करते रहे। उदाहरण के तौर पर, दांतों इस घटना के केवल दो दिवस पूर्व देहात से लौटा था। वह उस क्रांतिकारी समिति का सदस्य भी न था जिसने आक्रमण का सब प्रबन्ध किया था तथा वह उस दिन की मारकाट में भी सम्मिलित न हुआ था। किन्तु वह उस समय कार्दीलियर क्लब का नेता होने के अतिरिक्त पेरिस के कम्यून का पदाधिकारी भी था। अतएव सर्वसाधारण को आगे बढ़ाने में उसका भाग कम न था। यदि ऐसा न होता तो दूसरे ही दिन जब सम्राट और उसके मन्त्रियों को हटाया गया तो दांतों न्यायमंत्री के पद पर क्यों सुशोभित कर दिया जाता?

युद्ध के सम्बन्ध में दोषारोपण

अप्रैल सन् १७९२ ई० में फ्रांस ने अस्ट्रिया और प्रशा के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। उन से युद्ध करने के लिये तीन सेनापति रवाना किये गये। इन में लाफ़ेयत सबसे अधिक प्रतिष्ठित है। परन्तु १० अगस्त के मामले के पश्चात् जब वह शत्रु के पक्ष में चला गया तो जिरोंदिन दल का एक उत्साहपूर्ण नेता दूमूरिये (Dumouriez), जो कुछ मास पूर्व वाह्यमंत्री तथा इसके पश्चात् युद्धमंत्री नियत किया गया था, उसके स्थान पर सेनापति के पद पर सुशोभित कर दिया गया। २० सितम्बर को उसने शत्रु सेना को सफलता के

साथ वामी (Valmy) के स्थान पर रोक दिया । इस समाचार को सुनकर कन्वेंशन के सदस्य बहुत प्रसन्न हुये, किन्तु सेनापति उनके लोकतंत्र सिद्धान्त तथा उनकी कार्यप्रणाली से सहमत न था । हालैंड विजय करने के स्थान पर उसकी सेना बेल्जियम से पेरिस की ओर भागती दृष्टिगोचर हुई । यह देखकर कन्वेंशन के सदस्यों को अति आश्चर्य हुआ । उन्हें इस बात की आशंका हुई कि कहीं दुमूरिये राजधानी में आकर शासन का अंत न कर दे । अतएव उन्होंने मार्च सन् १७९३ में इस मामले की जांच के लिये दांतों को उसके एक मित्र के साथ भेजा। इस सम्बन्ध में जिरोंदिन दल ने स्वयं को दोषारोपण से सुरक्षित रखने के विचार से १ अप्रैल को दांतों पर यह कलंक लगाया कि वह दुमूरिये से मिल गया है और फ्रांस का एकशास्ता (Dictator) बनने का प्रयत्न कर रहा है। परन्तु वे उसका कुछ न बिगाड़ सके । उसने कन्वेंशन में एक जोशीला भाषण दिया तथा अत्यन्त सुन्दरता से स्वयं को बचा लिया । उसके भाषण के अन्तिम शब्द लिखने के योग्य हैं,—"मैंने स्वयं को दृढ़ता के साथ बुद्धिमानी के दुर्ग में बिठला लिया है। मैं सत्यता का शस्त्र लेकर उसके बाहर आऊँगा और वे बदमाश जिन्होंने मुझे दोषी ठहराने का प्रयत्न किया था पीसकर चूर्ण बना दिये जावेंगे।" इसमें सन्देह नहीं कि दांतों एक योग्य वक्ता था । उसके भाषण ने अत्यन्त सुन्दर प्रभाव उत्पन्न किया। इसके केवल दो मास पश्चात् जिरोंदिन दल के नेता देश के शत्रु निश्चित किये गये और वर्ष के समाप्त होने के पूर्व उनका अंत हो गया।

क्या दांतों सितम्बर के लोमहर्षक हत्याकाण्ड का उत्तरदायी था ?

यह भी एक ध्यान देने योग्य प्रश्न है कि क्या दांतों सितम्बर के लोमहर्षण हत्याकाण्ड का उत्तरदायी था ? अधिकतर विद्वानों ने इसका उत्तर दांतों के विरुद्ध दिया है । विदेशी शत्रुओं के सन्निकट आ जाने से जिरोंदिन दल का शासन निष्प्राण हो गया था और सब जगह पेरिस के क्रांतिकारी कम्यून का आदेश माना जाता था । दांतों वास्तविक रूप से उसका एकशास्ता था । उसकी नीति बिल्कुल साधारण थी। "मेरे विचार में शत्रु को रोकने का सबसे सुन्दर उपाय यह है कि सम्राट के पक्ष वालों के हृदयों में आतंक बिठाया जाय । साहस, अधिक साहस और सदैव अधिक साहस।" दांतों ही की आज्ञा से शस्त्रों को ज़ब्त करने के विचार से पेरिस में मकानों की तलाशी ली गई थी, और इस बहाने अगणित दोषरहित व्यक्ति कारागृहों में डाल दिये गये थे । इसके पश्चात् २ सितम्बर को जब वरदुं (Verdun) के हाथ से निकल जाने का समाचार राजधानी में पहुंचा तो वे सब तलवार के घाट उतार दिये गये । दांतों ही एक ऐसा व्यक्ति था जो उनको

बचा सकता था, किन्तु वह दूर ही से क़त्ल और हत्या का अभिनय देखता रहा। इस बात का काफ़ी प्रमाण है कि दांतों ने मारा से मिलकर वध करने वालों को प्रोत्साहन दिया था और उसी ने अपने मित्र की सहायता से अन्य प्रान्तों में भी पेरिस की भांति हत्यायें कराई थीं।

इस भयंकर हत्याकाण्ड के बाद ही दांतों अपने मित्र रोबेस्पेयर के साथ कन्वेंशन का सदस्य निर्वाचित किया गया। इस हैसियत से उसने उन कामों में सहानुभूति दिखाई जो इस काल में जेकोबिन दल की ओर से किये गये

पतन

थे। उसने जिरोंदिन दल से मोर्चा लेने में भी साहस से काम लिया। जब उक्त दल का पतन हो गया तो दांतों अप्रैल सन् १७९३ ई० में सर्वसाधारण सुरक्षा समिति (Committee of Public Safety) का सदस्य बनाया गया। किन्तु इसके पश्चात् उसका पतन हो गया। उस पर भी वही दोष लगाये गये हैं जो जिरोंदिन दल पर लगाये गये थे। वह सितम्बर के वधों का ज़िम्मेदार ठहराया गया, उस पर दूमूरिये के साथ षड्यन्त्र रचने का दोष आरोपित किया गया तथा उसके विरोध में ज़ोर देकर यह कहा गया कि उसके मित्र फ़ौजी ठेकों तथा सरकारी पदों को बेचकर धन कमाने में व्यस्त हैं। जेकोबिन दल में इस समय कई वर्ग उत्पन्न हो गये थे तथा एक वर्ग दूसरे का गला काटने को तत्पर था। दांतों स्वयं को रोबेस्पेयर के आक्रमणों से न बचा सका। १८ मार्च सन् १७९४ ई० को उसने कन्वेंशन में अन्तिम बार भाषण दिया। ५ अप्रैल को उसका सिर काट लिया गया।

दांतों को हम फ्रांस की राज्यक्रांति की महान् आत्माओं में स्थान नहीं दे सकते और न हम उसे अच्छे स्वभाव का व्यक्ति ही कह सकते हैं। यह भी ठीक है कि उसके जीवन का कोई विशेष सिद्धान्त न था। इसके अतिरिक्त उसका चरित्र भी अच्छा न था। लेकिन इन दोषों के विपरीत उसमें कुछ विशेष गुण थे जिनका उल्लेख पहले हो चुका है। वह एक महान् साहस का व्यक्ति था। विशेष रूप से विपत्ति के समय उसकी हिम्मत अधिक बढ़ जाती थी। उसे अपने गौरव की इतनी चिन्ता न थी जितनी अपने देश के गौरव की।

डाक्टर मारा (Dr. Marat)

डाक्टर मारा (१७४२-१७९३) जेकोबिन दल का एक प्रमुख सदस्य था। उसका मुख्य काम पेरिस की सर्वसाधारण जनता को भड़काना एवं अपने अख़बार तथा पुस्तिकाओं द्वारा ज़हर उगलना था। सम्राट और

गुण तथा दोष

उसके दरबारी, पादरी, अमीर उमरा तथा मध्य वर्ग के लोग इन सभी पर वह गालियों की वर्षा करता था। बहुधा वह पेरिस

में किसी सड़क के किनारे खड़ा हो जाता और सुनने वालों के कानों को झूठी और सच्ची बातों से भर देता था। आशय यह कि डाक्टर मारा एक जले हुये फ़लीते के समान था जो चारों ओर प्रलय मचा सकता था। वह कई वर्षों तक हालैंड तथा इंग्लैंड में निवास कर चुका था, किन्तु उसका विश्वास था कि अंगरेज़ी ढंग की शासन प्रणाली, जिसके अधीन कुछ विशेष वर्गों के लोग फ़ायदा उठा रहे थे, सर्वसाधारण के लिये लाभकारी तथा संतोषजनक नहीं हो सकती। अतएव वह बहुधा जोशीला भाषण करके या अपने पत्र में जोशीले लेख लिखकर सर्वसाधारण पर यह प्रकाशित करने का प्रयत्न करता था कि उनका भला तभी हो सकता है जब वे शासन सूत्र को अपने हाथ में ले लें। कोई संकट व ग़रीबी अथवा किसी भी प्रकार का कड़ा व्यवहार उसे शान्त नहीं कर सकता था। बहुधा उसे पृथ्वी के नीचे की कोठरियों तथा नालों में शरण लेनी पड़ती थी, जिसके कारण उसे एक भयंकर चर्मरोग हो गया था। तिस पर भी उसने अपने संकल्प तथा व्यवहार को नहीं बदला। सन् १७६२ ई० में मारा का प्रभाव इतना अधिक था कि पदाधिकारी उससे डरते तथा घृणा करते थे, किन्तु राजधानी की सर्वसाधारण जनता उससे प्रेम करती थी तथा उसका सम्मान करती थी।

इस बात पर बहुत कम लोग विश्वास करेंगे कि इस प्रकार के तूफ़ानी व्यक्ति को, जिसका वर्णन हम कर रहे हैं, साहित्य अथवा विज्ञान से प्रेम होगा। लेकिन डाक्टर मारा सचमुच इसी प्रकार का व्यक्ति था। जैसा कि विदित है, उसका पेशा चिकित्सक का था। वह सोलहवें लूई के भाई काउंट आफ़ आर्त्वा (Count of Artois) का खानदानी डाक्टर रह चुका था। उसने भौतिक विज्ञान के सम्बन्ध में कुछ अन्वेषण भी किये थे। अतएव उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये स्काटलैंड के एक विश्वविद्यालय ने उसे एक उपाधि से सम्मानित किया था। उसे पुस्तकों के अध्ययन तथा प्रकाशन का भी शौक़ था। अतः हम कह सकते हैं कि डाक्टर मारा के व्यक्तित्व में विरोधी विशेषताओं का समिश्रण था। किन्तु वह अपने सद्गुणों से लोगों को अधिक लाभ न पहुंचा सका।

फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रारम्भ होने के कुछ वर्ष पूर्व मारा ने चिकित्सक व विज्ञानवेत्ता की स्थिति से पेरिस में पर्याप्त कीर्ति उपलब्ध कर ली थी। सन् १७८८ ई० में उसने प्रथम क्रांतिकारी पुस्तिका प्रकाशित की, तथा सन् १७८६ ई० के सितम्बर मास में उसने अपने दैनिक समाचारपत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया, जो विभिन्न नामों से उसके अन्तकाल तक प्रकाशित होता रहा। इस पर दृष्टिपात करने से इस बात का पता चलता था कि मारा के विचार

समाचारपत्र का का सम्पादक

तथा सिद्धान्त धीरे धीरे उग्रवादी हो रहे थे। अन्त में वह इस बात पर ज़ोर देने लगा कि उन सब लोगों को, जो प्राचीन राजसत्ता के पक्षपाती तथा स्वाधीनता की नयी प्रगति के विरोधी हैं, नष्ट कर देना चाहिये। एक स्थान पर उसने स्पष्ट शब्दों में लिखा था कि "मैं सिरों के काटे जाने में विश्वास करता हूं"। उसकी चिकित्सक की दृष्टि सब जगह बीमारी देखती थी। इसलिये वह अपने समाचारपत्र के द्वारा सभी के प्रति विरोध प्रकट करता था, और सभी पर गालियों की वर्षा करता था। किन्तु अक्सर उसकी समालोचना झूठी होती थी। दीनों और गिरी हुई स्थिति के लोगों का वह सच्चा मित्र था। सन् १७६२ ई० में उसने अपने समाचारपत्र के लिये यह धारणा अपनाई कि "हमारा कर्तव्य है कि दीनों की सहायता के लिये मालदारों से धन वसूल करें।"

फ्रांस के लिये कौनसी शासन पद्धति सब से उपयुक्त है? इस प्रश्न के सम्बन्ध में हम कह सकते हैं कि डाक्टर मारा को सीमित राजतंत्र सब से अधिक प्रिय थी। इस विषय में १७ फर्वरी सन् १७६१ ई० को उसने अपने पत्र में अपने उद्‌गार इस प्रकार प्रकट किये थे—"मुझे पूरा विश्वास है कि आजकल सीमित राजतंत्र हमारे लिये सबसे अधिक उपयोगी है। एक संघानीय गण-तन्त्र शीघ्र ही कुछ विशेष व्यक्तियों के शासन में परिवर्तित हो जाता है।" मारा के लेखों को पढ़कर इस बात का संदेह भी होता है कि वह स्वयं को फ्रांस का एकशास्ता बनाना चाहता था।

डाक्टर मारा को मारकाट से प्रेम न था, किन्तु मारकाट, जैसा कि हम पहले उल्लेख कर चुके हैं, उसके राजनीतिक सिद्धान्त का एक अंग था। जिस समय पेरिस के कारागारों में सितम्बर सन् १७६२ ई० में मारकाट का बाज़ार गरम किया गया था उस समय वहां के क्रांतिकारी कम्यून की शक्ति उत्कर्ष की चरम सीमा पर थी। यदि सच पूछिये तो राजधानी तथा अन्य नगरों व ग्रामों में लगभग सभी स्थानों में उसी की आज्ञा चल रही थी। सितम्बर का हत्याकांड इसी क्रांतिकारी कम्यून की ओर से रचा गया था। मारा उस 'सावधानी समिति' (Vigilance Committee) का सदस्य था जो कम्यून के अधीन काम कर रही थी एवं जिसके अधीन पुलिस और कारागृह थे। अतएव हम उसे उसके उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं कर सकते। इसके विपरीत उसे इस बात का खेद था कि वह वधिकों की फेहरिस्त में कुछ अवांछनीय राजनीतिज्ञों के नाम सम्मिलित नहीं कर सका था। परन्तु हम उसकी प्रशंसा में

सितम्बर के हत्याकांड के सम्बन्ध में उत्तरदायित्व

इतना अवश्य कहेंगे कि उसने अन्य नेताओं की भाँति अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार करने में कभी आनाकानी नहीं की।

कुछ विद्वानों ने डाक्टर मारा को इस उत्तरदायित्व से उन्मुक्त करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने यह युक्ति निकाली है कि वह उक्त कमेटी का सदस्य केवल उसी दिन बनाया गया था जिस दिन सितम्बर का रोमांचकारी हत्याकाण्ड प्रारम्भ हुआ था। अतएव वह टेलीफोन आदि की अनुपस्थिति में पेरिस के सर्व-साधारण को किस प्रकार उत्तेजित कर सकता था? किन्तु इस उक्ति को उपस्थित करते समय उन्होंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि डाक्टर मारा तो बहुत पहले से देश की रक्षा के लिये अपने समाचारपत्र के द्वारा बलिदानों की माँग कर रहा था। सन् १७९० ई० में उनकी संख्या पांच अथवा छ: हज़ार निश्चित की गई थी। किन्तु सन् १७९२ ई० में वह ७० हज़ार तक पहुंच गई थी। अगस्त सन् १७९२ ई० में उसने सर्वसाधारण को इसलिये उत्तेजित भी किया था कि स्विज़ पदाधिकारी जो ऐबे (Abbaye) के कारावास में बन्दी थे वध कर दिये जायें। ऐसी दशा में हम किस प्रकार कह सकते हैं कि सितम्बर के रोमांचकारी हत्याकाण्ड में मारा का हाथ नहीं था?

सितम्बर सन् १७९२ ई० के रोमांचकारी हत्याकाण्ड के दो सप्ताह पश्चात् कन्वेंशन की बैठक हुई। रोबेस्पेयर, ब्रीसो एवं दांतों की भाँति डाक्टर मारा भी उसका सदस्य निर्वाचित किया गया। उसने उस मुठभेड़

कन्वेंशन का सदस्य में विशेष भाग लिया जो कन्वेंशन में जिरोंदिन तथा जेकोबिन दलों के बीच हुई थी। अप्रैल सन् १७९३ ई० में

मारा ने अपने दल के अध्यक्ष की हैसियत से पहला वार किया। इस समय विरोध व वैमनस्य का मुख्य कारण विदेशों से युद्ध में फ्रांस की सेना की पराजय तथा उसके सेनापति दूमूरिये का विश्वासघात था। इसका उल्लेख हम गत पृष्ठों में भी कर चुके हैं। जिरोंदिन दल की सबसे बड़ी मूर्खता यह थी कि उसने डाक्टर मारा के विरुद्ध मुक़दमा चलाया, किन्तु वह निर्दोष घोषित किया गया। अब तो जेकोबिन दल की खूब बन आई। मारा के प्रभाव में सर्वसाधारण जनता तो थी ही। उसने ३१ मई से २ जून तक उनकी सहायता से पेरिस में बड़ी कुव्यवस्था फैलाई तथा विरोधी दल को दंडित किये जाने पर ज़ोर दिया। लेकिन एक लड़की ने, जिसका नाम शारलौत कोर्डे (Charlotte Carday) था, स्नानागृह में किसी बहाने से प्रवेश करके उसका वध कर डाला। यह घटना जौलाई सन् १७९३ ई० की है। इससे यह नतीजा निकाला गया कि समस्त जेकोबिन नेताओं के वध

किये जाने के उद्देश्य से एक भयंकर षड्यन्त्र की सृष्टि की जा रही है। इस संदेह में तीन मास के पश्चात् जिरोंदिन नेताओं को मौत के घाट उतार दिया गया।

देहावसान के पश्चात् डाक्टर मारा को 'शहीद' का सम्मान प्राप्त हुआ। उसके नाम पर थूकने के स्थान पर सर्वसाधारण ने उसको पूजना प्रारम्भ कर दिया।

अन्तिम प्रतिष्ठा व सत्कार

उसकी प्रतिष्ठा व सम्मान के लिये कविताओं, अभिनय तथा गानों की सृष्टि की गई। पुत्रों और मार्गों के नाम उसके नाम पर रक्खे गये। कई विद्वानों ने शान के साथ उसके समाचारपत्र के ढंग को अपनाया। कुछ स्थानों में मेरी के स्थान पर उसकी मूर्ति स्थापित की गई। तीन बालकों ने जिनकी आयु दस से बारह वर्ष तक थी एक अभिनन्दनपत्र में इन शब्दों का प्रयोग किया—'ए मारा, स्वर्ग को छोड़ दे और उन लोगों में लौट कर आजा जो तेरी अर्चना करते हैं।' मारा की मृत्यु के पश्चात् यह मत भी प्रकट किया गया कि उसको मृतक अवस्था में ही प्रान्तों में ले जाया जाय जिससे समस्त राष्ट्र उसके प्रति सम्मान व प्रेम का प्रदर्शन कर सके। लोगों ने उसके शरीर को राष्ट्रीय मक़बरे में स्थान दिया। यह सम्मान बहुत कम नेताओं को प्राप्त हो सका है। इस विवाद के आधार पर हम कह सकते हैं कि सर्वसाधारण जनता के हृदय में मारा ने गहरा स्थान प्राप्त कर लिया था और इस विषय में अन्य नेता उसकी बराबरी नहीं कर सकते।

रोबेस्पेयर (Robespierre)

रोबेस्पेयर फ्रांस की राज्यक्रांति के नेताओं में बहुत ऊंचा स्थान रखता है। उसका जन्म सन् १७५८ ई० में आरोस (Arras) नगर के एक मध्यम श्रेणी के कुटुम्ब में हुआ था। उसका कौटुम्बिक पेशा वकालत था। अतएव उसने भी पेरिस के विश्वविद्यालय में इसी पेशे की शिक्षा ग्रहण करके अपने जन्मस्थान में वकालत प्रारम्भ कर दी। विश्वविद्यालय में उसका एक साथी देमूलैं (Desmoulins) था, जिसने क्रांतिकारी युग में मार्गों पर भाषण देने वाले नेताओं में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया। कुछ समय के पश्चात् रोबेस्पेयर फ़ौजदारी का न्यायाधीश नियुक्त कर दिया गया, किन्तु उसने शीघ्र ही इस कारण से अपना पद त्याग दिया कि वह मौत का दण्ड देने से घबराता था। यह एक विचित्र बात है कि आगे चलकर इसी नवयुवक ने अपने कुछ साथियों के साथ सैकड़ों निरपराधियों के वध से पृथ्वी रंग डाली और उस शोणित तर्पण के नाटक में इतनी प्रसिद्धि प्राप्त की कि उसका नाम ही हत्या और वध का पर्यायवाची बन गया। रोबेस्पेयर को साहित्य से विशेष प्रेम था। वह तड़क भड़क की वेशभूषा तथा फैशन से भी प्रेम करता था। उसमें

उसमें सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वह सदाचारिता पर बहुत ज़ोर देता था। इस सम्बन्ध में उसके कुछ विशेष सिद्धान्त थे, जिनसे वह ज़रा भी हटना न चाहता था। वह एक योग्य तथा गंभीर वक्ता तथा राजनीतिज्ञ था। यह एक ऐसी विशेषता थी कि उसके कारण उसने क्रांति के समय नेताओं को प्रथम पंक्ति में स्थान प्राप्त किया।

सन् १७८९ ई० में रोबेस्पेयर तृतीय श्रेणी के मनुष्यों की ओर से स्टेट्स जनरल का सदस्य निर्वाचित किया गया। उपरोक्त सभा में उसकी बैठक उन उग्रवादियों के साथ थी जो शासन और समाज में काया-पलट परिवर्तन करना चाहते थे, और जिन्हें मीराबो 'तीस आवाज़ें' कह कह सम्बोधित किया करता था। रोबेस्पेयर ने रूसो की किताबों का ध्यान पूर्वक अध्ययन किया था। वह उसके सिद्धान्तों व दर्शन की श्रेष्ठता को समझता था। उसका विश्वास था कि उनके द्वारा हम न केवल फ्रांस वरन् समस्त संसार को स्वर्ग बना सकते हैं। अतएव जब राष्ट्रीय संविधान-सभा में फ्रांस के लिये नया संविधान तैयार करने के प्रश्न पर वादविवाद हुआ तो उसने उनको कार्य रूप में परिणित करने का पूरा प्रयत्न किया, किन्तु वह सफल न हो सका। इसका कारण यह था कि उसके अनुगामी संख्या में बहुत कम थे। दूसरे, मीराबो के प्रभाव के कारण वह अधिक महत्व प्राप्त न कर सका था। तिस पर भी उसके सिद्धान्तों व विश्वासों के न बदलने वाली सच्चाई को देखकर सब लोग इस धीर, गम्भीर नवयुवक की प्रशंसा करते थे। मीराबो का मत था कि "यह नवयुवक पर्याप्त उन्नति करेगा, क्योंकि जो कुछ वह कहता है, उसमें विश्वास भी करता है।" इस प्रकार के विचार रोबेस्पेयर के सम्बन्ध में अन्य सदस्यों ने भी प्रकट किये थे। उसके मार्ग में बड़ी कठिनाई यह थी कि उसे यह ज्ञात न था कि अपने सिद्धान्तों को किस प्रकार व्यवहारिक रूप दे। अतएव एक व्यक्ति ने उसकी शिकायत करते हुये कहा था,—"वह यह तो कहता है कि हमें क्या करना चाहिये, किन्तु बहुत ही कम अवसरों पर यह बतलाता है कि उस पर किस प्रकार व्यवहार किया जाय।"

राष्ट्रीय संविधान-सभा का सदस्य

राष्ट्रीय संविधान-सभा के समाप्त होने पर अक्टूबर सन् १७९१ ई० से सितम्बर सन् १७९२ ई० तक विधान-सभा (Legislative Assembly) की बैठक हुई किन्तु गत सभा के सदस्यों में से कोई भी उसका सदस्य न बन सका। कारण यह था कि सभा भंग होने के पूर्व उसने इस विषय में एक प्रस्ताव स्वीकार कर लिया था। इस समय रोबेस्पेयर जेकोबिन क्लब एवं पेरिस के सर्वसाधारण जनता पर प्रभाव उत्पन्न करने में व्यस्त था। जेकोबिन क्लब का सदस्य वह पहले ही से था।

जेकोबिन क्लब का सदस्य

जब उसके नरम दल के सदस्य अर्थात् ब्रीसो आदि सन् १७६१ ई० में उससे पृथक होगये और उन्होंने अपने लिये एक पृथक दल (ज़िरोंदिन दल) बना लिया तो उपरोक्त क्लब पर रोबेस्पेयर का प्रभुत्व स्थापित होगया। वह न केवल उसका सबसे बड़ा नेता वरन् प्रतिष्ठित प्रतिनिधि भी होगया। उसके नेतृत्व में जेकोबिन क्लब ने समाज में प्रजातन्त्र के सिद्धान्त पर सुधार करने तथा सर्वसाधारण को उपर उठाने का प्रयत्न किया। इस काल में रोबेस्पेयर ने एक महत्वपूर्ण कार्य यह किया कि उसने उपरोक्त सभा का सदस्य न होते हुये भी ब्रीसो की युद्ध सम्बन्धी नीति का कड़ा विरोध किया। उसका कहना था कि युद्ध से सर्वसाधारण जनता को कोई लाभ न होगा। लाभ होगा केवल ब्रीसो को, क्योंकि वह प्रत्येक दिशा में फ्रांस का एकशास्ता बन जावेगा।

सर्वसाधारण का नेतृत्व

सितम्बर सन् १७६२ ई० तक जब कनवेंशन की बैठक प्रारम्भ हुई, रोबेस्पेयर ने पेरिस के सर्वसाधारण पर पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त कर लिया था। वह एक सुन्दर प्रकृति का सच्चा तथा विश्वास के योग्य व्यक्ति था। उसने कभी भी क्रांति के द्वारा धन उपार्जन का प्रयत्न नहीं किया था। रूसो के सच्चे भक्त की भाँति वह सदा सर्वसाधारण के लिये संघर्ष करता रहा, लेकिन उसने उनको प्रसन्न करने के लिये कभी भी अपने सिद्धान्तों का त्याग नहीं किया। अन्तिम घड़ी तक वह पुराने ढंग का बुटना और रेशमी मोज़े पहनता रहा तथा अपने बालों में खिज़ाब लगाता रहा। इन कारणों से सर्वसाधारण उसका सम्मान करते थे, और उसको अपना पथप्रदर्शक स्वीकार करते थे। किन्तु उदार नीति का पक्षपाती होने के कारण उसको वह लूट मार एवं बरबादी पसन्द न थी जो सर्वसाधारण की ओर से क्रांति के समय बहुधा की जाती है। उदाहरण के लिये १० अगस्त सन् १७६२ ई० को पेरिस की सर्वसाधारण जनता और मध्यम श्रेणी के उग्रवादियों ने सम्राट के महल पर आक्रमण किया था। इस मामले में जेकोबिन क्लब का पूर्ण उत्तरदायित्व था, किन्तु रोबेस्पेयर का उसमें कोई हाथ न था। इतना अवश्य हुआ कि इस घटना के पश्चात् उसने अपने समाचार-पत्र की नीति को बदल कर उसे लोकतन्त्रवाद का समर्थक बना दिया। इसके अतिरिक्त वह पेरिस के क्रांतिकारी कम्यून को जिसकी शक्ति उन्नति की चरम सीमा पर थी प्रसन्न करने के लिये प्रयत्न भी करने लगा। अस्तु १ सितम्बर को जब उपरोक्त कम्यून की ओर से एक उज्रदारी विधान-सभा के सम्मुख पेश की गई तो उसने अपने पत्र में इसके समर्थन में अपने विचार प्रकट किये। इसके पश्चात् सितम्बर का रोमांचकारी हत्याकाण्ड किया गया। इसमें दांतों और डाक्टर मारा का पूरा हाथ था। सर्वसाधारण को भी उससे पूरी सहानुभूति थी, किन्तु रोबेस्पेयर ने उनसे

अनुकूलता न दिखलाई थी। इसके पश्चात् जब कन्वेंशन के लिये सदस्यों का निर्वाचन किया गया तो पेरिस के सर्वसाधारण की ओर से उसने सबसे प्रथम सफलता प्राप्त की।

रोबेस्पेयर में पूर्ण परिवर्तन

१० अगस्त और सितम्बर की रोमांचकारी घटनायें इस बात के प्रकट उदाहरण हैं कि उस समय तक रोबेस्पेयर एक उदार विचार का राजनीतिवेत्ता था एवं देश के लिये कोई ऐसा कार्य न करना चाहता था जिससे उसके नाम पर कलंक आये। उसके हृदय में उस समय तक फ्रांस का एकशास्ता (डिक्टेटर) बनने की महत्वाकांक्षा भी उत्पन्न न हुई थी, किन्तु कन्वेंशन की बैठक प्रारम्भ होते ही उसके विचार परिवर्तित हो गये और उसके भाषणों में अधिक तेज़ी आगई। इसका प्रमुख कारण यह था कि जिरोंदिन और जेकोबिन दलों का पारस्परिक विद्वेष बहुत बढ़ गया था। इस सम्बन्ध में उसने जो भाषण सोलहवें लूई के वध (जनवरी सन् १७९३ ई०) के पश्चात् कन्वेंशन में दिये, उन पर ध्यान देने से स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि उसने अपनी नीति को छोड़ दिया था और वह तेज़ी से उस ओर बढ़ रहा था जहाँ से उसने अपनी फैशन, सुन्दर संभाषण शक्ति, धर्म तथा व्यक्तिगत जीवन को स्थापित रखते हुये शीघ्रता से भयंकर प्रलय (Reign of Terror) उपस्थित की तथा सर्वसाधारण का एकशास्ता होना घोषित किया। आतंकवादी शासन (जून सन् १७९३—१७९४) ने जिसका सबसे मुख्य स्तम्भ रोबेस्पेयर था २२ जोरोंदिन दल के नेताओं के अतिरिक्त सम्राज्ञी मेरी ऐन्तोयनेत का शीश भी उतार लिया। इसके अतिरिक्त अन्य अगणित लोगों को भी शासन की आज्ञा से नरहिंसक यंत्र अथवा गेय्रोतीं (Guillotine) के भेंट कर दिया गया।

शासन के संबंध में उसके सिद्धांत

जिरोंदिन दल के पतन पर शासन की बागडोर जेकोबिन दल के हाथ में आई। रोबेस्पेयर उसका महाशक्तिशाली नेता था, किन्तु प्रश्न यह था कि वह केवल दूसरों के शीश को गेय्रोतीं की भेंट करना (एवं अपना सर देना!) ही जानता है अथवा एक कुशल कारीगर की भाँति शासन का आदर्श भवन भी निर्मित कर सकता है? इस सम्बन्ध में उसके सिद्धांत अत्यन्त सुदृढ़ किन्तु अव्यवहारिक थे। वह भलाई और धर्म के आधार पर एक ऐसा लोकतंत्र प्रणाली (Republicanism) का शासन स्थापित करना चाहता था जिसके संरक्षण में या सर्वसाधारण के लिये, रूसो के बतलाये हुये 'स्वतन्त्रता, समानता तथा बान्धुत्व' के प्राकृतिक अधिकार सुरक्षित हों एवं जो सर टामस मोर की यूटोपिया (Utopia) की भाँति सभी प्रकार के सुख और संतोष का उत्तरदायी बन सके, किन्तु उसके सफल

बनाने के लिये रोबेस्पेयर ने भयंकर साधनों का उपयोग उचित बतलाया था। 'यदि शान्ति के समय सर्वसाधारण के शासन का आधार भलाई पर अवलम्बित रहता है तो क्रांति के समय भलाई और भय दोनों ही उसके आधार बन जाते हैं, भलाई जिसके बिना आतंक का परिणाम अत्यन्त नाशकारी होता है और भय जिसके बिना भलाई व्यर्थ हो जाती है।' खेद है कि जेकोबिन दल का शासन भयंकर साधनों के उपयोग में तो सफल हुआ, किन्तु उसने अपने नेता की कार्यप्रणाली के दूसरे भाग को महत्व नहीं दिया।

पतन

जिरोंदिन दल की भाँति रोबेस्पेयर और उसके दल का पतन भी शीघ्र ही हुआ। जौलाई सन् १७६३ ई० में वह 'जन रक्षा समिति' (Committee of Public Safety) का सदस्य बनाया गया था। जौलाई सन् १७६४ ई० की २८ तारीख को उसको इस संसार से विदा कर दिया गया। जिस गेऑतीं अथवा नरहिंसक यंत्र पर उसने सैकड़ों को बलिदान किया था उसी यंत्र पर उसे स्वयं भी बलिदान होना पड़ा। जब सर्वसाधारण खून देखने के अभ्यस्त होजाते हैं तब उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं रहती कि वे किसका खून होते देख रहे हैं। अस्तु इस काल के रक्तधार की बहिया में रोबेस्पेयर भी बह गया। उसके पतन के कई कारण थे। एक तो वह उस रक्तपात के कारण बदनाम होगया था जिसका उत्तरदायित्व उस पर लागू होता है। दूसरे, उसने अपनी धार्मिक नीति के कारण शत्रु उत्पन्न कर लिये थे। लोगों का विचार था कि वह धर्म के बहाने उन्हें बंधन में जकड़ देगा और अपने शत्रुओं को यमपुरी भिजवा देगा। बहुत से व्यक्तियों को यह शिकायत थी कि वह उनकी आर्थिक दशा में सुधार करने के लिये कुछ न कर सका था। अस्तु एक दिन उसे बंदी करने के लिये कंवेन्शन के सिपाही उसके कमरे में घुस गये। यह देखकर रोबेस्पेयर ने तुरन्त ही एक पिस्तौल निकालकर स्वयं को घायल कर डाला। उसी दिन संध्या की धूमिल बेला में नरहिंसक यंत्र पर उसका शीश धड़ से अलग कर दिया गया।

पाँचवाँ अध्याय

फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था

(Ancien Regime)

तथा

शेष यूरोप से उसकी तुलना

जब हम फ्रांसीसी क्रांति की अद्‌भुत घटनाओं, उनकी तेज़ रफ्तार तथा उनके महत्व पर दृष्टिपात करते हैं तो हमारे मस्तिष्क में कई प्रकार के प्रश्न उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के रूप में एक प्रश्न यह है कि इस महाक्रांति के, जो अपनी समता नहीं रखती, उत्पन्न होने के क्या कारण थे? क्रांति सबसे पूर्व फ्रांस ही में क्यों उत्पन्न हुई? उसने एक निश्चित रूप क्यों ग्रहण किया? क्या यह सम्भव था कि प्रारम्भ होने के पश्चात् ही उसको रोक दिया जाता? इस प्रकार के कुछ प्रश्न ऐसे हैं जिन पर दृष्टिपात किये बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते। अतएव हम वर्तमान तथा आगामी अध्याय में प्रथम दो प्रश्नों का कुछ विस्तृत विश्लेषण करेंगे तथा यह बतलाने का प्रयत्न करेंगे कि यद्यपि शेष यूरोप की सामाजिक व राजनैतिक अवस्था भी लगभग वही थी जो फ्रांस की थी, किन्तु कुछ अतिरिक्त कारणों से जो संयुक्त रूप में यूरोप के किसी भी अन्य देश में उपस्थित न थे। एक बहुत बड़ी क्रांति सर्वप्रथम फ्रांस ही में हुई।

बौद्धिक जागृति का प्रभाव

तीसरे अध्याय में हम यूरोप की असाधारण बौद्धिक जागृति अथवा बौद्धिक क्रांति (Intellectual Revolution) का उल्लेख कर चुके हैं। इस विषय में सबसे अधिक उन्नति विज्ञान तथा दर्शन की हुई थी। विज्ञानवेत्ताओं में सबसे महत्वपूर्ण नाम देकार्त (Descartes), राबर्टबोयल, सरआयज़क न्यूटन, प्रेस्टले तथा एडवर्ड जेनर के हैं। दार्शनिकों में वोल्तेयर, हॉब्स, लाक, मौन्तस्क्यू एवं रूसो के नाम सबसे अधिक प्रकाशमान हैं। विज्ञान का सब से बड़ा वरदान यह था कि उसके प्रभाव से शिक्षित वर्ग के लोगों

में दीर्घकालीन प्रथाओं की ओर से एक प्रकार की उदासीनता उत्पन्न हो गई। वे आलोचना करना भी सीख गये। इसके अतिरिक्त वे प्रत्येक वस्तु की गहराई तक पहुंचने तथा उसकी वास्तविकता को समझने का प्रयत्न करने लगे। दार्शनिकों ने वीरतापूर्वक शासन, समाज और चर्च पर आक्रमण किये तथा ज़मीन पर स्वर्ग स्थापित करने की आशा दिलाई। परिणाम यह हुआ कि शिक्षित वर्ग के लोगों में नवीन स्फूर्ति, उत्साह तथा नवीन आशाओं का जन्म हुआ। वे दीर्घकालीन बातों को, जो शताब्दियों से प्रचलित थी, भूल जाने का प्रयत्न करने लगे एवं उस स्वर्ण-युग की ओर आकर्षित हुये जिसकी आशा विज्ञानवेत्ता तथा दार्शनिक दिला रहे थे। वे बादशाह के 'ईश्वरदत्त अधिकारों' की आलोचना करने लगे तथा धार्मिक एवं सामाजिक प्रथाओं के प्रति, जो शताब्दियों से प्रचलित थीं, सन्देह और अविश्वास प्रकट करने लगे।

दीर्घकालीन शासन व्यवस्था

बौद्धिक उन्नति व हलचल के इस प्रवाह में, जिसका उल्लेख यहां किया गया है, न केवल फ्रांस वरन् यूरोप के अन्य देशों में भी निरंकुश शासन सत्तायें स्थापित थीं। हालैंड, ग्रेट ब्रिटेन तथा स्विटज़रलैंड को छोड़कर शायद ही कोई ऐसा देश हो जहां प्रजातंत्र शासन स्थापित था। आस्ट्रिया, तुर्की, रूस, फ्रांस, स्पेन, पुर्तगाल, डेन्मार्क तथा स्वीडन आदि सभी देशों में पूर्ण रूप से निरंकुश शासन का चलन था। हाल ही में ब्रिटेन और अमेरिका में राजनैतिक क्रांतियां हो चुकी थीं, परन्तु यूरोप के सम्राट उस समय तक स्वयं को ईश्वर का अवतार मानते थे। उनकी आज्ञा ईश्वरी आज्ञा मानी जाती थी। किसी में भी इतना साहस नहीं था जो उसकी आज्ञा की अवहेलना कर सके। शासन के सभी अंगों पर सम्राट का पूर्ण अधिकार था। अतएव फ्रांस के सम्राट चौदहवें लूई का कथन था कि "मैं स्वयं ही राज्य हूं।" इसका अर्थ यह है कि शासन के सभी विभागों पर उसका पूर्ण अधिकार था। यही अवस्था दूसरे सम्राटों की भी थी। एक दूसरी विचित्रता यह थी कि न केवल फ्रांस में, वरन् दूसरे देशों में भी गिर्जाघरों (धार्मिक संस्थाओं) पर भी सम्राट को पूर्ण अधिकार प्राप्त था। इस काल में यूरोप के अन्य देशों में भी सरकारी चर्च स्थापित थे, जैसे इंग्लैंड का एंग्लिकन चर्च, स्वीडन का लूथरन चर्च या फ्रांस तथा स्पेन का कैथोलिक चर्च*। उनके पादरी वहां के राजनैतिक शासन के न केवल सहायक व हितकारी थे, वरन् किसी न किसी सीमा तक उसके आज्ञापालक अनुचर

---

*चर्च शब्द से यहाँ हमारा आशय धार्मिक संस्थाओं से है, न कि गिर्जाघरों की इमारतों से।

भी थे। फ्रांस में धारा-सभा ही एक ऐसी सभा थी जो किसी सीमा तक शासन की स्वच्छंदता में बाधक हो सकती थी, किन्तु सन् १६१४ ई० से उसका कोई अधिवेशन न हुआ था।

सन् १७८९ ई० में समाज की दशा भी ठीक न थी। यह फ्रांस की राज्य-क्रांति के उत्पन्न होने का एक प्रमुख कारण था। इस काल में रूसो तथा अन्य दार्शनिक इस विषय पर ज़ोर दे रहे थे कि सामाजिक वर्गों का अन्तर मिटा दिया जाय तथा अप्राकृतिक बन्धनों को नष्ट कर दिया जाय। इसके प्रतिकूल यूरोप के निवासी उनमें बुरी तरह जकड़े हुये थे। वे उन अनेकों वर्गों में विभाजित थे जो वहां दीर्घकाल से चले आ रहे थे। यह वर्ग इस प्रकार थे,—सम्राट तथा उसके सम्बन्धी, कुलीन वर्ग के लोग (Nobility), पादरी तथा क़स्बों के मध्यवर्ग के व्यक्ति, दस्तकार तथा कृषक। इनमें अन्तिम वर्ग के लोग सबसे अधिक सभ्यता से वंचित तथा प्राचीन रूढ़ियों के शिकार थे। ग्रेट ब्रिटेन एवं कुछ अन्य देशों में कृषि के सम्बन्ध में उपयोगी प्रयोग हो चुके थे। उदाहरण के लिये वहाँ फ़सलों में परिवर्तन करते रहने का रहस्य ज्ञात हो चुका था। वहाँ बड़े खेतों तथा उनके चारों ओर चहार-दीवारी बनाये जाने पर ज़ोर दिया जा रहा था, वहाँ उत्तम प्रकार की खादों के विषय में जानकारी प्राप्त हो चुकी थी तथा वहाँ पशुओं का स्वस्थ होना एक साधारण बात थी। परन्तु फ्रांस के कृषकों ने उपरोक्त जानकारी तथा उत्तम प्रयोगों से किंचित लाभ न उठाया था। उनके खेत अभी तक पट्टियों के रूप में जोते जाते थे एवं इन पट्टियों के बीच किसी प्रकार की मेंड़ेर भी न होती थी। जोताई का काम पुराने ढंग पर एवं पुराने यंत्रों की सहायता से किया जाता था। कृषक प्राचीन ढंग के खराब खादों का प्रयोग भी करते थे। अतएव बहुधा ऐसा होता था कि तमाम दिन काम करने के पश्चात् भी यदि वे अपने लकड़ी के बेढंगे हल से एक एकड़ भूमि को जोतने में सफल हो जाते तो वे अपने को स्वाभिमान का पात्र समझते थे। खेतों को उपजाऊ बनाये रखने के विचार से उन्हें प्रत्येक तीसरे वर्ष अपने हिस्से की पट्टी को बिना जोते छोड़ देना पड़ता था। उत्तम घास की कमी के कारण पशु पतझड़ के मौसम में बध कर दिये जाते थे। उत्तम प्रकार की खादों के उपयोग से बहुत कम लोग परिचित थे। अगर कोई कृषक एक बुशल बीज डालकर तीन बुशल अनाज पैदा कर लेता था अथवा यदि उसका बैल किसी प्रकार भार में चार सौ पौंड से अधिक हो जाता था तो वह स्वयं को सौभाग्यशाली समझता था।

सामाजिक दशा

इंग्लैंड और बड़ी सीमा तक फ्रांस के अतिरिक्त यूरोप के देशों में अभी तक

दास-कृषकों की प्रथा (Serfdom) प्रचलित थी। यह प्रथा उस युग में प्रारम्भ हुई थी जब वहां सामन्तशाही (Feudalism) स्थापित की गई थी। दास-कृषकों से आशय उन कृषकों से है जो दासों के समान बेंचे तो न जा सकते थे किन्तु उन पर कई प्रकार के विशेष बन्धन लागू होते थे। उदाहरण के रूप में वह एक जागीर को त्यागकर दूसरी जागीर में निवास ग्रहण न कर सकते थे। उन्हें लगान के अतिरिक्त जागीरदार को अन्य वस्तुयें प्रदान करनी पड़ती थीं, जैसे बारह मुर्गी के बच्चों में से एक बच्चा, एक दर्जन अण्डों में से एक अण्डा, और दस पौण्ड शहद में से एक पौण्ड शहद। सबसे मुख्य बात यह थी कि साधारणतया उन्हें प्रति सप्ताह तीन दिन तक जागीरदार के अधीन बेगार करनी पड़ती थी। यह बन्धन स्वतन्त्र किसानों पर लागू न होते थे।

कृषकों की दयनीय दशा

कृषक चाहे उपरोक्त ढंग से दास हों अथवा स्वतन्त्र, दोनों ही दशाओं में उसकी उन्नति के मार्ग में कुछ विशेष रुकावटें थीं, जो महाद्वीप के अनेक देशों में दीर्घकाल से क़ायम थीं और जिनका फ्रांस में विशेष रूप से प्रभाव था। वह अपने भाग की पट्टी पर नई फ़सल पैदा न कर सकता था, क्योंकि ऐसा करना प्रचलित प्रथा के विरुद्ध था। वह अपनी गायों का पोषण नवीन ढंग से न कर सकता था। कारण यह कि वह उनको गांव की अन्य गायों से, जो इधर उधर घूमा करती थीं, पृथक न रख सकता था। वह केवल परिश्रम कर सकता था और ईश्वर से इस बात की प्रार्थना कर सकता था कि अन्य पशुओं के साथ रहने से उसकी गायों को छूत की बीमारी न हो जाय अथवा उसके पड़ोस की पट्टियों के बेकार पौधे और घास उसकी पट्टी में न जम जायें।

कानून की धारायें बनाते समय कृषकों से किसी प्रकार का मत न लिया जाता था परन्तु उन पर कड़े से कड़े जुर्माने और कठिन से कठिन दंड आरोपित किये जाते थे। इसी तरह करों का सबसे अधिक भार भी कृषकों ही को सहन करना पड़ता था, यद्यपि उनको नियत करते समय उनसे किसी प्रकार की सम्मति न ली जाती थी। वास्तव में उनका वह जीवन बड़ा ही दुःखमय था जिसमें उन्हें नित्य कचहरी में छोटे मामलों की जवाबदही करनी पड़ती थी, जिसमें उन्हें बहुधा प्रातः से सायंकाल तक बिना मज़दूरी सड़कों पर काम करना पड़ता था और जिसमें उन्हें जागीरदार की चक्की, भट्ठी, शराब खींचने की मशीन तथा उसके पुल तक का उपयोग करने के लिये सुरक्षित रक़म देनी पड़ती थी। कितना करुण था वह जीवन जिसमें कृषक और उसकी पत्नी व बच्चे तो भर पेट अन्न के लिये तरसते

थे। परन्तु मोटे ताज़े हरिन तथा कबूतर उन के खेती में स्वतन्त्रतापूर्वक उदरपूर्ति करते थे। वे केवल इसलिये नहीं हटाये जाते थे कि ऐसी दशा में जागीरदार स्वेच्छापूर्वक जानवरों का शिकार नहीं कर सकता था।

किसानों पर करों का भार उनकी सहनशक्ति से बाहर था। शासन, चर्च और जागीरदार ये तीनों उन्हें करों के बोझ से दबाये हुये थे। दास-कृषक किस प्रकार अपने जागीरदार की सेवा करते थे और किस प्रकार कर और नज़राने देकर उसे प्रसन्न रखने का प्रयत्न करते थे, इसका उल्लेख हम इसके पूर्व कर चुके हैं। स्वतन्त्र किसान बेगार न करके जागीरदार को उसके स्थान में एक सुरक्षित रक़म कर (Quit Money) के रूप में देते थे। जब उनकी मृत्यु होती थी तो इसकी दोगुना रक़म उनके वंशजों से वसूल कर ली जाती थी। यदि कोई स्वतन्त्र किसान अपने खेत को बेचता था तो उसे मूल्य का पांचवां भाग जागीरदार को भेंट कर देना पड़ता था। इसके अतिरिक्त उसे अन्य रूपों में भी कुछ धन जागीरदार को देना पड़ता था। यह प्रथा दीर्घकाल से स्थापित थी। उसे प्रति वर्ष एक सुरक्षित रक़म 'युद्ध सम्बन्धी सुरक्षा' के लिये देनी पड़ती थी। किन्तु मज़ेदार बात यह थी कि कृषक उसकी आवश्यकता कभी भी अनुभव न करते थे और न कभी जागीरदार इस सम्बन्ध में कोई उत्तरदायित्व का काम ही करते थे।

उन पर करों का भार

इसी प्रकार चर्च के सम्बन्ध में भी कृषकों का एक मुख्य कर्तव्य था। दीर्घकाल से वे उसे अपनी आय का दसवां भाग (Tithe) प्रदान करते थे। किन्तु वास्तव में यह कर कभी भी पैदावार के बारहवें अथवा पन्द्रहवें भाग से कम न होता था।

कृषकों को कई असह्य कर शासन को भी देने पड़ते थे। (१) भूमि कर (Taille) जो प्रत्येक कृषक को अपनी स्थिति के अनुसार देना पड़ता था। किन्तु बहुधा सरकारी पदाधिकारी इससे कई गुना अधिक धन वसूल कर लिया करते थे। (२) पोल टैक्स (Poll Tax) जो कथन मात्र को एक साधारण कर था किन्तु वह प्रत्येक कृषक से वसूल किया जाता था। (३) आय कर (Income Tax) जो साधारणतः आय के बीसवें भाग के बराबर होता था। यह तीनों कर ऐसे थे जो किसानों से प्रत्यक्ष रूप में वसूल किये जाते थे। कुछ कर ऐसे भी थे जो उन्हें गुप्त रूप में देने पड़ते थे, जैसे नमक कर (Gabelle)। फ्रांस के कुछ प्रान्तों में प्रत्येक व्यक्ति को सरकारी कारखानों से प्रति वर्ष सात पौंड नमक दसगुना मूल्य पर मोल लेना पड़ता था। किसानों के कर्तव्यों में सड़कों का निर्माण करना भी सम्मिलित था। इस प्रकार के काम (Corvee) में बहुधा उन्हें प्रति वर्ष

कई सप्ताह व्यतीत करने पड़ते थे। जागीरदार, चर्च और शासन के प्रति अपना उत्तरदायित्व पूरा करने के पश्चात् कृषकों के पास बहुत कम बचता था। इसलिये वे अपनी तथा अपने बीवी बच्चों की आवश्यकताओं को कठिनता से पूरी कर सकते थे। इंग्लैंड और फ्रांस के दो चार ज़िलों के अतिरिक्त बाक़ी सभी स्थानों में कृषकों की दशा शोचनीय थी। बहुधा उन्हें भर पेट अन्न तक प्राप्त न होता था। मांस, मदिरा, और मोज़े व बनियायन उनके लिये भोगविलास की वस्तुयें थीं। फ्रांस के कृषकों के विषय में यह कहा जाता है कि जब उन्हें अनाज उपलब्ध न होता था तो वे गाजर, मूली व शकरक़न्द खाकर ही पेट भर लिया करते थे। अकाल के समय वे हज़ारों की संख्या में मौत का शिकार हो जाते थे। यह कारुणिक दशा उन लोगों की थी जो समस्त देश के लिये अनाज उत्पन्न करते थे एवं जो कुलीन वर्ग तथा शाही दरबार के भोगविलास और व्यय के लिये धन देते थे। फ्रांस की राज्यक्रांति के समय एक अंगरेज़ी यात्री आर्थर यंग वहां गया था। उसने वहां के कृषकों की, आंखों देखी दशा का वर्णन किया है। इसमें सन्देह नहीं कि उसने किसी किसी स्थान पर उनकी ख़राब दशा का बहुत बढ़ाकर वर्णन किया है किन्तु उस से उनकी बुरी दशा का परिचय भली भांति मिलता है।

अभी तक हमने यूरोप के समाज के केवल निम्न श्रेणी के लोगों की दशा पर प्रकाश डाला है तथा यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि फ्रांस के कृषकों की दशा भी लगभग वही थी जो अन्य देशों के कृषकों की थी।

प्रथम दो श्रेणियों के लोग

अब हम उसकी दूसरी दो श्रेणियों अर्थात् अमीर उमरा तथा पादरियों की ओर दत्तचित्त होते हैं। फ्रांस में बहुधा इन तीनों की ओर 'श्रेणियों (Estates)' के नाम से संकेत किया जाता था। प्रथम श्रेणी में पादरी, दूसरी श्रेणी में अमीर उमरा अथवा कुलीन वर्ग के लोग एवं तीसरी श्रेणी में कृषक और मध्यवर्ग के व्यक्ति सम्मिलित थे। सम्राट प्रथम दो श्रेणियों को अपना दायां और बायां हाथ समझता था। अतएव वह उनको प्रत्येक प्रकार की सुविधा प्रदान करने को तत्पर रहता था। किन्तु तीसरी श्रेणी के प्रति उसका ध्यान बहुत कम था। प्रथम दो श्रेणियों की जनसंख्या अत्यन्त कम थी। सम्भवत: फ्रांस में उनकी संयुक्त संख्या तीसरी श्रेणी के लोगों से १ प्रतिशत से कुछ ही अधिक हो।

कुलीन श्रेणी तथा पादरी वर्ग के लोग संख्या में कम अवश्य थे, किन्तु उनका जीवन अधिक आनन्द से व्यतीत होता था। इस प्रकार एक ओर की कमी दूसरी ओर पूरी हो जाती थी। समाज में उनका सम्मान होता था और सब लोग उनसे आदर के साथ वार्तालाप करते थे। गिर्जाघरों तथा नाटक-भवन में कुलीन

वर्ग के बालकों के लिये सबसे उत्तम स्थान निश्चित था। वही सेना तथा गिर्जाघरों में उच्चतम पद पाने के अधिकारी समझे जाते थे। इसके अतिरिक्त वे बहुधा राज दरबार में भी स्थान प्राप्त कर लेते थे। मरते समय प्रत्येक अमीर अपने सबसे ज्येष्ठ पुत्र के लिये एक गद्दी अथवा महल तथा जागीर छोड़ जाता था जिस से वह आमोद प्रमोद का जीवन व्यतीत करता था। इसी प्रकार पादरियों के अधिकार में भी सुरक्षित जागीरें और यथेष्ठ आय के साधन रहते थे। ऐसा अनुमान है कि कुलीन वर्ग एवं पादरी दोनों मिलकर फ्रांस के लगभग २/५ भूभाग पर अधिकार किये हुये थे। इसी प्रकार से समस्त यूरोप के १/३ भाग, समस्त भूमिकर के १/६ भाग एवं सम्पूर्ण पूंजी के १/३ भाग पर गिर्जाघरों का अधिकार था। जब हम उक्त विभाजन पर दृष्टिपात करते हैं तो हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं, कि कुलीन वर्ग तथा पादरियों के अधिकार में यथेष्ठ सम्पत्ति थी। इसके अतिरिक्त वे सरकारी महसूलों से भी बड़ी सीमा तक मुक्त कर दिये गये थे। यह एक ऐसी विशेषता थी जो सर्वसाधारण की दृष्टि में खटकती थी, और जिसके कारण कभी न कभी अशान्ति का फैलना अवश्यम्भावी था।

फ्रांस के अमीर उमरा

फ्रांस में दो प्रकार के अमीर उमरा थे। प्रथम, वे लोग जो साधारणतया वर्सैल्ज़ में निवास करते थे एवं राजदरबार के मुख्य अंग समझे जाते थे। इनको सम्राट की ओर से कभी कभी इनाम व पारितोषिक आदि प्राप्त होते थे। इनका मुख्य कार्य उसको अपनी विनय, प्रार्थना व खुशामद से प्रसन्न रखना तथा आमोद प्रमोद का जीवन व्यतीत करना था। इनके अधिकार में जागीरें भी थीं, किन्तु वे सब गुमाश्तों अथवा कार्यकर्ताओं के निरीक्षण में छोड़ दी गयी थीं, जो किसानों से बड़ी से बड़ी धनराशि को प्राप्त करना ही अपना प्रधान कर्तव्य समझते थे। दूसरे प्रकार के अमीर उमरा वे लोग थे जो वर्सैल्ज़ में न रहकर, ग्रामों में निवास करते थे तथा अपनी जागीरों का निरीक्षण स्वयं करते थे। उनमें से कुछ अत्यन्त समृद्धि-शाली थे एवं बहुधा उनके पुत्र तथा अन्य सम्बन्धी सेना व गिर्जाघरों में उच्च पद प्राप्त कर लिया करते थे। कुछ अमीर ऐसे भी थे जो अधिक सम्पन्न न थे। इसमें सन्देह नहीं कि उनको भी सेना और गिर्जाघरों में पद प्राप्त होते थे किन्तु समाज व शासन पर उनका कोई प्रभाव न था। उनके हृदयों में कृषक वर्ग के लिये सहानु-भूति थी। अतएव उन्हें उनपर अत्याचार करना अच्छा न लगता था। फ्रांस में एक अमीर ऐसा था जिसके सत्रह पुत्र व पुत्रियाँ थीं किन्तु जिसकी वार्षिक आय केवल एक हज़ार डालर अथवा लगभग २६० पौंड थी। जब क्रांति प्रारम्भ हुई तो इस प्रकार के धनहीन अमीरों ने सर्वसाधारण का साथ दिया।

कुलीन वर्ग की भांति फ्रांस में दो प्रकार के पादरी भी थे,—उच्च कोटि के पादरी एवं निम्न कोटि के पादरी। प्रथम के अधिकार में जागीरों का लगभग बीसवाँ भाग था। उनकी नियुक्ति सम्राट की ओर से होती थी, किन्तु

फ्रांस के पादरी

वे अधिकतर कुलीन वर्ग के कुटुम्बों से नियुक्त किये जाते थे। उनके विषय में एक आनन्दप्रद बात यह है कि वे केवल आमोद प्रमोद का जीवन व्यतीत करने से सम्बन्ध रखते थे एवं गिर्जाघरों का प्रबन्ध निम्न कोटि के पादरियों के लिये छोड़ देते थे। इस प्रकार का एक ज्वलन्त उदाहरण कार्डिनल दी रोश्रों (Cardinal de Rohan) का है जिसकी वार्षिक आय २५ लाख लीव्र थी एवं जो अपनी प्रतिष्ठा एवं आमोद प्रमोद के जीवन के कारण वर्सेल्ज़ में रहने वाले अमीर उमरा की आखों में भी चकाचौंध पैदा कर दिया करता था। इसके विरुद्ध फ्रांस में ऐसे पादरी भी थे जिनकी वार्षिक आय केवल १५० डालर थी। ये निम्न कोटि के पादरी थे। उन्हें गिर्जाघरों के नित्य प्रति के कर्तव्य पालन करने पड़ते थे। उनकी नियुक्ति तृतीय श्रेणी (Third Estate) से की जाती थी। ये दीन थे और कृषकों के साथ रहकर जीवन व्यतीत करते थे। उच्च कोटि के पादरी उन्हें घृणा की दृष्टि से देखते थे। एक बिशप ने अपने अधीन पादरियों के सम्बन्ध में अपने विचारों का इस प्रकार प्रकाशन किया है,—'वे कुरूप, भद्दे एवं निर्बुद्धि हैं। इस प्रकार के लोगों की संगति में, जिनका वास्तविक कार्य स्वर्ग एवं जीवन की समस्याओं पर विचार करना था, केवल वही मनुष्य रह सकता है जिसे लहसुन की गन्ध पसन्द हो।' ऐसी दशा में आवश्यक था कि निम्न कोटि के पादरी सर्वसाधारण का साथ दें। वास्तव में अनुभव भी इसी प्रकार का हुआ।

पादरी एवं कुलीन वर्ग के लोग समाज में एक ओर थे एवं कृषक वर्ग दूसरी ओर था। इन दोनों के बीच, न केवल फ्रांस वरन् समस्त यूरोप में मध्यवर्ग के व्यक्ति (Bourgeoisie) थे, जो न प्रथम की भांति भोग विलास के

मध्यमवर्ग के मनुष्य

जीवन में लिप्त थे और न द्वितीय की भाँति अज्ञानता तथा उदासीनता का जीवन व्यतीत करते थे। उनके हृदयों में अधिक से अधिक उन्नति करने तथा उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त करने का उत्साह था। इसके अतिरिक्त ये लोग अधिकतर धन सम्पन्न भी थे एवं अपने धन का अच्छा उपयोग करना चाहते थे। व्यापार तथा कलाकौशल की उन्नति एवं क़स्बों के उत्कर्ष के कारण उनका महत्व अधिक बढ़ गया था। इस श्रेणी के लोगों में सौदागरों, साहूकारों एवं दूकानदारों के अतिरिक्त अन्य पेशों के व्यक्ति भी सम्मिलित थे, जैसे वकील, चिकित्सक, प्रोफेसर एवं न्यायाधीश इत्यादि। व्यापार व उद्योग के अतिरिक्त उनका राजनैतिक जगत में भी काफ़ी प्रभाव था। इंग्लैंड में उनके प्रतिनिधि हाउस आफ़

कामन्स में बैठते थे एवं महाद्वीप पर वे शासन के महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त थे। मध्यवर्ग के लोगों को विद्या व कला सीखने का बड़ा शौक़ था। परिणाम स्वरूप उनमें शिक्षा की कमी न थी एवं वे उस समय के विज्ञान व दर्शन से भी जानकारी रखते थे। वे शासन व समाज में सुधार किये जाने के इच्छुक थे। उनकी यह भी इच्छा थी कि प्रथम व द्वितीय श्रेणी के लोगों की भांति वे भी शासन की ओर से सुरक्षित अधिकार तथा सम्मान प्राप्त करें। यदि यह सम्भव न हो सका तो वे कृषकों की सहायता से उनके सुरक्षित अधिकारों व हक़ों को, जो उन्हें दीर्घ काल से प्राप्त थे, समाप्त कर देने के पक्ष में थे। यह एक ऐसा विचार था जो कभी भी क्रांति उत्पन्न होने का कारण बन सकता था। इंग्लैंड में मध्यवर्ग के लोगों ने सत्रहवीं शताब्दी की प्यूरिटन तथा गौरवपूर्ण क्रांतियों में भाग लिया था। अमेरिका में मध्य कोटि के सिद्धान्तों और उनकी आकांक्षाओं के अनुसार ही स्वाधीनता का युद्ध किया गया था। इसके पश्चात् फ्रांस की राज्यक्रांति के समय इन्हीं लोगों ने आम जनता का नेतृत्व किया तथा उन्हें सफलता के ध्येय तक पहुँचाया।

परिणाम

उपरोक्त वर्णन के पश्चात् हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि सन् १७८९ ई० में फ्रांस में क्रांति प्रारम्भ होने के काफ़ी कारण उपस्थित थे। कुलीन वर्ग जो सुरक्षित अधिकारों तथा सुविधाओं से सन्निवेष्ठित हो परन्तु परिश्रम व मेहनत न करके विलास व आनन्द का जीवन व्यतीत करें; कृषक वर्ग जो प्रातःकाल से संध्या तक घोर परिश्रम करके एड़ी से चोटी तक का पसीना एक करने पर भी जीवन की आवश्यक सुविधाओं से वंचित रहे; पादरी वर्ग जो अपने अधीन 'गल्ले' की रक्षा न करके विलास व आनन्द के जीवन में निमग्न हो; शिक्षित व धन सम्पन्न मध्यम वर्ग के लोग जो प्रथम व द्वितीय श्रेणियों पर आक्रमण कर रहे हों एवं जो तीसरी श्रेणी के लोगों का नेतृत्व करने के लिये प्रत्येक रूप से तैयार हों,—यह समाज का एक ऐसा रूप है जो अधिक समय तक स्थापित नहीं रह सकता था। दियासलाई के एक संकेत से इस प्रकार का फूस का ढेर कभी न कभी एक भयंकर अग्नि विस्फोट का रूप धारण कर सकता था। किन्तु इस सम्बन्ध में हमें इस बात की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये कि यूरोप के अन्य देशों की सामाजिक दशा भी लगभग वही थी जो फ्रांस की थी। कुछ विषयों में वह उसकी तुलना में अच्छी भी थी। इसके प्रतिकूल फ्रांस में कुछ बातें ऐसी थीं जो अन्य देशों में या तो उपस्थित न थीं और यदि उपस्थित भी थीं तो उनका इतना महत्व न था। इन्हें हम फ्रांसीसी राज्यक्रांति के विशेष कारणों के रूप में मान सकते हैं। इन पर हम अगले अध्याय में प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे।

छठा अध्याय

फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था

(Ancien Regime)

क्रांति सब से पहले फ्रांस ही में क्यों आरम्भ हुई ?

गत अध्याय में हमने फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था (Ancien Regime) के एकांगी चित्र पर दृष्टि डाली थी अर्थात् उसकी सामाजिक दशा पर संक्षेप से दृष्टि डाल कर यह दिखलाने का प्रयत्न किया था कि इस प्रकार की सामाजिक अवस्था यूरोप के अन्य देशों में भी पायी जाती थी। अब हम उसके दूसरे अंग का चित्र खींचने का प्रयत्न करते हैं अर्थात् हम उन प्रमुख कारणों पर दृष्टि डालेंगे जिनसे फ्रांस में क्रांति का उत्पन्न होना न केवल आवश्यक वरन् अनिवार्य हो गया था। ये कारण थोड़े बहुत यूरोप के अन्य देशों में भी उपस्थित थे, किन्तु प्रथम तो वहाँ उनका उतना प्रभाव न था जितना कि फ्रांस में था। दूसरे, जैसा कि हम बतला चुके हैं, फ्रांस के अतिरिक्त कहीं पर भी वे संयुक्त रूप में मौजूद न थे। अतएव उनके कारण वहाँ क्रांति इतने शीघ्र उत्पन्न न हुई।

अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस का महत्व

अठारहवीं शताब्दी में यूरोप के देशों में फ्रांस का महत्व अति अधिक था। संभवत: ग्रेट ब्रिटेन के पश्चात् महत्व में उसी की गणना थी। इस समय वहाँ व्यापार, उद्यम तथा हस्तकलायें उन्नति पर थीं। विद्या तथा साहित्य में उसका स्थान अत्यन्त ऊँचा था। फ्रांस के लेखकों तथा कलाकारों की सभी स्थानों में बड़ी प्रशंसा होती थी एवं उनके कार्य का साधारण रूप से अनुकरण किया जाता था। फ्रांस में अगणित वैज्ञानिक तथा समाज सुधारक भी थे जिनका प्रभाव स्वदेश तथा विदेश दोनों स्थानों में था। वहाँ के कृषकों की दशा

भी अधिकतर देशों से अच्छी थी। फ्रांस में न केवल मध्यम श्रेणी के व्यक्ति वरन् कुछ कुलीन वर्ग के मनुष्यों तथा पादरी भी सुधारों के लिये उत्सुक थे। इसके अतिरिक्त कुछ कृषक और हस्तकलाकार भी ऐसे थे जो समाज व शासन में सुधारों की आवश्यकता अनुभव करते थे।

ऐसी दशा में जब सभी श्रेणी के व्यक्ति सुधारों की आवश्यता अनुभव कर रहे थे, फ्रांस का शासन तथा उसका यंत्र बुरी तरह कीचड़ में फंसे हुये थे।

राजनैतिक कुव्यवस्था

इस समय फ्रांस राजनैतिक कुव्यवस्था में अन्य देशों से बाज़ी लिये हुये था। शासन में न किसी प्रकार की व्यवस्था थी और न उस पर किसी प्रकार का क़ानून ही लागू होता था। धीरे धीरे एक श्रेणी के पदाधिकारी तथा संस्थायें दूसरी श्रेणी की संस्थाओं तथा पदाधिकारियों पर नियुक्त कर दिये गये थे। पदाधिकारियों के अधिकारों तथा क्षेत्र में भी कुव्यस्था थी। मध्ययुग से फ्रांस का देश कई प्रकार से विभाजित कर दिया गया था, जिसके कारण राजनैतिक कुव्यवस्था में प्रकट रूप से वृद्धि हो गई थी। उदाहरण के रूप में वह विभिन्न नामों के पदाधिकारियों के अधीन ज़िलों में विभाजित था। वह प्रांतपतियों के अधीन प्रांतों में विभक्त था। रीशलीये (Richelieu) के समय से वह कई अन्य राजनैतिक भागों में भी विभक्त था। इसके अतिरिक्त फ्रांस अदालतों की दृष्टिकोण से भी कई भागों में विभक्त था। इनमें से प्रत्येक भाग में एक पृथक अदालत थी। वहां धार्मिक तथा शिक्षा सम्बन्धी विभाग भी थे। प्रत्येक धार्मिक विभाग में एक आर्चबिशप तथा बिशप निवास करते थे एवं प्रत्येक शिक्षा सम्बन्धी ज़िले में एक पृथक विश्वविद्यालय था। इस प्रकार फ्रांस में एक दूसरे को काटते हुये कई प्रकार के ज़िले प्रांत, तथा कई अन्य प्रकार के भाग थे। इसी प्रकार नगरों की सभाओं में भी कुव्यवस्था उपस्थित थी। अधिकतर नगर ऐसे थे जिनमें सभायें थीं, किन्तु उनके निर्वाचन का ढंग तथा उनके अधिकार एक दूसरे से भिन्न थे। इस विचित्र विभाजन से, जिसका वर्णन यहां किया गया है, शासन के नित्य प्रति के कार्यों में बहुधा देर होती थी तथा उलझनें पैदा होती रहती थीं। कभी कभी ऐसा भी होता था कि पदाधिकारी क़ानून के बंधन की चिन्ता न करके स्वेच्छा पूर्वक कार्य करते थे तथा प्रजा के लिये संकट का कारण प्रमाणित होते थे।

फ्रांस में सब जगह एक ही प्रकार के मापयंत्र तथा सिक्के भी प्रचलित न थे। चुंगी सम्बन्धी तथा अन्य व्यापारिक करों में भी भिन्नता थी। ऐसा भी होता था कि एक ही व्यापारिक वस्तु पर विभिन्न प्रांतों से जाते समय विभिन्न स्थानों पर कर

देना पड़ता था। सब से प्रधान दोष यह था कि फ्रांस में लगभग चार सौ प्रकार के न्याय-विधान प्रचलित थे। अस्तु बहुधा ऐसा होता कि एक कार्य जो एक कस्बे या नगर के विधान से उचित माना जाता था बिल्कुल समीप के कस्बे अथवा ज़िले में अनुचित निश्चित कर दिया जाता था। इसके सम्बन्ध में प्रसिद्ध दार्शनिक वाल्तेयर ने अपने विचारों का प्रकाशन इस प्रकार किया है कि किसी व्यक्ति के फ्रांस में यात्रा करते समय सरकारी कानून उसी प्रकार बदलते रहते हैं जिस प्रकार उसकी गाड़ी के घोड़े बदलते हैं। एक ही अपराध के लिये विभिन्न प्रान्तों में भिन्न दण्ड निश्चित किये जाते थे। यदि किसी स्थान पर सरकारी अदालत थी तो दूसरे स्थान पर जागीरदार की अदालत थी। कोई जागीरदार एक ही अभियोग में न्यायाध्यक्ष का काम भी कर सकता था तथा वादी अथवा प्रतिवादी भी होसकता था। कुछ अपराध ऐसे भी थे जिनसे कुलीन वर्ग के व्यक्ति मुक्त थे। यदि उन्हें कारावास का दण्ड भी दिया जाता था तो उन्हें प्रत्येक प्रकार की सुविधा प्राप्त कराई जाती थी। कुछ अवस्थाओं में तो अमीर उमरा कारावास में अपने चाकरों को भी रख सकते थे। ऐसी अवस्था में यदि जनसाधारण शासन के विरुद्ध थे तो हमें आश्चर्य न करना चाहिये।

फ्रांस की कुव्यवस्थाओं का वर्णन इसी स्थान पर समाप्त नहीं होजाता। कुछ कुव्यवस्थायें ऐसी भी थीं जो न केवल वहाँ के निवासियों के लिये वरन् वहाँ के शासन के लिये भी संकट का कारण प्रमाणित होती थीं। उदाहरण के रूप में

आर्थिक प्रबन्ध के दोष

आर्थिक प्रबन्ध की कुव्यवस्थायें, जिनके कारण बहुधा उलझनें उत्पन्न होती रहती थीं। इस काल में फ्रांस के सम्राट की व्यक्तिगत आय और राष्ट्र की आय में कोई अन्तर न था। अत: उसके मन्त्री स्वेच्छापूर्वक सरकारी कोष का धन उसके व्यक्तिगत कार्यों में व्यय करते थे। बजट की प्रथा उस समय तक संचालित न हुई थी। आय व्यय का हिसाब भी ठीक प्रकार से न रक्खा जाता था। वर्तमान काल की भाँति उस काल में भी सरकारी आय की अगणित मदें थीं, लेकिन सरकारी करों के वसूल करने में प्रकट अन्तर था। एक तो प्रथम दो श्रेणियों के लोग अर्थात् पादरी और अमीर उमरा जो सबसे अधिक समृद्ध और सम्पन्न थे, करों से बड़ी सीमा तक मुक्त थे और उनका भार अधिकतर कृषक वर्ग तथा मध्यम श्रेणी के लोगों को सहन करना पड़ता था। दूसरे, कर देने वालों से सीधे कर वसूल न करके शासन उनका ठेका दे दिया करती थी। बहुधा ऐसा भी होता था कि सरकारी ठेकेदार स्वयं कर वसूल न करके अपनी ओर से उनका ठेका दूसरे लोगों को दे दिया

करते थे। ऐसी दशा में यह आवश्यक था कि सर्वसाधारण से स्वेच्छापूर्वक कर वसूल किये जायें और ठेकेदार अपने लिये एक बड़ी धनराशि बचा लें।

उन समस्त कुप्रबन्धों तथा कुव्यवस्थाओं के अतिरिक्त, जिनका वर्णन किया गया है, फ्रांस में ग़ैर-क़ानूनी गिरफ्तारियों तथा बन्धनों का भी चलन था।

ग़ैर-क़ानूनी गिरफ्तारियां तथा प्रतिबन्ध

नई रोशनी के व्यक्ति इनसे यह अर्थ निकालते थे कि उनकी उन्नति तथा उनके कल्याण के मार्ग में जानबूझकर रुकावटें डाली जा रही हैं। कोई भी व्यक्ति जो सम्राट या किसी प्रतिष्ठित अमीर अथवा पादरी को अप्रसन्न कर देता था, सरकारी वारंट (Lettre de Cachet) के द्वारा बंदी कर लिया जाता था एवं जेल भेज दिया जाता था। इसके पश्चात् अक्सर मृत्युपर्यन्त उसका अभियोग अदालत के सम्मुख पेश न किया जाता था। इन बेनाम के वारंटों के द्वारा, जो सरकारी पदाधिकारियों की जेबों में पड़े रहते थे, वे अपने व्यक्तिगत शत्रुओं को भी बंदी कर लिया करते थे। कुछ काल के लिये वाल्तेयर तथा काउण्ट डी मीराबो भी इन वारंटों का शिकार बन चुके थे। इसके अतिरिक्त शासन की ओर से यदाकदा ग़ैरकानूनी प्रतिबन्ध भी लागू कर दिये जाते थे। विशेषत: नई रोशनी के लेखक तथा समाचारपत्रों के सम्पादक इनके लक्ष्य बनाये जाते थे। ग़ैरकानूनी गिरफ्तारियों और रुकावटों के कारण मध्यम श्रेणी के लोगों में बड़ी अशान्ति थी। अतएव वे उनको शीघ्र से शीघ्र हटाने की चिन्ता में थे।

फ्रांस की सेनायें भी शासन की ओर से संतुष्ट न थीं। अत: उन्होंने सन् १७८६ ई० में निम्न कोटि के पादरियों की भांति सर्वसाधारण का साथ दिया। यदि ऐसा न होता तो सम्भव था कि क्रांति तुरन्त ही समाप्त कर दी जाती। सैनिक

सेना

अधिकारियों के मस्तिष्क पर उस समय के दर्शन तथा समाज सुधार के सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ चुका था। सैनिकों के लिये कई प्रकार की रुकावटें थीं, किन्तु उनको कम वेतन और खराब खाना दिया जाता था। उनकी एक विशेष शिकायत यह थी कि वे उन्नति करके पदाधिकारी न बन सकते थे। कारण कि पदाधिकारियों की नियुक्ति स्वेच्छापूर्वक बाहर से की जाती थी। इन कारणों से फ्रांस के सैनिक असंतुष्ट थे तथा अपने विलासप्रिय पदाधिकारियों का सम्मान न करते थे। यद्यपि यह सत्य है कि इस प्रकार के दोष अन्य देशों की सेनाओं में भी थे, किन्तु वहां के शासक अपने प्रभाव से उनको काबू में किये रहते थे। फ्रांस का शासन शक्तिहीन और अयोग्य था। अतएव वह सेनाओं को अपने प्रभाव में रखने में कृतकार्य न हुआ।

फ्रांस के दर्शन के कारण समाज और शासन के वे समस्त दोष, जिनका उल्लेख इस अध्याय में तथा गत अध्याय में किया गया है, विशेष रूप से प्रकट हो रहे थे। दार्शनिकों तथा अन्य लेखकों पर हम तीसरे अध्याय में विस्तार से प्रकाश डाल चुके हैं। अतएव उन पर अधिक प्रकाश डालने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

दर्शन का प्रभाव

उनके प्रभाव के विषय में हमें अवश्य कुछ बतलाना है। उनके प्रभाव से सन् १७८९ ई० में जब फ्रांस की राज्यक्रांति का आरम्भ हुआ वहां समाज के सभी वर्गों में क्रांतिकारी विचार फैल चुके थे। यहाँ तक कि सम्राट और उसके सम्बन्धी तक समाज के कृत्रिम आडम्बर से दूर भागने को उत्सुक थे। दर्शन का सबसे अधिक प्रभाव मध्यम श्रेणी के लोगों पर पड़ा था। कृषक भी उस से कुछ न कुछ प्रभावित हुये थे। अतएव वे भी सुधारों की आवश्यकता अनुभव कर रहे थे। इस काल के दार्शनिकों तथा लेखकों की प्रथा थी कि वे व्यंगात्मक शब्दों में तत्कालीन समाज का चित्र खींचते थे, जिस में कृषक तो परिश्रम के भार से दबे जाते थे एवं कुलीन वर्ग के लोग बिना किसी प्रकार के उत्तरदायित्व के स्वत्वों तथा विशेष अधिकारों से लाभ उठा रहे थे और पादरी, जिनसे पवित्रता दूर भागती थी, माया का आनन्द लूट रहे थे। किन्तु साधारण रूप से दार्शनिक राजतंत्र के विरुद्ध न थे। वे भविष्य के उस युग का काल्पनिक चित्र अपने मस्तिष्क में न ला सकते थे जब शासनसूत्र सर्वसाधारण के निर्वाचित प्रतिनिधियों के हाथ में आगया था। उनका विचार था कि यदि सुधार किये जा सकते हैं तो सम्राट की संरक्षता में किये जायेंगे, न कि सर्वसाधारण के संरक्षण में।

सौभाग्य से इस समय यूरोप के कई देशों में ऐसे सम्राट सिंहासनारूढ़ थे जो दार्शनिकों के इस मत से पूर्ण रूप से सहमत थे। उदाहरण के रूप में प्रशा का सम्राट फ्रेड्रिक महान्, सम्राट जोज़ेफ द्वितीय, रूस की सम्राज्ञी कैथिरिन द्वितीय, स्पेन का सम्राट चार्ल्ज तृतीय, सार्डीनिया का शासक चार्ल्ज ऐमैनुअल तृतीय। ये सब प्रजा के हित व कल्याण के लिये प्रयत्नशील थे। ये सब तथा कुछ अन्य शासक नई रोशनी के निरंकुश शैली के शासक (Enlightened Despots) थे जो सर्वसाधारण की स्थिति में सुधार तो अवश्य करना चाहते थे, किन्तु शासनकार्य में उन से मत लेना उन्हें स्वीकार न था। उनका सिद्धान्त था कि शासन सर्वसाधारण के लिये बनाया गया है, किन्तु वे उसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते। यूरोप के क्रांति-युग तथा उन्नीसवीं शताब्दी के इतिहास ने यह प्रमाणित कर दिया कि उपरोक्त शासकों की अपेक्षा सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों को सुधारों के विषय में अधिक सफलता प्राप्त हुई।

अब हम फ्रांस की राज्यक्रांति के दो ऐसे कारणों का वर्णन करेंगे, जो उसके लिये सबसे अधिक उत्तरदायी हैं। (१) शासन की अयोग्यता (२) शासन की निर्धनता। फ्रांस में इस समय बूरबन वंश का एक बीस वर्ष का युवक शासन कर रहा था, जो सोलहवें लूई (१७७४–१७९३) के नाम से प्रसिद्ध है। उसने शासन का कार्य मंत्रियों के हाथ में छोड़ दिया था, और वह स्वयं पेरिस से कुछ दूर वर्सेल्ज़ में आनन्द करता था। उसकी सेवा में वहां पन्द्रह हज़ार व्यक्ति रहते थे। उसका राजप्रासाद इतना शानदार था कि उसके निर्माण करने में दस करोड़ डालर व्यय हुये थे। केवल सम्राज्ञी की सेवा में पांच सौ सेवक थे। दरबार का वार्षिक व्यय बढ़ते बढ़ते बीस करोड़ डालर तक पहुंच गया था। इस समस्त विलास और आनन्द के अतिरिक्त शासन अयोग्य तथा उत्तरदायित्व से हीन भी था। सोलहवें लूई और उसकी पत्नी मेरी ऐन्तोयनेत को प्रजा की वास्तविक अवस्था तथा उसकी आवश्यकताओं के विषय में कुछ भी जानकारी न थी। एक समय जब लोगों ने द्वितीय से रोटी के लिये प्रार्थना की तो उसने उत्तर दिया कि यदि उनके पास रोटी (Bread) नहीं है तो वे डबल रोटी (Cake) क्यों नहीं खाते। सम्भव है कि फ्रांस की सम्राज्ञी ने यह उत्तर न दिया हो, किन्तु राजवंश से जो अज्ञान का शिकार था हम इसी प्रकार के उत्तर की आशा कर सकते हैं। इस प्रकार की बातों से सम्राट और उसकी प्रजा के बीच का अन्तर बहुत बढ़ गया था एवं उसको कम करने का कोई रास्ता दिखाई न देता था।

शासन की अयोग्यता

बूरबन वंश के सम्राटों ने फ्रांस के शासन को पूर्ण रूप से केन्द्रीय बना दिया था। इस सम्बन्ध में चौदहवें लूई का यह कथन कि "मैं स्वयं ही राज्य हूं" हमें भुलाना न चाहिये। स्थानीय स्वाधीनता पूर्णत: समाप्त कर दी गई थी एवं सम्राट की परिषद् वर्सेल्ज़ से छोटे और बड़े सभी प्रकार के प्रबन्ध करती थी। यहां तक कि उसकी आज्ञा के बिना न किसी मार्ग की मरम्मत ही सम्भव थी और न कोई कुंआ ही खुदवाया जा सकता था। इस कारण सम्राट की परिषद् के पास बहुत काम था एवं उसका निर्णय बहुधा उस समय ज्ञात होता था जब कि वह व्यर्थ हो जाता था। शासन में कई प्रकार की कुव्यवस्थायें भी थीं, जिनका उल्लेख इसके पूर्व किया जा चुका है। अस्तु नित्य प्रति के कार्यों में विशेष विलम्ब होता था। फ्रांस का शासन निरंकुश अवश्य था, किन्तु वह अपनी प्रजा पर अत्याचार न करना चाहता था। बहुत ज्यादा काम के कारण वह अयोग्य प्रमाणित हो रहा था। उसके विरुद्ध पहले शिक्षित वर्ग ने आवाज़ उठाई। तत्पश्चात् समाज से असंतुष्ट लोगों में उसकी प्रतिध्वनि सुनाई पड़ी। प्रारम्भ में सम्राट इसका उत्तरदायी न

ठहराया गया। किन्तु बाद को जनता के हृदय में उसका सम्मान कम हो गया एवं सब लोग उस पर प्रकट रूप में व्यंगबाण छोड़ने लगे।

शासन का दिवालिया होना

दूसरा महत्वपूर्ण कारण, जिसके बिना सम्भव था कि सन् १७८९ ई० की राज्यक्रांति उत्पन्न ही न होती, राजकीय कोष में धन का घाटा था। फ्रांस के शासन ने अमरीका के स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया था। यह उसकी सबसे बड़ी भूल थी। यह सत्य है कि उसकी सहायता से अंगरेज़ी उपनिवेश स्वतन्त्र हो गये थे तथा फ्रांस के प्राचीन शत्रु ग्रेट ब्रिटेन को नीचा देखना पड़ा था। किन्तु जब मारकुइज़ दी लाफ़ेयत अमेरिका से लौटा तो उस समय फ्रांस का शासन दिवालिया था। धन के बिना सुधार की समस्या कैसे सुलझाई जावे? इस प्रश्न का एक ही उत्तर हो सकता था अर्थात् यह कि इस दशा में यह समस्या हल नहीं हो सकती थी। कुछ अर्थ मंत्रियों ने सोलहवें लूई को यह मंत्रणा दी कि करों का भार तीनों श्रेणियों के मनुष्यों में उनकी स्थिति के अनुसार विभक्त कर दिया जावे, किन्तु अमीर उमरा तथा पादरी इसके लिये तैयार न हुये। सम्राट इसके महत्व को न समझ सका। यदि किसी व्यक्ति के हाथ में विशेष अधिकार न हों तो उसके पादरी अथवा अमीर होने से क्या लाभ? किसी व्यक्ति से यदि यह कहा जाय कि समाज के प्राचीन स्तम्भों को गिरा दो तो उसके सम्राट होने से क्या लाभ? सोलहवें लूई के मस्तिष्क में इसी प्रकार के प्रश्न उत्पन्न होते रहे। अतः वह शासन की आर्थिक दशा में सुधार करने में कृतकार्य न हुआ। अन्त में उसने बाध्य होकर फ्रांस की व्यवस्थापिका सभा (स्टेट्स जनरल) को निमन्त्रण दिया। और स्टेट्स जनरल को निमन्त्रण देने का अर्थ था क्रांति को आमंत्रित करना।

अमेरिका के स्वाधीनता संग्राम का प्रभाव

इस अध्याय को समाप्त करने के पूर्व यह आवश्यक है कि हम एक अन्य महत्वपूर्ण विषय पर प्रकाश डालें। हमको इस बात पर विचार करना चाहिये कि सन् १७८९ ई० की फ्रांसीसी राज्यक्रांति का अमेरिका के स्वाधीनता संग्राम से क्या सम्बन्ध था। लाफ़ेयत के जीवनचरित्र पर प्रकाश डालते समय हमने बतलाया था कि वह उपरोक्त युद्ध में भाग लेने के लिये अमेरिका गया था और वहां उसने अधिक सम्मान व प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। जब वह और उसके साथी विजय प्राप्त करके अपने घर लौटे तो फ्रांसवासियों ने इसे अपनी विजय के रूप में देखा। संयुक्त राष्ट्र ने जब स्वाधीन शासन स्थापित किया तो उन्होंने यही परिणाम निकाला कि यह फ्रांस के दर्शन का अपूर्व प्रभाव है। वे अमेरिका को स्वर्ग के समान

मानने लगे जहां समाज और शासन के वे सब दोष न थे जो उनके देश में विद्यमान थे। अमेरिका के युद्ध का फ्रांस के राज्यकोष पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा था। इस कारण से शासन को स्टेट्स जनरल को निमन्त्रित करना पड़ा था। इसका उल्लेख हम इसके पूर्व भी कर चुके हैं। लाफ़ेयत अपने साथ अमेरिकन स्वाधीनता की घोषणा की नक़ल लाया था। उसने इसे अपने निवास स्थान में एक प्रमुख स्थान पर रख दिया था। उसके बराबर का स्थान खाली छोड़ दिया गया था। लाफ़ेयत का कथन था कि यह स्थान फ्रांस के 'मानवी अधिकारों' (Rights of Man) के लिये सुरक्षित है। इन बातों का फ्रांस के निवासियों पर बहुत ही सुन्दर प्रभाव पड़ा था। उनकी रगों में नवरक्त प्रवाहित होने लगा था; उनके हृदय में नवीन उमंगों का स्रोत उमड़ पड़ा था। अमेरिका के गण-राज्य को देखकर वे भी शासन और समाज के दोषों को दूर करने के लिये उत्सुक हो उठे थे।

सातवां अध्याय

दिवालिया शासन का निरंकुश व्यवहार

फ्रांस के इतिहास में बूरबन वंश का शासन विशेष महत्व रखता है । इस काल में व्यापार तथा कलाकौशल की उन्नति हुई, विद्या का विकास हुआ, दूरस्थ देशों में उपनिवेश बसाये गये, फ्रांस की सेनाओं ने विदेशों में महत्वपूर्ण विजय प्राप्त कीं। और पेरिस निवासियों ने अपनी शान शौकत और फैशन के कारण यूरोप निवासियों की आंखों में चकाचौंध पैदा कर दी । उपरोक्त काल में फ्रांस की उन्नति अपनी चरम सीमा पर थी। इस शान शौकत व चकाचौंध उत्पन्न करने वाले प्रकाश के पीछे सर्वसाधारण की दयनीय दशा, शासन का निरंकुश व्यवहार, धार्मिक बन्धन और इसी प्रकार की कुछ अन्य बातें छिपी हुई थीं । फ्रांस की यह शान व महानता चोदहवें लुई (१६४३–१७१५) की मृत्यु के पश्चात् समाप्त हो गई, किन्तु अन्य बातें ज्यों की त्यों बनी रहीं। अब यूरोप को उन विनाशकारी युद्धों से मुक्ति मिली जो उसके शासनकाल की प्रमुख विशेषता थी । फ्रांस का पतन प्रारम्भ हुआ। वहां दीर्घकालीन सामाजिक व राजनैतिक व्यवस्था (Ancien Regime) के वे समस्त दोष, जो 'महान सम्राट' की प्रतिष्ठा तथा अपूर्व विदेशी विजयों के कारण दबे हुये थे, प्रकट होने लगे । अन्त में उनके तथा शासन के दिवालिया हो जाने के कारण देश में वह महान् कायापलट परिवर्तन हुआ जो इतिहास में सन् १७८९ ई० की क्रांति के नाम से विख्यात है ।

चौदहवें लूई ने मृत्युशय्या पर अपने पंचवर्षीय परपौत्र तथा उत्तराधिकारी को एक भली सलाह दी थी। "ऐ मेरे बच्चे, तुम बहुत शीघ्र एक महान् साम्राज्य के सम्राट बनोगे। ईश्वर के प्रति जो तुम्हारे कर्तव्य हैं उनको विस्मरण न करना। याद रखो कि जो कुछ भी तुम हो वह सब उसी के कारण हो। अपने पड़ोसियों से मित्रता का व्यवहार स्थापित रखना। मुझे युद्धों से प्रेम था और मैंने अनुपम धनराशि उन पर

एक भली सलाह

बूरबन वंश

चौदहवां लूई

(१६४३–१७१५)

बड़ा लड़का लूई
(मृत्यु, १७११ ई०)
|
बर्गण्डी का ड्यूक लूई
(मृत्यु, १७१२ ई०)
|
पन्द्रहवां लूई
(१७१५–१७७४)
|
बड़ा लड़का लूई
(मृत्यु १७६५ ई०)
|
सोलहवां लूई
(१७७४–१७९३)

ऐंजू का ड्यूक फिलिप
(जिसने फिलिप पंचम के नाम से स्पेन में बूरबन वंश की नींव डाली)

व्यय की थी। किन्तु तुम इस विषय में मेरा अनुकरण न करना। अपने सभी कामों के विषय में राय लेना। शीघ्र से शीघ्र लोगों के भार को हलका करना और इस प्रकार उस कार्य में सफलता प्राप्त करना जो दुर्भाग्य से मैं स्वयं नहीं कर सका था।" यह एक सुन्दर उपदेश था, किन्तु पन्द्रहवें लूई (१७१५–१७७४) पर उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा। प्रारम्भ में इसलिये कि वह एक बालक था; बाद को इस कारण कि वह एक विलास तथा आनन्द के जीवन में इस प्रकार निमग्न था कि उसे अच्छाई व बुराई की पहिचान ही न थी। सन् १७४३ ई०तक वह स्वार्थी तथा लापरवाह मंत्रियों के हाथ की कठपुतली रहा। अत: जोन लॉ (John Law) नाम के मन्त्री ने उपनिवेशों से व्यापार करने के ध्येय से एक बहुत बड़ी संस्था स्थापित की, जिसके हिस्से बहुत बड़ी संख्या में जनता में

बेचे गये। इस से सरकारी कोप की दशा में कोई सुधार न हुआ, जैसा कि उक्त मंत्री ने विचारा था। इसके प्रतिकूल फ्रांसीसी राष्ट्र को बहुत घाटा हुआ। इसके पश्चात् कार्डिनल फ्लरी (Cardinal Fleury) ने, जो सन् १७२६ ई० से सन् १७४३ ई० तक मंत्री रहा, पोलैंड और अस्ट्रिया के युद्धों में भाग लेकर राज्यकोष में विशेष कमज़ोरी पैदा कर दी।

सन् १७४३ ई० में ६० वर्ष के मंत्री कार्डिनल फ्लरी की मृत्यु हुई। अतः पन्द्रहवें लूई ने शासन की बागडोर सीधे सीधे अपने हाथ में ले ली, किन्तु पन्द्रहवां लूई प्रशा के सम्राट फ्रैड्रिक महान् से भिन्न था। उसमें नवीन जाग्रति के निरंकुश ढंग के शासकों की भांति शासन करने की न उत्कंठा ही थी और न योग्यता ही। शासन कार्य में उसका चित्त न लगता था। आनन्द और विलास ही को उसने अपने जीवन का ध्येय बनाया था।

पन्द्रहवां लूई

उसके मन बहलाने के प्रमुख साधन नर्तकी, द्यूत क्रीड़ा, शिकार एवं वेश्या थे। उसकी सब से प्रसिद्ध वेश्या मैडम दी पोम्पादूर (Madame de Pompadour) तथा मैडम् डू बैरी (Madame Du Barry) थीं। उनको वह बहुधा धन, उपाधियों तथा जागीरों से सम्पन्न करता रहता था। उनकी सेवा में सैकड़ों अनुचर रहते थे। वे वर्सेल्ज़ में अत्यन्त विलास और शान का जीवन व्यतीत करती थीं। उनका व्यवहार इस सीमा तक बुरा था कि उसके कारण फ्रांस निवासियों तथा बाहर वालों की दृष्टि में सम्राट का सम्मान कम हो गया था। वे बहुधा शासन के कार्यों में भी हस्तक्षेप करती थीं। उनके प्रभाव से मंत्री नियुक्त तथा पदच्युत किये जाते थे तथा युद्ध एवं संधि का निर्णय किया जाता था। केवल मैडम् दी पोम्पादूर के प्रसन्न करने के लिये ही पन्द्रहवें लूई ने सप्तवर्षीय युद्ध (Seven Years' War) में अपने प्राचीन शत्रु अस्ट्रिया का साथ दिया था।

पेरिस तथा प्रांतों में वर्सेल्ज़ के इस विषय तथा आमोद प्रमोद के जीवन के विरुद्ध धीरे धीरे आवाज़ें उठना प्रारम्भ हुईं। शिक्षित वर्ग के मनुष्यों के अतिरिक्त जनसाधारण ने भी बड़बड़ाना प्रारम्भ किया। इससे उस आने वाले तूफ़ान की ओर संकेत था जो फ्रांस में सन् १७८९ ई० में उठा। किन्तु पन्द्रहवें लूई और उसके साथियों को जनता की दयनीय दशा तथा लाचारी की चिन्ता न थी। जब कभी सम्राट को नाम मात्र के लिये भी चिन्ता होती थी तो वह यह कहकर हृदय को सान्त्वना दे लिया करता था, कि "मेरे मरने तक सब काम ठीक बनता रहेगा।" तब उसकी वेश्या मैडम् दी पोम्पादूर कहती, "हमारे पश्चात् अवश्य ही प्रलय होगी।"

पन्द्रहवें लूई की मृत्यु हो गई, इस समाचार को सुनकर फ्रांस के निवासी

अत्यन्त प्रसन्न हुये। उनके हृदयों में नवीन आशा का संचार हुआ। वे जानते थे कि उसका उत्तराधिकारी व पौत्र सोलहवां लूई उससे बहुत सी बातों में भिन्न है। नये सम्राट के सिंहासनारूढ़ होने से वैसे ही मनुष्यों में आशा बढ़ जाती है। सोलहवें लूई में कुछ प्रमुख विशेषतायें ऐसी थीं जिनकी सहायता से वह अपने दादा की अपेक्षा अधिक सफल प्रमाणित हो सकता था। वह अपने उत्तरदायित्व को अनुभव करता था। उसकी धारणायें सुन्दर थीं। उसके हृदय में प्रजा के लिये स्थान था। अत: वह उसको प्रसन्न व समृद्धिशाली दशा में देखना चाहता था। सोलहवें लूई का चरित्र भी सुन्दर था। वह प्रसन्नचित्त तथा दयावान था। किन्तु उसके सफल होने के लिये अन्य विशेषताओं की आवश्यकता थी। नैपोलियन ने एक समय कहा था कि जब लोग किसी सम्राट को दयावान बतलावें तो समझ लेना चाहिये कि उसका शासन असफल सिद्ध हुआ है। लूई अधिक समझदार न था। उसमें दूरदर्शिता का भी अभाव था। शासन के कार्यों की अपेक्षा वह आखेट, लक्ष्यभेदन तथा नाटक में अधिक दत्तचित्त था। सबसे बड़ा दोष यह था कि उसमें संकल्प की दृढ़ता नाम को भी न थी। उसे अपनी ओर से किसी दिशा में क़दम उठाना आता ही न था। जब उसकी पत्नी अथवा उसके मंत्री तथा दरबारी उस पर अधिक दबाव डालते तब कहीं वह किसी काम के लिये तत्पर होता था। क्रांति के प्रारम्भिक काल में मीराबो तथा अन्य राजनीतिज्ञों ने इस बात का प्रत्येक प्रकार से प्रयत्न किया कि सोलहवां लूई 'ईश्वर प्रदत्त राजपद' के सिद्धान्त को त्याग दे एवं अपने अधिकारों को सीमित करके क्रांति में भाग लेने वालों का नेतृत्व करे। किन्तु वह इस सुन्दर मत के महत्व को न समझ सका। इस कारण उसको विपत्तियों का सामना करना पड़ा।

सोलहवां लूई एवं मेरी ऐन्तोयनेत

सोलहवें लूई की सुन्दर एवं युवती स्त्री मेरी एन्तोयनेत उसके कंठ में चक्की के पाट के समान थी। वह अस्ट्रिया की सम्राज्ञी मेरिया थेरिसा की पुत्री थी। वह किसी विषय को समझने का प्रयत्न न करती थी। उसके हृदय में प्रजा के लिये नाम को भी स्थान न था। वह आमोद प्रमोद में मग्न रहती तथा अपने पति पर कभी कभी बहुत ही बुरा प्रभाव डालती थी। उसके माता पिता फ्रांसीसी होने के स्थान पर अस्ट्रियावासी थे। उक्त कारणों से वह प्रारम्भ ही से बदनाम थी। ऐसी दशा में जब शासन दिवालिया हो रहा था उसका व्यय न केवल बढ़ा हुआ वरन् असीम था। अतएव लोग आम तौर पर उस पर उंगली उठाते थे। इसमें सन्देह नहीं कि बहुत से दोष जो मेरी एन्तोयनेत पर लगाये गये हैं निराधार हैं। किन्तु उनके द्वारा लोगों ने अपने हृदय की कटुता प्रकट करने में कोई कसर बाक़ी नहीं रक्खी।

जब सोलहवें लूई ने राज्याभिषेक के पश्चात् वाल्तेयर एवं आदम स्मिथ के मित्र तूर्गो (Turgot) को अर्थमंत्री रखना स्वीकार किया तो जनता को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। हम तूर्गो का उल्लेख तीसरे अध्याय में कर चुके हैं। वह व्यापार के लिये पूर्ण रूप से निर्हस्तक्षेपी नीति का समर्थक था तथा दिदरो व आलोंबेयर के विश्व-कोष के लिये लेख भी लिख चुका था। राजनीति तथा धर्म दोनों ही के विषय में उसके विचार स्वतन्त्र थे। उसका ध्येय था 'शान्ति, मितव्ययता तथा सुधार'। युद्ध के नाम से वह दूर भागता था। वह कहा करता था कि जब कभी सेना के लिये भरती की जाती है तो झगड़ा और फ़िसाद अवश्य होता है। तूर्गो ने फ्रांस की आर्थिक व राजनैतिक दशा सुधारने के लिये एक बृहद कार्यक्रम तैयार किया था, जिसमें कई आवश्यक सुधार सम्मिलित थे, जैसे मितव्ययता का कठोरता से पालन करना, वज़ीफ़ों और पेंशनों का अन्त करना, व्यापार तथा हस्तकला के मार्ग में जो रुकावटें उपस्थित थीं उनको दूर करना, अन्य करों को हटाकर केवल एक कर भूमि पर निश्चित करना एवं पादरी, अमीर उमरा तथा सर्वसाधारण से उसको समान रूप में वसूल करना। यह एक सर्वप्रिय कार्यक्रम था जिसके अनुसार कार्य करके उक्त मन्त्री अवश्य ही शासन के लिये हितकारी प्रमाणित हो सकता था। किन्तु वह उसका पूरे प्रकार से पालन न कर सका। राजतन्त्र के सम्बन्ध में तूर्गो के विचार क्रांतिकारी न थे। वह राजतन्त्र के विरोध में न था। उसकी हार्दिक इच्छा थी कि सम्राट स्वयं अपनी ओर से उक्त सुधारों का सृजन करे। वह प्रतिनिधियों द्वारा शासन का पक्षपाती अवश्य था तथा मत प्रदान के लिये भूमि का बंधन रखना चाहता था।

सद्भावनाओं से युक्त मंत्री तूर्गो

जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, तूर्गो अपने कार्यक्रम को पूरे प्रकार से पालन करने में सफल न हो सका। उसने अनाज के व्यापार को बन्धनों से मुक्त कर दिया और उस बेगार (Corvee) को भी बन्द कर दिया जो कृषकों से ली जाती थी। इसके अतिरिक्त उसने दस्तकारों की समितियां (Craft Guilds) को, जो नगरों में व्यापारिक उन्नति के मार्ग में बाधक थीं, समाप्त कर दिया। इन सुधारों के करने पर भी यह सद्भावनापूर्ण मंत्री अपने पद पर अधिक काल तक आसीन न रह सका। सन् १७७४ ई० में फ़सल के खराब हो जाने के कारण कई नगरों में झगड़े और फ़िसाद हुये थे। उसके उपरोक्त कार्यक्रम तथा सुधारों के कारण सम्राट के दरबारी, पादरी तथा कुलीन वर्ग के लोग उसके विरुद्ध होगये थे। अतएव सन् १७७६ ई० में मेरी एन्तोयनेत तथा कुलीन वर्ग के लोगों के ज़ोर देने पर सम्राट ने उसको पदच्युत कर दिया।

सोलहवें लुई ने तूर्गो को पदच्युत करके उसके प्रतिद्वन्दी नैकर (Necker) को अर्थ-मन्त्री नियुक्त किया। नैकर जेनीवा का एक साहूकार था।

नैकर, १७७६–१७८१ ई०

वह अच्छे विचार का मनुष्य अवश्य था, किन्तु संकल्प का दृढ़ न होने से वह अपनी नीति का नियम से पालन न कर सकता था। वह प्रोटैस्टेंट धर्म का अनुयायी भी था। कैथोलिक देश में एक प्रोटैस्टेंट मन्त्री का नियुक्त होना इस बात की ओर संकेत करता था कि समय बदल रहा है और फ्रांस में शीघ्र ही दीर्घकालीन व्यवस्था (Ancien Regime) का अन्त होने वाला है। तूर्गो का सिद्धान्त था व्यापार तथा हस्तकला आदि को स्वतन्त्र करना। उसका उत्तराधिकारी नैकर इस कार्यपद्धति के विरुद्ध था। उसका सिद्धान्त था कि विभिन्न वस्तुओं के बढ़ते हुये मूल्य पर रोक लगाई जाय जिस से सर्वसाधारण उनको सरलता से मोल ले सकें। उसने अनाज के बढ़ते हुये मूल्य को रोकने का प्रयत्न किया, दस्तकारों की समितियों को पुनर्जीवित कर दिया एवं इस प्रकार के अन्य परिवर्तन करने की कोशिश की। किन्तु नैकर राजकोष की बुरी दशा को सुधारने में कृतकार्य न हुआ। अमेरिका के स्वाधीनता युद्ध में भाग लेने तथा अन्य कारणों से सरकार दिवालिया हो गई थी। अधिक ऋण का लेना प्रथम तो संकट से खाली न था। द्वितीय, उसका प्राप्त करना भी कठिन था। तिस पर भी नैकर ने अपने साहूकार मित्रों से ४० करोड़ फ्रैंक ऋण के रूप में लिये। उसने खर्च को कम करने तथा सरकारी हिसाब को ठीक प्रकार से रखने पर भी ज़ोर दिया। उसने कुछ अन्य सुधार भी किये किन्तु फ्रांस की आर्थिक दशा पहले की भांति बुरी रही और शासन बराबर सन् १७८६ ई० की क्रांति की ओर अग्रसर होता रहा। एक ओर तो फ्रांस के अर्थ-मन्त्री इस समस्या पर ध्यान दे रहे थे कि उसकी आर्थिक दशा में किस प्रकार सुधार किया जाय। दूसरी ओर नादान मेरी ऐन्तोयनैत बहुमूल्य आभूषण व वस्त्र मोल लेने तथा भेंट आदि वितरण करने में व्यस्त थी। सन् १७८१ ई० में जब उसके मित्रों ने उस से नैकर के कंजूस होने की शिकायत की तो उसने अपने पति पर प्रभाव डालकर उसे पदच्युत करा दिया।

सोलहवें लूई के विचार अत्यन्त सुन्दर थे। वह निःसन्देह प्रजा की दशा में सुधार करना चाहता था। किन्तु वह अपने निरंकुश व्यवहार को न त्याग सकता था। तूर्गो तथा नैकर दोनों इसका अनुभव कर चुके थे। अब सन् १७८३ ई० में

प्रतिष्ठित व्यक्तियों की सभा, १७८७ ई०

एक नवीन अर्थ-मंत्री नियुक्त किया गया। इसका नाम कालौन (Calonne) था। किन्तु वह भी इच्छानुसार शासन की सेवा न कर सका। इतना उसने अवश्य किया कि जब तक ऋण प्राप्त हो सका उसने स्वेच्छापूर्वक धन

उधार लिया और मेरी ऐन्तोयनेत के हास विलास में बिघ्न न पड़ने दिया। सन् १७८६ ई० में सरकारी ऋण बढ़ते बढ़ते ६० करोड़ डालर तक पहुँच गया। इस पर प्रति वर्ष एक बृहत् धनराशि सूद के रूप में बढ़ जाती थी। जब अधिक ऋण का प्राप्त करना दुष्कर होगया तो कालोन ने सम्राट की सलाह से सन् १७८७ ई० में साम्राज्य के १४५ प्रतिष्ठित व्यक्तियों की एक सभा (Assembly of Notables) बुलाई। उसमें प्रमुख कुलीन वर्ग के मनुष्य, बिशप और मजिस्ट्रेट सम्मिलित हुये। इन सब की नियुक्ति सम्राट की ओर से की गई थी। इसलिये वे सर्वसाधारण के हित की बात कैसे सोच सकते थे? इन लोगों ने इस बात को स्वीकार न किया कि उन पर किसी प्रकार का कर लगाया जाय। वे आर्थिक दशा के सुधारने का कोई दूसरा मार्ग भी न बता सके। इनको अप्रसन्न करने के स्थान पर सम्राट ने कालोन को पदच्युत कर दिया।

क्या एक के पश्चात् दूसरे मंत्री को पदच्युत करने से राजकोष की कमज़ोरी दूर हो सकती थी? क्या यह सम्भव था कि सम्राट की ओर से निरंकुश व्यवहार के होने पर भी सर्वसाधारण प्रसन्न व हर्षयुक्त हो जाते?

स्टेट्स जनरल को आमंत्रित करने की स्वीकृति

सरकार का दिवालिया हो जाना तथा उसका निरंकुश व्यवहार ही दो ऐसी चट्टानें हैं जिन पर सोलहवें लूई का जहाज़ टकरा गया। कालोन के स्थान पर वोल्तेयर और तूर्गो के मित्र ब्रीन (Brienne) की नियुक्ति की गई। किन्तु उसने भी आर्थिक दशा को सुधारने का वही उपाय बतलाया जो कालोन ने बतलाया था। यह देखकर लूई अवाक् था। कुलीन वर्ग के मनुष्य तथा पादरी करों के नाम से दूर भागते थे। फ्रांस का सर्वोच्च न्यायालय (Parlement), जिसका अधिवेशन पेरिस में होता था, नये करों को इस शर्त पर रजिस्टर करने के लिये तैयार था कि वे स्टेट्स जनरल से स्वीकृति करा दिये जायँ। नवीन ऋण का प्राप्त करना असम्भव हो गया था। ऐसी अवस्था में सम्राट ने वाध्य होकर सन् १७८८ ई० में स्टेट्स जनरल को आमंत्रित करने की स्वीकृति दे दी एवं नैकर को भी वापस बुला लिया। ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई धोखेबाज़ फ़र्म ऋण अदा न करके अपना समस्त लेखा जोखा अपने ऋणदाताओं के सम्मुख रखने को राज़ी होगया हो।

स्टेट्स जनरल एक प्राचीन सभा थी जिसे सम्राट फ़िलिप-द-फ़ेयर (Philip the Fair) ने सन् १३०२ ई० में सब से प्रथम निमन्त्रण दिया था, किन्तु सन् १६१४ ई० से उसका एक भी अधिवेशन नहीं हुआ था। उसका मुख्य काम शासन को परामर्श देना था, न कि क़ानून निर्मित करना। अस्तु बहुधा ऐसा होता था कि सरकार उसके निर्मित

दो गम्भीर प्रश्न

किये हुये क़ानूनों की अवहेलना करती थी। स्टेट्स जनरल में पादरी, अमीर उमरा तथा सर्वसाधारण के प्रतिनिधि लगभग बराबर बराबर संख्या में बैठते थे, किन्तु उसके विषय में एक विलक्षण प्रथा यह थी कि वे सब एक साथ न बैठकर, श्रेणियों (Estates) के अनुसार पृथक बैठते थे और व्यक्तिगत रूप से मत न देकर श्रेणियों के अनुसार मत प्रदान करते थे। इसका यह अर्थ हुआ कि तीन श्रेणियाँ थीं एवं उनके तीन मत थे। कोई भी योजना जो दो श्रेणियों से स्वीकृत हो जाती थी स्टेट्स जनरल से स्वीकृत समझी जाती थी। बहुधा ऐसा भी होता था कि पादरी और अमीर उमरा अपने दो मतों के द्वारा तीसरे श्रेणी को परास्त कर देते थे और सर्वसाधारण के प्रतिनिधि अपना सा मुंह लिये रह जाते थे।

इस समय फ्रांस की विशेष आवश्यकता यह थी कि किसी प्रकार शासन की आर्थिक दशा में सुधार किया जाय। यह तभी संभव हो सकता था जब पादरी तथा कुलीन वर्ग के लोग कर देना स्वीकार कर लें। अतः नैकर इस बात का इच्छुक था कि स्टेट्स जनरल में किसी प्रकार तीसरी श्रेणी के प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि कर दी जाय। इस सम्बन्ध में दो गम्भीर प्रश्न उत्पन्न होते थे। (१) क्या सम्राट सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों की संख्या में प्रकट रूप से वृद्धि करने के लिये राज़ी हो जावेगा? (२) क्या सम्राट तीनों श्रेणियों के प्रतिनिधियों को एक साथ बैठने तथा व्यक्तिगत रीति से मत प्रदान करने की आज्ञा देगा? नैकर ने किसी प्रकार उसको पहली बात के लिये तैयार कर लिया। अतएव सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों की संख्या दोगुनी कर दी गई। इस प्रकार वे अन्य दो श्रेणियों के प्रतिनिधियों की सम्मिलित संख्याओं के बराबर हो गई। दूसरा प्रश्न स्वयं स्टेट्स जनरल के लिये छोड़ दिया गया। यह एक बहुत बड़ी भूल थी, जिसके कारण शीघ्र ही एक महान् तूफ़ान उठा।

सदस्यों का निर्वाचन

सन् १७८८–८९ ई० की शरद ऋतु में फ्रांस में स्टेट्स जनरल के लिए सदस्यों का निर्वाचन किया गया। तीसरी श्रेणी के प्रत्येक व्यक्ति को, जिसकी आयु २५ वर्ष से अधिक थी एवं जो प्रत्यक्ष रूप में कोई कर देता था, मत प्रदान करने का अधिकार दिया गया। पेरिस में मत देने वालों के लिये अधिक कठोर प्रतिबन्ध लगाये गये जिससे निर्धनों को यह अधिकार प्राप्त न हो सके। सदस्यों का निर्वाचन सीधे सीधे न किया गया वरन् पहले प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के पादरियों, कुलीन वर्ग के मनुष्यों तथा सर्वसाधारण जनता ने पृथक पृथक कुछ लोगों का निर्वाचन किया। इस प्रकार तीन सभायें निर्वाचित हो गईं। इसके पश्चात् इन सभाओं ने स्टेट्स

जनरल के लिये सदस्यों का निर्वाचन किया। इस प्रकार की प्रत्येक सभा ने अपने अपने प्रतिनिधियों के मार्ग प्रदर्शन के लिये शिकायतों और सुधारों की एक रिपोर्ट भी तैयार की जिसे लेकर वे वर्सेल्ज़ में आये।

'के हे'

यह रिपोर्टें अथवा शिकायतों और सुधारों की सूचियां इतिहास में 'के हे' (Cahiers) के नाम से विख्यात हैं। इनके पढ़ने से इस बात का ज्ञान होता है कि निर्वाचन करने वालों के हृदयों में किस बात की उत्कण्ठा थी। सभी 'के हे' एक समान न थे, किन्तु कुछ बातें ऐसी भी थीं जिनमें वे समानता रखते थे। उदाहरणार्थ सभी में इस बात पर ज़ोर दिया गया था कि फ्रांस के लिये एक लिखित संविधान की आवश्यकता है, स्टेट्स जनरल का अधिवेशन निश्चित अवधि के पश्चात् होना चाहिये, सरकार को अपनी आर्थिक व्यवस्था प्रजा की इच्छा से करनी चाहिये इत्यादि। उनमें कुछ बातें भिन्न भी थीं जैसे पादरियों और कुलीन वर्ग के लोगों ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि उनके प्रमुख अधिकार ज्यों के त्यों क़ायम रक्खे जावें। सर्वसाधारण के 'के हे' साधारणतया किसी वकील या पादरी की ओर से निर्मित किये गये थे। उनमें इस बात की मांग की गई थी कि प्रथम दो श्रेणियों के विशेषाधिकार, शासन की निरंकुशता, अवैधानिक गिरफ्तारियां तथा इसी प्रकार की दीर्घकालीन कुप्रथायें समाप्त कर दी जायं तथा देश में सब स्थानों में एक ही प्रकार के मापक तथा बांट आदि संचालित किये जायं इत्यादि। नगरों के निवासियों ने इस बात की इच्छा प्रकट की थी कि मज़दूरी की दर में वृद्धि की जावे तथा बेकारों के लिये काम उपलब्ध किया जावे। किन्तु किसी भी 'के हे' में राजतंत्र का अन्त किये जाने पर ज़ोर नहीं दिया गया था। इससे प्रमाणित होता है कि क्रांति के प्रारम्भ होते समय फ्रांस के निवासियों को अपने सम्राट से बहुत कुछ आशा थी।

अप्रैल सन् १७८९ ई० में जब निर्वाचन जारी थे, पेरिस में एक ऐसा प्रश्न सम्मुख आया जिससे यह बात प्रकट हुई कि स्टेट्स जनरल को राजनैतिक समस्याओं के अतिरिक्त सामाजिक समस्याओं पर भी विचार करना है।

अप्रैल सन् १७८९ ई० का उत्पात

क़ाग़ज़ के एक कारखाने का स्वामी, जिसका नाम रेवीओं (Reveillon) था, अपने मज़दूरों के साथ अच्छा व्यवहार न करता था। उसने एक दिन उनकी शान के विरुद्ध कुछ कह दिया। उसके विरोधियों ने यह प्रसिद्ध कर दिया कि उसने यह कहा है कि कोई भी मज़दूर प्रति दिन ७½ पेंस से अधिक पाने का

अधिकारी नहीं है। इस पर सर्वसाधारण ने रेवीओं के मकान को लूट लिया, उसका पुतला बनाकर फांसी पर लटकाया एवं इसी प्रकार के अन्य अवैधानिक कार्य किये। इस सम्बन्ध में किसी सीमा तक रक्त भी बहाया गया। अतएव शासन ने कुछ व्यक्तियों को वास्तविक रूप से फांसी दे दी। इस घटना से यह प्रकट होगया कि भविष्य में हवा किस दिशा में बहेगी। पादरी और कुलीन श्रेणी के मनुष्यों को इस बात की सूचना मिली कि यदि वे अपने लाभ के साथ मज़दूरों की आवश्यकताओं पर ध्यान न देंगे तो क्रांति का कार्य शान्ति पूर्वक न चल सकेगा।

आठवां अध्याय

तूफ़ान का प्रारम्भ

नये स्टेट्स जनरल में लगभग बारह सौ सदस्य सम्मिलित हुये। इनमें लगभग तीन सौ पादरी, तीन सौ से कुछ कम अमीर उमरा एवं लगभग छः सौ सर्वसाधारण के प्रतिनिधि थे। प्रथम श्रेणी के प्रतिनिधियों में दो तिहाई छोटे पादरी थे। ये अधिकतर सर्वसाधारण के साथ सहानुभूति रखते थे एवं उनसे किसी न किसी शर्त पर अच्छा सम्बन्ध रखना चाहते थे। दूसरी श्रेणी के प्रतिनिधि अधिकतर ऐसे थे जो अपने विशेष अधिकारों तथा अपना अमीराना गौरव व प्रतिष्ठा को छोड़ने को तैयार न थे। कुछ सदस्य ऐसे भी थे जो अपने उदार विचारों के लिये प्रसिद्ध थे। इनमें सबसे प्रसिद्ध लाफ़ेयत (Lafayette) था, जिसका विशद् वर्णन चौथे अध्याय में लेखनीबद्ध किया जा चुका है। इसके पश्चात् अलेक्ज़ैण्डर दी लामैथ (Alexander de Lameth) का स्थान था। उसके विचार भी उदार थे, किन्तु केवल फ्रांस के लिये; क्योंकि पश्चिमी द्वीपसमूह में उसके कुटुम्ब के अधीन असंख्य दास थे।

नये स्टेट्स जनरल के सदस्य

तीसरी श्रेणी के प्रतिनिधि शिक्षित तथा महत्वाकांक्षी थे। उनमें दो तिहाई वकील, बैरिस्टर और न्यायाधीश थे। बहुत से अपनी उच्च शिक्षा व योग्यता के लिये विख्यात थे। केवल दस ऐसे थे जिन्हें हम निम्न कोटि का स्वीकार कर सकते हैं। स्टेट्स जनरल के सदस्यों में सब से प्रकाशित मीराबो (Mirabeau), सीएयेस (Sieyes) एवं रोबेस्पेयर (Robespierre) थे। इन पर भी हम चौथे अध्याय में खुले रूप में प्रकाश डाल चुके हैं। मीराबो वास्तव में कुलीन वर्ग के परिवार से था। किन्तु उसने सीएयेस की भाँति तीसरी श्रेणी की ओर से प्रति-

निधित्व स्वीकार किया था। इसका कारण यह था कि उसके अनाचारी जीवन तथा स्वतंत्र विचारों के कारण दूसरी श्रेणी के लोगों ने उसको अपनी ओर से प्रतिनिधि बनाना अस्वीकार कर दिया था। सर्वसाधारण के अन्य प्रसिद्ध प्रतिनिधि इस प्रकार थे—जोजेफ़ मूनिये (Joseph Mounier) जिसे अंगरेज़ी संविधान बहुत प्रिय था; बारनाव (Barnave) जो मूनिये के समान वकील तथा मीराबो के समान योग्य वक्ता था; विक्टर मालो (Victor Malouet) जो व्यापारी वर्ग का प्रतिनिधि था; बाई (Bailly) जो एक प्रसिद्ध ज्योतिषी था; कामू (Camus) जो एक सफल बैरिस्टर था; गेओतीं (Guillotin) जो एक चिकित्सक था। अन्तिम तीन तथा सीएयेस पेरिस का प्रतिनिधित्व करते थे तथा शेष अन्य नगरों और ग्रामों से आये थे। सीएयेस एक पादरी था। तिस पर भी वह धार्मिक विषयों में विश्वास न रखता था। अतएव पादरियों ने उसे अपनी ओर से स्टेट्स जनरल में भेजना स्वीकार न किया था।

४ मई को नये स्टेट्स जनरल के सदस्य प्रथम बार बड़ी प्रतिष्ठा व सम्मान के साथ वर्सेल्ज़ में एकत्रित हुये एवं मास (एक प्रकार का धार्मिक गान), धार्मिक भाषण तथा राष्ट्रीय गीत को सुनकर बिदा हुये। दूसरे दिवस वे काम करने के लिये एकत्रित हुये, किन्तु उनको यह न बतलाया गया था कि वे एक ही कमरे में बैठेंगे अथवा पृथक कमरों में। प्रबन्ध

कार्यक्रम का अभाव

तीन कमरों का था। अतएव सम्राट के भाषण के पश्चात् सदस्य गण श्रेणियों के अनुसार तीन कमरों में बैठे। किन्तु क्या यह दीर्घकालीन प्रथा परिवर्तित नहीं की जा सकती थी? यदि स्टेट्स जनरल के सदस्यों को पृथक कमरों में अधिवेशन करना था, तो सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों की संख्या को पादरियों तथा अमीरों की संयुक्त संख्या के समतुल्य करने से क्या लाभ था? इस प्रकार के कुछ अन्य प्रश्न भी सर्वसाधारण के मस्तिष्क में प्रवेश कर रहे थे। सदस्यों को इस बात का बिल्कुल ज्ञान न था कि उन्हें किस प्रकार कार्य करना है। ज्ञान हो भी कैसे सकता था जब उक्त सभा का अधिवेशन १७५ वर्ष के पश्चात् किया जा रहा था। सम्राट और उसके मंत्री नैकर ने भी उसके लिए कोई कार्यक्रम तैयार न किया था। केवल उन्होंने ५ मई के भाषणों में साधारण रूप से उसकी ओर संकेत किया था। सम्राट ने सदस्यों को 'बुद्धिमान तथा मध्य मार्ग प्रेमी' बतलाते हुये इस बात की इच्छा प्रकट की थी कि वे लोग 'परिवर्तन के लिये उस आकांक्षा को जो बढ़ा कर बतलाई जाती है' पूरा करने का प्रयत्न करेंगे। शाही मुहर के अध्यक्ष बारोंतां (Barentin) ने सदस्यों को बतलाया था कि इस प्रश्न को वे स्वयं हल करेंगे कि वे एक साथ बैठकर अधिवेशन

करेंगे एवं मत देंगे अथवा पृथक कमरों में बैठकर ? नेकर ने स्वयं अपने भाषण में इस प्रकार की आवश्यक बातों पर प्रकाश न डाला था। उसने केवल फ्रांस की आर्थिक दशा बतलाते हुये इस बात की आशा प्रकट थी कि "सब से श्रेष्ठ अमीर यदि सब से अधिक देश भक्त सर्वसाधारण के साथ एक मत होंगे" तो आई हुई विपत्ति अवश्य टल जावेगी।

कार्यक्रम का अभाव जिसकी ओर हमने यहां संकेत किया है, अत्यन्त खेद का विषय था। सभी विद्वान इस बात पर एक मत हैं, कि यदि सम्राट इस समय स्टेट्स जनरल के लिये कोई कार्यक्रम निर्धारित कर देता अर्थात् यदि उसका नेतृत्व स्वीकार कर लेता तो सम्भवतः क्रांति उत्पन्न ही न होती और यदि उत्पन्न भी होती तो उसका रूप पूर्णतया भिन्न होता। कम से कम यह बात हमें स्वीकार करनी पड़ेगी कि इस समय किसी के दिल में भी राजतंत्र को समाप्त करने का विचार उत्पन्न न हुआ था। इसके केवल एक मास पश्चात् एक अभिनन्दनपत्र में सर्व-साधारण ने ये विचार प्रकट किये—"आपके भक्त सर्वसाधारण कभी भी इस बात की उपेक्षा नहीं कर सकते कि किस प्रकार वे आपके ऋणी हैं। वे उस प्राकृतिक मित्रता को कभी भी विस्मृत न करेंगे जो सम्राट और सर्वसाधारण के बीच उन विभिन्न उच्च श्रेणियों के विरुद्ध स्थापित हो गई है, जिनकी शक्ति केवल सम्राट के शासन एवं सर्वसाधारण के संतोष को समाप्त करके ही स्थापित रह सकती है।" सम्राट के भाषण के पश्चात् जैसे ही वह बाहर आया वैसे ही पादरी एवं कुलीन श्रेणी के लोग भी बाहर चले आये एवं पृथक कमरों में बैठकर अपने कार्य में संलग्न हो गये और तीसरी श्रेणी के प्रतिनिधि अपना सा मुँह लिये रह गये। 'युद्ध आरम्भ हो गया है'—यह वह संदेश है जो लोरेन के एक सदस्य ने इस विषय में लिखकर भेजा था।

जैसा कि आवश्यक था, सर्वसाधारण और प्रथम दो श्रेणियों के प्रतिनिधियों के बीच प्रथम संघर्ष इस विषय पर हुआ कि वे एक साथ बैठकर अधिवेशन करेंगे अथवा पृथक कमरों में बैठकर ? सर्वसाधारण के प्रतिनिधि इस बात का निर्णय कर चुके थे कि वे पादरी और कुलीनों के साथ बैठकर ही अधिवेशन करेंगे। अतएव पांच सप्ताह तक उन्होंने कोई काम नहीं किया, परन्तु वे उनको बराबर निमन्त्रण देते रहे। इस बीच में कई बार उन्हें प्रतिकूल उत्तर प्राप्त हुआ किन्तु इसकी चिन्ता न करके वे उन्हें बराबर आमंत्रित करते रहे। २८ मई को पेरिस के प्रतिनिधि भी स्टेट्स जनरल में सम्मिलित हुये। इन में, जैसा कि बतलाया गया है, बाई और सीएयेस सबसे प्रसिद्ध थे। उनके आगमन से सर्वसाधारण का उत्साह द्विगुण हो गया। अन्त में

प्रथम संघर्ष

सीएयेस की सम्मति से १२ जून को पादरियों तथा अमीरों के पास अन्तिम बार निमन्त्रण भेजा गया। परन्तु जब उस दिन भी उन्हें निराश होना पड़ा तो वे अपना कार्य करने पर आरूढ़ हो गये। ठीक इस निर्णय के पश्चात् तीन छोटे पादरियों ने उनके भवन में प्रवेश किया। इनका नेता जेले (Jallet) था। उसने इन शब्दों में सर्वसाधारण को सम्बोधित किया,—"बुद्धिमानी की मसाल के प्रकाश में सर्वसाधारण के कल्याण की भावना तथा अपनी आत्मा की आवाज़ के कारण, हम अपने साथी नागरिकों एवं भाइयों से सम्मिलित होने आये हैं।" तीनों पादरियों को सबों ने गले लगाया तथा बड़े ज़ोर की आवाज़ से अपना हर्ष प्रकट किया। दूसरे दिन नौ अन्य पादरियों ने प्रवेश किया। उनका भी इसी प्रकार अभिनन्दन किया गया। सर्वसाधारण के सदस्यों ने अपने भाग्य नक्षत्र को ऊँचा देखकर १७ जून को सीएयेस के ज़ोर देने पर राष्ट्रीय महासभा (National Assembly) होने की घोषणा की। उनका यह कार्य समय के अनुकूल तथा आवश्यक था। इसलिये कि वे फ्रांस की ९६ प्रतिशत जनता का प्रतिनिधित्व करते थे तथा उनको किसी न किसी प्रकार से अन्य दो श्रेणियों के सदस्यों पर प्रभाव डालना था। उन्होंने इस विषय की घोषणा भी कर दी कि वर्तमान कर इस बात के अतिरिक्त भी कि वे उनके मत से अवैधानिक हैं, महासभा के उपस्थित रहने तक जैसे के तैसे जारी रहेंगे, किन्तु यदि महासभा को बलपूर्वक भंग कर दिया गया तो कर भी अस्वीकृत समझे जावेंगे।

यह एक अत्यन्त वीरता का कार्य था जो सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों ने किया था। एक तो शासन का विरोध करना और फिर यह धमकी देना कि राष्ट्रीय महासभा के अवैध घोषित किये जाने पर सरकारी कर भी अवैध और अस्वीकृत समझे जावेंगे, यह कोई साधारण कार्य न था। इस बात की आशा सर्वसाधारण के 'के हे' निर्माण करने वालों को भी न थी। परन्तु अब तो खेल आरम्भ होगया था। देखना था कि पांसा किस ओर पलटता है।

टेनिस कोर्ट की शपथ (२० जून)

१९ जून को पादरियों ने गम्भीर वादविवाद के पश्चात् १४९ वोटों से सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों से सम्मिलित होने का निश्चय किया। कहते हैं कि इस समय उनके कमरे में इतना अधिक शोर हुआ कि उसकी प्रतिध्वनि सम्राट के महल तक सुनाई पड़ी। कुलीनों की सभा बिना किसी निर्णय के भंग हो गई। उनके सम्मुख केवल एक ही मार्ग था। वह यह कि मेरी ऐन्तोयनेत तथा उसके दूसरे सम्बन्धियों द्वारा सोलहवें लुई पर प्रभाव डालें। अतएव उन्होंने २३ जून सम्राट के भाषण के लिये नियत करके यह घोषित करा दिया कि इस दिन सम्राट स्वयं इस गम्भीर विषय पर अपना

निर्णय स्टेट्स जनरल में सुनायेगा। २० जून को जब सर्वसाधारण के प्रतिनिधि अपने कमरे के सम्मुख आये, जो वर्सेल्ज़ के महल में उनके अधिवेशन के लिये सुरक्षित कर दिया गया था, तो उन्होंने उसके द्वार बंद पाये। चारों ओर सैनिक पहरा था तथा वहां यह नोटिस भी चिपका दिया गया था कि कमरा ज़रूरी मरम्मत के लिये बन्द कर दिया गया है। यह देखकर सभी प्रतिनिधि चकित थे, किन्तु उन्होंने साहस न छोड़ा। उन्होंने एक ऐसा कार्य किया जिस से क्रांति के लिये मार्ग निष्कंटक होगया। जो तूफ़ान मई सन् १७८९ ई० में उत्पन्न हुआ था, जून के मास में उसमें शक्ति आ गई।

इस समय वर्षा प्रारम्भ हो गई थी। सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों को कहीं न कहीं अपना अधिवेशन करना आवश्यक था। समीप में एक बहुत विशाल भवन था जो टेनिस खेलने तथा घोड़े की सवारी के लिये प्रयोग में लाया जाता था। मीराबो और सीएयेस के मत से सब सदस्य उस भवन की ओर गये तथा वहीं अधिवेशन किया। वहाँ उन्होंने बाई के सभापतित्व में अत्यन्त उत्साह के साथ हाथ उठाकर राष्ट्रीय महासभा के सदस्यों की स्थिति में मूनिये के प्रस्ताव के अनुसार यह शपथ ली कि वे उस समय तक वहाँ से न हटेंगे जब तक वे फ्रांस के लिये संविधान निर्मित न कर लेंगे। इतिहास में यह 'टेनिस कोर्ट की शपथ (Oath of the Tennis Court)' के नाम से विख्यात है। वास्तव में फ्रांस की राज्यक्रांति का आरम्भ इसी स्थान से होता है। सम्राट की इच्छा के विरुद्ध मध्य-कालीन स्टेट्स जनरल केवल एक श्रेणी के प्रतिनिधियों के कारण राष्ट्रीय महासभा में परिवर्तित हो गया था। उसने प्रजातन्त्रीय ढंग पर फ्रांस के लिये एक संविधान तैयार करने की घोषणा भी कर दी थी। इस घोषणा का यह अर्थ था कि शीघ्र ही सम्राट के निरंकुश राजतन्त्र का अन्त कर दिया जावेगा एवं शासन सूत्र वहाँ के निवासियों के हाथ में आजावेगा। इंग्लैंड का एक यात्री आर्थर यंग, जिसका उल्लेख पहले भी किया जा चुका है, इस समय फ्रांस की सैर कर रहा था। टेनिस कोर्ट की शपथ का समाचार सुनकर उसे बड़ा अचम्भा हुआ तथा उसने यह मत प्रकट किया कि "सर्वसाधारण ने जो यह कार्य किया है उसका वास्तव में यह अर्थ है, कि उन्होंने साम्राज्य में समस्त अधिकारों पर स्वयं प्रभुत्व प्राप्त कर लिया है। उन्होंने एक ही बार में स्वयं को चार्ल्स प्रथम की दीर्घ पार्लेमेंट में परिवर्तित कर लिया है।"

२३ जून को शाही अधिवेशन हुआ। नैकर ने सोलहवें लूई को यह मंत्रणा दी थी कि मित्रता के भाव से काम ले, किन्तु इस सद्भावनापूर्ण मत को उसने ठुकरा दिया। अस्तु सम्राट का भाषण प्राचीन भावनायें लिये हुये था। उस में बतलाया

गया था कि तीनों श्रेणियों के प्रतिनिधि यदि वे चाहते हैं तो एक साथ अधिवेशन कर सकते हैं किन्तु ऐसे अवसरों पर वे कुलीन वर्ग तथा पादरियों के विशेष अधिकारों पर विचार न कर सकेंगे एवं न वे किसी धार्मिक प्रश्न पर ही कोई निर्णय देंगे। इन दो विषयों को छोड़कर सम्राट ने कुछ आवश्यक सुधारों के लिये स्वीकृति दे दी। अपने भाषण को समाप्त करते हुये उसने सदस्यों को यह धमकी दी कि यदि वे इसके विरुद्ध कार्य करेंगे तो "मैं अकेला जो कुछ मेरी प्रजा के लिये उचित होगा, करूंगा। मैं अकेला अपने आपको उनका वास्तविक प्रतिनिधि स्वीकार करूंगा।"

शाही अधिवेशन २३ जून

शाही अधिवेशन के पश्चात् अधिकतर पादरी और अमीर बाहर चले गये किन्तु सर्वसाधारण के प्रतिनिधि अपने स्थानों पर दृढ़ता से डटे रहे। यह देखकर सोलहवें लूई ने अपने उत्सव अध्यक्ष द्रब्रेज़ (Dreux-Breze) को वहाँ भेजा। उसने जाकर केवल यह कहा, "दयावान सज्जन वृन्द! आपने सम्राट की आज्ञायें सुन ली हैं।" मीराबो तुरन्त खड़ा होगया और वह प्रसिद्ध उत्तर दिया, जिसका उल्लेख चौथे अध्याय में किया गया है। इस पर बाई बोला कि राष्ट्रीय महासभा को कोई व्यक्ति आदेश नहीं दे सकता। सीएयेस ने सदस्यों को आकर्षित करके यह कहा, "तुम्हारी स्थिति आज भी वही है जो कल थी" और उन्हें परामर्श दिया कि वे अपना काम जारी रक्खें। द्रब्रेज़ लज्जित होकर लौट गया।

सम्राट को जब इस मामले की सूचना दी गई तो वह खिसिया कर कहने लगा, "उनका आशय है कि वे अपने स्थानों पर स्थिर रहेंगे। खैर, उन्हें इसी अवस्था में छोड़ दो।" लूई जानता था कि उसके पास संगीनें नहीं हैं, जिनकी ओर मीराबो ने संकेत किया था। सेना विद्रोह पर तुली हुई थी। कुछ स्थानों में सम्राट के पक्ष के नेता सर्वसाधारण के हाथों तंग किये जारहे थे। शाही अधिवेशन के केवल चार दिवस पश्चात् या यों कहिये कि टेनिस कोर्ट की शपथ के केवल एक सप्ताह पश्चात् सम्राट ने तीनों श्रेणियों के सम्मिलित अधिवेशन की स्वीकृति दे दी। यह ज्ञात करके फ्रांस के एक निवासी ने यह मत प्रकाशित किया था कि क्रांति समाप्त हो गई है। किन्तु वह ग़लती पर था। क्रांति समाप्त नहीं हुई थी वरन् उस वृहत् नाटक का प्रथम दृश्य समाप्त हुआ था जिसमें सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों ने प्रशंसनीय विजय प्राप्त की थी। एक दिवालिया शासक ने अपनी निरंकुश स्वेच्छाचारिता को न त्याग कर अपने आपको लहना वसूल करने वाले अफ़सर के अधिकार में छोड़ दिया था।

तीनों श्रेणियों का सम्मिलित अधिवेशन

नवाँ अध्याय

जनता के तूफ़ानी कार्य

जो तूफ़ान स्टेट्स जनरल के अन्दर सन् १७८६ ई० के मई और जून के महीनों में उठा था वह वहीं पर समाप्त नहीं हुआ। शीघ्र ही उसकी प्रतिध्वनि पेरिस नगर तथा प्रान्तों में सुनाई पड़ी। सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों ने सफलता के साथ सरकार का सामना किया था एवं अपने अस्तित्व को बनाये रखते हुये यह प्रमाणित कर दिया था, कि वे अपनी सदस्यता का पूर्ण उत्तरदायित्व पालन करेंगे। किन्तु 'टेनिस कोर्ट की शपथ' के ले लेने पर भी वे अपने सम्राट को बनाये रखना चाहते थे। वे उसका सम्मान करते थे एवं उस से डरते भी थे। परन्तु इसके पश्चात् कुछ घटनायें ऐसी घटीं जिनके कारण लोग उस से दोष मानने लगे तथा उन्हें राजतंत्र के स्थान पर प्रजातन्त्र स्थापित कर देना पड़ा।

इसके लिये बड़ी सीमा तक सोलहवाँ लूई स्वयं उत्तरदायी था। उसने स्वयं अपने पैर में कुल्हाड़ी मारने की कोशिश की थी। राष्ट्रीय महासभा की ओर से उसके तथा उसके सम्बन्धियों व दरबारियों के हृदयों में इतना आतंक छागया था कि वे उसके विरुद्ध शस्त्र उठाने के लिये तैयार हो गये। दूसरे शब्दों में, जैसा कि वे स्वयं बतलाते थे, वे देश में अपने ही ढंग पर शान्ति स्थापित करने को तत्पर हुये। इस में संदेह था कि फ्रांसीसी सेनाओं के युवक स्वदेशवासियों पर गोली वर्षा करेंगे। अतएव सम्राट को विदेशी सेना पर आश्रित होना पड़ा। फ्रांस में इस समय २३ पलटनें विदेशी सेना की उपस्थित थीं। उनमें से ५० हज़ार सैनिक मार्शल ब्रोली (Marshal Broglie) के सेनापतित्व में थे। वे पेरिस तथा वर्सैल्ज़ में नियुक्त कर दिये गये थे। यह एक गम्भीर क़दम था जो सम्राट की ओर

सम्राट की ओर से एक गंभीर क़दम

से उठाया गया था। इसका यह अर्थ था कि सम्राट अपनी प्रजा को भयभीत करना चाहता है एवं आवश्यकता होने पर राष्ट्रीय महासभा को भी भंग करने से न चूकेगा। जब सब तैयारियाँ हो गई तो उसने ११ जौलाई को नैकर को पदच्युत करके देश से निर्वासित कर दिया। उसके स्थान पर मेरी एन्तोयनेत के गहरे मित्र बारों दी ब्रेताल (Baron de Bretuil) मंत्री नियुक्त कर दिया गया।

नैकर को पदच्युत करने तथा उसके स्थान पर एक जी हुज़ूर मंत्री को नियुक्त करने का अर्थ यह था कि सोलहवां लूई दीर्घकालीन बातों को, जो धीरे धीरे हटाई जा रहीं थीं, क़ायम रखना चाहता है। दूसरे दिन

पेरिस की प्रतिक्रिया

रविवार था। इस दिन नैकर के पदच्युत होने का समाचार पेरिस पहुंचा। पेरिस के निवासी पहले ही से सम्राट की हुंकार का जवाब हुंकार से देने को तैयार थे। इस समय एक गम्भीर समस्या यह थी कि रोटियों का भाव बहुत चढ़ गया था। अत: सर्वसाधारण जनता मरने मारने पर उतारू थी। इस विषय में एक लेखक ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं,—"यदि रोटी का भाव गिरा हुआ होता तो कदाचित् जनसाधारण भयानक हस्तक्षेप न करते एवं मध्यवर्ग के लोग कम आसानी से सफल होते।" कुछ समय से पेरिस के मार्गों पर भाषण करने वाले नेताओं तथा पर्चों व समाचारपत्र आदि की संख्या में अधिक वृद्धि हो गई थी। सब सम्राट के विरुद्ध विष उगल रहे थे। हज़ारों लुटेरे, डाकू एवं किसान बाहर से राजधानी में आगये थे। नगर के गुण्डों की भी खूब बन आई थी। इन सबकी सहायता के लिये, सम्राट का चचेरा भाई ड्यूक दी ओर्लेंओं (Duc d' Orleans), जो सिंहासन का उम्मीदवार था, तैयार रहता था। उसके राजप्रासाद (Palais Royal) में ये लोग घास पर पड़े रहते एवं निम्न प्रकार के वक्ताओं के भाषणों को सुना करते थे। इस प्रकार का प्रमुख वक्ता कामील देमूलें (Camille Desmoulins) था, जो सर्वसाधारण के उत्साह को द्विगुण करता रहता था तथा कहता था, "पशु जाल में फंस गया है। आओ उसे समाप्त कर दें।" १२ जौलाई को वह उपरोक्त प्रासाद में एक मीनार पर चढ़ गया एवं अपने जोशीले भाषण से श्रोताओं को शस्त्र उठाने पर मज़बूर कर दिया। उसने बतलाया कि नैकर पदच्युत कर दिया गया है। देशभक्तों का सार्वजनिक वध प्रारम्भ होने ही वाला है। स्विज़ तथा जर्मन सेनादल पूर्व ही से पेरिस में बुला लिये गये हैं। इस प्रकार की बातें सुनकर सर्वसाधारण जोश में अन्धे हो गये और गलियों में आकर भयंकर कृत्य करने लगे। जर्मन सैनिकों से उनका संघर्ष हुआ। यदि फ्रैंच गार्ड उस समय विद्रोह न कर देता तो रक्तपात करने वालों को अवश्य कठोर दंड दिया जाता। उनके सौभाग्य से जर्मन सेना

वापस बुला ली गई। पेरिस ने प्रथम संघर्ष में सफलता प्राप्त कर ली थी। उस दिन नगर में सारी रात घंटे बजते रहे और नगर निवासियों को अपनी रक्षा के लिये सावधान करते रहे।

शस्त्रों की खोज

१३ जौलाई को सारे दिन राजधानी में शस्त्रों की खोज जारी रही। शस्त्र बड़ी संख्या में निर्मित किये गये एवं अधिक के लिये खोज होती रही। परिमित आधार पर झगड़े और फ़िसाद भी हुये। इस प्रकार की घटनाओं को देखकर राष्ट्रीय महासभा के सदस्य बड़े भयभीत हुये। उन्होंने सम्राट से प्रार्थना की कि पेरिस तथा वर्सेल्ज़ से सेनायें हटा ली जायें। किन्तु उसने इसकी किञ्चित चिन्ता न की। पेरिस की सभा ने, जिसने स्टेट्स जनरल के सदस्यों को निर्वाचित किया था, नगर की रक्षा के लिये मध्यम श्रेणी के लोगों का एक सेनादल निर्माण किया, किन्तु उनके लिये शस्त्र प्राप्त करना कठिन प्रमाणित हुआ। कारण कि जिस किसी को भी कोई शस्त्र प्राप्त होता था वह उसे अपने ही लिये रख लेता था। उपरोक्त सभा ने, नियम विरुद्ध शस्त्र रखने वालों को बंदी बनाने की चेष्टा भी की, किन्तु वह सफल मनोरथ न हुई। जितने भी शस्त्र निर्मित किये जाते थे नाकाफ़ी प्रमाणित होते थे। ऐसा प्रतीत होता था कि सम्राट और जनता के बीच एक महासंग्राम होने वाला है।

बैस्तील विजय
१४ जौलाई, १७८९ ई०

इसके पश्चात् १४ जौलाई का शुभ दिन आया। इस दिन सर्वसाधारण ने एक इमारत से, जो निर्बल तथा अंगहीन सैनिकों के लिये बनाई गई थी, ३२ हज़ार बन्दूकें तथा १ दर्जन तोपें बलपूर्वक प्राप्त कर लीं। अन्य स्थानों से अन्य प्रकार के शस्त्र उनके हाथ लगे। ५० हज़ार भाले पेरिस के कारखानों में तैयार कर लिये गये थे। इन सबको प्राप्त करके क्रांतिकारी अत्यन्त प्रसन्न थे, किन्तु उन्हें बारूद बहुत कम उपलब्ध हो सकी थी। इसके लिये सबों का ध्यान बैस्तील (Bastille) की ओर गया। इस नाम का एक प्राचीन दुर्ग पेरिस के पूर्वीय भाग में स्थित था, जो सोलहवें लूई के शासनकाल से पहले राजनैतिक बंदियों के रखने के लिये प्रयोग में लाया जाता था। लोग उसे बूरबन वंश के निरंकुश राजतंत्र का सबसे महान् प्रतीक मानते थे। वह अपने अष्ट बुर्जों के साथ नगर पर इस प्रकार आच्छादित था मानों प्रजातंत्रवादियों को चुनौती दे रहा हो। न केवल फ्रांस वरन् समस्त यूरोप के प्रतिक्रियावादी उसे अपनी शक्ति का साधन समझते थे। इस समय उसके अन्दर केवल सात बंदी तथा सौ से कुछ अधिक सैनिक थे। उनका अफ़सर दी लोने (De Launey) निश्चय का दृढ़ न था, पर वह हथियार डालने को तैयार न हुआ। उसने यह वचन अवश्य दिया

कि वह उस समय तक गोली न चलायेगा जब तक उस पर आक्रमण न किया जाय। इस समय तक क्रांतिकारियों का समूह बहुत बढ़ गया था। ऐसा प्रतीत होता था कि बैस्तील के चारों ओर अर्ध शस्त्र संयुक्त व्यक्तियों का सागर उमड़ आया हो। अकस्मात् गोलियों की तुमुल ध्वनि सुनाई पड़ी। इसका प्रारम्भ किस ओर से किया गया था, यह बतलाना कठिन है। सर्वसाधारण की ओर अतिरिक्त कुमक के आ जाने से उनका साहस दोगुना हो गया था। इसके दो घंटों के पश्चात् दी लोने को उसी के आदमियों ने दुर्ग के फाटक खोल देने के लिये बाध्य किया। फिर क्या था, अपार जनसमूह ने दुर्ग के अन्दर प्रवेश किया। एक ओर से दूसरी ओर तक समस्त कोठरियों की तलाशी ली गई एवं बंदियों को स्वतन्त्र कर दिया गया। नेताओं ने हर प्रकार से इस बात का प्रयत्न किया कि भीड़ पर अनुशासन रक्खा जाय, किन्तु कहीं ऐसा सम्भव हो सकता था। क्रांतिकारी बैस्तील के गवर्नर एवं उसके साथियों को बंदी करके ओटेल-दी-वील (Holel De Ville) की ओर ले चले जहां पेरिस की सभा का अधिवेशन होता था। नारों और तुमुल ध्वनि के अतिरिक्त कुछ सुनाई न पड़ता था। मार्ग में दी लोने तथा तीन अन्य अधिकारी एवं सैनिक जनसमूह के क्रोध का शिकार बने। प्रथम का शीश काट लिया गया एवं भाले पर चढ़ाकर सबों को दिखाया गया। उसके चारों ओर स्त्रियां और बालक नृत्य करने लगे तथा हर्ष मनाने लगे। कुछ दिनों के पश्चात् दो मन्त्री, जिनकी नियुक्ति नेकर के पदच्युत होने के पश्चात् की गई थी, वध कर दिये गये। ब्रेतोल तथा ब्रेनतीन नाम के मन्त्री सम्राट के भाई ड्यूक आफ़ आर्त्वा (Duke of Artois) के साथ फ्रांस के बाहर चले गये।

बैस्तील की विजय फ्रांस के इतिहास में विशेष महत्व रखती है। वास्तव में यह प्राचीन शासन प्रणाली पर प्रजातंत्रवाद की गौरवपूर्ण विजय थी।

उसका महत्व

बैस्तील पर क्रांतिकारियों का अधिकार हो गया है,—इस समाचार को सुनकर समस्त यूरोप के शासकों और उनके मन्त्रियों के हृदय कंपित हो गये। सोलहवें लूई को जब इस घटना का पूरा हाल बताया गया तो वह बोला, "हैं, यह तो विद्रोह है।" उसके एक दरबारी ने उत्तर दिया, "श्रीमान् इसका नाम क्रांति है।" प्रजातन्त्र के उपासक व भक्तों को बड़ी प्रसन्नता हुई। लन्दन में चार्ल्स जेम्स फाक्स हर्षित होकर कहने लगा, "संसार के इतिहास में यह सबसे महत्वपूर्ण तथा अनुपम घटना है।" जर्मनी का प्रसिद्ध दार्शनिक ऐमैनुअल कांट उपरोक्त समाचार को सुनकर देर तक हर्षित होता रहा।

फ्रांस की राज्यक्रांति के सम्बन्ध में बैस्तील की विजय हिंसा की प्रथम गम्भीर घटना थी। इस से इस बात का पूरा प्रमाण प्राप्त होता है कि सर्वसाधारण राष्ट्रीय

महासभा के साथ थे, न कि सम्राट के साथ। इस से राष्ट्रीय महासभा के कार्यों को स्फूर्ति मिली। इसके अतिरिक्त उसके कारण राजधानी से सम्राट का प्रभुत्व उठ गया। कुव्यवस्था के समय वहां के निवासियों ने एक स्थानीय शासन तथा सेना दल स्थापित कर लिये थे। उनके अधिकार में पेरिस का शासन तथा क्रांति का पथप्रदर्शन दोनों आगये। सोलहवें लूई पर ऐसा भय छाया कि उसने तुरन्त पेरिस व वर्सेल्ज़ से शाही फ़ौज हटा ली तथा नैकर को वापस बुला लिया। उसने पेरिस के स्थानीय शासन को वैध स्वीकार किया तथा वहां जाकर क्रांतिकारियों की बड़ी प्रशंसा की। इसके अतिरिक्त उसने क्रांति के लाल, सफेद और नीले रंग के झण्डे का सम्मान किया। यह देखकर सब लोग बड़े प्रसन्न हुये तथा उन्होंने ऊंची ध्वनि से नारे लगाये। फ्रांस निवासी अभी तक १४ जौलाई को अपनी स्वतन्त्रता का दिन मानते हैं और प्रति वर्ष उसकी जयन्ती बड़ी धूमधाम से मनाते हैं।

गत पृष्ठों में हमने पेरिस की सभा (राष्ट्रीय शासन) एवं सेना दल का उल्लेख किया है। इस स्थान पर उन पर विशेष प्रकाश डालने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

पेरिस का स्थानीय शासन तथा राष्ट्रीय रक्षा दल

हम बतला चुके हैं कि स्टेट्स जनरल के सदस्यों का निर्वाचन सीधे सीधे न किया गया था। बल्कि पहले प्रत्येक क्षेत्र में एक सभा का निर्वाचन किया गया था। फिर इन सभाओं की ओर से स्टेट्स जनरल के सदस्य चुने गये थे। पेरिस नगर के ६० भागों ने भी उसके लिये सदस्य निर्वाचित करने के लिये एक सभा का निर्वाचन किया था। बैस्तील की विजय से पूर्व जब राजधानी में कुव्यवस्था की शक्ति बढ़ी तो मध्यवर्ग के निवासियों ने नगर के शासन और रक्षा का कार्य इस सभा के अधीन कर दिया। इस प्रकार वहां एक स्थानीय शासन स्थापित होगया जो कम्यून (Commune) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ज्योतिषी बाई इसका अध्यक्ष बनाया गया। उपरोक्त शासन की स्थापना एक क्रांतिकारी कार्य था, क्योंकि कम्यून ने सरकारी अधिकारियों तथा मध्ययुग की व्यापारिक समितियों का स्थान ले लिया था। उसकी सहायता के लिये एक राष्ट्रीय रक्षा दल का निर्वाचन भी किया गया। प्रारम्भ में उसमें केवल २०० सदस्य थे किन्तु बाद को उनकी संख्या बढ़ते बढ़ते ४८ हज़ार तक पहुंच गई। राष्ट्रीय महासभा का एक प्रसिद्ध सदस्य लाफेयत उसका सेनापति नियुक्त किया गया। प्रारम्भ में पेरिस के कम्यून में नरम दल वालों का प्रभाव था, किन्तु इसके पश्चात् उस में उग्रवादियों का प्रभाव स्थापित होगया। धीरे धीरे क्रांति का नेतृत्व भी इसी कम्यून के हाथ में आगया। यह एक महत्वपूर्ण विषय था।

पेरिस का अनुकरण प्रान्तों में भी किया गया। यह जानकर कि बेस्तील का

प्राचीन दुर्ग ध्वंस कर दिया गया है तथा सम्राट की सेना ने जनता का साथ दिया है, कई प्रान्तों में कृषकों ने आतंकवादी कार्य किये। इस

कृषकों के कार्य

प्रकार के कृत्य पहले भी होते थे। सन् १७८८ ई० में उपज के खराब होने तथा इसके पश्चात् शीत के कठोर होने के कारण कृषक वर्ग बड़े संकट में थे। स्टेट्स जनरल के निमन्त्रित किये जाने की घोषणा ने उनकी आशा बहुत बढ़ा दी थी। इन समस्त कारणों से जनवरी सन् १७८९ ई० से उनके कार्यों में अधिक उग्रता आ गई। उन्होंने करों के देने तथा बेगार करने से स्पष्ट रूप से जवाब दे दिया। प्रथम के प्राप्त करने के लिये जो सरकारी अधिकारी आते उनको वे पीट देते तथा इसी प्रकार के अन्य उग्रवादी कृत्य करते। जौलाई सन् १७८९ ई० से कृषकों ने कई प्रान्तों में अधिक भयंकर कार्य किये। उदाहरण के रूप में, उन्होंने जागीरदारों के मकानों तथा मठों में आग लगा दी तथा कहीं कहीं पर जागीरदारों का वध भी कर डाला। इसके अतिरिक्त उन्होंने भूमि के पट्टों को भी जलाया। अतएव हज़ारों जागीरदार कृषकों के आतंक से नगरों को चले आये। हज़ारों फ्रांस छोड़कर चले गये। कृषकों के कुकृत्यों को देखकर नगरों के निवासी भी भयभीत हुये। उन्होंने भी अपनी रक्षा के लिये पेरिस के राष्ट्रीय रक्षा दल के ढंग पर रक्षा दल संगठित किये।

इस प्रकार के कृत्यों के समाचार पाकर राष्ट्रीय महासभा के सदस्य भी अवाक् रह गये। उनकी समझ में न आता था कि क्या करें ? कृषकों के रोमांच-कारी कृत्यों के रोकने तथा जागीरदारों के प्राण और सम्पत्ति

जागीरदारी प्रथा के अंत की घोषणा

की रक्षा के लिये उनके पास कोई साधन न था। पेरिस का सैन्य दल पेरिस के लिये भी काफ़ी न था। कुलीन श्रेणी के लोग भी समझ गये कि प्राण और सम्पत्ति की अब खैर नहीं है। ऐसी परिस्थिति में ४ अगस्त सन् १७८९ ई० को एक कुलीन विस्काउण्ट नोई (Noailles) ने, जो लाफ़ेयत के साथ अमरीका के युद्ध में भाग ले चुका था एवं जिसके विचार अधिक परिवर्तित हो गये थे, राष्ट्रीय महासभा में यह योजना प्रस्तुत की कि सबों पर आय के अनुसार कर लगाये जायँ एवं वे समस्त कर जो जागीरदार कृषकों से वसूल करते हैं, स्थगित कर दिये जायँ। सद्भावनापूर्ण अमीर ड्यूक दी एगूइयों (Duc d' Aiguillon) ने इस योजना का समर्थन किया। फिर क्या था, एक के पश्चात् दूसरे अमीर उमरा और पादरियों ने उठकर अपने विशेषाधिकारों के त्यागने की घोषणा की। जिस वस्तु की वे रक्षा नहीं कर सकते थे, उसकी उन्होंने स्वेच्छापूर्वक क़ुरबानी दे दी। उस रात्रि को कुल मिला कर ३० प्रस्ताव स्वीकृत किये गये। इनके द्वारा जागीरदारी प्रथा के समस्त विशेष

अधिकारों को समाप्त कर देने की घोषणा की गई। दूसरे शब्दों में इसका यह अर्थ था कि समाज में कुलीन श्रेणी तथा पादरियों की स्थिति सर्वसाधारण के बराबर कर दी गई। यह एक महान् सामाजिक परिवर्तन था, जिसकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम है। प्रभात के समय जब सदस्यों ने एक दूसरे को आलिंगन किया तो कुछ की आंखों से प्रेमाश्रु प्रवाहित हो रहे थे।

४ अगस्त की योजना के सम्बन्ध में फ्रांस के अन्य कुलीनों तथा पादरियों ने यह प्रश्न किया एवं इस प्रश्न के करने में उन्होंने कोई त्रुटि नहीं की, कि नोई को अपना प्रस्ताव पेश करने का क्या अधिकार था? वह एक निर्वाचित सदस्य था। अतएव उसको उस श्रेणी के विरुद्ध कोई कार्य न करना था जिसका वह प्रतिनिधित्व कर रहा था। आनन्द की बात यह थी कि नोई स्वयं निर्धन था। वह अपनी कौटुम्बिक जागीर को पहले ही समाप्त कर चुका था। वह 'जॉन लैकलैंड' (John Lackland) के नाम से विख्यात था। इसलिये उसने अपनी दान-शीलता दूसरों के भरोसे पर दिखलाई थी। इसके विरुद्ध कृषकों का कहना था कि ४ अगस्त की योजना से उन्हें कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। कारण कि वे कर आदि का देना बन्द करके सामन्तशाही प्रथा को पहले ही समाप्त कर चुके थे। पश्चिमी प्रान्तों के कृषकों ने कोई आन्दोलन नहीं किया था। अतएव वहां यह प्रथा अधिक समय तक स्थापित रही। अस्तु इतना हम दृढ़ता से कह सकते हैं कि ४ अगस्त की विजय उग्रवादियों की विजय थी। दूसरों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा, जैसे पेरिस के मज़दूर कहने लगे कि हम भी क्रांति से लाभ क्यों न उठायें। यह सोचकर वे हड़ताल करने पर तत्पर होगये। वास्तव में फ्रांस की राज्यक्रांति के कारण कई प्रकार की नवीन समस्यायें उत्पन्न हो गई थीं, जिन पर उस समय तक राष्ट्रीय महासभा ने कोई ध्यान नहीं दिया था। उनके सफल हल पर बहुत कुछ निर्भर था।

बैस्तील विध्वंस कर दिया गया था। कुलीन वर्ग तथा पादरियों के विशेष अधिकार स्थगित कर दिये गये थे। सर्वसाधारण ने अपनी बढ़ती हुई शक्ति के प्रत्यक्ष प्रमाण दिये थे। किन्तु इन सब बातों के होते हुये भी सोलहवें लूई तथा उसके साथियों ने अपने पुराने ढंग को न छोड़ा था। उन्हें अभी तक अपनी शक्ति का गर्व था। इसका प्रमाण वे राष्ट्रीय महासभा और पेरिस के सर्वसाधारण के विरुद्ध सेना का प्रयोग करके देना चाहते थे। सेना का प्रयोग वे पहले भी कर चुके थे। किन्तु उसका बड़ा ही भयंकर परिणाम हुआ था। इस प्रकार

सम्राट और उसके साथियों का वही पुराना ढंग

का परिणाम इस बार भी हुआ। इस बार यह योजना थी, कि उत्तरी-पूर्वीय सीमा के दुर्गों से कुछ सेनायें बुलाई जायँ तथा उनकी सहायता से महासभा पर प्रभुत्व प्राप्त कर लिया जाय। इसके उपलक्ष में १ अक्टूबर सन् १७८० ई० की रात्रि को वर्सेल्ज़ में एक शानदार दावत दी गई। उसके बीच सम्राट और आने वाली सेनाओं के प्रति शुभकामना प्रकट करने के लिये शराब का एक घूंट दिया गया तथा सम्राट के पक्ष में गाने गाये गये। इसका समाचार तुरन्त ही पेरिस में प्रसिद्ध होगया। वहां अनाज की मंहगाई के कारण सर्वसाधारण की बेकसी पहले से भी अधिक बढ़ गई थी। उनको इस बात की शिकायत थी कि राष्ट्रीय महासभा के सदस्य इस महत्वपूर्ण समस्या की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं देते। उनको इस बात का भी डर था कि यदि वर्सेल्ज़ में अधिक सेनायें आ जायेंगी तो न केवल महासभा की स्वतन्त्रता समाप्त कर दी जावेगी वरन् पहले से भी अधिक अनाज का अभाव हो जावेगा। इसलिये पेरिस में एक ओर से दूसरी ओर तक सनसनी फैल गई। अनुपम सुयोग पाकर मारा और दांतों जैसे नेताओं ने अपने भाषणों में सर्व-साधारण के जोश व उत्साह को दोगुना कर दिया था। ऐसी परिस्थिति में उनका शांत रहना असम्भव था।

पेरिस की नारियों का वर्सेल्ज़ को कूच

५ अक्टूबर को एक आश्चर्यकारी दृश्य उपस्थित हुआ। पेरिस की नारियों का एक बहुत बड़ा समूह हाथ में डंडे और लाठियां ले 'रोटी, रोटी' चिल्लाता हुआ पंक्ति बनाकर वर्सेल्ज़ की ओर रवाना हुआ। यह ज्ञात करके हंसी आती है कि उक्त जनसमूह में कुछ पुरुष भी थे जो स्त्रियों के वेष में सम्मिलित हो गये थे। इन सबका क्या उद्देश्य था, यह बतलाना कठिन है। वर्सेल्ज़ पहुंच कर कुछ स्त्रियां सम्राट से रोटी की मांग करना चाहती थीं। एक चिल्ला रही थी कि आओ, वर्सेल्ज़ चलें। कहा जाता है कि सम्राट बुद्धू है। हम उसके पुत्र के सिर पर ताज पहनायेंगे। अधिकतर स्त्रियां केवल यह चाहती थीं कि सम्राट के परिवार को पेरिस ले आवें। सब से पीछे कुछ दूरी पर लाफ़ेयत और उसका राष्ट्रीय रक्षादल चले जा रहे थे। उन्होंने भी यही निश्चित किया था कि शान्ति को भंग होने से रोकने के लिये जनसमूह के साथ रहें, किन्तु उसके कार्यों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करें। जब राष्ट्रीय महासभा के सदस्यों को जनसमूह के सन्निकट आने का समाचार प्राप्त हुआ तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुये और कहने लगे, 'बड़ा ही अच्छा हुआ। अब हम लोग अति शीघ्र गण-राज्य को स्थापित करने में कृतकार्य हो सकेंगे।' वर्सेल्ज़ पहुंचकर जनसमूह ने सम्राट के महल को घेर लिया और 'रोटी, रोटी' के नारे लगाये। सरकारी सेनाओं से कुछ करते न बना। लाफ़ेयत ने उनको

हटाकर राष्ट्रीय रक्षादल की सहायता से महल की रक्षा की। इसके अतिरिक्त समस्त रात्रि मार्गों पर भी शोर होता रहा एवं कुछ आतंकवादियों ने राजमहल में प्रवेश करके मेरी ऐन्तोयनेत के कुछ रक्षकों का वध भी कर डाला।

इस छोटी सी घटना का, जिसमें मछुओं की स्त्रियां तथा इसी प्रकार के अन्य निम्न श्रेणी के व्यक्तियों ने भाग लिया था, महत्व अत्यधिक है। यदि ध्यान से देखा जाय तो ज्ञात होगा कि इस से वह महत्वपूर्ण कार्य पूरा हुआ जिसका प्रारम्भ बैस्तील की विजय से हुआ था। वर्सेल्ज़ पहुंच कर सर्वसाधारण की ओर से कुछ व्यक्तियों ने सम्राट तथा राष्ट्रीय महासभा से भेंट की। इन दोनों ने इस बात का वचन दिया कि शीघ्र ही पेरिस के लिये खाद्य सामग्री का प्रबन्ध किया जायेगा। सम्राट ने उन समस्त योजनाओं तथा मानवी अधिकारों की घोषणा को भी स्वीकार कर लिया जिनको उपरोक्त महासभा ने गत अगस्त मास में स्वीकृत किया था। किन्तु केवल इतने पर संतोष न करके सर्वसाधारण तथा राष्ट्रीय रक्षादल ने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि सम्राट अपने परिवार के साथ पेरिस में रहे। अतएव ६ अक्टूबर को वह, उसका परिवार तथा उसके दरबारी आदि सब पेरिस के लिये चले। इसके पश्चात् सम्राट फिर कभी वर्सेल्ज़ नहीं आया। मार्ग में बराबर संगीत तथा नृत्य होते रहे। अन्त में जनसमूह सम्राट के साथ यह नारा लगाता हुआ कि 'हमने रसोइये, रसोइये की पत्नी तथा रसोइये के अल्पवयस्क पुत्र को अपने अधिकार में कर लिया है। अब हमको रोटी प्राप्त होगी' पेरिस आया। १४ जौलाई को सर्वसाधारण ने सम्राट पर केवल विजय प्राप्त की थी। ६ अक्टूबर को उन्होंने उसे अपने निरीक्षण में कर लिया।

इस छोटी सी घटना का महत्व

पेरिस में सोलहवां लूई त्वीलेरीज़ (Tuileries) के राजप्रासाद में नज़रबन्द कर दिया गया। इस प्रकार उसकी स्वाधीनता समाप्त हो गई। यह सब होते हुये भी वह गुप्त रीति से विदेशों से पत्रव्यवहार करता रहा। विवश होकर राष्ट्रीय महासभा भी पेरिस में उठ आई। इस प्रकार वर्सेल्ज़ के स्थान पर पेरिस शासन तथा क्रांति दोनों का केन्द्र बन गया। राजधानी में आ जाने के कारण उपरोक्त महासभा पर पेरिस के जनसाधारण तथा कम्यून का प्रभुत्व स्थापित हो गया। कुछ काल के पश्चात् उसे पूर्ण रूप से अपनी स्वाधीनता से हाथ धोने पड़े।

दसवाँ अध्याय

तूफ़ान के बीच शांति व व्यवस्था के कार्य

जिस समय फ्रांस में चारों ओर क्रांति का तूफ़ान चल रहा था ठीक उसी समय राष्ट्रीय महासभा ने शांति व व्यवस्था के कुछ प्रसिद्ध कार्य किये जो उल्लेखनीय हैं। 'के हे' के अन्दर बहुत से सुधारों का उल्लेख किया गया था। इन सबकी ओर उसे ध्यान देना था। उसे फ्रांस के लिये एक संविधान निर्माण करने का कार्य भी सुपुर्द किया गया था। इस ओर भी उसे ध्यान देना था। टेनिस कोर्ट की शपथ के द्वारा वह इस विषय में अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा का परिचय दे चुकी थी। इसके पश्चात् उसने राष्ट्रीय संविधान-सभा (National Constitutional Assembly) का लम्बा नाम ग्रहण कर लिया था। इस से उसके संकल्प की दृढ़ता का अतिरिक्त प्रमाण मिलता है।

नवीन युग का आगमन

राष्ट्रीय संविधान-सभा का कार्य सरल न था। उसे केवल अमेरिका जैसे किसी नये देश के लिये शासन और समाज का सुन्दर भवन निर्माण न करना था। वरन् प्रथम उसे फ्रांस जैसे प्राचीन देश में शासन और समाज के उस दीर्घकालीन भवन को नष्ट करना था जो वहां शताब्दियों से क़ायम था एवं जिसे सुदृढ़ बनाने में बूरबन वंश के सम्राटों ने मुख्य प्रयत्न किया था। दूसरे शब्दों में, उसे फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था (Ancien Regime) को स्थानान्तरित करके नवीन युग को स्थापित करना था। पेरिस में आकर उक्त सभा इस महत्वपूर्ण काम में बराबर संलग्न रही। उसमें साम्प्रदायिक झगड़े हुये, उसको कभी कभी पेरिस के सर्वसाधारण के कारण संकट का सामना करना पड़ा, किन्तु इस प्रकार की अड़चनों के होते हुये भी वह अपने कर्तव्य पालन में दृढ़ता से डटी रही। परिणाम

यह हुआ कि उसने सफलता के साथ एक सुन्दर संविधान बनाया एवं कुछ अन्य सुधार भी किये जिनकी अत्यन्त आवश्यकता थी। इस प्रकार फ्रांस में एक नवीन युग का आगमन हुआ, जिसका सुख स्वप्न वहां के शिक्षित वर्ग के लोग दीर्घ काल से देख रहे थे। वास्तव में राष्ट्रीय संविधान-सभा का यह कार्य, जिसे उसने अक्टूबर सन् १७८९ ई० एवं सितम्बर सन् १७९१ ई० के बीच सम्पन्न किया था, फ्रांसीसी राज्यक्रांति का सबसे श्रेष्ठ और चिरस्थायी कार्य था।

नये युग प्रवाह के क्रम में हमें तुरन्त ४ अगस्त की स्मृति हो आती है। यह वह शुभ दिन था जब रात्रि के समय राष्ट्रीय महासभा के सदस्यों ने जागीरदारी अथवा सामन्तशाही प्रथा के अन्त करने की घोषणा की थी। नोई का समर्थन करते हुये अन्य कुलीन वर्ग के लोगों तथा पादरियों ने, जो उक्त सभा के सदस्य थे, एक के पश्चात् दूसरे अपने विशेषाधिकारों को छोड़ देने की घोषणा की थी। आखेट सम्बन्धी कानून भी स्थगित कर दिये गये थे। जागीरदारों के न्यायालय बन्द कर दिये गये थे। टाइथ (आय का दसवां भाग जो पादरी लिया करते थे) एवं पादरियों के अन्य विशेषाधिकारों का अन्त हो गया था। दूसरे शब्दों में, वे सभी विशेषाधिकार जिनसे कुलीन वर्ग के मनुष्य, पादरी, नगर तथा प्रान्त आदि सुसज्जित थे, इस शुभ दिन को समाप्त कर दिये गये थे। एक सप्ताह में सम्राट ने इन सब सुधारों की स्वीकृति दे दी। जिस कार्य को राजमन्त्री कई शताब्दियों में भी पूरा न कर सके थे, उसे राष्ट्रीय संविधान सभा के सदस्यों ने कुछ ही दिनों में सम्पूर्ण करके दिखला दिया था। इस से फ्रांस में दीर्घकालीन युग प्रवाह को समाप्त करके नवीन व्यवस्था के स्थापित करने में बड़ी सहायता मिली।

४ अगस्त की स्मृति

४ अगस्त सन् १७८९ ई० के सुधारों का श्रेय वास्तव में किसको मिलना चाहिये? कुलीनों और पादरियों को, जिन्होंने अपने वंशानुगत विशेषाधिकारों की बलि दी थी अथवा कृषकों को जिनके भय से यह बलि दी गई थी। जैसा कि हमने गत अध्याय में बतलाया था, जिन अधिकारों का त्याग किया गया था उनको कृषकों ने पहले ही हस्तगत कर लिया था। इसके अतिरिक्त त्याग करने वालों को इस बात का आभास अवश्य रहा होगा कि यदि वे अपने विशेषाधिकारों के त्याग में सबसे आगे रहेंगे तो राष्ट्रीय-संविधान-सभा अवश्य ही उनकी हानि पूर्ति कर देगी एवं सम्भवतः अतिरिक्त सामाजिक कानून बनाने से भी विरक्त रहेगी। परन्तु राष्ट्रीय सभा के बाहर ४ अगस्त के सुधारों को बहुत कम अमीरों तथा पादरियों ने पसन्द किया था। अतएव पहले तो उन्होंने गृहयुद्ध करने का प्रयत्न

किया तथा बाद को हज़ारों की संख्या में अपने देश को नमस्कार करके विदेशों को चले गये। जो शेष बचे थे वे क्रांति के प्राणघातक शत्रु हो गये थे।

मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा

२७ अगस्त सन् १७८६ ई० को राष्ट्रीय संविधान सभा ने मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा (Declaration of Rights of Man and of the Citizen) की। इस घोषणा से सन् १७९१ ई० के संविधान का प्रारम्भ होता है। ग्रेट ब्रिटेन में मैगना कार्टा (Magna Carta) तथा बिल आफ़ राइट्स (Bill of Rights) के द्वारा तथा अमेरिका में स्वाधीनता की घोषणा (Declaration of Independence) के द्वारा मानव तथा नागरिकों के अधिकार सुरक्षित किये गये थे। उसी प्रकार फ्रांस के निवासियों ने भी मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा करके अपने अधिकारों की रक्षा की। इस में कई आवश्यक बातों का उल्लेख किया गया था। जैसे सबों के अधिकार समान हैं। इसका यह अर्थ था कि कुलीन वर्ग तथा पादरियों के विशेष अधिकारों का बिल्कुल अन्त कर दिया गया था। शासन के अन्तर्गत यदि छोटे व बड़े का भेद था तो वह उसी दशा में ठीक माना जा सकता था जब उस से सर्वसाधारण का लाभ हो। दूसरे शब्दों में, राजतन्त्र के 'दैवी आधार' एवं इसी प्रकार के अन्य अमानवी अधिकार अवैध निश्चित कर दिये गये थे। मानव के चार जन्मसिद्ध अधिकार हैं,—स्वतन्त्रता, सम्पत्ति, सुरक्षा तथा अत्याचारों का विरोध। सभी शासनों का कर्तव्य है कि इनकी रक्षा में कोई बात उठा न रक्खें। सभी प्रकार के मूल अधिकारों का आदि स्रोत राष्ट्र है। शासन का धर्म है कि कोई ऐसे कार्य न होने दे जिनसे समाज को हानि पहुंचने की सम्भावना है। सभी लोग सरकारी पदों के अधिकारी हैं यदि उनमें आवश्यक योग्यता हो। उपरोक्त घोषणा में अवैधानिक गिरफ्तारी तथा कठोर दण्डों का भी विरोध किया गया है। उसमें बतलाया गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को भाषण, लेख लिखने तथा मुद्रण का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। यदि इस से शान्ति तथा व्यवस्था में विघ्न न पड़े। कर व्यक्ति की स्थिति के अनुसार नियत किये जावेंगे। सरकारी कर्मचारी समाज के प्रति उत्तरदायी होंगे। किसी की सम्पत्ति पर उस समय तक हस्तक्षेप न किया जावेगा जब तक कि सार्वजनिक हित के लिये उसकी आवश्यकता न हो एवं जब तक उसका महसूल तथा मूल्य न दे दिया गया हो। इस से प्रकट होता है कि संविधान-सभा में सम्पत्ति रखने वालों का काफ़ी प्रभाव था।

उपरोक्त घोषणा में कुछ बातें ऐसी भी थीं जिनके सम्मिलित किये जाने की किसी को भी आशा न थी। उदाहरण के लिये, अधिकतर सदस्य इस बात को नहीं

चाहते थे कि सब स्थितियों के निवासियों को राष्ट्रीय संविधान-सभा के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार दिया जाय। इस से पूर्व उपरोक्त सभा में सीएयेज़ का यह प्रस्ताव भी स्वीकृत हो चुका था कि निर्धन लोग भावी निर्वाचन से वंचित रक्खे जायेंगे। इसके विरुद्ध कुछ आवश्यक बातें घोषणा में सम्मिलित न की गईं थीं। फ्रांस के उपनिवेशों में हब्शी गुलाम काम करते थे, किन्तु उक्त सभा के सदस्यों ने उनका कुछ भी विचार न किया था। इसका प्रधान कारण यह था कि वे काले लोग थे तथा सभा में उनके स्वामियों का प्रभाव अधिक था।

गिर्जाघरों की जागीरों की ज़ब्ती

पहली अक्टूबर सन् १७८६ ई० को वर्सेल्ज़ में दावत हुई थी एवं ५ अक्टूबर को पेरिस की स्त्रियों ने राजप्रसाद को चारों ओर से घेर लिया था। इसके प्रश्चात् सम्राट, उसका परिवार तथा राष्ट्रीय संविधान-सभा ये सब पेरिस चले आये थे। किन्तु इस स्थान में उसके सदस्यों की संख्या बहुत कम हो गई थी। लगभग दो सौ अथवा तीन सौ सदस्यों ने उसमें सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया था। इसके पश्चात् वे वहाँ फिर कभी दृष्टिगोचर नहीं हुये। इन में से बहुत से किसी न किसी कारण से विदेशों को चले गये थे। शेष प्रतिनिधियों ने त्वीलेरीज़ (Tuileries) के एक विद्यालय की इमारत में अधिवेशन प्रारम्भ किया। उनका ध्यान सर्वप्रथम गिर्जा-घरों की जागीरों की ओर गया। इसका कारण यह था कि शासन की आर्थिक स्थिति उसी प्रकार ख़राब थी। उसको ठीक करने का सब से उत्तम उपाय यह समझ में आया कि गिर्जाघरों की जागीरें ज़ब्त करली जायँ तथा उनके द्वारा राजकीय ऋण को अदा कर दिया जाय। यह हम बतला चुके हैं कि इस समय उनके अधिकार में फ्रांस की समस्त भूमि का लगभग पाचवाँ भाग था। उसको जब्त करने से शासन का बहुत कुछ काम चल सकता था। अत: १० अक्टूबर को एक बिशप ने जिसका नाम तैलिरेंद (Talleyrand) था, यह प्रस्ताव सभा में रक्खा कि गिर्जाघरों की समस्त जागीरें जब्त करके बेच डाली जायँ तथा उसके बदले में पादरियों को उनकी आय का दो तिहाई भाग वज़ीफे के रूप में नियत कर दिया जाय। इस प्रस्ताव पर तीन सप्ताह तक वादविवाद होता रहा। तैलिरेंद की ओर से मीराबो तथा ग्रेग्वार (Gregoire) आदि ने भाषण दिये। २ नवम्बर को यह योजना स्वीकार करली गई। इसका यह अर्थ था कि गिर्जाघरों की जागीरों पर शासन का अधिकार होगया एवं उसने पादरियों के लिये वज़ीफ़ों तथा निर्धनों के लिये दान आदि का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। जागीरों के क्रय-विक्रय को सरल करने के लिये शासन ने विशेष नोट (Assignats) प्रकाशित किये तथा उनको अपने साहू-कारों को देकर ऋण से छुटकारा पाया। साहूकारों ने उनको देकर गिर्जाघरों की

जागीरें मोल ले लीं। इसके पश्चात् यह नोट रद कर दिये गये। इस नीतिपद्धता से राष्ट्रीय विधान-सभा ने किसी सीमा तक शासन की आर्थिक स्थिति में सुधार करने में सफलता प्राप्त की। इसके अतिरिक्त सम्पत्तिशालियों का एक वर्ग ऐसा स्थापित होगया जो प्रत्येक रूप से क्रांति का हितचिंतक था। इस सुधार के करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं पड़ी। कारण यह था कि विधान-सभा के सदस्य अधिकतर नवीन दृष्टिकोण के थे एवं धर्म के विषय में उनके विचार अधिक स्वतन्त्रता लिए हुए थे। कुछ व्यक्ति ऐसे भी थे जिनको यह प्रबन्ध पसंद न आया था। एक कुलीन ने पत्र के द्वारा अपनी बेबसी को अपनी पत्नी पर इस भाँति प्रकट किया था,— "पूँजीपति हमें जिस पथ पर ले जाना चाहते हैं ले जाते हैं, किन्तु हमें इसका ज्ञान नहीं होता। यही एक शक्ति है जिसके हाथ में स्टेट्स की बागडोर है।"

नोटों के प्रकाशित किये जाने के विषय में एक मुख्य बात यह है कि धीरे धीरे उनकी मूल क़ीमत दस से बीस प्रतिशत तक गिर गई। अतएव विभिन्न वस्तुओं का मूल्य बढ़ा देना पड़ा। इस आशा में कि बाज़ार भाव और ऊँचा हो जायेगा, अनाज के स्टाक रोक दिये गये जिसके कारण बड़े नगरों के निवासियों को कठिनाई का सामना करना पड़ा। यदि नोट उसी गति से रद न कर दिये जाते जिस से प्रकाशित किये गये थे तो बाज़ार के भाव असाधारण रीति से ऊँचे हो जाते और ऐसी दशा में सर्वसाधारण को बहुत बड़ी विपत्ति का सामना करना पड़ता।

यह बात आवश्यक थी कि गिर्जाघरों की जागीरों की ज़ब्ती के साथ साथ मठों को भी बन्द कर दिया जाय तथा उनमें रहने वाले भिक्षु और भिक्षुणियों से कह दिया जाय कि वे सांसारिक जीवन व्यतीत करें। उनकी संख्या इतनी अधिक बढ़ गई थी कि सभा के सदस्यों को उनकी तथा छोटे पादरियों का पोषण स्वीकार नहीं था। वे ऐसे लोगों के विरुद्ध थे "जो नागरिक होते हुये भी संसार को त्याग देते हैं। तद्यपि क़ानून उनकी रक्षा करता है। जो ईश्वर के सेवक होने की स्थिति से निर्धन रहने की प्रतिज्ञा करते हैं किन्तु अत्यधिक धन एकत्रित कर लेते हैं।" इन बातों पर विचार करके ६ फर्वरी सन् १७६० ई० को उक्त सभा ने यह क़ानून निर्माण किया कि भविष्य में कोई भी व्यक्ति भिक्षु अथवा भिक्षुणी का जीवन व्यतीत करने की शपथ न लेगा। जो इस समय भिक्षु अथवा भिक्षुणी हैं वे अपना पूर्ण जीवन उसी स्थिति से व्यतीत कर सकते हैं। परन्तु यदि वे चाहें तो शासन से पेंशन लेकर सांसारिक जीवन में प्रवेश कर सकते हैं। इस क़ानून का फल यह हुआ कि अगणित भिक्षु तथा भिक्षुणी मठों को छोड़ कर चले आये एवं साधारण स्थिति से सांसारिक जीवन व्यतीत करने लगे। इस प्रकार मठों का सर्वनाश हो गया एवं अगणित निर्धन लोग अनाथ

मठों का नाश

हो गये। उनकी सहायता के लिये शासन ने कई विशेष कार्यालय खोल दिये। यहाँ उनका पालन पोषण होता था एवं कुछ उपयोगी हस्तकला भी सिखलाई जाती थी। यह एक बिल्कुल आधुनिक प्रकार का सुधार है जिसका आजकल पश्चिमी देशों में प्रचार है।

गिर्जाघरों की जागीरों के छीने जाने का दूसरा गम्भीर परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रीय विधान-सभा ने पादरियों को पोप की अधीनता से मुक्त करके शासन के अधीन कर लिया। ऐसा करना इसलिये भी आवश्यक था कि फ्रांस में पादरियों की संख्या अत्यन्त अधिक थी तथा उनमें से कुछ क्रांति के पूर्ण रूप से विरोधी थे। उक्त सभा ने अप्रैल सन् १७९० में धार्मिक स्वतन्त्रता की घोषणा की एवं जौलाई के महीने में पादरियों के राजनैतिक संविधान (Civil Constitution of the Clergy) को स्वीकार कर दिया। अगस्त में सोलहवें लूई ने भी उसके लिये स्वीकृति दे दी। पादरियों ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया एवं पोप से भी सहायता माँगी, परन्तु कुछ काल तक पोप पायस षष्ठ (Pious VI) बिल्कुल शान्त रहा। नये संविधान से यह बात निश्चित हुई कि भविष्य में विशपों तथा प्रीस्टों का निर्वाचन जनता की ओर से किया जायेगा, शासन की ओर से उनको वेतन मिला करेगा एवं पोप से उनका सम्बन्ध नाम मात्र को होगा। इस प्रकार इंग्लैंड की भांति फ्रांस में भी गिर्जाघरों पर शासन का प्रभुत्व स्थापित हो गया। इसके पश्चात् संविधान-सभा के सदस्य एक क़दम और आगे बढ़े और नवम्बर सन् १७९० ई० में यह आदेश प्रकाशित किया कि फ्रांस के कैथोलिक पादरियों को यह शपथ लेनी होगी कि वे पादरियों के राजनैतिक संविधान को स्वीकार करते हैं। दिसम्बर मास में सम्राट ने इच्छा के विरुद्ध उक्त आदेश पर भी हस्ताक्षर कर दिये।

पादरियों के लिये राजनैतिक संविधान

राष्ट्रीय संविधान-सभा के धार्मिक विषय में हस्तक्षेप करने से न केवल पोप वरन् फ्रांस के छोटे पादरियों को भी क्रांति का कट्टर शत्रु बना दिया था। पोप पायस षष्ठ गिर्जाघरों की जागीरों की ज़ब्ती तथा मठों के सर्वनाश से पहले ही अप्रसन्न था। जब उसको नवम्बर के आदेश की सूचना मिली तो उसके क्रोध का पारावार न रहा। उसने पादरियों को आज्ञा दी कि उपरोक्त आदेश का पालन न करें। फ्रांस के पादरियों के सम्मुख यह समस्या उपस्थित हुई कि शपथ लें अथवा न लें। उनको दोनों ही दशा में संकट का सामना करना पड़ा। शपथ लेने वाले पादरियों (Jurors) को पोप की ओर से ईसाई बिरादरी से पृथक कर दिया गया। यह एक ऐसा दंड था जिस से सभी डरते थे। शपथ लेने से इन्कार करने वाले पादरियों

शपथ लेने की समस्या

(Non-Jurors) को सभा की ओर से दंडित किया गया। उनका वेतन रोक दिया गया एवं उन्हें जेल भेजे जाने की धमकी भी दी गई। तैलिरैंद तथा ग्रेग्वार की भाँति बहुत कम पादरी ऐसे थे जिन्होंने उक्त शपथ लेकर पोप को अप्रसन्न किया था। ये लोग फ्रांस के राष्ट्रीय चर्च के अधीन बने रहे, किन्तु पोप से उनका सम्बन्ध विच्छेद हो गया। अधिकतर पादरी ऐसे थे जिन्होंने सभा का आदेश मानने से साफ़ इन्कार कर दिया। ये फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति के शत्रु हो गये। देहात में जाकर वे कृषकों को बहकाने लगे अथवा किसी अन्य देश को चले गये तथा फ्रांस के शत्रुओं से मिल कर क्रान्तिकारियों को नीचा दिखाने का प्रयत्न करने लगे। कुछ पादरी ऐसे भी थे जिन्होंने धार्मिक कर्तव्य के अतिरिक्त किसी अन्य कारण से शपथ लेना स्वीकार न किया था। जैसे नारबोन के पादरी आर्थर डिलों (Arthur Dillon) ने यह उत्तर दिया था—"यदि मैं केवल एक बिशप की स्थिति रखता तो दूसरों की भांति मैं भी आज्ञा का पालन करता, किन्तु मैं एक भद्र पुरुष भी तो हूं।"

युद्ध के बादल

सन् १७६१ ई० के प्रारम्भिक महीनों में उन पादरियों की जगहों को भरने के लिये, जिन्होंने शपथ लेने से इन्कार किया था, निर्वाचन किये गये। ये निर्वाचन अत्यन्त सनसनीपूर्ण वातावरण में हुये। कारण कि सब लोग जानते थे कि उत्तरी-पूर्वी सीमा पर युद्ध के बादल उमड़ रहे हैं। राष्ट्रीय संविधान-सभा के धार्मिक सुधारों के कारण, फ्रांस के शत्रुओं की शक्ति में यथेष्ट वृद्धि हो गई थी। फ्रांस से भागे हुये अमीर, मेरी एन्तोयनेत एवं पोप के कट्टर अनुयायी ये सब होली रोमन सम्राट तथा अन्य देशों के शासकों पर सहायता के लिये दबाव डाल रहे थे। भूतपूर्व मन्त्री कालोन ने, जो ड्यूक आफ़ आर्त्वा का गहरा मित्र था, सम्राट ल्योपोल्ड को यह दरशाया कि यदि इस समय फ्रांस की कुव्यवस्था से लाभ न उठाया गया तो वहां राजतन्त्र का अवश्य ही अन्त कर दिया जावेगा। मेरी एन्तोयनेत ने आस्ट्रिया के राजदूत से फ़र्वरी मास में यह मत प्रकट किया था कि जो कुछ फ्रांस में घटित हो रहा है यदि उसको बिना दण्ड के छोड़ दिया गया तो इस से एक अत्यन्त अवांछनीय उदाहरण उपस्थित होगा। गत नवम्बर में इंग्लैंड के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ एडमंड बर्क ने फ्रांसीसी क्रान्ति पर एक पुस्तक प्रकाशित की थी। इस में उसने फ्रांस की राज्य-क्रान्ति को एक नये रूप में प्रकट किया था। इसके कारण फ्रांस के शत्रुओं में नवीन उत्साह आ गया था। जब तैलिरैंद ने नये बिशपों को जो निर्वाचित होकर आये थे पवित्र बनाने की रस्म अदा की तो लोग समझ गये कि अब फ्रांस की राज्यक्रान्ति में एक नवीन प्रवाह आने वाला है। संविधान-सभा में इस बात पर

ज़ोर दिया गया कि भागने वालों को रोकने का प्रबन्ध किया जाय, किन्तु मीराबो के कारण वह कुछ न कर सकी। मीराबो ने सदस्यों से स्पष्ट कह दिया, "यदि तुम भागने वालों के विरुद्ध कोई क़ानून बनाओगे तो मैं शपथ लेकर कहता हूं कि मैं उसका समर्थन न करूंगा।"

इसी बीच में राष्ट्रीय संविधान-सभा के सदस्यों ने कुछ अन्य सुधारों की स्वीकृति दे दी थी। उनमें एक महत्वपूर्ण सुधार यह था कि उसने समस्त फ्रांस में एक ही ढंग की शासन पद्धति स्थापित कर दी थी। इस समय इस सुधार की विशेष आवश्यकता थी। जैसा कि हमने छठे अध्याय में वर्णन किया था, फ्रांस में एक दूसरे को काटते हुये कई प्रकार के प्रान्त तथा ज़िले थे जो विभिन्न बातों को ध्यान में रख कर निर्मित किये गये थे। ये सब हटा दिये गये तथा समस्त देश को ८३ विभागों (Departments) में, जो क्षेत्रफल और जनसंख्या में लगभग बराबर थे, विभाजित कर दिया गया। डिपार्टमेंट ज़िलों में तथा ज़िले कम्यूनों में विभाजित किये गये। इनके नाम प्राकृतिक दृश्यों जैसे पर्वत एवं नदी आदि पर रक्खे गये। इन सब के पदाधिकारी सम्राट की ओर से नियुक्त न होकर सर्वसाधारण की ओर से निर्वाचित किये जाते थे। इसी प्रकार पेरिस के ६० ज़िले, जिनका उल्लेख पहले हो चुका है, हटा दिये गये तथा उनके स्थान पर नगर को ४८ वार्डों अथवा सेक्शनों में विभाजित कर दिया गया। प्राचीन न्यायालय भी हटा दिये गये तथा उनके स्थान पर नवीन न्यायालय स्थापित किये गये। उनके न्यायाधीश भी दूसरे पदाधिकारियों की भाँति सर्वसाधारण की ओर से निर्वाचित किये जाते थे। दीर्घकाल से फ्रांस में कई प्रकार के क़ानून प्रचलित थे। राष्ट्रीय संविधान सभा के सदस्यों ने उनमें सुधार करने तथा उनको सुव्यवस्थित बनाने का भी प्रयत्न किया, किन्तु इस गुरुतर कार्य में नैपोलियन के समय से पूर्व सफलता प्राप्त न हो सकी।

स्थानीय शासन का सुधार

इन समस्त सुधारों से, जिनका वर्णन हुआ है, दो मुख्य बातों का पता चलता है। प्रथम यह कि राष्ट्रीय संविधान सभा के सदस्य आधुनिक प्रकार की राष्ट्रीयता के सिद्धान्त पर ज़ोर देते थे, जो फ्रांस की राज्यक्रान्ति का सबसे बड़ा वरदान था। फलतः प्रथम दो श्रेणियों के विशेषाधिकार स्थगित कर दिये गये थे एवं समाज में सबका स्तर बराबर हो गया था। प्राचीन समय के प्रान्त हटा दिये गये थे तथा नवीन प्रकार के डिपार्टमेंटों ने उनका स्थान ले लिया था। मध्ययुग का स्टेट्स जनरल राष्ट्रीय महासभा में परिवर्तित कर दिया गया एवं उसकी रक्षा के लिये राष्ट्रीय रक्षा दल नाम की सेना संगठित कर दी गई थी। इन सब बातों

राष्ट्रीयता का नवीन सिद्धांत

से प्रमाणित होता है कि फ्रांस के निवासी राष्ट्रीयता के सिद्धान्त को सब से अधिक महत्व देते थे। दूसरी बात जो उक्त सुधारों से प्रकट होती है यह है कि वे इस आवश्यक सिद्धान्त को मानते थे कि किसी भी देश का वास्तविक स्वामी वहां का राष्ट्र है न कि बादशाह अथवा व्यवस्थापिका सभा। राष्ट्र ही सब प्रकार के अधिकारों का वितरण करता है तथा वही उनको वापस ले सकता है। इस सिद्धान्त के सामने राजतन्त्र के 'ईश्वरदत्त आधार' का कोई मूल्य नहीं रहता।

१४ जौलाई सन् १७९० ई० का प्रदर्शन

राष्ट्रीय उद्भावनाओं का महान प्रदर्शन १४ जौलाई सन् १७९० ई० को किया गया। इस दिन बैस्तील विजय की जयन्ती थी। फ्रांस के निवासियों ने उसको बड़े उत्साह से मनाया। इस दिन लगभग ५० हज़ार प्रतिनिधि राष्ट्रीय संविधान-सभा, सम्राट एवं सम्राज्ञी के समक्ष एक बड़े मैदान में एकत्रित हुए। इनके अतिरिक्त वहां और भी अगणित व्यक्ति इकट्ठा हुये थे। सबों ने हाथ उठाकर अत्यन्त गम्भीरता के साथ यह शपथ ली कि 'हम सदा स्वदेश के लिये, उत्कृष्ट श्रेणी की देशभक्ति तथा प्रेम का प्रमाण देते रहेंगे।' इस बड़े उत्सव के पश्चात् फ्रांस के विभिन्न नगरों तथा ग्रामों में वेदियाँ निर्मित की गईं तथा उन पर 'मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा' खोद दी गई। इनके सामने राष्ट्रीय प्रथायें की जाने लगीं।

स्वनिश्चय का सिद्धांत

इसके पश्चात् फ्रांस के निवासी एक क़दम और आगे बढ़े एवं इस सिद्धान्त पर ज़ोर देने लगे कि जो लोग अपनी इच्छा से फ्रांस की अधीनता स्वीकार करना चाहते हैं उनका स्वनिश्चय के सिद्धान्त के अनुसार बिना किसी संकोच के स्वागत किया जायेगा। यह एक आधुनिक किन्तु खतरनाक सिद्धान्त है। इसका आजकल साधारण तौर पर अनुसरण किया जाता है। उस समय का एक ज्वलन्त उदाहरण आवीनयों (Avignon) नगर का है जो रोन नदी पर बसा हुआ था। इस पर मध्ययुग से पोप का अधिकार था। सन् १७९१ ई० में उसके निवासियों से वोटों के द्वारा यह बात निश्चत कराई गई कि वे फ्रांस के शासन के अधीन आना चाहते हैं अथवा नहीं। स्वाभाविक रूप से पोप इसके विरोध में था, किन्तु उसकी बात न मानी गई। मतदान का परिणाम फ्रांस के पक्ष में हुआ। अतएव राष्ट्रीय सभा ने आवीनयों पर अधिकार कर लिया। आधुनिक काल में इस सिद्धान्त ने अन्तर्राष्ट्रीय जगत में क्रान्ति उत्पन्न कर दी है।

ग्यारहवाँ अध्याय

सन् १७९१ ई० का संविधान

अब हम सन् १७९१ ई० के संविधान का सविस्तार वर्णन करते हैं। राष्ट्रीय संविधान-सभा के कार्यों में इसका दर्जा सब से ऊँचा है। यह भी शान्ति का एक बहुत बड़ा काम था, जो क्रांति के तूफ़ान के बीच किया गया था। इसके सम्बन्ध में कुछ बातें ऐसी भी हैं जिनका वर्णन पिछले अध्याय में किया जा चुका है। उदाहरण के रूप में मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा अथवा स्थानीय शासन का सुधार इत्यादि। किन्तु यहाँ हम पूरे संविधान का विश्लेषण करना पसन्द करेंगे जिस से उसका पूर्ण और सर्वांग चित्र हमारी आंखों के सामने आ जाये तथा हम उसके महत्व को ठीक प्रकार से हृदयंगम कर सकें।

फ्रांस के इतिहास में सन् १७९१ ई० का संविधान विशेष महत्व रखता है। इस से पूर्व किसी अन्य यूरोपीय देश में ऐसा लिखित संविधान निर्मित न किया गया था। इंग्लैंड का संविधान महत्वपूर्ण अवश्य है, किन्तु वह अलिखित है। अमेरिका का आधुनिक संविधान फ्रांस के संविधान से कुछ ही साल पूर्व निर्माण किया गया था। सन् १७८७ ई० में वह निर्मित किया गया था एवं सन् १७८९ ई० में अर्थात् उस वर्ष जब स्टेट्स जनरल का अधिवेशन हुआ था, उसको कार्य रूप में परिणित किया गया था। सन् १७९१ ई० के पश्चात् फ्रांस में कई नवीन संविधान बनाये गये, किन्तु उनके मूल सिद्धान्त अधिकतर वही थे जो इस साल निश्चित किये गये थे। यद्यपि कुछ आवश्यक बातें जो उक्त वर्ष के संविधान में सम्मिलित न की जा सकी थीं, दूसरे वर्षों के संविधानों में सम्मिलित कर दी गई।

फ्रांस का सन् १७९१ ई० का संविधान कई भागों में विभक्त किया गया है

तथा प्रत्येक भाग धाराओं में विभाजित किया गया है। इसके प्रारम्भ में मानव तथा नागरिक के अधिकारों की घोषणा (Declaration of the Rights of Man and of the Citizen) का वर्णन किया गया है। किन्तु यह वर्णन क़ानूनी भाषा में न होकर साधारण भाषा में है। जैसा कि हम बतला चुके हैं, यह घोषणा २७ अगस्त १७८९ ई० को की गई थी। अस्तु उसको क़ानूनी भाषा में उपरोक्त संविधान में सम्मिलित करना एक प्रकार से व्यर्थ ही था। इसके द्वारा मानव व नागरिक के अधिकार स्वीकृत किये गये थे। ये अधिकार कई प्रकार के हैं। उनका विशद् वर्णन गत अध्याय में हो चुका है। अतएव उन पर दोबारा प्रकाश डालने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। हाँ, संविधान के प्रारम्भ में कुछ आधुनिक अधिकार ऐसे सम्मिलित किये गये थे जिनकी घोषणा पहले नहीं की गई थी। उदाहरण के रूप में, फ्रांस छोड़कर विदेश में बसने का अधिकार, प्रार्थना उपस्थित करने का व्यक्तिगत अधिकार, छीनी गई सम्पत्ति की हानिपूर्ति पाने का अधिकार आदि। कुछ बातें ऐसी भी थीं जिनका केवल वादा किया गया था, जैसे दीन दुखियों के पोषण का क़ानून (Poor Law), शिक्षा सम्बन्धी बिल (Education Bill), राष्ट्रीय पर्व तथा सिविल कोड (Code of Civil Law) आदि। जब हम इन समस्त बातों पर विचार करते हैं तो इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उपरोक्त घोषणा से बहुत कुछ स्वीकार कर दिया था और बहुत कुछ का वचन दे दिया गया था।

आरम्भ

उपरोक्त घोषणा में मानव व नागरिक के अन्य अधिकारों के अतिरिक्त सम्पत्ति की रक्षा पर भी अधिक ज़ोर दिया गया था। जैसा कि हम बतला चुके हैं, राष्ट्रीय महासभा में सम्पत्तिधारियों का यथेष्ट प्रभाव था। वास्तव में उसके अधिकतर सदस्यों को इस बात से इन्कार न था कि वे सम्पत्तिधारियों का शासन (Plutocracy) पसन्द करते थे। इस विषय में उसके प्रसिद्ध सदस्य बाई ने अपने विचारों का प्रकाशन इन शब्दों में किया था—"हम उन श्रेष्ठ लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो किसी प्रकार का संकल्प कर सकते हैं। यदि सर्वसाधारण के हाथ में, जो अन्धे होकर चलते हैं, शासन सूत्र दे दिया जाय तो अत्यधिक हानि का डर है। यदि अंगरेज़ों और तूर्गो ने प्रतिनिधि शासन का आधार सम्पत्ति को निश्चित किया था तो उन्होंने ऐसा इसलिये किया था कि सम्पत्ति अथवा धन से लोगों की बुद्धिमानी का अनुमान किया जा सकता है।" मोने नामक सदस्य को अंगरेज़ी ढंग का सीमित शासन पसन्द था, क्योंकि उसमें सम्राट के निरंकुश व्यवहार, जागीरदारों के शासन तथा असीम स्वेच्छाचारिता का भय नहीं रहता। केवल रोबेस्पियर ही एक

शासन पद्धति

ऐसा सदस्य था जो वास्तव में प्रजातन्त्र के सिद्धान्त पर आगे बढ़ना चाहता था, किन्तु सभा में उसकी बात बहुत कम सुनी जाती थी। केवल मीराबो ही एक ऐसा व्यक्ति था जो उसकी महानता को समझता था। अस्तु उसने एक समय कहा था,—'यह नवयुवक अधिक उन्नति करेगा, क्योंकि जो कुछ वह कहता है उसमें वह विश्वास भी रखता है।'

राष्ट्रीय संविधान-सभा के सदस्यों ने शासन पद्धति के महत्वपूर्ण विषय पर यथेष्ठ विचार किया था। अन्त में दो वर्ष के वादविवाद के पश्चात् वह इस नतीजे पर पहुंचे कि फ्रांस में पुराने ढंग पर शासन क़ायम रहे, परन्तु सम्राट के अधिकार सीमित कर दिये जायँ एवं मंत्री धारा सभा के प्रति उत्तरदायी बना दिये जायँ। संविधान में बतलाया गया है कि राष्ट्र ही समस्त अधिकारों का मूल स्रोत है। उन्हें वह तीन प्रकार से प्रयोग करता है। धारा सभा के द्वारा जो उसका प्रतिनिधित्व करती हो, सम्राट के द्वारा एवं अदालत विभाग के द्वारा जिसे वह मुख्य अधिकार प्रदान करती है। इस प्रकार राजतंत्र जो फ्रांस में सदा से ही स्थापित था केवल राष्ट्रीय अधिकारों के प्रकाशन का एक साधन मात्र रह गया। इस दृष्टिकोण से बादशाहत का 'दैवी अधिकार' बिल्कुल निराधार बन गया। इसके पश्चात् संविधान में उक्त तीनों शक्तियों पर विशेष प्रकाश डाला गया है।

सन् १७९१ ई० के संविधान को रचने वालों ने फ्रांस के लिये केवल एक ही व्यवस्थापिका सभा को आवश्यक निश्चित किया था। यह दो वर्षों तक स्थापित रह सकती थी, किन्तु वह सम्राट की आज्ञा से भंग नहीं हो सकती थी। उसके सदस्यों की संख्या के विषय में यह बतलाया गया है कि उसमें ८३ डिपार्टमेंटों अथवा सूबों के ७५० प्रतिनिधि बैठेंगे। इसके अतिरिक्त कुछ सदस्य उपनिवेशों से भी आवेंगे, किन्तु उनकी संख्या के विषय में संविधान मौन है। उपरोक्त सभा का अधिवेशन मई के प्रथम सोमवार को अर्थात् स्टेट्स जनरल के प्रथम अधिवेशन की वार्षिक जयन्ती के दिन हुआ करेगा। किन्तु जब तक उसमें सदस्यों का बहुमत न हो तब तक सभा का कार्य प्रारम्भ नहीं किया जा सकता एवं बहुमत की उपस्थिति में भी यदि सदस्यों की निश्चित संख्या उपस्थित न हो तो उपरोक्त मास के अन्त तक कोई कार्य नहीं हो सकता। सदस्यों को कार्य करने तथा भाषण की स्वतन्त्रता दे दी गई थी। सभा की आज्ञा के बिना किसी भी सदस्य के खिलाफ़ फौजदारी का मुक़दमा नहीं चलाया जा सकता था।

व्यवस्थापिका सभा

व्यवस्थापिका सभा को उसी प्रकार के अधिकार दिये गये थे जो साधारणतः वैध शासन के अधीन हुआ करते हैं। संविधान में यह बात विशेष रूप से स्पष्ट

कर दी गई थी कि सम्राट उसकी स्वीकृति के बिना युद्ध या सन्धि नहीं कर सकता था। यह भी बतला दिया गया था कि सभा भवन से लगभग ४० मील की दूरी में वह न तो सेना की नियुक्ति कर सकता है और न उसे हटने की आज्ञा दे सकता है। सभा का कोई भी सदस्य मन्त्री के पद पर सुशोभित नहीं किया जा सकता और न कोई मन्त्री सभा का सदस्य हो सकता है। यह निर्णय मोन्तस्क्यू के सिद्धान्त के अनुसार किया गया था। इसका उल्लेख हमने तीसरे अध्याय में किया था। यद्यपि इतनी बात आवश्यक थी कि मंत्रियों के बैठने के लिये सभा में स्थान सुरक्षित थे, तथा उन्हें इस बात की आज्ञा भी दे दी गई थी कि वे अपने प्रमुख निश्चयों के विषय में भाषण दे सकते हैं तथा सभा की आज्ञा से अन्य विषयों पर भी अपना मत प्रकट कर सकते हैं।

सन् १७६१ के संविधान से सम्राट की स्थिति में भी ध्यान देने योग्य अन्तर हो गया। अभी तक वह 'फ्रांस का सम्राट' कहलाता था। अब वह 'फ्रांस निवासियों का सम्राट' कहलाने लगा। कारण कि फ्रांस अब उसकी जागीर के समान न था। अब उसे अन्य कर्मचारियों की भांति वेतन भी मिलने लगा। उसके लिये शासन का अधिकार कौटुम्बिक था किन्तु नये संविधान से यह निर्णय किया गया कि वह क़ानून के नाम पर शासन करता है। उसका व्यक्तित्व पुनीत तथा पावन है। उसको कोई हानि नहीं पहुंचा सकता। उसकी व्यक्तिगत सेना में १८ हज़ार से अधिक सैनिक न होंगे। यह राष्ट्रीय सेना तथा राष्ट्रीय रक्षा दल से लिये जायेंगे।

सम्राट की स्थिति

सम्राट के अधिकार भी प्रकट रूप से कम कर दिये गये थे। वह न अपनी ओर से कर ही लगा सकता था और न युद्ध अथवा सन्धि ही कर सकता था। क़ानून को रद्द करने का अधिकार भी उससे ले लिया गया था। अब वह केवल कुछ काल के लिये राष्ट्रीय धारा सभा द्वारा स्वीकृत बिल अथवा उसकी आज्ञा को कार्यरूप में परिणित किये जाने से रोक सकता था। स्थानीय शासन, सेना, समुद्री बेड़ा एवं पादरी इत्यादि उसकी अधीनता से हटा लिये गये थे। उसके मन्त्री अन्य सदस्यों की भांति धारा सभा के कार्यों में भाग न ले सकते थे। अस्तु हम कह सकते हैं कि फ्रांस में सन् १७८६ ई० से सन् १७६१ ई० तक के थोड़े समय में सम्राट की शक्ति का प्रकट रूप से ह्रास हो गया था।

मंत्रियों के उत्तरदायित्व तथा उनके अधिकारों के विषय में राष्ट्रीय संविधान-सभा में अधिक समय तक वादविवाद हुआ तथा सदस्यों ने काफ़ी गरमी दिखलाई। यह एक विचित्र बात है, कि उन्होंने सम्राट की स्थिति को तो वैधानिक सिद्धान्त के अनुसार निश्चित कर दिया था, किन्तु वे उसी सिद्धान्त के अनुसार मंत्रियों के

मंत्रियों का उत्तरदायित्व

अधिकारों को निश्चित करने से पीछे हटते थे । अतएव उन्होंने इस बात को तो स्वीकार कर लिया था कि मंत्री सम्राट के स्थान पर राष्ट्रीय धारा सभा के प्रति उत्तरदायी होंगे, किन्तु उन्होंने सम्राट को यह आदेश न दिया था कि वह उपरोक्त सभा से मंत्री नियुक्त करे । उनके सम्मुख इंग्लैंड का प्रकट उदाहरण था, किन्तु उन्होंने उससे लाभ न उठाया एवं मौन्तस्क्यू के सिद्धान्त के अनुसार विधान-मंडल से कार्यपालिका को पृथक रक्खा । इसका कारण यह मालूम होता है कि विगत शासनों के मन्त्रियों के उदाहरण उनको स्मरण थे । उनका विचार था कि यदि धारा सभा के सदस्यों को मन्त्री बनने की आज्ञा दे दी जायेगी तो वे अतुलनीय धन संचित कर लेंगे एवं उनका चरित्र बिगड़ जायेगा । अतएव उन्होंने इस बात को स्पष्ट कर दिया था कि उपरोक्त सभा का कोई भी सदस्य, न्यायाधीश अथवा अदालत का जूरीमैन अपने पद से पृथक होने के २ वर्ष पश्चात् सम्राट की ओर से कोई पद अथवा धन स्वीकार कर सकता है, इसके पूर्व नहीं।

उपरोक्त नियम, जो ७ नवम्बर सन् १७८९ ई० को रचा गया था, । वास्तव में केवल एक ही सदस्य तथा राजनीतिज्ञ को अपने महत्वाकांक्षाओं से दूर रखने के लिये निर्मित किया गया था। इसका नाम मीराबो था । सदस्यों को भय था कि कहीं वह मन्त्री के पद पर सुशोभित होकर दूसरा वालपोल अथवा पिट न बन जाय। परिणाम यह हुआ कि मीराबो गुप्त रीति से सम्राट को परामर्श देने पर राज़ी होगया। उसकी ओर से उसे धन भी प्राप्त हुआ एवं उसका बीस वर्ष पुराना ऋण भी चुका दिया गया, किन्तु सम्राट ने उसके परामर्श तथा उपदेशों का पालन न किया । यदि सम्राट को सदस्यों में से मन्त्री नियुक्त करने की आज्ञा दे दी जाती तथा वह उसके लिये तत्पर हो जाता तो इसमें सन्देह है कि मन्त्री दोनों को सन्तुष्ट करने में सफल मनोरथ होते । कारण यह था कि सम्राट और सभा दोनों एक दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते थे । ऐसी दशा में फ्रांस में इंग्लैंड की तरह ठीक प्रकार से शासन चलना कठिन ही था।

संविधान के अन्तिम भाग में न्यायपालिका, स्थल व जल सेना, कर तथा अन्य देशों से सम्बन्ध आदि पर प्रकाश डाला गया है। स्थल तथा जल सेना में फ्रांस की नियमित सेना, जल बेड़ा, देश के अन्तर्गत कार्य में आने वाली सेनायें एवं राष्ट्रीय रक्षा दल आदि सम्मिलित थे। प्रथम दो की आन्तरिक सेवाओं पर रोक लगा दी गई।

स्थल व जल सेना

राष्ट्रीय रक्षा दल को इस बात की आज्ञा दे दी गई कि वह अपने पदाधिकारियों का निर्वाचन स्वयं करे तथा परेड (क़वायद) के पश्चात् वर्दी धारण करे अथवा न करे। इसके साथ साथ उसकी क़वायद आदि पर भी ज़ोर दिया गया है । इस

सम्बन्ध में एक विशेष कानून यह बना दिया गया था कि कोई भी शस्त्रधारी व्यक्ति नागरिक सभा के वादविवाद में भाग नहीं ले सकता। इसके निर्माण किये जाने का विशेष उद्देश्य यह था कि उसके सदस्यों ने गुप्त रीति से अपनी रक्षा के लिये खंजर एवं पिस्तौल आदि का लाना प्रारम्भ कर दिया था। उक्त क़ानून के रचे जाने के पश्चात् भी वे इस बात से डरते रहे कि कहीं सेना की सहायता से उनकी स्वाधीनता का अन्त न कर दिया जाय।

स्थानीय शासन तथा नागरिकता का अधिकार

सन् १७६१ ई० के संविधान में स्थानीय शासन के वे समस्त सुधार सम्मिलित हैं जिनका उल्लेख गत अध्याय में किया गया है। इसके अतिरिक्त उस में उसके तथा राष्ट्रीय विधान-सभा के लिये वोट देने की योग्यता पर भी काफ़ी प्रकाश डाला गया है। जैसा कि हमने पहले बतलाया था, मध्ययुग के प्रान्त हटा दिये गये थे एवं उनके स्थान पर ८३ डिपार्टमेंट स्थापित कर दिये गये थे। प्रत्येक डिपार्टमेंट छोटे भागों में विभाजित किया गया। अन्तिम भाग कम्यून अथवा म्यूनिस्पेलटी का था। इन सब के अध्यक्ष वहां के निवासियों की ओर से निर्वाचित किये जाते थे। संविधान में विदेशों के निवासियों को फ्रांस का नागरिक बनने के लिये कई प्रकार की सुविधायें दी गई थीं। यह एक ऐसी विशेषता है जो आधुनिक प्रथा के बिल्कुल विपरीत है। किसी विदेशी का पुत्र जो फ्रांस में जन्मा है अथवा किन्हीं भागे हुये पादरियों तथा मोंक आदि के उत्तराधिकारी नागरिकता के अधिकारी समझे जावेंगे। इसके अतिरिक्त कोई विदेशी भी, जो फ्रांस में भूमि मोल ले लेता है अथवा किसी फ्रांसीसी महिला से विवाह कर लेता है अथवा किसी कार्यालय अथवा फार्म का मालिक है पांच वर्ष के निवास के पश्चात् नागरिकता का अधिकारी समझा जायेगा। विशेष परिस्थितियों में सभा अन्य विदेशियों को भी, जो फ्रांस में निवास करना चाहते थे, उपरोक्त अधिकार प्रदान कर सकती है किन्तु प्रत्येक दशा में विदेशियों के लिये आवश्यक था कि नागरिकता ग्रहण करने के लिये देशभक्ति तथा वफ़ादारी की शपथ लें। वे फ्रांस निवासियों की सम्पत्ति को उत्तराधिकार में प्राप्त कर सकते थे तथा सम्पत्ति का क्रय-विक्रय कर सकते थे। उन्हें धार्मिक स्वतन्त्रता भी प्रदान कर दी गई थी।

वोट देने की योग्यता इस ढंग से निश्चित की गई थी कि उस से मध्यम श्रेणी के लोगों ने सब से अधिक लाभ उठाया। निर्धन लोग इस श्रेष्ठ अधिकार से वंचित रहे। इसके लिये सीएयेज़ तथा तूरे (Thouret) ने सबसे अधिक

प्रयत्न किया था। तूरे रूओं नगर का बैरिस्टर तथा विधान-कमेटी का रिपोर्टर था।

वोट देने की योग्यता

इन लोगों के प्रयत्न से वोट देने का अधिकार केवल उन नागरिकों तक सीमित रक्खा गया जो स्थानीय परतालिका के अनुसार तीन दिन की मज़दूरी के बराबर प्रत्यक्ष कर देते थे। इस प्रकार बालिग़ नागरिकों का लगभग एक तिहाई भाग वंचित कर दिया गया। अधिकार प्राप्त नागरिक सीधे विधान-सभा के लिये प्रतिनिधियों का निर्वाचन न कर सकते थे, वरन् जैसा कि स्टेट्स जनरल के निर्वाचनों के समय हुआ था, ये लोग निर्वाचन करने वाली सभा को निर्वाचित करते थे तथा यह सभा राष्ट्रीय विधान-सभा के लिये प्रतिनिधि निर्वाचित करती थी। दोनों प्रकार की सभाओं की सदस्यता के लिये दस दिन की मज़दूरी के बराबर कर देना आवश्यक था। इस प्रकार पांच सौ में केवल एक नागरिक उसका सदस्य होने का विचार कर सकता था। राष्ट्रीय विधान-सभा के सदस्य केन्द्रीय सभा की सदस्यता के लिये अधिक कठिन बन्धन निश्चित करना चाहते थे, किन्तु रोबेस्पेयर के विरोध के कारण वे कृतकार्य न हो सके। एक महत्वपूर्ण बात यह हुई कि यहूदियों को प्रथम बार नागरिक होने तथा निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार दिया गया था।

सन् १७९१ ई० के संविधान की कुछ अन्य विशेषतायें भी हैं जिनका केवल उल्लेख कर देना ही काफ़ी होगा। उदाहरण के रूप में, सन् १७९० ई० की

अन्य विशेषतायें

धार्मिक व्यवस्था, जिसका स्पष्ट वर्णन गत अध्याय में किया गया है, उसमें सम्मिलित नहीं की गई थी किन्तु विवाह की प्रथा को पादरियों की संरक्षता से निकाल कर उसे विवाह-प्रसंविदा का स्वरूप दे दिया गया था। इसके पश्चात् स्त्रियों के अधिकारों में अतिरिक्त वृद्धि की गई, किन्तु वे मतदान के अधिकार से सदा वंचित रहीं। सन् १७९४ ई० के पूर्व उपनिवेशों के हब्शी दासों को भी यह अधिकार प्रदान न किया गया था। इस वर्ष फ़र्वरी मास में कन्वेंशन ने यह निर्णय किया कि काले और गोरे चमड़े वाले दोनों 'स्वतन्त्र जन्म लेते हैं तथा स्वतन्त्र रहकर जीवन व्यतीत करते हैं। उनके अधिकार भी बिल्कुल समान होते हैं।' स्वतन्त्रता तथा समानता के अधिकार प्राप्त हो जाने के कारण घर के अन्दर वैमनस्य के कुछ कारण दूर हो गये। अभी तक किसी पत्नी को अपने पिता अथवा पति के अधीन रहना पड़ता था। नवीन संविधान से उसका स्तर पति के समान हो गया एवं वह उसके साथ घर की सम्पत्ति का प्रबन्ध करने की अधिकारी हो गई।

सन् १७९१ ई० के फ्रांसीसी संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि

उसके रचयिताओं ने उस में कुछ ऐसी कठिन शर्तें सम्मिलित कर दीं थीं कि सन् १८०१ से पूर्व उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हो सकता था। यह एक बड़ी ही विचित्र बात है। इसकी तुलना हम ब्रिटिश संविधान से कर सकते हैं जिसका न कोई आदि है और न कोई अन्त। पार्लमेंट साधारण ढंग से उसमें कायापलट परिवर्तन कर सकती है। ऐसी दशा में आवश्यक था कि फ्रांस के संविधान में अवैधानिक ढंग से परिवर्तन किया जाय। अतः जब उसके विरोधियों की संख्या अत्यन्त अधिक हो गई तो उन्होंने एक नवीन क्रांति के द्वारा उसको ज़बर्दस्ती बदल दिया।

बारहवां अध्याय

सोलहवें लूई की गद्दारी

अक्टूबर सन् १७८९ ई० और जून सन् १७९१ ई० के बीच क्रांति की प्रगति धीमी हो गई थी। प्रथम माह में सोलहवां लूई, उसके कुटुम्बी एवं राष्ट्रीय विधान-सभा के सदस्य पेरिस चले आये थे। द्वितीय मास में सम्राट ने फ्रांस तथा नये संविधान के विरुद्ध ग़द्दारी करके उत्तरीय-पूर्वीय दिशा में भाग जाने का प्रयत्न किया था। इन गम्भीर घटनाओं के बीच उपरोक्त सभा के सदस्य सुधार करने तथा संविधान को निर्मित करने में संलग्न रहे। किन्तु जो कुछ उन्होंने किया था उस से वे स्वयं संतुष्ट न थे। गत दो वर्षों के परिश्रम व काम से वे इतना अधिक थक गये थे कि उन में से बहुत से व्यक्ति घर लौटने के इच्छुक थे। ऐसा प्रतीत होता था कि क्रांति का आन्दोलन कीचड़ में फँस गया है। उधर दूसरी ओर उसके विरुद्ध आन्दोलन बराबर ज़ोर पकड़ रहा था। जैसा कि हमने दसवें अध्याय में संकेत किया था, उत्तरीय-पूर्वीय दिशा में युद्ध की काली घटायें उमड़ रही थीं। भागे हुये अमीर, पादरी एवं सम्राट के सम्बन्धी अन्य देशों के सम्राटों को यह बात हृदयंगम कराने का प्रयत्न कर रहे थे कि सोलहवें लूई तथा मेरी ऐन्तोयनेत का मामला उनका निजी मामला है। अस्तु यदि फ्रांस में राजतंत्र का अन्त कर दिया जायेगा तो उनके सिंहासन भी सुरक्षित न रह सकेंगे। फ्रांस में स्वयं वे पादरी, जिन्होंने शपथ लेने से इन्कार कर दिया था, विद्रोह की आग भड़काने का प्रयत्न कर रहे थे। सोलहवां लूई तथा उसकी स्त्री ग़द्दारी पर तुले हुये थे।

सम्राट के भाग जाने की योजनायें

सन् १७८९ ई० के ग्रीष्म ऋतु में सोलहवें लूई ने पराजय स्वीकार न की थी। एक दृढ़ संकल्पी व निष्ठावान पुरुष की भांति क्रांतिकारियों का नेतृत्व न करके वह एक निर्बल संकल्प वाले व ज़िद्दी व्यक्ति की भांति उनसे दूर भाग जाने का प्रयत्न कर रहा था। उसके मित्रों का मत था कि ५ अक्टूबर को पेरिस न आकर उसे किसी प्रान्त में चला जाना चाहिये था। स्वीडन के बादशाह ने अपने राजदूत के द्वारा यह उपदेश दिया था कि उसे अपने दरबार के साथ

फ़ौंतेनब्लो को चला जाना चाहिये। पेरिस में आने के केवल दस दिन पश्चात् मीराबो ने लूई को यह उपदेश किया था कि उसे मेट्स के समान किसी सीमा पर बसे हुये नगर की ओर भागने का प्रयत्न न करना चाहिये। यदि वह ऐसा करेगा तो उस से यही प्रकट होगा कि वह भागे हुये लोगों तथा किसी अन्य देश के सम्राट से मिला हुआ है। मीराबो के मत में इस काम के लिये रूओं नगर अधिक अनुकूल था। वह पेरिस के निकट था। उसके निवासी धनी मानी तथा सम्राट एवं पोप के प्रतिपक्षी थे। वहां से पेरिस के लिये अनाज भेजा जाता था। सब से बड़ी बात यह थी कि वह समुद्र के सन्निकट था। यदि सम्राट अपने प्रयत्न में असफल भी होता तो वह सरलता से किसी अन्य देश को जा सकता था। वास्तव में यदि लूई मीराबो के उपदेश को मान लेता एवं रूओं में आकर राष्ट्रीय धारा सभा को भी वहीं बुलाकर उसका पथप्रदर्शन करता तो क्रांति का रूप ही बदल जाता। जब सम्राट तथा उसके सम्बन्धियों ने उसके उपदेश को ठुकरा दिया तो मीराबो ने नैकर तथा लाफ़ेयत को अपनी ओर करने का प्रयत्न किया, किन्तु वह सफल न हुआ। ७ नवम्बर के कानून ने उसकी आशाओं पर पानी फेर दिया। फिर भी वह शांत न बैठा।

सम्राट के मित्रों ने उसके भाग जाने के लिये अन्य योजनायें भी उपस्थित कीं, किन्तु उसने उनके अनुसार भी कार्य न किया। मीराबो उसको तथा लाफ़ेयत आदि को लिखता रहा, किन्तु उसका प्रयत्न बराबर असफल प्रमाणित हुआ। लूई सभी प्रकार की योजनाओं पर कार्य करने को तत्पर रहता था, किन्तु उसमें इतनी योग्यता न थी कि वह किसी भी योजना पर पूर्ण रूप से विचार करता तथा उसको कार्य रूप में परिणित करने के लिये पूरा प्रयत्न करता। एक वर्ष इसी प्रकार व्यतीत हो गया। इस बीच राष्ट्रीय विधान-सभा सुधारों के कार्य में संलग्न रही। अब सन् १७६० ई० की ग्रीष्म ऋतु आई। उसके साथ साथ राजनैतिक वातावरण में भी परिवर्तन हुआ। दिसम्बर मास तक सम्राट ने पादरियों के सिविल संविधान तथा शपथ लेने के कानून को भी स्वीकृति दे दी थी। वह इतना निर्बल संकल्प का व्यक्ति था कि वह ऐसे कार्यों को जिन से वह घृणा करता था रोक न सकता था। वह इतना जिद्दी था कि उससे यह कहे बिना भी न रहा जाता था कि वह उन कार्यों के विरुद्ध है। कभी वह शपथ लेने वाले पादरियों से इस प्रकार व्यवहार करता मानो वे सरकारी पदाधिकारियों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं थे। कभी वह उनकी ओर पीठ कर लेता, जिस से यह प्रकट होता कि वह उनसे घृणा करता है। इस प्रकार की बातों से सम्राट बदनाम हो गया एवं शपथ न लेने वाले पादरियों के प्रति

सम्राट की अपकीर्ति

सर्वसाधारण का विरोध बढ़ गया। पेरिस के निवासियों के दबाव से उसे कुछ मंत्रियों को पदच्युत करना पड़ा। नैकर इस से भी पूर्व फ्रांस त्याग कर चला गया था। जिस तूफ़ान के उत्पन्न करने में उसने विशेष रूप से सहायता दी थी, वह उस से बचकर निकल गया था। इस सम्बन्ध में उसके एक मित्र ने लिखा था,—"सभी वर्गों के लोग उसे गाली देते हैं। जेनीवा के फ्रांसीसियों में कोई भी ऐसा नहीं है जो उसके घर में क़दम रखना पसन्द करे।"

ख़तरनाक ज़माना, जनवरी–जौलाई १७९१

सम्राट की अपकीर्ति के साथ साथ राष्ट्रीय संविधान-सभा के लिये भी ख़तरा बढ़ रहा था। विशेषतया जनवरी सन् १७६१ ई० से जौलाई सन् १७६१ ई० तक का समय उसके लिये बड़ा ख़तरनाक प्रमाणित हुआ। नैकर के चले जाने के अतिरिक्त उसे अन्य कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा। प्राचीन अदालतें जो हटा दी गई थीं पुनरोद्धार के लिये प्रयत्नशील थीं। नये कानूनों के कारण व्यापारी वर्ग कठिनाई में थे। प्रान्तों में कुव्यवस्था फैली हुई थी। पादरी विद्रोह करने पर तुले हुये थे। अगणित दूकानें और कारखाने बन्द कर दिये गये थे। फ्रांस के अधिकतर निवासी राजनैतिक वातावरण से दूर रहकर अपने नित्य प्रति के कार्यों में व्यस्त होना चाहते थे। देमूलैं अपने समाचारपत्र के द्वारा लोगों को बहका रहा था एवं मारा शीशों का बलिदान मांग रहा था। चारों ओर से उपरोक्त सभा के विरुद्ध शिकायतें आ रही थीं। कोई कहता था कि वह आवश्यकता से अधिक आगे बढ़ चुकी है। कोई कहता था कि वह आवश्यकता के अनुसार आगे नहीं बढ़ी है। सभा में नरम व गरम दल वालों के बीच ज़ोरदार मुक़ाबले आरम्भ हो गये थे। कुछ नरम दल वाले सदस्य घर चले गये थे। इन बातों से सभा की शक्ति कम हो गई थी। सन् १७६१ ई० में उसके अध्यक्ष मीराबो की मृत्यु हो गई। इस से उसकी शक्ति में विशेष रूप से कमी होगई।

मीराबो की मृत्यु २ अप्रैल १७९१

मीराबो के जीवन वृतान्त पर हम चौथे अध्याय में पर्याप्त प्रकाश डाल चुके हैं। इस क्रम में हम उन दोष और गुणों का भी उल्लेख कर चुके हैं जो उसके चरित्र में पाये जाते थे। अतः उनकी पुनरावृति करने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। अवश्य हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि जो स्थान उसने रिक्त किया था उसका भरना कठिन था। जितने महान् व्यक्ति उस समय तक क्रांति के समय में हुये थे उन सब में भी मीराबो का स्थान सब से ऊँचा था। इस विषय में सीएयेस भी उसकी समता नहीं कर सकता। मीराबो किसी सिद्धान्त का दास न था। न वह उन लोगों में से था जिनका कार्य केवल योजना निर्माण करना

तथा आकांक्षाओं को बनाना होता है। वरन् वह एक दूरदर्शी, स्पष्ट दृष्टिकोण रखने वाला तथा गम्भीर राजनीतिज्ञ था जो समय देखकर काम करता था। यदि वह कभी मेरी ऐन्तोयनेत की प्रशंसा के पुल बांधता था तो कभी सर्वसाधारण को प्रशंसा के द्वारा आकाश पर उठा लेता था। फ्रांस के निरंकुश शासन के वह बिल्कुल खिलाफ था, किन्तु सम्राट का मित्र और सहायक था। धारा सभा में केवल वही एक ऐसा व्यक्ति था जो वैधानिक राजतंत्र का सबसे अधिक समर्थक था और जो वास्तव में सम्राट तथा उपरोक्त सभा के बीच सदा के लिये सुन्दर सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था। उसने फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था की जड़ों को हिला दिया था, किन्तु वह उनको बिल्कुल नष्ट करने में सफल न हो सका था। नवीन फ्रांस का वह एक महान् नेता था, किन्तु वह उसको आगे न बढ़ा सका था। जब उसका देहावसान हुआ तो पेरिस में तीन दिनों तक शोक छाया रहा। उसकी मृत्यु का राष्ट्रीय धारा सभा के सदस्यों तथा सम्राट के प्रतिपक्षियों को समान शोक हुआ था। उसके शव के साथ सभी प्रकार और सम्प्रदाय के व्यक्ति थे। यदि वह कुछ काल तक और जीवित रहता तो सम्भव था कि वह राजतंत्र को स्थापित रखने और क्रांति को उग्रवादियों के आतंक से बचाने में सफल मनोरथ हो जाता।

मीराबो की मृत्यु के कारण सोलहवें लूई के मार्ग से एक शक्तिशाली रोक हट गई। वह सदा उसे ठीक मार्ग पर चलने का उपदेश देता था, किन्तु सम्राट उसकी योजनाओं के महत्व को न समझता था। उसने फ्रांस से भाग जाने का दृढ़ संकल्प कर लिया था। मीराबो की मृत्यु को अभी तीन माह भी न हुये थे कि एक दिन पेरिस में यह समाचार प्रसिद्ध हुआ कि सम्राट अदृश्य होगया है। यह बात २१ जून की है। बाई, उसकी म्यूनिस्पेलिटी एवं राष्ट्रीय सभा के सदस्यों ने इस बात पर पर्दा डालने का प्रयत्न किया, किन्तु पेरिस के निवासी उनकी बातों में आने वाले न थे। इन तीनों में से कोई भी इस बात को स्वीकार करने के लिये तैयार न था कि लूई उनको बेवकूफ बनाकर अदृश्य होगया है, किन्तु पेरिस के निवासी वास्तविकता से परिचित थे। वे बहुत अच्छी तरह जानते थे कि लूई को किसी ने पथभ्रष्ट नहीं किया, वरन् वह अपनी इच्छा से अदृश्य होगया है, और शीघ्र ही एक शक्तिशाली सेना के साथ लौटेगा एवं उसकी सहायता से क्रांति के कार्यों को समाप्त कर देगा। इस समाचार तथा युद्ध के भय ने पेरिस के निवासियों को राजतंत्र का कठोर शत्रु बना दिया एवं वे प्रजातंत्र की दुहाई देने लगे। मार्गों में जो शाही चिन्ह थे वे सब नष्ट कर दिये गये। 'सोलहवें

सम्राट का अदृश्य होना, २० जून १७९१ ई०

लूई का पुल' यह नाम बदल कर 'राष्ट्रीय पुल' कर दिया गया। मारा चिल्लाने लगा कि फ्रांस की सुरक्षा तभी हो सकती है जब वहाँ एकशास्ता का शासन स्थापित कर दिया जाय। कार्दीलियर क्लब (Cordelier Club) ने यह घोषणा प्रकाशित की कि कोई भी व्यक्ति जो फ्रांस की सीमा, स्वतन्त्रता एवं संविधान पर आक्रमण करेगा, मौत के घाट उतार दिया जायेगा।

इस बीच में सोलहवाँ लूई एवं उसके कुटुम्बी स्वाधीनता प्राप्त करने का आधा मार्ग तय कर चुके थे। २० जून की संध्या को वे वेष बदल कर राजप्रासाद से निकल गये थे और अब जाली आज्ञापत्र लेकर एक गाड़ी में पूर्व की ओर बढ़ रहे थे। उनका सबसे बड़ा सहायक स्वीडन के सम्राट का एक सेनानायक काऊंट दी फ़र्सन (Count de Ferson) था। यह मेरी ऐन्तोयनेत के विशेष मित्रों में से था तथा उसके पास बराबर आता जाता था। उसी ने सम्राट के परिवार को पेरिस से निकालने का प्रबन्ध किया था। इस योजना पर, जिसको व्यवहारिक रूपरेखा दी जा रही थी, काफ़ी विचार कर लिया गया था। मार्ग में स्थान स्थान पर सेना दल नियुक्त कर दिये गये थे, किन्तु उन्हें यह न बतलाया गया था कि उन्हें सम्राट की रक्षा का कार्य सौंपा गया है। अस्तु मार्ग में कुछ ऐसी आकस्मिक परिस्थितियां उपस्थित हुईं कि सम्राट निर्दिष्ट स्थान तक न पहुंच सका। सैंत मेनीहोल्ड (Sainte-Menehould) के पड़ाव पर जब घोड़े बदले जा रहे थे तो उसके अधिकारी जीन बेप्टिस्ट द्रूये (Jean Baptiste Drouet) ने सम्राट को पहिचान लिया। उसने तुरन्त कम्यून को सूचना दी। कम्यून ने तुरन्त उसे तथा एक अन्य व्यक्ति को सम्राट के परिवार को बंदी करने को रवाना किया। ये दोनों शीघ्र से शीघ्र सीधे मार्ग से वेरिनीज़ (Verennes) के स्थान पहुंच गये, जो दो पड़ाव आगे था। वहां पहुंच कर उन्होंने एक सराय के स्वामी तथा उसके दो अतिथों की सहायता से मार्ग रोक दिया तथा सम्राट की गाड़ी को आगे न बढ़ने दिया। सैनिक अफ़सर बूये (Bouille) और उसके अश्वारोही इस स्थान के समीप ही थे, किन्तु उन्हें सम्राट के भागने का पता न था।

राष्ट्रीय महासभा ने उसे स्थगित कर दिया, २६ जून १७९१ ई०

२५ जून को सम्राट का परिवार राष्ट्रीय रक्षा दल की सुरक्षा में पेरिस लाया गया। सब लोग शान्तिपूर्वक उसका तमाशा देखते रहे। यह आज्ञा पहले ही प्रकाशित कर दी गई थी कि कोई भी व्यक्ति जो सम्राट का अभिवादन ताली बजाकर करेगा वह पीटे जाने का अधिकारी होगा परन्तु जो व्यक्ति उसका अपमान करेगा वह फांसी पर लटका दिया जायेगा। सोलहवें लूई का भाई काऊंट आफ प्रोवांस (Count of Provence)

जो उसी दिन भागा था, दूसरे मार्ग से ब्रूसेल्ज़ पहुंच गया था। बूये भी बाह्य सहायता प्राप्त करने के लिये सीमा पार कर चुका था। कोई भी व्यक्ति जिसके आंखें थीं भली भांति कह सकता था कि सम्राट के परिवार तथा उसके साथियों ने स्वदेश एवं संविधान के साथ ग़द्दारी की है। पेरिस के निवासियों का कहना था कि भाग जाने के प्रयत्न से लूई ने यह प्रमाणित कर दिया है कि वह राजसिंहासन से वंचित किये जाने का अधिकारी है। यदि महासभा उसे कोई अन्य दंड देना नहीं चाहती तो उसके लिए यही दंड काफ़ी होगा कि वह राजसिंहासन से वंचित कर दिया जाय। किन्तु महासभा के सदस्य इतना बड़ा जोखिम मोल लेने को तैयार न थे। उन्होंने २६ जून को सम्राट को केवल स्थगित कर दिया। इसके अतिरिक्त वे उसे कोई अन्य दण्ड देने के लिये तत्पर नहीं हुये। रोबेस्पेयर एवं ग्रेग्वार व्यर्थ ही चिल्लाते रहे कि सम्राट ने फ्रांस से अदृश्य होने का प्रयत्न करके यह प्रमाणित कर दिया है कि वह कड़े से कड़ा दण्ड दिये जाने का अधिकारी है, किन्तु सीएयेस और बारनाव इसके विरुद्ध थे। वे इस बात पर ज़ोर दे रहे थे, कि यदि सम्राट को सिंहासनच्युत कर दिया जायेगा तो संविधान को दोबारा बनाना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त लोगों की सम्पत्ति भी खतरे में पड़ जायेगी। इन युक्तियों के सामने उग्रवादियों का कुछ बस न चल सका। अस्तु १५ जौलाई को उक्त महासभा ने यह तय कर दिया कि सम्राट को किसी प्रकार की हानि न पहुंचाई जाय, किन्तु उसके साथियों को, जिन्होंने उसे वेरिनीज़ तक निकल जाने में सहायता दी है, अवश्य दंड मिले। लेकिन यह सब अर्थात् प्रोवांस, बूये, ब्रेतूल तथा फ़र्सन इत्यादि इस समय तक महासभा की पहुंच के बाहर हो चुके थे।

प्रकट है कि सोलहवें लूई के भागने का प्रथम परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रीय संविधान-सभा ने उसे स्थगित कर दिया। इसके अतिरिक्त उसके अन्य परिणाम भी हुये। सम्राट का सम्मान तथा उसकी शान व प्रतिष्ठा सब धूल में मिल गई। उसने यह प्रमाणित कर दिया था कि वह केवल भाग जाने वाला व्यक्ति ही नहीं है, बल्कि वह सब से बड़ा देशद्रोही भी है। उसने एक अतिरिक्त उद्दण्डता की थी। अदृश्य होने के समय वह एक पत्र छोड़ गया था जिसके द्वारा उसने उन सब क़ानूनों को रद्द कर दिया था जिन पर उसने स्वाधीनता खोने के पश्चात् हस्ताक्षर किये थे। ऐसी दशा में आवश्यक था कि लोग राजतंत्र को हटाकर प्रजातंत्र स्थापित करने का प्रयत्न करें। यदि सच पूछिये तो सितम्बर सन् १७९२ ई० का गण-राज्य जून १७९१ ई० के भागने ही की प्रतिक्रिया थी। लूई के भागने का एक यह भी विशेष परिणाम हुआ कि उसके कारण युद्ध का

सोलहवें लूई के भागने के अन्य परिणाम

घटित होना आवश्यक हो गया। मेरी एन्तोयनेत के भाई तथा यूरोप के अन्य सम्राटों के मस्तिष्क में यह बात बैठ गई कि यदि फ्रांस के सम्राट तथा उसके परिवार को स्वाधीनता प्राप्त हो सकती है तो वह केवल युद्ध के द्वारा प्राप्त हो सकती है। अतएव ल्योपोल्ड और प्रशा के सम्राट फ्रेड्रिक विलियम द्वितीय ने एक मत होकर २७ अगस्त सन् १७९१ ई० को एक विख्यात घोषणा प्रकाशित की जिसके द्वारा वे यूरोप के शासकों से सहायता के अभिलाषी हुये।

लूई के भागने से संधानीय शासन के पक्ष में जो लहर जनता में उठी थी उसका प्रथम प्रदर्शन १७ जौलाई, रविवार के दिन देखने को मिला। उदार नीति के समर्थकों तथा उग्रवादियों दोनों ने एक मत होकर यह

१७ जौलाई का प्रदर्शन

निर्णय किया कि इस दिन पेरिस के बड़े मैदान शौं-द-मार्स (Champ de Mars) में एक बड़ा प्रदर्शन किया जाय तथा सबों से राष्ट्रीय सभा के लिये एक प्रार्थनापत्र पर हस्ताक्षर कराये जायें, किन्तु बाद को प्रथम दल के कई नेता जैसे सीएयेस, लेमथ, दूपोर्त तथा बारनाव आदि अलग हो गये तथा अपने लिये उन्होंने एक पृथक क्लब क़ायम कर लिया। किन्तु उग्रवादियों ने अपने निर्णय को न बदला। जब बाई और लाफेयत को ज्ञात हुआ कि पेरिस के बड़े मैदान में एक महान् प्रदर्शन होने वाला है तो उन्होंने उसके विरुद्ध आज्ञा जारी कर दी तथा सेना-शासन भी लागू कर दिया।

अगणित लोग ऐसे भी थे जिन्हें इसका ज्ञान न था। अत: आशा के अनुसार ६ हज़ार से भी अधिक व्यक्ति वहां एकत्रित हो गये। संध्या के समय जब सभा का कार्यक्रम लगभग समाप्त हो चुका था तथा सब लोग घर लौट जाने वाले थे उपरोक्त पदाधिकारी राष्ट्रीय रक्षा दल एवं शासन के लाल झण्डे के साथ वहां आ पहुंचे और सभा को भंग होने की आज्ञा दी। जब लोग तितर बितर न हुये तो उन्होंने उन पर गोली चलवा दी। फलत: १२ मनुष्य जान से मारे गये तथा लगभग तीस या चालीस घायल हुये।

पेरिस में कुछ समय के लिये शान्ति स्थापित हो गई। देशभक्तों के क्षेत्रों में कुछ विघ्न उपस्थित हुआ। दांतों फ्रांस छोड़कर इंग्लैंड चला गया। मारा, देमूलें एवं अन्य प्रजातंत्र सिद्धान्त के सम्पादक अपने पत्र का प्रकाशन बन्द करके अदृश्य हो गये। रोबेस्पेयर का प्रार्थनापत्र से कोई सम्बन्ध न था, किन्तु उसे भी अपना पता बदल देना पड़ा। पेरिस निवासियों ने बाई और लाफेयत को उस दिन की घटना के लिये कभी क्षमा नहीं किया। उन दोनों का विचार था कि उन्होंने पेरिस को जनसमूह के शासन से बचा लिया है, किन्तु पेरिस निवासियों का विचार था कि उन्होंने ऐसे निरपराधों पर गोली चलवाई थी जो केवल एक देशद्रोही

सम्राट के विरुद्ध प्रदर्शन करने को एकत्रित हुये थे। वे १७ जौलाई के सार्वजनिक वध को अपने मस्तिष्क से कभी न निकाल सके। न उन्होंने उन पदाधिकारियों को, जो उसके लिये उत्तरदायी थे, क्षमा ही किया। इसके विषय में पेरिस के एक प्रसिद्ध पत्र ने महासभा के सदस्यों को सम्बोधित करते हुये अपने विचारों का प्रकाशन इस प्रकार किया था,—"आपके अफ़सराना रूमालों पर आपके बन्धुओं के खून का जो न मिटने वाला धब्बा है वह न तो लाल भण्डे से मिटाया जा सकता है, न मेयर के निराधार बहाने, न अध्यक्ष की बधाइयाँ एवं न म्यूनिस्पेलिटी की शाब्दिक कार्यवाहियां ही उसे मिटा सकती हैं। यह धब्बा आपके हृदयों पर लगा है। इसका धीरे कार्य करने वाला खून आपके चरित्र को बिगाड़ देगा यहां तक आप समाप्त हो जायेंगे।" लाफ़ेयत को यह शब्द उस समय अवश्य स्मरण हुये होंगे जब वह आस्ट्रिया के कारावास में पड़ा हुआ था। बाई को यह शब्द उस समय याद आये होंगे जब जनसमूह ने उसे उसी स्थान पर फांसी के लिये खड़ा किया था जहां उसने निरपराधियों का खून किया था। पेरिस की जनता उपरोक्त वधों का अर्थ खूब समझती थी। २१ जून की घटना से उस श्रद्धा की समाप्ति हो गई थी जिसे वे सम्राट के पक्ष में रखते थे। १७ जौलाई की घटना से उनका विश्वास महासभा में भी समाप्त हो गया। फ्रांस के भविष्य का भगवान ही मालिक था।

१७ जौलाई की सेवाओं के लिये राष्ट्रीय संविधान-सभा ने बाई को बधाई दी। मेरी ऐन्तोयनेत ने उसको इसलिये धन्यवाद दिया कि उसकी सेवायें राजतन्त्र के हित में थीं। उपरोक्त सभा के सदस्य तथा सम्राट के परिवार वाले दोनों ही उसके कृतज्ञ थे। ऐसा प्रतीत होता था कि दोनों के बीच किसी प्रकार का समझौता हो गया है। लूई ने संविधान के अनुसार कार्य करने की नये सिरे से शपथ ली। राष्ट्रीय सभा ने उसे दंड से उन्मुक्त कर दिया एवं जो कुलीन वर्ग के मनुष्य इत्यादि देश छोड़कर चले गये थे उन्हें भी क्षमा कर दिया। अतएव उनका लौटना प्रारम्भ हो गया। इस प्रकार की बातों से दोनों ही पक्षों का निष्कपट व्यवहार प्रकट होता है, किन्तु वास्तव में कम से कम सम्राट तथा उसकी पत्नी के विचार बिल्कुल परिवर्तित न हुये थे। वे अभी तक क्रांतिकारियों का नेतृत्व स्वीकार न करके, उत्तरी-पूर्वी दिशा में आशापूर्ण दृष्टि से देख रहे थे। जिस दिन लूई ने संविधान के अनुसार कार्य करने की शपथ ली थी, उस से केवल ६ दिन पूर्व उसकी पत्नी ने ल्योपोल्ड को यह लिखकर भेजा था,—"सैनिक शक्ति के कारण सब कुछ चौपट हो गया है एवं केवल सैनिक शक्ति ही बिगड़े हुये मामले को सुधार सकती है।" किन्तु सभा के सदस्य अब इस प्रकार की बातों में अधिक आनन्द

राष्ट्रीय संविधान-सभा का अंत, ३० सितम्बर १७९१ ई०

न लेते थे। दो वर्षों के कठिन परिश्रम के कारण वे थके हुये थे और घर लौटना चाहते थे। उन्होंने कुल मिलाकर २५ सहस्र आदेश प्रकाशित किये थे तथा एक संविधान भी रचा था। अब उन्हें अधिक श्रम असहनीय था। सितम्बर के अन्त तक नये संविधान के अनुसार राष्ट्रीय विधान-सभा के निर्वाचन समाप्त हो चुके थे एवं निर्वाचित प्रतिनिधि पेरिस में आगये थे। ये सब लोग नये थे, जो क़ानून निर्माण के कार्य से अनभिज्ञ थे। गत मई में राष्ट्रीय संविधान-सभा ने रोबेस्पेयर के ज़ोर देने पर यह क़ानून बना दिया था, कि उसका कोई भी सदस्य नई सभा का सदस्य नहीं बन सकेगा। यह उसी प्रकार का क़ानून था जो इंग्लैंड में दीर्घकालीन पार्लेमेंट ने अपने सदस्यों को सैनिक पदों से वंचित रखने के लिये बनाया था। इसका परिणाम यह हुआ कि क्रांति को आगे बढ़ाने का काम नये लोगों के कंधों पर आ गिरा एवं पुराने और अनुभवी लोग सितम्बर की अन्तिम तारीख़ को बरख़ास्त होकर अपने घरों को लौट गये। इस प्रकार उस राष्ट्रीय संविधान-सभा का अन्त हुआ जिसका प्रारम्भ सन् १७८९ ई० के स्टेट्स जनरल से हुआ था, किन्तु जिसने बाद को यह लम्बा नाम ग्रहण कर लिया था।

क्या वह अपने उद्देश्यों में सफल हुई थी?

क्या राष्ट्रीय संविधान-सभा अपने उद्देश्यों में सफल हुई थी? इस प्रश्न पर विचार किये बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते। यह एक गंभीर प्रश्न है जिसके सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों ने विभिन्न मत प्रकट किये हैं। कुछ इतिहासकारों का मत है कि उसने राष्ट्र की शिक्षा तथा उपनिवेशों के दासों के सम्बन्ध में कुछ काम नहीं किया था। यह एक बहुत बड़ा दोष है। कुछ ने यह दोष बतलाया है कि उसने देश की आर्थिक दशा को ज्यों का त्यों बिगड़ा हुआ छोड़ा था। ये तीनों बातें ऐसी हैं जिनके विषय में हम वास्तव में उसे अपराधी ठहरा सकते हैं। एक मत यह भी है कि उसने ध्वंस अधिक किया था और निर्माण कम। ऐसा अधिक ध्वंस इतने कम समय में किसी अन्य सभा ने आज तक नहीं किया। दीर्घकालीन शासन पद्धति, दीर्घकालीन प्रांत, दीर्घकालीन आर्थिक व्यवस्था, दीर्घकालीन क़ानून तथा अदालतें, दीर्घ काल का धार्मिक प्रबन्ध तथा दीर्घकालीन जागीरदारी प्रथा ये सब समाप्त कर दिये गये थे। व्यापारिक संघ (Guilds) भी तोड़ दिये गये थे एवं मज़दूरों को इस बात की मनाही कर दी गई थी कि वे किसी प्रकार की सभा न करें और न कोई परिषद् बनायें। यह सब बरबादी का काम था, किन्तु वह सर्वसाधारण के मत से बड़े गंभीर विचार विमर्श के पश्चात् किया गया था। इन सब बातों की इच्छायें 'के हे' में प्रकट

की जा चुकी थीं। एक विचारणीय बात यह भी है कि यदि ये सब नष्ट न किये जाते तो फ्रांस के आधुनिक प्रजातन्त्र तथा राष्ट्रीय राज्य का जन्म किस प्रकार होता? अस्तु हम राष्ट्रीय संविधान-सभा को इस विषय में अधिक अपराधी नहीं ठहरा सकते। विशेषकर ऐसी परिस्थिति में जब हम जानते हैं कि उसे नये फ्रांस के निर्माण के लिये केवल दो वर्षों का थोड़ा सा समय मिला था। किसी को भी इस बात की आशा न थी कि फ्रांस की राज्यक्रांति इतने तीव्र वेग से आगे बढ़ सकेगी। मीराबो इस काल का एक महान् व बुद्धिमान राजनीतिज्ञ था, किन्तु वह भी इस बात को न सोच सकता था। अगस्त सन् १७८८ ई० में उसने एक पत्र के द्वारा अपने एक मित्र पर ये विचार प्रकट किये थे कि उपरोक्त क्रांति धीरे धीरे आगे बढ़ेगी। उसने लिखा था कि "प्रथम स्टेट्स जनरल में कुव्यवस्था रहेगी, और सम्भवत: वह अधिक आगे न बढ़ सकेगा। दूसरा आगे बढ़ने के लिये अपना अधिकार स्थापित करेगा एवं तीसरा संविधान बनायेगा।" जो काम मीराबो के मत में तीन दफ़ा में होना चाहिये था, वह एक ही बार में पूर्ण कर दिया गया था। जिस कार्य में १० वर्ष लगने चाहिये थे वह केवल दो ही वर्षों में समाप्त हो गया था। इसके पूर्व कि एक सुधार को कार्य रूप में परिणित किया जाय दूसरा सुधार प्रस्तुत कर दिया जाता था।

राष्ट्रीय संविधान-सभा के सुधारों के विषय में यह भी कहा गया है कि वे केवल मध्यम श्रेणी के लोगों के लिये थे। अस्तु उन से मज़दूर वर्ग के व्यक्तियों को कुछ भी लाभ न हुआ था। १४ जोलाई एवं ६ अगस्त की गंभीर घटनाओं में इन्हीं लोगों के कारण सफलता मिली थी, किन्तु उनको क्या प्राप्त हुआ था? उनको प्राप्त हुआ था वोट देने का एक ऐसा अधिकार जिसका महत्व प्रति वर्ष बढ़ता जाता था परन्तु जिसको वे ठीक प्रकार से प्रयोग में न ला सकते थे; सभा करने तथा परिषद् बनाने पर प्रतिबन्ध; भूमि मोल लेने की एक ऐसी व्यवस्था जिस से केवल धनवानों का लाभ हो सकता था एवं शासन का एक ऐसा ढाँचा जिस में मध्यम श्रेणी के माता पिताओं के लड़के सहस्रों की संख्या में उत्तम स्थानों पर सुशोभित थे। इन दोषों को स्वीकार करने में किसी भी व्यक्ति को आपत्ति नहीं हो सकती। किन्तु इसके साथ साथ सन् १७८६ ई० के पश्चात् कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कार्य भी किये गये थे जिनसे थोड़ा बहुत लाभ सभी को हुआ था एवं जिनको हम राज्य-क्रांति की वरद भेंट कह सकते हैं। जैसे फ्रांस की दीर्घकालीन राजनैतिक तथा सामाजिक व्यवस्था की समाप्ति, सम्राट के स्थान पर राष्ट्रीय शासन, नवीन प्रकार की सामाजिक प्रतिष्ठा तथा स्थानीय शासन व न्याय-पालिका का सुधार इत्यादि।

सन् १७९१ ई० के संविधान में जो दोष थे वास्तव में उनका मुख्य कारण यह था कि मध्यम श्रेणी के लोगों ने अपने लाभ को अधिक दृष्टि में रक्खा था, किन्तु

दो अन्य बातें भी ऐसी हैं जिनका उन पर उत्तरदायित्व है। उपरोक्त विचार विमर्श में हम उनकी ओर संकेत कर चुके हैं। एक तो यह कि क्रांति का समस्त कार्य बड़ी तीव्र गति से किया गया था। दूसरे यह कि सुधारों के रचयिताओं ने विगत युग से बिल्कुल सम्बन्ध विच्छेद कर लिया था।

तेरहवां अध्याय

क्रांति के शत्रु तथा सहायक

सितम्बर सन् १७६१ ई० तक फ्रांस की राज्यक्रांति एक ऐसे स्तर पर पहुँच गई थी जिस से उसके विषय में लोग कोई निश्चित मत निर्धारित कर सकते थे। उसके विषय में एक निश्चित मत यह था कि वह बहुत तीव्र गति से आगे बढ़ी है। गत दो वर्षों के समय में फ्रांस में ऐसे आश्चर्यजनक परिवर्तन हो चुके थे जिनकी किसी को भी आशा न थी। विशेष रूप से बूरबन वंश के सम्राट की स्थिति बहुत ही शोचनीय बना दी गई थी। उपरोक्त मत के रखने वालों का विचार था कि सम्राट को बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है। अतएव वे सोलहवें लूई के लिये, जो अब बन्दी की स्थिति में था, इतना प्रेम तथा सहिष्णुता प्रकट करने लगे जितनी उन्होंने उसके भागने से पूर्व कभी नहीं दिखलाई थी। इसके विरुद्ध कुछ लोग ऐसे भी थे जो क्रांति की प्रगति तथा उसकी सफलताओं से संतुष्ट न थे। उनका विश्वास था कि जब तक राजसत्ता को हटाकर गण-राज्य स्थापित न किया जायेगा तब तक फ्रांस में उस स्वर्ग की स्थापना न हो सकेगी जिसकी वे दीर्घ काल से प्रतीक्षा कर रहे थे। मतों की यह भीषण विषमता न केवल उपरोक्त देश की राजधानी तथा अन्य नगरों और क़स्बों में प्रकट हुई, वरन् यूरोप के अन्य देशों के निवासी भी फ्रांस की राज्यक्रांति के विषय में इसी प्रकार के मतों की भीषण विषमता से वेष्ठित थे। इसकी गूंज बहुधा विधान-सभा (Legislative Assembly) के वादविवाद में सुनाई पड़ी।

क्रांति के शत्रुओं में सब से प्रथम भागे हुये अमीरों तथा पादरियों की गणना होती है। अमीर उमरा का भागना बैस्तील की विजय के बाद ही आरम्भ हो गया

था, किन्तु जबसे सम्राट वर्सेल्ज़ के स्थान पर पेरिस में रहने के लिये बाध्य किया गया था, तब से उनकी संख्या में अधिक वृद्धि हो गई थी। इसी प्रकार जब राष्ट्रीय संविधान-सभा ने पादरियों के विरुद्ध क़ानून बनाये तो बहुत से पादरी स्वदेश को नमस्कार कर के विदेशों में बस गये। ये भागे हुये अमीर तथा पादरी (Emigres) फ्रांस की उत्तरी-पूर्वी सीमा पर बड़ी संख्या में एकत्रित हो गये थे। उनका सब से बड़ा केन्द्र कोब्लेंट्स (Coblenz) था। यह नगर त्रीर के आर्चबिशप के शासन में, रायन नदी पर स्थित था। उपरोक्त आर्चबिशप होली रोमन सम्राट के निर्वाचन करने वालों में से था। इसके अतिरिक्त भागे हुये अमीर तथा पादरी अन्य नगरों में भी पाये जाते थे, जैसे ब्रूसेल्ज़, एक्सलाशापेल, वूर्म्स और तूरिन इत्यादि। वास्तव में वे उन समस्त नगरों और देशों में पहुँचे थे जहाँ से फ्रांस पर सरलता से आक्रमण हो सकता था। उनके सब से बड़े नेता सम्राट के भाई काउण्ट आफ़ आर्त्वा एवं काउण्ट आफ़ प्रोवांस थे। इसके अतिरिक्त ब्रेतूल, फ़र्सेन और बूये आदि भी उन से जा मिले थे। ये सब समाचारपत्रों, इश्तहारों और षड्यन्त्रों के द्वारा बराबर फ्रांस की राज्यक्रांति के विरुद्ध प्रयत्नशील थे। उनकी उत्कंठा थी कि किसी प्रकार फ्रांस में सन् १७८९ ई० की दीर्घकालीन व्यवस्था (Ancien Regime) लौट आवे एवं उनके खोये हुये अधिकार उनको वापस मिल जायँ।

भागे हुये अमीर तथा पादरी

भागे हुये अमीर उमरा तथा पादरियों को मेरी ऐन्तोयनेत के भाई सम्राट ल्योपोल्ड से बहुत कुछ आशा थी, किन्तु वह फ्रांस पर आक्रमण करने में शीघ्रता न करना चाहता था। यदि उसका बहनोई सोलहवाँ लूई सीमा पार करके उसके पास पहुँच जाता तो वह अवश्य ही उसकी सहायता के लिए एक शक्तिशाली सेना भेज देता। किन्तु ऐसी दशा में जब वह फ्रांस में ही था, उसे बड़े विचार विमर्श के पश्चात् कार्य करना था। सैनिक आक्रमण उसी अवस्था में सफल हो सकता था जब वह अजेय सेना के द्वारा अति तीव्रता से किया जाता। नहीं तो लूई के लिये प्राणों से हाथ धोने की आशंका थी। ल्योपोल्ड का सब से गहरा मित्र प्रशा का सम्राट फ्रैड्रिक विलियम था। उसी से मिलकर उसने पिलनिट्स नगर से एक विख्यात घोषणा प्रकाशित की थी, जिसका उल्लेख गत अध्याय में किया जा चुका है। फिर भी उसको फ्रांस के सम्राट और उसके परिवार की इतनी चिन्ता न थी जितनी पोलैंड के विभाजन करने की थी। रूस की सम्राज्ञी कैथरिन भी उसी ओर दत्तचित्त थी। इंग्लैंड के निवासी फ्रांसीसी राज्यक्रांति के विषय में भिन्न मत रखते थे। वहाँ की राजसत्ता अपने प्राचीन शत्रु के सर्वनाश का अभिनय दूर ही से देखना चाहती थी।

विदेशों के सम्राट

विशेषतया ऐसी दशा में जब कि फ्रांस के निवासी उसके ऋण को नियमपूर्वक अदा न कर रहे थे। ऐसी दशा में ल्योपोल्ड केवल स्वीडन के बादशाह गस्तेवस पर भरोसा कर सकता था। किन्तु वह फ्रांस तथा आस्ट्रिया दोनों से दूर था।

फ्रांस के अन्दर भी क्रांति के शत्रुओं की कमी न थी। इस सम्बन्ध में हमें तुरन्त सोलहवें लूई के विश्वासघात का स्मरण होता है। उसका काफ़ी अपमान होचुका था। एक बार वह स्थगित भी किया जा चुका था। तिस पर भी उसने तथा उसके साथियों ने अपनी पुरानी नीति न बदली थी। दिखलाने के लिये वे बराबर नाटक खेलते रहे, किन्तु गुप्त रूप से उन्होंने भागे हुये कुलीनों व पादरियों से पत्रव्यवहार जारी रक्खा था। विदेशों से युद्ध होने के पूर्व ही फ्रांस की सम्राज्ञी ने उसके नक़शे शत्रु के पास भेज दिये थे। अतएव जब फ्रांस की सेना का सामना शत्रु से रणक्षेत्र में पहली बार हुआ तो वे 'धोखा' 'धोखा' चिल्लाते हुये पीछे हट गये और अपने एक सेनापति को वध कर डाला। इस प्रकार की ग़द्दारी का प्रमाण फ्रांस के शपथ न लेने वाले पादरी विशेष रूप से दे रहे थे। वे फ्रांस के पश्चिमी सूबों के कृषकों में अशांति फैला रहे थे एवं उन्हें विद्रोह के लिये तत्पर कर रहे थे। इन सूबों में ब्रटेनी, पोइत्रो (ला वेंदे) एवं ऐंजू के नाम सबसे प्रसिद्ध हैं। पुराने रहन-सहन रखने के अतिरिक्त कृषक कैथोलिक धर्म के कट्टर अनुयायी थे। उनका यह भी विचार था कि फ्रांस की राज्यक्रांति नगर तथा क़स्बों के मध्यम श्रेणी के निवासियों की ओर से व्यक्तिगत लाभ के लिये की गई है। अतएव उससे कृषकों को लाभ नहीं पहुंच सकता। सन् १७६१ ई० तथा सन् १७६२ ई० में ला वेंदे में विद्रोह की आग बराबर सुलगती रही यहां तक कि उसने एक महान् विद्रोह का रूप धारण कर लिया। उक्त विवाद पर विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि क्रांति के सब से बड़े शत्रु फ्रांस ही में थे। रोबेस्पेयर के शब्दों में "वास्तव में कोब्लेंट्स फ्रांस ही में था।"

आन्तरिक शत्रु

ये सब लोग अर्थात् भागे हुये अमीर, ल्योपोल्ड व उसके मित्र तथा शपथ न लेने वाले पादरी इत्यादि फ्रांस की राज्यक्रांति तथा सन् १७६१ ई० के संविधान के शत्रु थे। उनका प्रयत्न था कि किसी प्रकार घड़ी की सुई उलटी घुमा दी जाय एवं गत दो वर्षों का लाभदायक कार्य रोक दिया जाय। उपरोक्त संविधान के लिये इन उलटी हवा चलाने वालों की तुलना में वे फ्रांसीसी अधिक खतरनाक थे जो फ्रांस से अदृश्य न हुये थे, किन्तु जिनका विचार था कि क्रांति की प्रगति अत्यन्त धीमी रही है। वास्तव में ये लोग क्रांति के सब से बड़े मित्र तथा सहायक थे। किन्तु उन्हें किसी प्रकार का

उन्मूलनवादी

राजतन्त्र भी सह्य न था। वे फ्रांस के वैध राजतन्त्र का अन्त करके गण-राज्य स्थापित करना चाहते थे तथा सन् १७९१ ई० के संविधान के स्थान पर उन्मूलनवादी सिद्धान्त (Radicalism) के अनुसार संविधान निर्मित करना चाहते थे। इस वर्ग के नेता मध्यम श्रेणी से लिये गये थे, जिसने सन् १७८९-१७९१ ई० के क्रांतिकारी परिवर्तनों के लिये सबसे अधिक प्रयत्न किया था एवं जिसने उन से सब से अधिक लाभ भी उठाया था। उनका कथन था कि सभी क्रांतियों का मूल सिद्धान्त कायापलट प्रजातन्त्र (Thorough going democracy) होना चाहिये। इस विषय में वे रूसो और अन्य दार्शनिकों के दर्शन से अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहते थे। उनमें से कुछ यह भी चाहते थे कि सभी बालिग़ नागरिकों को मतदान का अधिकार दिया जाय। कुछ चाहते थे कि शपथ लेने वाले पादरियों के लिये जो सुरक्षित अधिकार छोड़ दिये गये हैं उनको भी रद्द कर देना चाहिये। अधिकतर उन्मूलनवादियों का यह मत था कि अमीर उमरा तथा पादरियों के साथ अधिक कठोरता का व्यवहार किया जाना चाहिये।

नगरों के निर्धन तथा निम्न श्रेणी के लोग

उन्मूलनवादियों के सबसे बड़े समर्थक और सहायक पेरिस तथा अन्य नगरों के निर्धन, अशिक्षित तथा निम्न श्रेणी के लोग (Proletariat) थे। इन लोगों में १७९१-१७९२ में उतनी ही अधिक बेचैनी थी जितनी प्रान्तों के कृषकों में सन् १७८९ ई० में थी। दोनों ही की दशा में सुधार किये जाने का वचन दिया गया था, किन्तु दोनों ही को किसी न किसी सीमा तक धोखा दिया गया था। राष्ट्रीय संविधान-सभा ने द्वितीय को तो दासता (Serfdom) से स्वतन्त्र कर दिया था एवं उन्हें कुलीनों की जागीरें भी प्रदान कर दीं थीं, किन्तु उसने नगरों के मज़दूरों व अन्य गिरे हुये लोगों के लिये कोई विशेष काम नहीं किया था। सन् १७९१ ई० के संविधान से भी उन्हें कोई ख़ास फ़ायदा नहीं हुआ था। उनका विचार था, और यह विचार ठीक भी था, कि उस समय तक मध्यवर्ग के लोगों के हाथों में शासन का कार्य देकर उन्होंने केवल अपने प्राचीन स्वामियों (अमीर उमरा तथा पादरी) को हटाकर उनके स्थान पर नवीन स्वामियों को पदासीन कर दिया है। अब वे उन्मूलनवादियों की सहायता के लिये पूर्णतया तैयार थे। उन से उन्हें पूर्ण आशा थी। उन्हें विश्वास था कि इस प्रकार वे अपने हित के साथ साथ मध्यवर्ग के लोगों की भलाई भी कर सकेंगे। अतएव वे तथा उनके मित्र अर्थात् उन्मूलनवादी चाहते थे कि क्रांति बन्द न हो वरन् तीव्र गति से आगे बढ़ती रहे।

यह एक विचित्र मेल था जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है। सन्

१७९१ ई० तक ऐसा था कि तृतीय श्रेणी के लोगों ने मीराबो जैसे स्वतन्त्र विचार वाले अमीर एवं सीएयेस जैसे पादरियों के साथ मेल व एकता करके कृषक तथा मध्यवर्ग के लोगों के हित व कल्याण का प्रयत्न किया था। इसके पश्चात् मध्यवर्ग के उन्मूलनवादी नेता नगरों के मज़दूरों तथा अन्य निर्धन, अशिक्षित तथा गिरे हुये लोगों (Proletariat) से मेल करके उनके हित के लिये पूर्ण प्रयत्न करने लगे। यह सत्य है कि इस वर्ग के बहुत से नेता ऐसे भी थे जो केवल स्वार्थ को ही दृष्टि में रखते थे, किन्तु बहुत से ऐसे भी थे जो दूसरों के लिये बड़ा से बड़ा बलिदान देने को तैयार रहते थे। सन् १७९१ ई० के पश्चात् इसी प्रकार के निस्वार्थ लोगों ने उत्साह से अन्धे होकर फ्रांस में अपने सिद्धान्त के अनुसार स्वर्ग स्थापित करने का प्रयत्न किया तथा उसके लिये कठिन से कठिन विपत्ति सहन की। बहुत से नेताओं ने तो इस सत्कार्य के लिये अपने प्राणों तक की बाज़ी लगा दी।

एक विचित्र मेल

उन्मूलनवादियों का सबसे बड़ा कार्यक्षेत्र पेरिस था। इसी नगर में सम्राट का निवास था और इसी में धारा सभा की बैठक होती थी। इसके अतिरिक्त अन्य नगरों में भी उनका ज़ोर था। सन् १७९१–१७९२ ई० में उनका आन्दोलन काफी शक्तिशाली हो गया था। उनकी ओर से हज़ारों पर्चे तथा इश्तहार आदि प्रकाशित किये गये, समाचारपत्र निकाले गये तथा गन्दे तथा ओजस्वी भाषण दिये गये। कुछ क्लब तथा अन्य संस्थायें भी ऐसी थीं जिनसे उन्हें विशेष सहायता मिली। इनका आरम्भ भी इंग्लैंड के कैबिनेट के समान खानपान के कमरे से हुआ था। बहुधा ऐसा होता था कि स्टेट्स जनरल के सदस्य जब किसी होटेल अथवा जलपानगृह में भोजन करने जाते तो वे राजनैतिक समस्याओं पर वादविवाद में व्यस्त हो जाते थे। सन् १७९१ ई० तक यह प्रथा इतनी अधिक बढ़ गई कि पेरिस के प्रत्येक होटेल तथा जलपानगृह में राजनीतिज्ञ व 'देश भक्त' अथवा उग्रवादी एकत्रित होने लगे तथा गम्भीर विषयों पर वादविवाद करने लगे। इस प्रकार राजनैतिक समितियों अथवा क्लबों की नींव पड़ी।

राजनैतिक समितियां अथवा क्लब

पेरिस नगर में राजनैतिक समितियों अथवा क्लबों की संख्या में अधिक वृद्धि होने का एक विशेष कारण यह था, कि सन् १७८३ ई० की सन्धि के पश्चात् फ्रांसीसी जीवन तथा रीति रिवाज पर अंगरेज़ों का प्रकट प्रभाव पड़ा था। अतएव लन्दन के समान पेरिस में भी अगणित क्लब स्थापित हो गये थे। उनकी स्थापना से नवयुवक अत्यन्त प्रसन्न हुये थे। यह एक ऐसा स्थान था जहां वे

बिना किसी संकोच के विचार विमर्श कर सकते थे तथा जहां उनकी स्त्रियों का प्रवेश न था। मुख्यत: पेशेवर लोग तथा मध्यवर्ग के मनुष्य वादविवाद के द्वारा वहां अपने दिल के अरमान भली भांति निकाल सकते थे। इस सम्बन्ध में एक विनोदी मनोवृत्ति रखने वाले मनुष्य ने अपने विचारों को इस प्रकार व्यक्त किया था,—"फ्रांस का निवासी एक ऐसा व्यक्ति है जो शांत नहीं रह सकता। कोई विषय भी उपस्थित हो वह वार्तालाप में अवश्य संलग्न रहेगा। वह यह कभी न कहेगा कि मैं इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता।"

इस काल के राजनैतिक क्लबों में दो विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। इन में से एक उस मठ के नाम पर जिसमें यह अधिवेशन करती थी, जेकोबिन क्लब (Jacobin Club) कहलाता था एवं दूसरे का नाम उस गली के नाम पर जिसमें उसके अधिवेशन होते थे, कार्दीलियर क्लब (Cordelier Club) कहलाता था। इनमें जेकोबिन क्लब अधिक पुराना था। उसकी नींव वास्तव में वर्सेल्ज़ में डाली गई थी। उसकी स्थापना करने वाले, स्टेट्स जनरल के ब्रिटेनी से आये हुये सदस्य थे, जो वहां बैठकर परामर्श किया करते थे। अस्तु वह ब्रेतों क्लब (Breton Club) के नाम से विख्यात हुआ। कुछ सप्ताह के पश्चात् अन्य प्रान्तों से आये हुये उदार विचार के सदस्य भी उसमें सम्मिलित कर लिये गये। सीएयेस, मीराबो, ग्रेग्वार, लेमेथ तथा बारनाव आदि सभी वहां जाते थे और गम्भीर विषयों का निर्णय करते थे। उस काल में उपरोक्त क्लब का एक साधारण सदस्य रोबेस्पेयर भी था। ५ अक्टूबर सन् १७८९ ई० के पश्चात् सम्राट के परिवार के साथ ब्रेतों क्लब भी पेरिस में चला आया और 'जेकोबिन' नाम के मठ में अधिवेशन करने लगा। यहां राष्ट्रीय महासभा के सदस्यों के अतिरिक्त क्रांति के प्रति अन्य सहानुभूति रखने तथा उसके सहायक भी उसके वादविवाद में भाग लेने लगे। उसकी शाखायें अन्य नगरों तथा क़स्बों में भी खोल दी गईं। उसका चन्दा अधिक था। अत: केवल उच्च तथा मध्यवर्ग के व्यक्ति ही उसके सदस्य हो सकते थे।

जेकोबिन क्लब

प्रारम्भ में जेकोबिन क्लब किसी विशेष सम्प्रदाय का क्लब न था। जैसे जैसे पेरिस निवासियों के विचारों में परिवर्तन होता जाता था वैसे वैसे उपरोक्त क्लब अपने सिद्धान्तों को परिवर्तित करता जाता था। जब वे राजतंत्र के समर्थक थे तब उपरोक्त क्लब के सदस्य भी संविधान की दुहाई देते थे। जब उन्होंने राजतंत्र का अन्त कर दिया तो वे भी गण-राज्य का दम भरने लगे। कुछ समय के पश्चात् उस पर उन्मूलनवादियों का रंग चढ़ गया। इसलिये लाफ़ेयत, सीएयेस और मीराबो आदि उस से पृथक हो गए तथा उनके स्थान पर रोबेस्पेयर और उसके

साथियों का बोल बाला हो गया। अक्टूबर सन् १७९१ ई० से जेकोबिन क्लब के द्वार सर्वसाधारण के लिए खोल दिए गए। अतएव राष्ट्रीय संविधान-सभा के समान उसके अन्दर भी सर्वसाधारण का समूह एकत्रित होने लगा। जेकोबिन क्लब एक पत्र प्रकाशित करती थी। इस से तथा उन अधीन जेकोबिन समितियों द्वारा जो समस्त देश में फैली हुई थीं उसे अपने सिद्धान्तों तथा विचारों के प्रकाशन में काफ़ी मदद मिलती थी।

कार्दीलियर क्लब

कार्दीलियर क्लब जेकोबिन क्लब के पश्चात् स्थापित की गई थी। इसके नामकरण का कारण यह मालूम होता है कि उसके अधिवेशन उसी नाम की एक गली में फ्रांसिस्कन मोंकों के एक प्राचीन मठ में होते थे। इसी गली में मारा के समाचारपत्र का दफ्तर भी था। प्रारम्भ में यह क्लब 'मानव तथा नागरिक के अधिकारों के समर्थकों की समिति के रूप में स्थापित की गई थी। जेकोबिन क्लब प्रतिष्ठित लोगों का क्लब था। उसे हम शासन का क्लब कह सकते हैं। कार्दीलियर क्लब में साधारण स्थिति के लोग सम्मिलित थे, जैसे दूकानदार, विद्यार्थी तथा कारीगर आदि। उसका चन्दा केवल एक पेंस मासिक था। उसे हम शासन के विरोधियों का क्लब कह सकते हैं। इस में बैठकर वे स्वतन्त्रता के साथ उसके विरुद्ध अपने उद्‌गार निकाल सकते थे। प्रारम्भ ही से यह उग्रवादियों का केन्द्र था। उसके सदस्य उन्मूलनवाद सिद्धान्त के कट्टर समर्थक थे। इनके दो बड़े उदाहरण दांतों तथा मारा के हैं। ये दोनों तथा रोबेस्पेयर, जो जेकोबिन क्लब का नेता था, जन्म तथा शिक्षा से मध्यम श्रेणी के लोग थे, किन्तु अपने सिद्धान्तों के अनुसार उन्होंने निर्धन व निम्न श्रेणी के लोगों का नेतृत्व किया। आगे चलकर क्रांति के नाटक में इन तीनों ने यथेष्ट भाग लिया। चौथे अध्याय में हम इनके विचार तथा जीवन पर पर्याप्त प्रकाश डाल चुके हैं। अतएव इस स्थल पर उनका केवल उल्लेख कर देना ही काफ़ी है।

चौदहवां अध्याय

युद्ध की समस्या

मई सन् १७८९ ई० में फ्रांस का कोई निवासी भी यह नहीं समझता था कि तीन वर्षों के अन्दर उसकी मातृभूमि को यूरोप के अन्य देशों से युद्ध में संलग्न होना पड़ेगा। किन्तु सन् १७९२ ई० तक राजनैतिक परिस्थिति ऐसी बदल गई थी कि फ्रांस को स्वयं आस्ट्रिया तथा प्रशा के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करनी पड़ी। उत्तरी-पूर्वी सीमा पर युद्ध की काली घटाओं का आना उस समय प्रारम्भ हो गया था जब राष्ट्रीय संविधान-सभा ने पादरियों के प्रतिकूल धर्म विरुद्ध संविधान निर्मित किया था एवं अगणित पादरी सहायता की खोज में भाग गये थे। इसके पश्चात् जब सोलहवें लुई ने फ्रांस से अदृश्य होने का प्रयत्न किया, किन्तु वह सफल न हुआ तो युद्ध की संभावना अधिक बढ़ गई। जैसा कि हमने गत अध्याय में वर्णन किया था, आस्ट्रिया का सम्राट ल्योपोल्ड इस विषय में शीघ्रता न करना चाहता था, किन्तु फ्रांस में राष्ट्रीय विधान-सभा में एक ऐसा राजनैतिक दल प्रभावशाली हुआ एवं उसने ऐसी नीति का पालन किया कि युद्ध का होना अनिवार्य हो गया। इतिहास में यह जिरोंदिन दल के नाम से प्रसिद्ध है।

जिरोंदिन दल के उत्कर्ष तथा उसकी नीति पर प्रकाश डालने के पूर्व आवश्यक है कि हम एक संक्षिप्त दृष्टि यूरोपीय देशों पर डालें और यह मालूम करने का प्रयत्न करें कि फ्रांस की राज्यक्रांति की ओर उनका क्या दृष्टिकोण था। जिस समय फ्रांस में क्रांति प्रारम्भ हुई थी उस समय यूरोप के अधिकतर देशों में निरंकुश राजसत्तायें स्थापित थीं। किन्तु कुछ महत्वपूर्ण कारणों से, जिनका उल्लेख हमने छठे अध्याय में किया था, राज्यक्रांति सब से पहले फ्रांस ही में आरम्भ हुई थी। यदि

यूरोपीय देशों की नीति

ये अथवा इसी प्रकार के अन्य कारण किसी अन्य देश में उपस्थित होते तो ६० प्रतिशत आशा इस बात की होती कि वहां भी एक महान् क्रांति उत्पन्न होजाती। केवल ग्रेट ब्रिटेन ही एक ऐसा देश था जहाँ इसके पूर्व वैधानिक राजतंत्र स्थापित हो चुका था। वहाँ समाज की दशा भी अच्छी थी। वहाँ के निवासी शासन में यथेष्ठ भाग ले रहे थे। इसके अतिरिक्त यूरोप के अन्य देशों के निवासी बेहोशी की नींद सो रहे थे। उन में राजनैतिक चेतना की कमी थी। विशेष रूप से निम्न कोटि के लोग इस से पूर्णतया अनभिज्ञ थे। यह क्रांति के विरुद्ध सब से बड़ी सुरक्षा थी। ऐसी स्थिति में जब फ्रांस में क्रांति आरम्भ हुई तो यूरोप के सम्राटों ने तो उसके प्रति किसी न किसी प्रकार के उद्गारों को प्रकट किया, परन्तु उनकी प्रजा पूर्ण रूप से उदासीन रही। यह सब होते हुये भी जब उक्त क्रांति का रूप बदला तथा फ्रांस का सम्राट व राजसत्ता दोनों संकट में दिखलाई पड़े तो यूरोपीय सम्राटों से शांत न रहा गया। उन में से कुछ क्रांतिकारियों के विरुद्ध युद्ध करने को तत्पर हुये, किन्तु इस ओर क़दम बढ़ाने में उन्होंने जल्दी न की। परिणाम यह हुआ कि इसके पूर्व कि वे युद्ध की घोषणा करें, फ्रांस के जिरोंदिन दल ने उनके विरुद्ध युद्ध की घोषणा करके अपनी सेनायें युद्धक्षेत्र में उतार दीं।

इंग्लैंड

जिस समय फ्रांस में क्रांति आरम्भ हुई थी उस समय अंगरेज़ बहुत प्रसन्न दिखलाई पड़ते थे। उनका विचार था कि उनके पुराने शत्रु का घरेलू वैमनस्य से सर्वनाश हो जायेगा। उन्हें इस बात की प्रसन्नता भी थी कि अब फ्रांसीसियों को अमेरिका के युद्ध में हस्तक्षेप करने का दंड मिलने का समय आ गया है। कुछ अंगरेज़ इस बात से प्रसन्न थे कि फ्रांस के निवासी उनकी शासन पद्धति की नक़ल कर रहे थे। अस्तु प्रारम्भ में ग्रेट ब्रिटेन में सभी स्थानों में फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रति हर्ष प्रकट किया गया। किन्तु जब क्रांतिकारियों ने भयंकर कार्य किये और यह प्रकट हो गया कि वह एक सार्वजनिक आन्दोलन है तथा उसका उद्देश्य सामाजिक भेदभाव को दूर करना है, एवं जब उनको यह ज्ञात हुआ कि इस से उन्हें भी हानि पहुंचने की सम्भावना है तो वे सावधान हो गये तथा उक्त आन्दोलन की ओर अधिक दत्तचित्त हुये। जैसा कि हमने पहले बतलाया था, सन् १७९० ई० इंग्लैंड के विख्यात राजनीतिज्ञ एडमंड बर्क ने फ्रांस की राज्यक्रांति के विषय में अपना प्रसिद्ध ग्रंथ (Reflections on the Revolution in France) प्रकाशित किया। इसमें उसने क्रांति का विरोध करते हुये उसे एक नये रूप में चित्रित किया था। इस पुस्तक को आम तौर पर पसन्द किया गया। उसने यूरोप के सभी सम्राटों को सावधान कर दिया। बर्क की पुस्तक के विरोध में कई पुस्तकें प्रकाशित की गईं,

किन्तु वे उस प्रभाव को दूर न कर सकीं जिसे उसने उत्पन्न किया था। रूस की सम्राज्ञी कैथरिन ने बर्क को बधाई दी। पोलैंड के सम्राट ने उसकी प्रशंसा करते हुये एक पत्र भेजा। यूरोप के सम्राट, कुलीन वर्ग के लोग एवं पादरी ये सब इस बात को समझते थे कि यदि इस आकस्मिक विपत्ति का सामना न किया गया तो उनकी भी खैर नहीं होगी।

अस्ट्रिया

अस्ट्रिया के सम्राट को फ्रांस की राज्यक्रांति के विषय में सब से अधिक चिन्ता थी। वहां सन् १७६० ई० में जोजेफ द्वितीय की मृत्यु पर ल्योपोल्ड द्वितीय (१७६०-१७६२) राजसिंहासन पर बैठा था। ये दोनों फ्रांस की सम्राज्ञी मेरी ऐन्तोयनेत के भाई थे। ल्योपोल्ड होली रोमन सम्राट भी था। अस्ट्रियन नैदरलैंड्ज़ का देश, जो फ्रांस की सीमा से मिला हुआ था, उसके साम्राज्य में सम्मिलित था। वहां के निवासियों के हृदयों में फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रति काफी स्थान था। अतएव वे इस बात के इच्छुक थे कि उनका देश फ्रांस के साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया जाय। ऐसी दशा में आवश्यक था कि ल्योपोल्ड फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रभाव को नैदरलैंड्ज़ एवं जर्मनी दोनों ही से दूर रखने का प्रयत्न करे। फ्रांस के सम्राट का साला होने के सम्बन्ध में वह उक्त राज्यक्रांति के विशेष रूप से विरुद्ध था। फ्रांस के भागे हुये अमीर और पादरी सब से अधिक उसी के राज्य में पहुंचे थे। इसके अतिरिक्त बहिन के पत्र भी उसे बेचैन बना रहे थे। इन समस्त कारणों से, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है, ल्योपोल्ड फ्रांस के सम्राट का सब से बड़ा मित्र तथा सहायक था।

स्पेन और प्रशा

अस्ट्रिया की भांति यूरोप के कुछ अन्य देशों के बादशाह भी फ्रांस की राज्यक्रांति के कुछ न कुछ विरोधी थे। जैसे स्पेन और इटेली के दक्षिणी भाग में 'दो सिसली' (Two Sicillies) के देश में बूरबन वंश के सम्राट शासन कर रहे थे। फ्रांस के राजपरिवार से वे कौटुम्बिक सम्बन्धों एवं संधियों द्वारा वेष्टित थे। प्रशा का बादशाह फ्रेड्रिक विलियम द्वितीय (१७८६-१७६७) ल्योपोल्ड का सब से बड़ा मित्र और सहायक था। उसने अपने ताऊ फ्रेडिक महान् की नीतिपटुता के अनुसार कार्य न करके प्रशा की सेना को निर्बल बना दिया था। इसके अतिरिक्त वह विद्या और कला की उन्नति तथा भोग विलास में अत्यन्त अधिक धन व्यय कर रहा था। उसने अपने देश की विदेशी नीति में परिवर्तन कर दिया था। अपने प्राचीन शत्रु अस्ट्रिया से मित्रता करके उसने ल्योपोल्ड द्वितीय के अधीन कार्य करना स्वीकार कर लिया था। इसके अतिरिक्त उसने फ्रांस के क्रांतिकारियों

के विरुद्ध विभिन्न प्रकार की घोषणायें प्रकाशित करने तथा युद्ध करने में भी उसकी सहायता की।

स्वीडन एवं रूस

स्वीडन का बादशाह गस्तेवस तृतीय मेरी एन्तोयनेत की सहायता प्रत्येक प्रकार से करना चाहता था। अस्तु उसने फ्रांस के शाही परिवार को पेरिस से भागने में सहायता की, किन्तु दूर होने तथा पूर्व की ओर अपने मामलों में संलग्न रहने के कारण वह उसके लिये सेना न भेज सका। रूस की सम्राज्ञी कैथरिन द्वितीय पोलैंड के विभाजन की तैयारी कर रही थी। एक बार वह उसे १७७२ ई० में अस्ट्रिया और प्रशा से मिलकर आपस में विभाजित कर चुकी थी। अब वह शेष देश पर दांत लगाये बैठी थी। इसके अतिरिक्त रूस जैसे देश से, जो फ्रांस से काफ़ी दूर था, क्रांति के विरुद्ध हस्तक्षेप की आशा रखना भी बिल्कुल व्यर्थ था।

पिलनिट्ज़ की घोषणा, अगस्त १७९१ ई०

उपरोक्त विवाद से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि प्रारम्भ में यूरोप का कोई भी बादशाह फ्रांस के आन्तरिक झगड़ों में हस्तक्षेप करने को तैयार न था। वे सब सावधान अवश्य थे, किन्तु क्रांति का नाटक दूर ही से देखना चाहते थे। जून सन् १७९१ ई० में सोलहवें लूई ने फ्रांस से अदृश्य होने का प्रयत्न किया, किन्तु वह सफल नहीं हुआ। राष्ट्रीय महासभा ने उसे तुरन्त स्थगित कर दिया। इस से फ्रांस के निरंकुश शासन तथा अन्य निरंकुश शासन सत्ताओं का बड़ा अपमान हुआ। इस सब के होते हुये भी क्रांति के विरुद्ध किसी ने हस्तक्षेप नहीं किया। केवल भागे हुये कुलीन तथा पादरियों के ज़ोर देने पर एवं सम्भवत: अपनी बहिन को प्रसन्न करने के लिये ल्योपोल्ड ने जौलाई सन् १७९१ ई० में इटैली के प्रसिद्ध नगर पाडोवा से यूरोप के सम्राटों को सम्बोधित करते हुये इस बात की चेतावनी दी कि फ्रांस के सम्राट का कार्य सब शासकों का कार्य है। अतएव सबको उसकी सहायता के लिए तत्पर होना चाहिये। इसके दूसरे मास अर्थात् अगस्त सन् १७९१ ई० में उसने और उसके मित्र फ्रेड्रिक विलियम द्वितीय ने मिलकर जर्मनी के नगर पिलनिट्ज़ (Pillnitz) से यह घोषणा की कि यदि यूरोप के शासक सहायता करने का वचन दें तो वह फ्रांस के विरुद्ध युद्ध करने के लिये तत्पर है। किन्तु कोई भी सम्राट उसकी सहायता के लिये तैयार न हुआ। सितम्बर के मास में लूई ने संविधान को स्वीकार कर लिया और उसका पद उसे पुन: प्राप्त हो गया। अत: इन दोनों बादशाहों ने भी युद्ध का विचार त्याग दिया।

फ्रांस में कुछ लोग ऐसे थे जो बराबर युद्ध का स्वप्न देखा करते थे।

इनमें प्रथम श्रेणी राजपरिवार तथा उस से सम्बन्ध रखने वालों की थी। उनका विचार था कि यदि युद्ध में मित्रदल की विजय हुई तो वह तलवार के बल से अवश्य ही दीर्घकालीन शासनसत्ता तथा दीर्घकालीन सामाजिक व्यवस्था को दोबारा स्थापित करने में सफल होगा। यदि युद्ध में क्रांतिकारी विजयी हुये तो ऐसी दशा में सम्राट का खोया हुआ सम्मान पुनः प्राप्त हो जायेगा एवं उसे इस बात का अवसर भी प्राप्त होगा कि वह अपने पूर्व अधिकारों को प्राप्त करने में कृतकार्य हो। यह विचार मेरी ऐन्तोयनेत, उसके कुटुम्ब तथा उसके दरबारियों का था। लाफ़ेयत तथा मध्यम श्रेणी के लोगों का दूसरा ही विचार था। ये लोग भी युद्ध के पक्षपाती थे। किन्तु उनका उद्देश्य दूसरा ही था। ये लोग सन् १७९१ ई० के संविधान के समर्थक थे एवं सोचते थे कि युद्ध के प्रारम्भ होते ही फ्रांस के निवासी उसके महत्व को स्वीकार कर लेंगे एवं हृदय से उसके समर्थक बन जायेंगे। लाफ़ेयत सोचता था कि युद्ध की स्थिति में उसे सेनापति के पद से ख्याति व सम्मान प्राप्त करने का अवसर भी प्राप्त होगा। तृतीय श्रेणी में उन्मूलनवादी थे। ये लोग भी बहुधा युद्ध की दुहाई देते थे। उनका विचार था कि युद्ध की दशा में वैधानिक राजतन्त्र की अपकीर्ति होगी। इस प्रकार फ्रांस में गण-राज्य के लिये मार्ग निष्कंटक हो जायेगा एवं यूरोप के दूसरे देशों में भी प्रजातन्त्र का बोल बाला रहेगा। इस प्रकार विभिन्न श्रेणियों के व्यक्तियों के विभिन्न विचार थे, किन्तु युद्ध के पक्षपाती तीनों थे।

फ्रांस में युद्ध के अभिलाषी

यूरोपीय देशों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की जाय अथवा न की जाय एवं युद्ध प्रारम्भ होने की दशा में उसका प्रबन्ध किस प्रकार किया जाय, इन और इस प्रकार की अन्य समस्याओं पर निर्णय देने का अवसर विधान-सभा (Legislative Assembly) को प्राप्त हुआ। इसका पहला अधिवेशन १ अक्टूबर सन् १७९१ ई० को हुआ। इसके सदस्यों का निर्वाचन नवीन संविधान के अनुसार किया गया था। किन्तु न मालूम क्यों, अधिकार रखते हुये भी बहुत ही कम लोगों ने उस में भाग लिया था। सम्भव है कि इसका कारण यह रहा हो कि वे लम्बे समय तक तथा लगातार होने वाले निर्वाचनों से असंतुष्ट थे। यह भी सम्भव है कि वे अपने हाथ में किसी भी प्रकार का उत्तरदायित्व न लेना चाहते थे। या वे यह समझते थे कि विधान-सभा से उनका कोई लाभ न हो सकेगा। अस्तु किसी भी स्थान में ३० प्रतिशत से अधिक अधिकृत मनुष्यों ने निर्वाचन में भाग न लिया था। इस

राष्ट्रीय विधान-सभा

सब के होते हुये भी निर्वाचन लम्बे समय तक चलते रहे । जो सदस्य निर्वाचित होकर आये वे प्रथम तो बिल्कुल नये एवं अनुभव विहीन थे, क्योंकि १६ मई के क़ानून के अनुसार गत सभा के सदस्यों में से कोई भी नवीन सभा की सदस्यता के लिए खड़ा न हो सका था । दूसरे, उनके विचारों तथा सिद्धान्तों में भी प्रकट अन्तर था। ७५० सदस्यों में से ३५० ऐसे थे जो किसी विशेष राजनैतिक दल से सम्बन्ध न रखते थे । ये लोग विधान-सभा के बीच में बैठते थे तथा प्रत्येक विषय पर स्वेच्छापूर्वक, अपने व्यक्तिगत भय अथवा आशा के अनुसार, वोट देते थे। शेष सदस्य फुयों (Feuillants) तथा जेकोबिनों (Jacobins) में विभाजित थे। प्रथम में पुराने ढंग के व्यक्ति थे । उनकी संख्या लगभग २६० थी। वे दाहिनी ओर बैठते थे। वे साधारणतया सन् १७९१ ई० के संविधान के समर्थन में बोलते थे एवं वैधानिक राजतन्त्र के भी पक्षपाती थे । बायें हाथ की ओर उन्मूलनवादी बैठते थे। वे 'जेकोबिन' के नाम से प्रसिद्ध थे । उनकी संख्या केवल १३६ थी। इस प्रकार राष्ट्रीय विधान-सभा में राजतन्त्र तथा संविधान के प्रतिपक्षियों की संख्या अत्यन्त अधिक थी । दाहिनी ओर बैठने वाले व्यक्तियों में कुछ लोग सम्राट के दल के थे एवं शेष उसके विरुद्ध थे। बीच में बैठने वालों की कोई विशेष नीति न थी, किन्तु बायीं ओर बैठने वाले लोग जोश और उत्साह से परिपूर्ण थे। उनका एक विशेष ध्येय था और सब से बड़ी बात यह थी, कि पेरिस के निवासी भी उनके पक्षपाती थे।

विधान-सभा में राजनैतिक दलों का अभ्युदय हुआ । प्रारम्भ में ये दल अपने नेताओं के नाम के अनुसार प्रसिद्ध हुये। इसके पश्चात् वे अपने सिद्धान्तों के अनुसार विभिन्न नामों से सम्बोधित किये जाने लगे । इस दलबन्दी को देखकर बहुत से व्यक्ति घबड़ा गये, क्योंकि उनके लिये यह एक नई प्रथा थी । जैसे गत् सभा के सदस्य पेतियों (Petion) ने, जो नवम्बर में बाई के स्थान पर पेरिस के कम्यून का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया था, १० फर्वरी सन् १७९२ ई० के 'पैट्रियट' नाम के समाचारपत्र में मध्यम श्रेणी के सदस्यों को यह उपदेश दिया कि वे सर्वसाधारण का साथ न छोड़ें एवं आन्तरिक भेदभाव के द्वारा सार्वजनिक शांति को भंग न करें । "जब तक तृतीय श्रेणी के प्रतिनिधियों में एकता रहेगी, देश की सुरक्षा स्थापित रहेगी।" किन्तु मैडेम रोलैंड के कथनानुसार, फ्रांस दो वर्षों में दो सौ वर्ष आगे बढ़ गया था। अब दलबन्दी को अवरुद्ध करना कठिन था। इस सब के होते हुये भी सदस्यगण एकता व शांति के लाभों से पूर्ण रूप से परिचित थे। किन्तु शीघ्र ही ऐसी परिस्थिति उपस्थित हुई कि उन्हें दोनों ही से हाथ धोना पड़ा।

कुछ आवश्यक घोषणायें

विधान-सभा के सदस्यों को, अधिवेशन प्रारम्भ करते ही उत्तर-पूर्व की दिशा में एक बहुत बड़ा संकट दृष्टिगोचर हुआ। अतएव वे शीघ्र ही भागे हुए अमीरों तथा पादरियों की ओर दत्तचित्त हुए। जैसा कि हमने गत अध्याय में बतलाया था, उनका ज़ोर सब से अधिक जर्मनी में कोब्लेंट्ज़ नगर के आसपास था। उनके पथ-प्रदर्शक सम्राट के भागे हुए दोनों भाई थे। उनके सबसे बड़े सहायक अस्ट्रिया तथा प्रशा के सम्राट थे। उनकी ओर से सभा का ध्यान हटाने के लिए सोलहवें लूई ने १६ अक्टूबर को एक आज्ञा प्रकाशित करके भागे हुये सरकारी कर्मचारी एवं अन्य कुलीनों के लौट आने पर ज़ोर दिया, किन्तु सदस्यगण उसकी कूटनीति से पूर्णतया परिचित थे। वे यह भी जानते थे कि इस प्रकार की साधारण आज्ञाओं से काम न चलेगा। अतएव उन्होंने ३० अक्टूबर को सम्राट की स्वीकृति के लिये यह आज्ञा उपस्थित की कि काउंट आफ़ प्रोवांस को दो मास के भीतर लौट आना चाहिये। अन्यथा उसे बादशाह का उत्तराधिकारी तथा राजसिंहासन का अधिकारी होने से हाथ धोना पड़ेगा। संयोग से उसी दिन प्रोवांस तथा आर्त्वा ने कोब्लेंट्ज़ से यह घोषणा कराई कि वे लोग उस समय दम लेंगे जब फ्रांस में दीर्घकालीन शासन तथा सामाजिक व्यवस्था पुनः स्थापित हो जायेंगे। उन्होंने सभा के निमंत्रण को भी ठुकरा दिया। यह देखकर सदस्यों को तनिक भी आश्चर्य न हुआ। किन्तु उन्होंने इसका उत्तर ९ नवम्बर की घोषणा से दिया। इसके द्वारा उन्होंने इस बात को स्पष्ट कर दिया कि यदि समस्त भागे हुये लोग वर्ष के अन्त तक नहीं लौट आयेंगे तो वे षड्यन्त्रकारी समझे जायेंगे तथा वे मृत्यु दण्ड के अधिकारी होंगे। इसके अतिरिक्त उन्हें अपनी सम्पत्ति से भी वंचित होना पड़ेगा। किन्तु भागे हुये लोगों ने उक्त घोषणा की पर्वाह न की। इसी समय सदस्यों को इस बात की सूचना प्राप्त हुई कि पश्चिमी प्रदेशों में शपथ न लेने वाले पादरी विद्रोह की आग फैला रहे हैं तथा मनुष्यों को गृहयुद्ध के लिए तत्पर कर रहे हैं। अतः उन्हें उनके विरुद्ध भी एक घोषणा करनी पड़ी। यह २९ नवम्बर को प्रकाशित की गई थी। इसके द्वारा उन पर यह बात स्पष्ट कर दी गई थी कि यदि वे एक सप्ताह के भीतर शपथ न ले लेंगे तो उन्हें अपनी वृत्ति से वंचित होना पड़ेगा तथा यदि उनके प्रान्तों में कुव्यवस्था फैलेगी तो वे बन्दी कर लिये जायेंगे।

उपरोक्त आज्ञाओं के सम्बन्ध में यह बात आवश्यक थी कि सम्राट उनको स्वीकृति दे। किन्तु लूई ने ऐसा न करके अन्तिम दो आज्ञाओं को रद कर दिया। जिस ओर उसकी तथा उसके साथियों की दृष्टि थी उस ओर वह आग कैसे लगा सकता था? वह अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी कैसे मार सकता था?

दिखलाने को उसने दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में ट्रार के आर्चबिशप को यह आज्ञा दी कि यदि वह अपनी सीमा से भागे हुये लोगों को निर्वासित न कर देगा तो उसकी खैर न होगी। किन्तु केवल दस दिन के पश्चात् उसने ब्रेतूल को इसके विरुद्ध लिखकर भेज दिया। "मेरी नीति सदा से यह रही है कि भागकर जाने वाले लोगों को रोक दूं, किन्तु शक्तियों को अन्दर आने को आमन्त्रित करूं।" जिस दिन बादशाह ने उपरोक्त आदेशों को रद किया था उसी के पश्चात् मेरी ने आस्ट्रिया के राजदूत को, जो ब्रूसेल्ज़ में था, यह लिखा था,—"अब (होली रोमन) सम्राट तथा अन्य शक्तियों का कर्तव्य है कि हमारी सहायता करें।" गवर्नेरिस के दूत फर्सन ने लिखा था कि सम्राट तथा सम्राज्ञी ने कभी भी संविधान का विरोध बन्द नहीं किया है। किन्तु वे अपने विरोधियों को मूर्ख बनाने के विचार से इस बात को आवश्यक समझते हैं कि उसे स्वीकार करने का बहाना करें।

इस वादविवाद के समय, जो विधान-सभा में हुआ था, एक नवीन राजनैतिक दल प्रकट हुआ जिसके कुछ सदस्य जिरोंदी (Gironde) के डिपार्टमेंट से आये थे। इन में से कुछ बोर्दो नगर के नवयुवक वकील थे। प्रारम्भ में ये लोग जेकोबिन क्लब के सदस्य थे, किन्तु इसके पश्चात् वे अधिक उन्मूलनवादी विचार धारण करने के कारण उस से पृथक हो गये थे। इसके सदस्यों में से कुछ विशेष रूप से प्रसिद्ध थे, जैसे ब्रीसो (Brissot) जो पेरिस का वकील था तथा अपने नेतृत्व तथा सुप्रबन्ध के लिये विख्यात था; वर्न्यो (Vergniaud) जो एक योग्य एवं शिष्ट वक्ता था; कांदोर्से (Condorcet) जो एक दार्शनिक तथा विद्वान था; दूमूरिये (Dumouriez) जो एक योग्य तथा अनुभवी सैनिक था; इसनार (Isnard) जो दक्षिण का इत्र बेचने वाला था। ये सब मैडेम रोलैंड (Madame Roland) के निवास स्थान पर एकत्रित होते थे तथा राजनैतिक विषयों पर मत स्थिर करते थे। उपरोक्त युवती एक अवकाश प्राप्त सरकारी पदाधिकारी की पत्नी थी। वह अपने पति से २० वर्ष छोटी अवश्य थी, किन्तु अपनी बुद्धिमत्ता तथा दूरदर्शिता के कारण अपने अतिथियों को लाभ पहुंचाती रही। राष्ट्रीय विधान-सभा के सदस्यों के अतिरिक्त कुछ अन्य जिरोंदिन भी वहां एकत्रित होते थे, जैसे पेतियों जिसका उल्लेख पहले हो चुका है अथवा बूज़ो (Buzot) जो मैडेम रोलैंड का प्रेमी था।

जिरोंदिन दल का अभ्युदय

जिरोंदिन दल के लोगों की कई विशेषतायें थीं। राजनैतिक जोश व

त्याग तथा भाषण करने की विशेषता में वे अपना प्रतिद्वन्दी न रखते थे। किन्तु उनके भाषणों से बहुधा उनके तथा फ्रांस के लिये भय तथा संकट की संभावना रहती थी। नवीन प्रयोगों में उन्हें विशेष आनन्द आता था। वे अपने स्वदेश के लिये बड़े से बड़ा बलिदान दे सकते थे। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण शारलौत कोर्दे का है जिसने मारा को वध किया था (चौथा अध्याय)। इसके बाद भी उक्त दल की ओर से अगणित बलिदान किये गये थे। कुछ लेखकों का मत है कि जिरोंदिन दल के नेता ऐसी नीति से काम लेते थे जिसका परिणाम सदा ख़राब होता था। कुछ ने लिखा है कि वे क्षणिक उद्‌गारों के प्रभाव से परिणाम पर ध्यान दिये बिना ही सब कुछ करने को तैयार हो जाते थे। इन सब बातों के विपरीत हम जिरोंदिन दल की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। उनके विचार ऊंचे थे। उनके बहुत से सिद्धान्त ऐसे थे जो प्राचीन रोमन गण-राज्य से लिये गये थे। उनके देवता ब्रूटस एवं एरिस्टाइडिस थे तथा उनका धर्माचार्य प्लूटार्क था। भाषण देते समय वे बहुधा स्वयं को कोई महान् यूनानी अथवा रोमन आत्मा समझकर उसी का अनुकरण करने का प्रयत्न करते थे। ब्रीसो उनका नेता था एवं पेरिस का मेयर पेतियों उनका प्रतिष्ठित आदर्श था।

उसकी नीतिपटुता

जिरोंदिन दल के लोग अत्यन्त उत्साही तथा साहसी थे। वे अपने तथा फ्रांस के लिये सब कुछ करने को तैयार रहते थे। वे क्रांति को तीव्र गति से आगे बढ़ाना चाहते थे। इसके लिए वे किसी गम्भीर कार्य को करने के इच्छुक थे। इस समय तक दीर्घकालीन राजनैतिक व सामाजिक भवन बिल्कुल ध्वंस कर दिया गया था। उसका अन्तिम चिन्ह केवल सम्राट अवशेष था। जिरोंदिन दल के लोग उसके अस्तित्व को भी नष्ट कर सकते थे। रोम एवं यूनान के भक्त होने के कारण वे फ्रांस में भी गण-राज्य स्थापित करना चाहते थे। सब से प्रथम उन्होंने जेकोबिन दल से मिलकर विधान-सभा के अन्तर्गत सर्वसाधारण के प्रवेश की स्वीकृति दी। इस से पेरिस के निवासी अत्यन्त प्रसन्न हुये और जेकोबिन दल की भांति उनकी सहायता के लिये भी तैयार रहने लगे। फिर उन्होंने सभा में यह प्रथा चलाई कि मत देने के समय प्रत्येक सदस्य का नाम लिया जाय। इस से उक्त दल को सौ मतों का लाभ हुआ। इसके पश्चात् उन लोगों ने अधिक गम्भीर बातों की ओर ध्यान दिया। क्रांति के दो सब से बड़े शत्रु फ्रांस के वे निवासी थे जो भाग गये थे अथवा फ्रांस में रहकर सन् १७९१ ई० के संविधान की शपथ लेने से इन्कार करते थे। जिरोंदिन दल ने इन दोनों का पूर्ण विरोध किया एवं वे आदेश प्रकाशित किये जिनका उल्लेख किया जा चुका है। जब इस प्रकार काम न

चला तो उन्होंने इस बात की बड़ी कोशिश की कि आस्ट्रिया और प्रशा के विरुद्ध किसी प्रकार युद्ध की घोषणा कर दी जाय।

ब्रीसो और उसके साथी युद्ध का नारा लगा रहे थे, किन्तु फ्रांस उसके लिये तैयार न था। और फ्रांस तैयार हो भी कैसे सकता जब वहां अभी तक भोजन की गम्भीर समस्या हल न हो सकी थी और जब देशद्रोही मनुष्य, जिनका नेतृत्व सम्राट तथा सम्राज्ञी कर रहे थे, सैनिकों की पीठ में खंजर भोंकने के लिये तत्पर थे। काग़ज़ी नोटों (Assignats) की अधिकता के कारण उनकी दर ६० प्रतिशत रह गई थी। उस काल में किसी प्रकार का नियंत्रण भी न था। इसके अतिरिक्त श्रमिकों को संघ बनाने तक की मनाही थी। ऐसी दशा में आवश्यक था कि लोग नानबाई की दूकान पर पंक्ति बना के खड़े रहें एवं उस क्रांति को भूल जायं जिसने उन्हें काग़ज़ी 'अधिकारों की घोषणा' के अतिरिक्त और कुछ न दिया था। यदि सभा के सदस्य यह चाहते थे, कि युद्ध में विजयलक्ष्मी उनके हाथ लगे तो आवश्यक था कि इस संकटपूर्ण आर्थिक स्थिति में सुधार किया जाये। किन्तु जिरोंदिन दल ने इस ओर ध्यान न दिया एवं वह 'युद्ध, युद्ध' पुकारता रहा।

संकटपूर्ण आर्थिक स्थिति

जेकोबिन दल का नेता रोबेस्पेयर भी युद्ध का विरोध कर रहा था। वह विधान-सभा का सदस्य नहीं था, किन्तु वह बाहर ही से उस पर प्रभाव डाल रहा था। सर्वसाधारण उसे सब से अधिक चाहते थे। उनका विचार था कि रोबेस्पेयर ही एक ऐसा नीतिवेत्ता है जो प्रजातंत्र के आदर्श सिद्धान्त से नहीं गिरा है। जिस समय राष्ट्रीय संविधान-सभा भंग हुई थी, उस समय वे उसे तथा पेतियों को ताज पहनाकर कन्धों पर उठाकर लाये थे। उक्त सभा के भंग होने पर उसने कुछ समय तक अपनी जन्मभूमि अर्रास में विश्राम लिया। फिर वह पेरिस चला आया। यहां आकर उसने युद्ध की उस लहर को रोकने का पूर्ण प्रयत्न किया जो विधान-सभा में उठ रही थी। उसका कहना था कि युद्ध के सम्बन्ध में दूरदर्शिता तथा संतोष से कार्य लेना चाहिये। उसने अपने दल वालों को बतलाया था कि देश के सब से बड़े शत्रु कोब्लेन्ट्ज़ में नहीं हैं वरन् त्वीलेरीज़ में उपस्थित हैं। विदेशों में क्रांतिकारी सिद्धान्तों का प्रकाशन करने की यह पद्धति नहीं है कि उक्त कार्य में शस्त्रों से काम लिया जाय, "क्योंकि शस्त्रधारी प्रचारकों का कोई सम्मान नहीं करता।" रोबेस्पेयर ने भविष्यवाणी की थी कि युद्ध का परिणाम अत्यन्त भयावह होगा। उसके कारण फ्रांस में एकसत्तात्मक शासन स्थापित हो जायेगा। "अन्य देशों के निवासियों तक मानवी अधिकारों की घोषणा को संगीनों की नोक पर ले

रोबेस्पेयर का विरोध

जाने की भूल न करो। घोषणा टुकड़े टुकड़े कर दी जायेगी, किन्तु संगीनों के घाव अच्छे न हो सकेंगे।"

फ्रांस की नाजुक हालत और रोबेस्पेयर के उपदेश के अतिरिक्त भी जिरोंदिन दल के सदस्यों ने अपनी प्रगति न बदली। वे बराबर युद्ध के प्रयत्न में लगे रहे।

जिरोंदिन दल का मंत्रिमण्डल मार्च १७९२ ई०

१४ जनवरी सन् १७६२ ई० को वर्नयो ने, यद्यपि वह तूर्गो का शिष्य था, सदस्यों के हृदयों पर यह चित्रित करने का प्रयत्न किया कि यदि युद्ध की घोषणा तुरन्त न की गई तो फ्रांस को एक अत्यन्त महान् संकट का सामना करना पड़ेगा। मार्च की पहली तारीख को सम्राट ल्योपोल्ड की मृत्यु होगई। इसी मास में उसका मित्र गस्तेवस भी संसार से विदा हो गया। यह देखकर जिरोंदस्त अत्यन्त प्रसन्न हुये एवं इसे दैवी प्रेरणा समझ कर युद्ध के लिये विशेष रूप से बेचैन हो उठे। इसलिये ब्रीसो ने फ्यों के शांतिप्रिय मन्त्रिमण्डल पर शक्तिपूर्ण आक्रमण करके उसे समाप्त कर दिया। इसके पश्चात् सम्राट ने जिरोंदिन दल से मन्त्रिमण्डल निर्माण करने को कहा। किन्तु ब्रीसो तथा उसके वे साथी जो संविधान-सभा के सदस्य थे संविधान के अनुसार कार्यपालिका में सम्मिलित न हो सकते थे। अस्तु उसकी राय से लूई ने मैडेम रोलैंड के पति को गृहमन्त्री तथा जेनीवा के एक सेठ को, जिसका नाम एतियेन क्लावियेर (Etienne Claviere) था तथा जो मीराबो का मित्र रह चुका था, अर्थ-मन्त्री नियुक्त किया। नये मंत्रिमण्डल का सब से प्रकाशित व्यक्तित्व दूमूरिये का था जो बाह्य मंत्री नियुक्त किया गया था। इन सबका पथप्रदर्शन ब्रीसो तथा उसके साथियों के हाथ में था, जो मैडेम रोलैंड के घर पर एकत्रित हुआ करते थे।

२० अप्रैल सन् १७६२ ई० को जिरोंदिन दल के मंत्रियों ने अस्ट्रिया और प्रशिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। इस समाचार को सुनकर पेरिस की जनता

युद्ध की घोषणा, २० अप्रैल, १७९२ ई०

अत्यन्त प्रसन्न हुई। उनकी तथा जिरोंदिन दल की आकांक्षा पूरी होगई थी। किन्तु उन्होंने आन्तरिक दोषों की ओर दृष्टि न करके केवल बाह्य विषयों की ओर ध्यान दिया था। विदेशों से युद्ध जो फ्रांस ने इस समय प्रारम्भ किया था लगभग २३ वर्ष तक कुछ अवकाशों के साथ चलता रहा। अन्त में उस से कोई विशेष लाभ न हुआ, क्योंकि सन् १८१५ ई० में फ्रांस की सीमाएँ लगभग वही थीं जो सन् १७६२ ई० में थीं। विधान-सभा ने युद्ध की स्वीकृति यह सोचकर दी थी कि उस से देश में एकता स्थापित हो जावेगी तथा सम्राट के वास्तविक निश्चय का भी पता चल जायेगा। लूई ने इस आशा से

स्वीकृति दी थी कि युद्ध में फ्रांस की पराजय होगी। अस्तु क्रांति का अन्त हो जायेगा। इस निर्णय से जेकोबिन दल के नेताओं अर्थात् रोबेस्पेयर तथा मारा आदि के अतिरिक्त सभी लोग प्रसन्न थे। मारा अप्रैल के मास में इंग्लैंड से लौट आया था एवं अपने पत्र 'ऐमी दू पीपिल' (Ami du Peuple) में युद्ध का विरुद्ध प्रारम्भ कर दिया था। उसने भविष्यवाणी कर दी थी कि यदि युद्ध किया जायेगा तो इसका प्रथम क्रम विनाशकारी प्रमाणित होगा। दूसरा इससे कम विनाशकारी तथा अन्तिम कदाचित सफल प्रमाणित होगा। मारा की भविष्यवाणी अक्षरश: सत्य प्रमाणित हुई। वास्तव में हुआ भी ऐसा ही।

पराजय और अपमान, (अप्रैल–सितम्बर)

तीन सेनायें अस्ट्रियन नेदरलैंड्ज़ (बेल्जियम) पर आक्रमण करने को भेजी गई। प्रथम, राइन नदी की दिशा में गई। इसका सेनाध्यक्ष लूकनेर (Luckner) था। द्वितीय सेना लोरेन की दिशा में भेजी गई। इसका अध्यक्ष लाफेयत था। तृतीय सेना उत्तर-पूर्व की ओर रवाना हुई। इसका सेनापति रोशम्बू (Rochambeau) था। छ: मास तक फ्रांसीसी सेनाओं की पराजय हुई। उन्हें बड़ा अपमान भी सहन करना पड़ा। इसका कारण यह था कि प्रथम तो फ्रांस की ओर सैनिकों तथा पदाधिकारियों की कमी थी। दूसरे, सैनिक तथा सेनाध्यक्ष जो थे भी, वे या तो योग्य न थे अथवा उनमें देशभक्ति की भावना की कमी थी। सैनिक पदाधिकारियों को और पदाधिकारी सैनिकों को सन्देह की दृष्टि से देखते थे। रसद का प्रबन्ध भी संतोषजनक न था। फ्रांसीसी दुर्गों की अवस्था ठीक न थी एवं सब से मुख्य बात यह थी कि मेरी ऐन्तोयनेत और राजकुमारी ऐलिज़बेथ ने जो लूई की बहिन थी युद्ध के नक़शे पूर्व ही से शत्रु के पास भेज दिये थे। ऐसी दशा में आवश्यक था कि फ्रांस के युवकों को पराजय और दु:ख मिले। तीनों ही सेनायें युद्धक्षेत्र से पीठ दिखाकर भाग आईं। उन्होंने अपने एक जनरल का वध भी कर दिया। उनकी दशा पर अस्ट्रिया के सैनिक हँसते थे और कहते थे, "हमें तलवारों की आवश्यकता नहीं है, वरन् कोड़ों की आवश्यकता है।"

यह एक ऐसा अवसर था कि यदि अस्ट्रिया के सेनाध्यक्ष प्रयत्न करते तो पेरिस तक बढ़ सकते थे। उसके सेनाध्यक्ष ड्यूक आफ़ ब्रंज़विक (Duke of Brunswick) ने वहां तक पहुंचने का सीधा मार्ग निकाल लिया था, किन्तु उन्होंने इससे लाभ न उठाया। उन्होंने सीमान्त दुर्गों तक पर अधिकार न किया। वे यह सोचकर प्रसन्न होते रहे कि अब तो विजय मुकट हमारे सिर पर है। उनके आगे न बढ़ने का एक विशेष कारण यह भी था कि उस समय तक प्रशा की सेनायें युद्धक्षेत्र में न आ सकीं थीं। कारण कि फ्रैड्रिक विलियम ने २५ जौलाई से

प्रथम युद्ध की घोषणा न की थी। उधर १ मई को कैथरिन ने पोलैंड पर आक्रमण कर दिया था। ये सब बातें ल्योपोल्ड के पुत्र व उत्तराधिकारी फ्रांसिस द्वितीय के लिये असमंजस का विषय थीं।
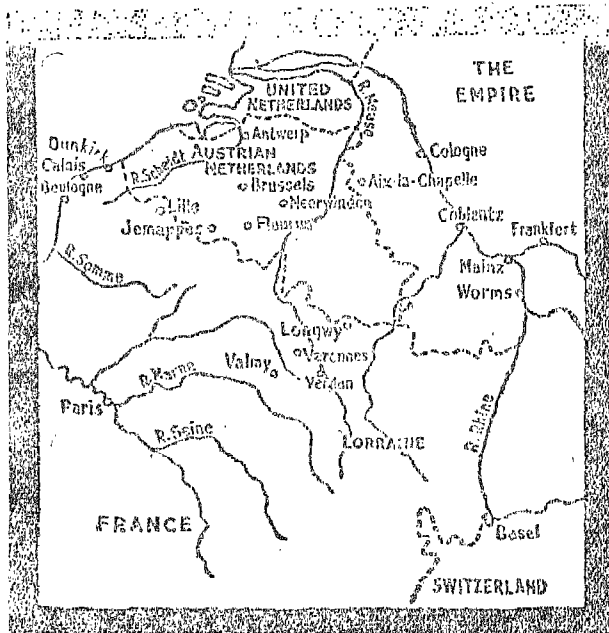
फ्रांस के पूर्वी तथा उत्तरी-पूर्वी रणक्षेत्र, १७९२-९५ ई०

गिरोंदिन दल के मंत्रिमंडल का अन्त

विधान-सभा के सदस्यों को फ्रांसीसी सेनाओं की पराजय चिन्ता का कारण प्रमाणित हुई। सब से प्रथम उन्होंने फ्रांस के विद्रोहियों को दंड देने का प्रयत्न किया। इसके पश्चात् उन्होंने सीमा की ओर कुमक भेजने की कोशिश की। मई के अन्तिम सप्ताह में उन्होंने यह घोषणा प्रकाशित की कि यदि किसी ज़िले के बीस निवासी जो मत देने के अधिकारी हैं किसी शपथ न लेने वाले पादरी के विरुद्ध अभियोग लगावेंगे तो वह देश से निर्वासित कर दिया जायेगा। जून के प्रथम सप्ताह में उसने यह आज्ञा दी कि २० हज़ार राष्ट्रीय रक्षा दल के सैनिक, जो १४ जौलाई के उत्सव में सम्मिलित होने को विभिन्न प्रान्तों से आ रहे थे, पेरिस के निकट ठहराये जायें एवं युद्धक्षेत्र के लिये तैयार किये जायें।

किन्तु सोलहवें लूई ने दोनों आज्ञाओं को स्वीकृति न देकर रोक दिया। रोलेंड ने उसे सीधे मार्ग पर लाने का भरसक प्रयत्न किया, किन्तु वह कृतकार्य न हुआ। इसके विरुद्ध लूई ने जिरोंदिन दल के मंत्रियों को पदच्युत करके अपनी इच्छा के अनुसार मंत्री नियुक्त किये।

१३ जून सन् १७९२ ई० को देश भक्त मंत्री हटाये गये थे। २० जून सन् १७९२ ई० को जिरोंदिन दल की ओर से सम्राट के विरुद्ध एक ज़ोरदार प्रदर्शन किया गया। इस में पेरिस के निर्धन, अशिक्षित तथा निम्न श्रेणी के लोगों ने प्रमुख भाग लिया। उन में बाजारी स्त्रियां, मछली बेचने वाले, दस्तकार तथा इसी प्रकार के अन्य लोग भी सम्मिलित थे। ये सब 'सम्राट के प्रतिनिषेध का अन्त करो' और 'मंत्रियों को वापस बुलाओ' के नारे लगाते हुये त्वीलेरीज़ की तरफ़ बढ़े एवं सभा भवन के निकट एकत्रित हुये। भीतर प्रविष्ट होकर उनके एक वक्ता ने भड़कीली वक्तृता दी। 'राष्ट्र की ओर से, जिसकी दृष्टि इस नगर की ओर लगी हुई है, हम यहां यह बतलाने के लिये आये हैं कि जनता तैयार है और इस योग्य है कि किसी भी आकस्मिक संकट का सामना कर सके। वह चाहती है कि सम्राट से राष्ट्र के अपमान का बदला लेने के लिये कोई विशेष कार्य करे।' इसके पश्चात् सब राजभवन के उद्यानों में प्रविष्ट हुये। फिर जनसमूह ने, जिसकी संख्या २० हज़ार बतलाई जाती है, अन्तःभाग में प्रविष्ट होने का प्रयत्न किया। सैकड़ों मनुष्य जयघोष के साथ सम्राट के कमरे में घुस गये एवं उसे दो घंटे तक एक खिड़की की ओर रोके रक्खा। उनको प्रसन्न करने के लिये उसने लाल रंग की क्रांति की टोपी धारण कर ली एवं राष्ट्र के नाम पर मद्य पान किया। किन्तु उन्होंने उसे किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचाई। इस से सिद्ध होता है कि यदि लूई राष्ट्र द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलना स्वीकार कर लेता तो वह न केवल अपना सिर वरन् अपने वंश के राजसिंहासन को भी बचा लेता।

२० जून सन् १७९२ ई० का प्रदर्शन

जिस समय यह जनसमूह सम्राट के प्रासाद में प्रविष्ट हो रहा था उसी समय पीत वर्ण तथा तीव्र दृष्टि रखने वाला एक नवयुवक, जो देखने में सैनिक प्रतीत होता था, उसका नाटक बादशाह के उद्यानों से देख रहा था। उसने शासन की उस समय की असावधानी पर आश्चर्य प्रकट करते हुये अपने विचारों का प्रकाशन एक साथी से इन शब्दों में किया कि "यदि मैं सम्राट होता तो इन सब बातों को सहन न करता।" यह युवक नेपोलियन बोनापार्ट था।

२० जून के प्रदर्शन के विषय में जो मत कोर्सिका के इस अज्ञात नव-

युवक का था, वही मत कुछ अन्य महान् व्यक्तियों का भी था। उस दिन के वार से सम्राट यदि बच गया था तो शीघ्र ही इसके कारण राजतंत्र का अन्त होना अवश्यम्भावी था। अमेरिका के प्रांतपति मोरिस ने जो इस समय पेरिस में था, अपनी डायरी में लिखा था, "मेरा विचार है कि संविधान ने आज अंतिम दर्द भरी आवाज़ निकाली है।" इसका यह अर्थ था कि फ्रांस में राज-तंत्र का अंत वास्तव में समीप ही था। मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों को इस बात का निर्णय करना था कि सम्राट को क्रांति पर कुरबान किया जाय अथवा क्रांति को सम्राट पर। जिरोंदिन दल के सदस्य बर्नयो तथा ज्होंसोने आदि ने सोलहवें लूई को बहुत कुछ समझाया, किन्तु उसने उनके उपदेश को किंचित भी महत्व न दिया। उसकी दृष्टि उत्तर-पूर्व की ओर लगी हुई थी। २५ जौलाई को बर्नयो ने अंतिम संदेश सम्राट के पास भेजा, किन्तु उसका भी कोई फल न निकला।

सम्राट का बलिदान किया जाय अथवा क्रांति का ?

बर्नयो ने अपना सन्देश व्यर्थ ही भेजा था। कारण कि उसी दिन मेरी ऐन्तोयनेत तथा भागे हुये कुलीनों के कहने से अस्ट्रिया और प्रशा की सेनाओं के सेनाध्यक्ष ड्यूक आफ़ ब्रन्जविक ने अपनी विख्यात घोषणा प्रकाशित की। इसके द्वारा यह धमकी दी गई थी कि जो असैनिक लोग आक्रमणकारियों को रोकने का प्रयत्न करेंगे वे वध कर दिये जायेंगे तथा उनका घर जला दिया जायेगा। राष्ट्रीय रक्षा दल के सदस्य जो सुसज्जित अवस्था में बन्दी बनाये जायेंगे, उन्हें दंड दिया जायेग। यदि सम्राट, सम्राज्ञी तथा सम्राट के परिवार को तनिक भी हानि पहुँचाई जायेगी तो मित्रदल पेरिस नगर में वध और रक्त की नदियों द्वारा तथा अपराधी क्रांतिकारियों को कठिन दण्ड देकर बदला लेगा। इस मूर्खतापूर्ण घोषणा ने, जो अपमानजनक शब्दों में की गई थी, सम्राट के भाग्य का निर्णय कर दिया। अब क्रांतिकारियों पर यह बात स्पष्ट हो गई कि फ्रांस के सम्राट तथा विदेशी सेनाओं के बीच अवश्य कोई समझौता हो चुका है तथा ये दोनों उस कल्याणकारी कार्य को नष्ट करने का निर्णय कर चुके हैं जो उस समय तक क्रांति के समय किया गया था।

ब्रन्ज़विक की घोषणा, २५ जौलाई १७९२ ई०

ब्रन्ज़विक की घोषणा के पाँच दिन बाद मार्सेल्ज़ नगर से लगभग ५०० स्वयंसेवक युद्ध में भाग लेने के लिये पेरिस आये। इसका विशेष महत्व यह है कि वे एक प्रसिद्ध सैनिक गान गाते हुये आये थे जिसे न केवल फ्रांस वरन् यूरोप के अन्य देशों में भी मान्यता मिली। इसको सैनिक उस समय गाते हैं जब वे कूच करते हैं। यह

मार्सेल्ज़ के स्वयंसेवक

गान भी 'मार्सेल्ज़' ही कहलाता है। वास्तव में यह केवल उक्त स्वयंसेवकों के लिये रचा गया था। इस में यह बतलाया गया है कि किसी राष्ट्र को, जिसने हाल ही में स्वतंत्रता प्राप्त की है, उन लोगों का सामना किस प्रकार करना चाहिये जो उसकी स्वतंत्रता को छीनने के लिए इच्छुक हैं।

पंद्रहवाँ अध्याय

राजतन्त्र का अन्त

ब्रन्जविक की घोषणा पेरिस नगर में १ अगस्त को प्रकाशित की गई। उसने यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी कि राजतन्त्र तथा क्रांति, इन दोनों में से एक ही स्थापित रह सकता है। उक्त घोषणा का लेख वास्तव में राजपरिवार के षड्यंत्र से राजधानी ही में तैयार किया गया था। किन्तु उसका सुधार प्रशा की लेखनी से किया गया था। फलत: जिन विचारों का प्रकाशन उसमें किया गया था वे राज-परिवार तथा भागे हुये लोगों के थे। किन्तु जो धमकियाँ उस में दी गई थीं तथा किसी अन्य व्यक्ति के दृष्टिकोण को समझने का प्रयत्न न करना, ये दोनों विशेषतायें प्रशा निवासियों के मस्तिष्क की थीं। गवर्नर मोरिस ने अपनी डायरी में उसकी मुख्य बातें दो सप्ताह पूर्व ही लिख दी थीं! जिस दिन यह घोषणा प्रकाशित की गई थी उस दिन उसने वाशिंगटन के सचिव जाफर्सन को लिख दिया था कि यदि सम्राट को नष्ट न कर दिया गया तो वह शीघ्र ही स्वयं को स्वाधीन कर लेगा।

ब्रन्जविक की घोषणा का सब से प्रकट प्रभाव पेरिस के निवासियों तथा वहाँ के कम्यून पर पड़ा। सन् १७८९ ई० के निर्वाचनों के लिये उपरोक्त नगर को ६० ज़िलों में विभाजित कर दिया गया था। सन् १७९० ई० के क़ानून से ये भंग कर दिये गये थे एवं नगर को ४८ सेक्शनों में विभाजित कर दिया गया था। इसका उद्देश्य यह था कि प्रत्येक भाग में

पेरिस का कम्यून

मत देने वाले नागरिकों की संख्या बराबर हो जाय। यही ज़िले पेरिस की म्यूनिसिपैलिटी के १४८ सदस्यों को भी निर्वाचित करते थे। इस प्रकार प्रत्येक ज़िले के भाग में ३ सदस्य आ जाते हैं। शेष चार सदस्य मेयर, एक उच्च क़ानूनी पदाधिकारी (Prooureur) तथा दो छोटे क़ानूनी पदाधिकारी थे। इन

सब का निर्वाचन सीधे सेक्शनों की ओर से अलग किया जाता था। २५ जौलाई को विधान-सभा ने सेक्शनों को स्थायी रूप से स्वीकार कर लिया। अस्तु अब वे स्वेच्छापूर्वक सभा कर सकते थे। इसके दो दिन पश्चात् सेकशनों के निवासियों ने एक सभा (कम्यून) स्थापित की जिसका कर्तव्य उनके विचारों तथा कार्यों में सामंजस्य उत्पन्न करना था। ३० जून को उन्होंने यह बात भी निश्चित कर दी कि जिन लोगों को वोट देने का अधिकार प्राप्त नहीं हो सका है, वे भी उनके अधिवेशन के समय उपस्थित हो सकते हैं। इस से शासन के विरुद्ध सम्मिलित आधार पर आन्दोलन करने के लिये मार्ग बन गया। इस प्रकार पेरिस की म्यूनिस्पेलिटी अथवा कम्यून की शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती रही। उसके द्वारा वहाँ के निवासियों का साहस भी बढ़ता गया तथा वे राज्यक्रांति में प्रमुख रूप से भाग लेने के लिए तैयार थे।

पहली अगस्त को ब्रन्ज़विक की घोषणा का समाचार पेरिस में प्रकाशित हुआ। इस से वहाँ के निवासियों के क्रोध की सीमा न रही। उनका जोश व उत्साह भी असीम हो गया और वे पूर्ण शक्ति से शत्रु का सामना करने के लिये तत्पर हुये। इस घोषणा के कारण साम्प्रदायिक वैमनस्य भी कम हो गया एवं सब लोग सम्राट, भागे हुये फ्रांसीसियों तथा विदेशी सम्राटों से, जो फ्रांस पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहे थे, बदला लेने के लिए बेचैन हो उठे।

कारनो का नया सिद्धान्त

जिस दिन ब्रन्ज़विक की घोषणा प्रकाशित की गई थी उसी दिन लाज़ारे कारनो (Lazare Carnot) ने, जो विधान-सभा का प्रतिनिधि था, उसके सम्मुख 'सशस्त्र राष्ट्र' का एक नवीन सिद्धान्त रक्खा। उसने कहा कि "जिस समय से खतरा आरम्भ होता है उसी समय से प्रत्येक नागरिक सैनिक बन जाता है।" यह सिद्धान्त इतना हितकारी प्रमाणित हुआ कि उसका अनुसरण करके फ्रांस के निवासियों ने क्रांति में सफलता पाई। इसके पश्चात् कारनो के ज़ोर देने पर सभा ने एक नये प्रकार के भाले के बनाये जाने की आज्ञा दी, जो देखने में भद्दा अवश्य था किन्तु उस से काम अवश्य निकाला जा सकता था। इस भाले के निर्मित हो जाने के पश्चात् क्रांतिकारियों को शस्त्रों की कमी नहीं रही। सन् १८१४ ई० में नैपोलियन बोनापार्ट ने भी उपरोक्त भाले का प्रयोग पेरिस की सुरक्षा के लिये किया था।

३ अगस्त को पेतियों ने विधान-सभा के सम्मुख एक प्रार्थनापत्र उपस्थित

किया जो पेरिस के अड़तालीस सेक्शनों की ओर से भेजा गया था। इस में राजतन्त्र का अन्त करने और नवीन संविधान के बनाने के लिये राष्ट्रीय कन्वेंशन अथवा प्रसभा (National Convention) के बुलाये जाने की इच्छा प्रकट की गई थी, किन्तु यह प्रार्थनापत्र अस्वीकृत कर दिया गया। इसका मुख्य कारण यह था कि ब्रीसो और जिरोंदिन दल के अन्य लोग उस समय तक संघात्मक शासन (Republican Government) के नाम से उसी प्रकार डरते थे जिस प्रकार वे एक वर्ष पूर्व डरते थे। दूसरे दिन एक साधारण सेक्शन के निवासियों ने सभा में कुछ प्रतिनिधि भेजकर यह धमकी दी कि यदि उसकी ओर से देश की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध न किया गया तो वे इस महत्वपूर्ण कार्य को अपने हाथों में ले लेंगे। इस सब के बाद भी सभा ने उस ओर ध्यान नहीं दिया। ८ अगस्त को लाफ़ेयत पर अभियोग लगाये जाने का प्रश्न उपस्थित हुआ। उस पर यह अपराध लगाया गया था कि २८ जून को उसने रणक्षेत्र से लौटकर सम्राट को अपनी शरण में लेने तथा उन लोगों को दण्डित कराने का प्रयत्न किया था जिन्होंने २० जून के प्रदर्शन में भाग लिया था, किन्तु लाफ़ेयत बिल्कुल सुरक्षित रहा। इस प्रकार की बातों से सर्वसाधारण ने यह परिणाम निकाला कि विधान-सभा अवश्य ही किसी दिन सम्राट से मिल जायेगी। ऐसी अवस्था में आवश्यक था कि सब लोग एकमत होकर सम्राट के विरुद्ध कोई महान् प्रदर्शन करें एवं उसे पदच्युत करके उसके अधिकारों को राष्ट्र को सौंप दें। अस्तु ६ अगस्त को सन्ध्या को पेरिस के ४८ भागों ने एकमत होकर प्राचीन म्यूनिस्पेलिटी अथवा कम्यून को, जिसके सदस्य पुरानी पद्धति से निर्वाचित हुये थे, स्थगित कर दिया तथा उसके स्थान पर विप्लवी कम्यून (Insurrectionary Cummune) को स्थापित कर दिया। इस में प्रत्येक सेक्शन से तीन प्रतिनिधि सम्मिलित हुये। इसके अतिरिक्त ५ पदाधिकारी भी उसके सदस्य बने। इन में मेयर पेतियों, क़ानूनी अफ़सर मेनूवेल (Manuel) तथा उसका अधीन पदाधिकारी दांतों (Danton) प्रमुख थे। वास्तव में उसी दिन से क्रांति का नेतृत्व पेरिस के कम्यून तथा जेकोबिन दल के हाथों में आ गया।

विप्लवी कम्यून

६ अगस्त की रात्रि पेरिस के निवासियों के लिये एक डरावनी रात्रि थी। उस समय सब लोग जागते रहे एवं शक्तिपूर्ण आक्रमण के लिये तैयार होते रहे। स्त्रियां और बालक अपने प्रिय जनों के लिए कल्याण की मान्यता करते रहे, घंटे बजते रहे और मार्गों में चहलपहल रही। उस रात को पेरिस निवासियों पर क्या बीती, इसका अनुमान हम मध्यम श्रेणी के एक परिवार की दशा से कर

९ अगस्त की डरावनी रात्रि

सकते हैं, जिसका वर्णन हम निम्न पंक्तियों में करेंगे। उसको लेखनीबद्ध करने वाली कामील देमूलाँ की पत्नी लूसील (Lucile) है। ये दोनों कार्दालियर्स के मुहल्ले में दांतों के निवास स्थान के निकट रहते थे।

"संध्या के समय हम लोग दांतों की सास मेडेम चार्पेन्तियर को घर पहुंचाने गये। ऋतु ऐसी अच्छी थी कि एक दो बार हमने गली में सैर की। अगणित व्यक्ति इधर से उधर जा रहे थे। हम लोग लौट आये और पैलेस-द-ओदेओं के सन्निकट बैठ गये। कुछ 'देश-भक्त' 'राष्ट्र जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुये आये। इसके पश्चात् कुछ सवार आये तथा सब से अन्त में सर्वसाधारण के बड़े समूह आये। मैं भयभीत हुई तथा दांतों की स्त्री से कहा, 'आओ घर चलें'। वह मेरे भयभीत होने पर हंसी। किन्तु मैंने जब ज़ोर दिया तो वह भी भयभीत हुई और हम लोग चल दिये। मैंने उसकी मां से कहा, 'सलाम, आप शीघ्र ही घंटे की ध्वनि सुनेंगी।' जब मैं दांतों के घर पहुंची तो मैंने मेडेम राबर्ट तथा कुछ अन्य लोगों को वहां पाया। दांतों जोश में भरा हुआ था। मैं मेडेम राबर्ट के पास दौड़ी गई एवं पूछा कि क्या आज घंटा बजाया जायेगा? उसने उत्तर दिया, 'हाँ, आज ही ऐसा होगा।' मैंने प्रत्येक शब्द को सुन तो लिया किन्तु शान्त रही। शीघ्र ही मैंने देखा कि सब लोग शस्त्र ग्रहण कर रहे हैं। कामील, मेरा सबसे प्रिय कामील एक बन्दूक लेकर आया। 'हे भगवान' कह कर मैं एक कोने में चली गई एवं अपने हाथों से मुंह को ढक लिया तथा चिल्लाना आरम्भ किया। किन्तु मैं यह न चाहती थी कि अधिक निर्बलता प्रकट करूं या उन सब लोगों के सम्मुख कामील से यह कहूं कि मैं इस बात को पसन्द नहीं करती कि वह इस काम में भाग ले। अतएव मैं इस बात की प्रतीक्षा करती रही कि मुझे उस से इस प्रकार से वार्तालाप करने का संयोग प्राप्त हो कि अन्य लोग न सुन सकें। मैंने उस पर समस्त आशंकाओं को प्रकट कर दिया। उसने यह कहते हुये मेरा उत्साह बढ़ाया कि मैं दांतों के पास से न हटूंगा। किन्तु मैंने इसके पश्चात् सुना है कि उसने स्वयं को मोर्चे पर अवश्य सामने कर दिया था। कामील ने उस व्यक्ति के समान व्यवहार किया जिसने मरने का निर्णय कर लिया हो। जब कभी कोई सैनिक दल हमारे मकान से निकलता था तो मैं विचार करती कि मैं अपने मित्रों से न मिल सकूंगी। मैं स्वयं को मिलने के कमरे में जहां प्रकाश न था विलुप्त करने को चली गई, जिस से मैं उन समस्त तैयारियों को न देख सकूं। गली में कोई भी न था। प्रत्येक व्यक्ति अपने घर चला गया था। हमारे देशभक्तों का जाना प्रारम्भ हुआ। मैं दुखित तथा आतंकित होकर एक चारपाई के सन्निकट बैठ गई। कभी कभी मेरी आंख लग जाती थी। यदि मैं बोलने का प्रयत्न करती तो ठीक से शब्द न निकलते थे।

दांतों विश्राम करने चला गया। वह अधिक भयभीत न दिखलाई पड़ता था। उसने शायद ही कभी घर से बाहर पैर रक्खा हो। अब लगभग अर्धरात्रि व्यतीत हो चुकी थी। लोग उसकी खोज में कई बार आये। अन्त में वह नगर भवन को चला गया। कार्दीलियर्स के घंटे का बजना प्रारम्भ हुआ। वह लगातार देर तक बजता रहा। मैं बिल्कुल अकेली तथा आंसुओं से भीगी, खिड़की पर झुक कर अपने मुख को रूमाल से ढके हुये उस गम्भीर घोष को सुनती रही। लोगों ने मुझे धैर्य देने का प्रयत्न किया, किन्तु कोई लाभ न हुआ। ऐसा प्रतीत होता था कि उस मृत्यु को आवाहन करने वाले दिन से पूर्व जो दिन व्यतीत हो गया था, हमारे जीवन का अन्तिम दिन था। दांतों लौट आया। मैडेम राबर्ट अपने पति के विषय में पूछने के लिए जो अपने सेक्शन की ओर से लूकसोंबूर भेज दिया गया था, दांतों के पास दौड़ी आई, किन्तु उसने उसके प्रश्नों का बिल्कुल व्यर्थ उत्तर दिया एवं वह चारपाई पर लेट गया। लोग समाचार लेकर कई बार आये। कुछ अच्छे समाचार लाये तथा कुछ बहुत ही बुरे समाचार। मैं समझ गई कि उनका विचार त्वीलेरीज़ पर आक्रमण करने का है। मैंने सिसकियां भरते हुये सब को बतलाया कि मेरा विचार है कि मैं मूर्छित हो जाऊंगी। मैडेम राबर्ट अपने पति के विषय में पूछ रही थी; किन्तु कोई भी उसको कुछ न बतला सकता था। उसका विचार था कि वह अपने सेक्शन की सेना के साथ कूच कर रहा होगा। उसने मुझ से कहा कि यदि वह मारा गया तो मैं उसके पश्चात् जीवित न रह सकूंगी, किन्तु सामने दांतों है। उसको नेता समझ लिया जाये। यदि मेरा पति मारा जायगा तो मैं अवश्य उसको (दांतो को) वध करके पत्नी होने का कर्तव्य पूरा करूंगी।

दूसरे दिन प्रातः पेरिस के क्रांतिकारियों ने त्वीलेरीज़ पर वह भयंकर आक्रमण किया जिसकी तैयारियां दो सप्ताह से की जा रही थीं तथा जिसकी प्रतीक्षा सम्राट वर्षों से कर रहा था। लगभग ७ बजे उनका प्रथम दल राजप्रासाद के पीछे दृष्टिगोचर हुआ। वे लोग शस्त्रों से सज्जित थे, किन्तु अधिकतर लोगों के पास केवल भाले थे, जिनका उल्लेख इसके पूर्व किया जा चुका है।

राजप्रासाद पर आक्रमण, १० अगस्त १७९२ ई०

प्रासाद की रक्षा का प्रबन्ध पहले ही कर दिया था। वहां कुल मिलाकर पांच हज़ार शस्त्र सज्जित युवक थे। उन में नौ सौ स्विज़ रक्षा दल तथा दो हज़ार राष्ट्रीय रक्षा दल के सैनिक थे। लूई मुक़ाबिले का पूरा संकल्प कर चुका था। जनसमूह के विरुद्ध युद्ध में उसे सफलता की पूरी आशा थी। इसलिये कि प्रथम तो राजप्रासाद से उस पर सरलता से लक्ष्य लगाया जा सकता था। दूसरे, सम्राट के रक्षक अनुभवी तथा नियमानुसार क़वायद सीखे हुये थे। अतः हम कह सकते हैं कि त्वीलेरीज़

पर अधिकार करना बेस्तील की तुलना में प्रत्येक प्रकार से दुष्कर था। यदि कुछ कमी थी तो यह कि प्रासाद में बारूद की कमी थी। किन्तु उसमें इतनी बारूद अवश्य थी कि उसकी सहायता से अनुभवहीन जनसमूह को, जिसमें अधिकतर पेरिस के नीचे स्तर के लोग अर्थात् बाल बनाने वाले, ज़ीनसाज़, बढ़ई, लोहार, मकानों पर वार्निश करने वाले, दर्ज़ी, घरों के चाकर, सारांश यह कि ६० विभिन्न वृत्तियों के व्यक्ति सम्मिलित थे, सरलता से भगाया जा सकता था। जैसे ही आक्रमणकारी अधिक निकट आये वैसे ही कुछ राष्ट्रीय रक्षा दल के युवकों ने राष्ट्रीय नारे लगाये। इस भय से कि कहीं रक्तपात न हो सम्राट ने राजप्रासाद से भाग जाने का संकल्प कर लिया तथा मेरी ऐन्तोयनेत चिल्लाती रह गई कि हमको ठहरना चाहिये और सामना करना चाहिये। इस से पूर्व कि एक भी गोली दाग़ी जाय सम्राट का परिवार उद्यान के बीच से विधान-सभा के भवन की ओर भागता हुआ दृष्टिगोचर हुआ। वहां उसे अध्यक्ष के बराबर स्थान दिया गया। वहां से वह सदस्यों के वादविवाद को, जो उसके भाग्य का निर्णय करने को हो रहा था, सुनता रहा।

सम्राट ने अपनी सेना का साथ छोड़ दिया था, किन्तु उसने राजप्रासाद की रक्षा को रोकने की आज्ञा नहीं दी थी। अतएव स्विज़ तथा अन्य सैनिक भीतर आकर सामना करते रहे। किन्तु राष्ट्रीय रक्षा दल क्रांतिकारियों से मिल गया। प्रारम्भ में तो क्रांतिकारी भागते हुये दिखलाई पड़े, किन्तु इसके पश्चात् कुमक आगई एवं वे राजप्रासाद में घुस गये। जब लूई को इसका समाचार ज्ञात हुआ तो उसने एक पर्चा लिखकर यह आज्ञा प्रासाद में भेज दी कि "त्वीलेरीज़ के सैनिकों के लिये सम्राट की आज्ञा है कि वे शस्त्र डाल दें एवं अपनी बैरिकों में लौट जायें।" इस से अधिक मूर्खता की आज्ञा और क्या हो सकती है? परिणाम वही हुआ जिसकी आशा की जा सकती थी। नौ सौ स्विज़ सैनिकों में से केवल तीन सौ सैनिक जीवित बचे। शेष सब वध कर डाले गये अथवा युद्ध करते हुये काम आये। क्रांतिकारियों की ओर ३७६ व्यक्ति जान से मारे गये अथवा घायल हुये। घायल होने वालों में दो स्त्रियां भी थीं। उस दिन न जाने कितने अज्ञात व्यक्ति हाथों में भाला लिये एक ही दिन में क़ौमी शहीद बन गये थे। यह विजय सर्वसाधारण की विजय थी।

१० अगस्त के आक्रमण के समय विजयलक्ष्मी सर्वसाधारण के हाथों क्यों लगी? सम्राट ने अन्तिम अवसर पर अपना विचार क्यों परिवर्तित कर दिया? सभा उसकी ओर से क्यों निश्चिन्त रही? इस प्रकार के कुछ प्रश्न विचारणीय हैं। इन पर प्रकाश डाले बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते। ६ अगस्त की सन्ध्या को

राजप्रासाद में तीन बड़े पदाधिकारी उपस्थित थे जो राजपरिवार की रक्षा का पूरा प्रबन्ध कर सकते थे,—पेरिस का मेयर पेतियों (Petion), पेरिस के डिपार्टमेंट का क़ानूनी अधिकारी रदेरेर (Roederer) तथा राष्ट्रीय रक्षा दल तथा राजप्रासाद के अन्य सैनिक दलों का पदाधिकारी मानदेद (Mandat)।

राष्ट्रीय विजय का वास्तविक रहस्य

ये तीनों उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्ति थे तथा इन से किसी प्रकार की उदासीनता की आशंका न थी। सम्भव है कि विधान-सभा के सदस्यों का यह विचार हो कि किसी भी आकस्मिक आक्रमण को रोकने के लिये ये तीनों पदाधिकारी तथा तीन हज़ार सेना काफ़ी है। किन्तु उपरोक्त अधिकारियों में से एक भी सम्राट के काम न आ सका। पेतियों को लगभग दो बजे सुबह सभा में बुला लिया गया था। रदेरेर ने प्रथम तो राजपरिवार को, जो समस्त रात्रि इस आशा में बैठा रहा था कि अब सबों के प्राणों का अन्त होने वाला है, धैर्य दिलाया, किन्तु इस के पश्चात् जब संकट का सामना हुआ तो उसने लूई तथा उसके परिवार को भयभीत करके प्रासाद से विदा होने तथा सभा की शरण में आने को तत्पर कर लिया। शेष बचा मानदेद। जब उसने प्रासाद की रक्षा का पूरा प्रबन्ध कर लिया तो वह नगर भवन में बुला लिया गया। वहां वह बन्दी कर लिया गया और शीघ्र ही वध कर दिया गया। यदि उपरोक्त अधिकारी प्रासाद में उपस्थित रहते एवं वे सम्राट के प्रति विश्वासघात न करते तो पेरिस के जनसमूह का उन पर विजय पाना असम्भव था। जो कार्य साहस तथा वीरता से पूर्ण न किया जा सकता था वह धोखा तथा कृतघ्नता के द्वारा सफलता के स्थान तक पहुंचाया गया था। यही १० अगस्त की राष्ट्रीय विजय का वास्तविक रहस्य है।

आक्रमण के परिणाम

१० अगस्त के राष्ट्रीय आक्रमण के कई परिणाम निकले। यह आक्रमण जेकोबिन दल की ओर से किया गया था। अत: उसकी शक्ति में अत्यधिक वृद्धि हुई। उसके प्रतिद्वन्दी जिरोंदिन दल के लोगों का महत्व कम हो गया। पेरिस के सर्वसाधारण तथा क्रांतिकारी कम्यून, जो जेकोबिन दल के सहायक थे, इन दोनों की शक्ति बढ़ गई तथा वे अपने मित्रों की सहायता से क्रांति के कार्य को तीव्रता से आगे बढ़ाने का प्रयत्न करने लगे। उधर विधान-सभा ने बर्नियों की सम्मति से सम्राट को तुरन्त कुछ काल के लिये पदच्युत कर दिया एवं फ्रांस के लिये नवीन संविधान निर्माण करने के लिये राष्ट्रीय कन्वेंशन (National Convention) के आमंत्रित किये जाने के लिए प्रस्ताव भी स्वीकृत करा दिया। भागे हुये लोग तथा शपथ न लेने वाले पादरियों के विरुद्ध जो आज्ञायें लूई की ओर से स्थगित कर

दी गई थीं वे पुन: कार्यशील बनाई गईं। अतएव समस्त फ्रांस में शपथित पादरी बंदी बनाये गये। शासन का कार्य मन्त्रियों की एक समिति के अधीन कर दिया गया, जिसके अधिकतर सदस्य जिरोंदिन दल से लिये गये थे। जैसे गृह-प्रबन्ध रोलैंड को तथा आर्थिक प्रबन्ध क्लावियेर को सौंपा गया। इसी प्रकार लब्रँ वाह्य मन्त्री नियुक्त किया गया। दांतों ने १० अगस्त के आक्रमण में किसी प्रकार का भाग नहीं लिया था। तथापि क्रांतिकारी कम्यून को प्रसन्न करने के लिये एवं संभवत: इसलिए कि उसने सर्वसाधारण में जागृति उत्पन्न करने का पूरा प्रयत्न किया था, उसको न्याय मंत्री नियुक्त कर दिया गया। किन्तु वह जेकोबिन दल का प्रसिद्ध नेता था। १३ अगस्त को सोलहवाँ लुई अपने परिवार के साथ टेम्पिल (Temple) नाम के दुर्ग में बंदी कर दिया गया। अगस्त सन् १७९२ ई० के मंत्रिमंडल में अधिकतर मन्त्री जिरोंदिन दल से लिये गये थे। यह इस बात का प्रकट प्रमाण है कि उस समय तक जेकोबिन दल का महत्व अधिक न बढ़ा था।

१० अगस्त को पेरिस के सर्वसाधारण तथा मध्यम श्रेणी के नेताओं ने सम्राट के प्रासाद पर आक्रमण किया था एवं २१ सितम्बर को प्रसभा (Convention) की बैठक प्रारम्भ हुई थी। इन दोनों तारीखों के बीच का समय फ्रांस की राज्यक्रांति के इतिहास में कुव्यवस्था का समय था। सम्राट और १७९१ के संविधान के हट जाने से शासन कार्य विधान-सभा तथा उसके नियुक्त किये हुये मंत्रियों की परिषद् के हाथ में आ गया था। किन्तु राजधानी पर उन्मूलनवादी नेताओं का अधिकार था। उनकी सहायता के लिए सर्वसाधारण जो जोश व उत्साह से अंधे हो रहे थे तत्पर थे। शासनाधिकारियों की कोई परवाह न करता था। उनका अपमान सार्वजनिक ढंग पर किया जाता था। लाफ़ेयत ने १० अगस्त की घटना का घोर विरोध प्रकट करके स्वयं को शत्रु के हाथों में सौंप दिया था। उत्तरी-पूर्वी सीमा पर मित्र दल की शक्ति बराबर बढ़ रही थी। इन सब बातों से शासन पर उन लोगों का प्रभाव स्थापित हो गया था जिन्होंने सम्राट के हटाने में सब से अधिक भाग लिया था। इस समय के उन्मूलनवादी नेताओं में रोबेस्पेयर, मारा तथा दांतों का स्थान सब से उच्च था। विशेषतया अन्तिम व्यक्ति में सब से अधिक शक्ति तथा वेग था। शासन में सम्मिलित होने के कारण उसने अपनी शक्ति में अत्यधिक वृद्धि कर ली थी। यदि हम यह कहें कि वह फ्रांस का एकशास्ता बन गया था तो भी अतिशयोक्ति न होगी।

फ्रांस का एकशास्ता दांतों

दांतों को सब से पहले उत्तरी-पूर्वी सीमा की ओर दत्तचित्त होना पड़ा।

युद्ध की तैयारियाँ

१६ अगस्त को ड्यूक आफ़ ब्रन्ज़ाविक ने एक शक्तिशाली सेना की सहायता से, जिसमें २० हज़ार अस्ट्रियन, ४२ हज़ार प्रशियन एवं ८ हज़ार भागे हुये फ्रांसीसी सम्मिलित थे, फ्रांस पर बाक़ायदा आक्रमण कर दिया। किन्तु फ्रांस की ओर रक्षा का प्रबन्ध बहुत ही ख़राब था। शत्रु ने लौंवी (Longwy) के दुर्ग के चारों ओर घेरा डाल दिया और उसे विजय कर लिया। इसके एक सप्ताह बाद उसकी सेनायें वर्दु (Verdun) के ऐतहासिक दुर्ग के सम्मुख दृष्टिगोचर हुईं। ऐसा प्रतीत होता था कि पेरिस के भाग्य का निर्णय भी सन्निकट है। रोलैंड, क्लावियेर एवं उनके कुछ साथियों ने राजधानी को खाली करके ब्लवा नगर में चले जाने की सम्मति दी। किन्तु दांतों ने उसे स्वीकार न किया। उसने पेरिस के कम्यून की सहायता से इतनी सुन्दर युद्ध की तैयारियां कीं कि उसका रंग ही बदल गया। शस्त्रों के लिये समस्त घरों की तलाशी ली गई। केवल उन लोगों को छोड़ कर जो या तो युद्ध सामग्री तैयार करते थे अथवा नित्य प्रति की आवश्यकताओं की वस्तुओं की पूर्ति करने में संलग्न थे, शेष सब मर्द सेना में भर्ती किए गए। इस प्रकार स्वयंसेवकों की भर्ती की गति १८०० प्रति दिन तक पहुंच गई। उनके लिए शस्त्रों तथा खाद्य सामग्री का सन्तोषजनक प्रबन्ध किया गया। आवश्यक स्थानों में नई क़िलेबन्दी की गई। इस प्रकार ब्रन्ज़ाविक को उसकी धमकियों का उत्तर देने का पूरा प्रबन्ध कर दिया गया।

सितम्बर का रोमांचकारी हत्याकांड

किन्तु फ्रांस के ग़द्दारों का क्या किया जाय? क्या उनकी उपस्थिति में फ्रांसीसी सेनायें सफलता प्राप्त कर सकेंगी? अभी दांतों और उसके मित्र इन गम्भीर प्रश्नों पर विचार ही कर रहे थे कि वर्दु के हाथ से निकल जाने का समाचार आया। वर्दु पर वास्तव में २ सितम्बर को शत्रु का अधिकार हो गया था। उसका समाचार पेरिस में उसी समय प्रसिद्ध हो गया था। उसको सुन कर पेरिस निवासियों के होश उड़ गये। दांतों ने अपनी कार्य प्रणाली का निर्णय पूर्व ही कर लिया था। 'मेरी राय में तो शत्रु को रोकने की प्रणाली यह है कि सम्राट के पक्षपातियों को भयभीत कर दिया जाय। साहस, अधिक साहस एवं सर्वदा अधिक साहस।' जैसे ही पेरिस में वर्दु के हाथ से निकल जाने का समाचार प्रसिद्ध हुआ वैसे ही वहाँ सम्राट के पक्षपातियों का सार्वजनिक हत्याकांड प्रारम्भ हुआ। शस्त्रों की खोज के सम्बन्ध में अगणित मनुष्य जेलों में बन्द कर दिये गये थे। उन में सम्राट के मित्र, शत्रु के मित्र, भागे हुये फ्रांस निवासियों के सम्बन्धी तथा पादरी आदि सभी सम्मिलित थे। बहुत से लोग ऐसे भी थे जो केवल संदेह में गिरफ़्तार

कर लिये गये थे। २ सितम्बर से इनकी हत्यायें प्रारम्भ हुईं और पाँच दिन के थोड़े से समय में उन में से लगभग १६०० तलवार के घाट उतार दिये गये। यह था सितम्बर का रोमांचकारी हत्याकांड, जिसका हाल पढ़ कर हृदय कंपित हो उठता है। स्त्री, पुरुष, बूढ़े और युवक सभी वध कर दिये गये थे।

फ्रांस में केवल एक ही व्यक्ति ऐसा था जो सितम्बर की रोमांचकारी हत्याओं को रोक सकता था। यह था दांतों। किन्तु उसे इनकी कोई चिन्ता न थी। वह यही कहता रहा कि "बन्दी अपनी रक्षा का प्रबन्ध स्वयं कर सकते हैं।" इसके पश्चात् उसने यह भी कहा कि सर्वसाधारण ने जो उग्र रूप प्रथम दिन धारण किया था, वह ठीक था। जैसा कि हमने चौथे अध्याय में बतलाया था, बहुधा लेखकों का यह मत है कि उक्त रोमांचकारी हत्यायें दांतों तथा डाक्टर मारा की मंत्रणा से की गई थीं। सितम्बर के मास में राष्ट्रीय सुरक्षा का उत्तरदायित्व पूर्ण रूप से दांतों पर था। अतएव अवश्य ही उसने अपने उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए कई सौ अमीर व पादरी आदि की आहुति दे दी होगी। निस्सन्देह उसने हत्याओं को रोकने का किञ्चित भी प्रयत्न नहीं किया था। न कभी उसने उनके विषय में शोक ही प्रकट किया था। किन्तु इसके साथ साथ हमें यह भी विस्मरण न करना चाहिये कि यदि वह सितम्बर की रोमाञ्चकारी हत्याओं को रोकने का प्रयत्न करता तो उसका परिणाम यही होता कि पेरिस में गृहयुद्ध प्रारम्भ हो जाता और शत्रु दूर तक देश के अन्दर प्रविष्ट हो जाता।

अब हमें इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये कि क्या सितम्बर की हत्यायें आकस्मिक थीं? अथवा उनके विषय में इसके पूर्व निर्णय कर लिया गया था?

क्या हत्यायें आकस्मिक थीं?

साधारण रूप से लेखकों का यह मत है कि वे बिल्कुल आकस्मिक थीं। पेरिस के क्रांतिकारी कम्यून के अधीन एक सावधानी समिति (Vigilance Committee) थी, जिसके अधीन पुलिस और जेलों का प्रबन्ध किया गया था। जैसे ही हत्यायें प्रारम्भ हुईं वैसे ही उसके सदस्यों ने साधारण बन्दियों को अन्य बन्दियों से पृथक कर दिया। यदि हत्यायें उक्त समिति की ओर से की गई होतीं तो वह इस प्रकार की सावधानी पूर्व ही से कर सकती थी। इसके विरुद्ध उसने तथा विधान-सभा के सदस्यों ने हत्याओं को रोकने का प्रत्येक प्रकार से प्रयत्न किया एवं जब वे इस में कृतकार्य न हुये तो उन्होंने प्रत्येक जेल में एक पृथक न्यायालय स्थापित कर दिया, जिसका कार्य बन्दियों की सरसरी जाँच करना था। इस सम्बन्ध में एक व्यक्ति ने मेनूयेल से, जो हत्या बन्द करने के लिए ऐबे के जेल में भेजा गया था, एक विचित्र प्रश्न किया। 'नागरिक, मुझे यह बतलाओ कि

जब वे हुङ्ग, प्रशा तथा आस्ट्रिया के निवासी पेरिस में आ जायेंगे तो क्या वे भी अपराधियों को पृथक करने का प्रयत्न करेंगे ?' इस प्रश्न से हम यह परिणाम निकाल सकते हैं कि सर्वसाधारण के विचार अत्यन्त दूषित हो चुके थे एवं उनकी दृष्टि में हत्यायें उचित तथा आवश्यक थीं। इस में भी सन्देह नहीं कि उक्त न्यायालयों का निर्णय तुरंत ही सुना दिया जाता था एवं उनके न्यायाधीश हत्या तथा रक्तपात से घृणा न करते थे, तथापि बहुत से निरपराध मनुष्य बच गये थे। जो लोग इस प्रकार बच जाते थे उन्हें जनसाधारण के प्रतिनिधि सुरक्षित रूप से घर पहुँचा दिया करते थे। यह एक प्रशंसनीय विषय है।

विधान-सभा, कम्यून एवं राष्ट्रीय रक्षा दल का उत्तरदायित्व

एक विचित्र बात यह भी थी कि किसी भी व्यक्ति ने स्पष्ट शब्दों में उपरोक्त हत्याकाण्ड का उत्तरदायित्व अपने ऊपर नहीं लिया। दोनों के अतिरिक्त सबों ने उस से बचने का प्रयत्न किया था। यह ठीक है कि मेरी ऐन्तोयनेत तथा उसका पति बड़ी सीमा तक अपराधी थे, क्योंकि वे दीर्घकाल से विदेशों के निवासियों को फ्रांस पर आक्रमण करने के लिये उत्साहित कर रहे थे। किन्तु क्या हम विधान-सभा तथा कम्यून को उत्तरदायित्व से उन्मुक्त कर सकते हैं ? कदापि नहीं। इसका सब से प्रमुख प्रमाण यह है कि ३ सितम्बर को जब रोलैंड ने हत्याओं के प्रति अनुकूलता दिखलाते हुये अपनी रिपोर्ट उपस्थित की तो सभा ने उसकी रिपोर्ट की नक़ल करके डिपार्टमेंटों में भेज दी तथा सावधानी समिति ने उन्हें यह सूचना दे दी कि सम्राट के पक्षपातियों के विरुद्ध राजधानी में क्या कार्य किये गये थे तथा यह भी लिख दिया कि इस प्रकार के कार्यों का वे भी अनुसरण कर सकते हैं। अतएव वहां भी हत्यायें प्रारम्भ कर दी गईं। इस प्रकार फ्रांस में सम्राट के पक्षपातियों का सार्वजनिक वध प्रारम्भ हुआ एवं इस लपेटे में बहुत से दूसरे लोग भी आ गये।

एक विचार करने योग्य बात यह भी है कि पेरिस के दूसरे निवासी, जिनका सितम्बर की हत्याओं से किसी प्रकार का सीधा सम्बन्ध नहीं था, उनका अभिनय दूर ही से देखते रहे। क्या इसका कारण यह था कि वे ब्रंज़विक के आक्रमण की ओर से अत्यन्त भयभीत थे ? अथवा यह कि उनके हृदयों में सम्राट और उसके पक्षपातियों के प्रति अधिक घृणा उत्पन्न हो गई थी ? सम्भव है कि दोनों उक्तियां ठीक हों। किन्तु सब से बड़ी उक्ति यह थी कि उस समय पेरिस के निवासी जोश व उत्साह में अन्धे हो रहे थे तथा उनका नैतिक स्तर आवश्यकता से अधिक गिर गया था। अतएव वे उचित तथा अनुचित में किसी प्रकार का भेद न कर

सकते थे। यदि वे किसी प्रकार का हस्तक्षेप करने का प्रयत्न भी करते तो अवश्य ही अधिक हत्या और रक्तपात होते। पेरिस के राष्ट्रीय रक्षा दल की शक्ति इस समय इतनी अधिक थी कि वह सितम्बर की हत्याओं को तुरन्त रोक सकता था। किन्तु वह भी उनका नाटक दूर हो से देखता रहा। बल्कि उसके कुछ सैनिकों ने उनमें भाग भी लिया।

गण-राज्य की स्थापना

इसी बीच में राष्ट्रीय प्रसभा (National Convention) के लिये निर्वाचन तेज़ी से हो रहे थे। उधर दांतों के प्रयत्न से उत्तर-पूर्व की ओर युद्ध का उचित प्रबन्ध कर दिया गया था। लाफ़ेयत के अदृश्य हो जाने के पश्चात् दूमूरिये उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया गया था एवं लूकनेर का स्थान केलरमान (Kellermann) ने ले लिया था। इन दोनों ने मिलकर २० सितम्बर को मित्र राष्ट्रों की सेना को वामी (Valmy) के स्थान पर प्रथम बार पूर्ण रूप से परास्त किया। उपरोक्त युद्ध का महत्व इतना अधिक था कि उसके परिणामों को देखकर प्रसिद्ध जर्मन कवि गटे (Goethe) ने, जो ब्रंज़विक की सेनाओं के साथ था, कहा था,—"इस स्थान पर तथा आज ही संसार के इतिहास में एक नवयुग आरम्भ हो गया है।" संयोग से इसी दिन राजधानी में राष्ट्रीय प्रसभा का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। उसने प्रथम दिवस तो अपने लिये पदाधिकारियों की नियुक्ति में व्यय किया तथा दूसरे दिन अन्य आवश्यक विषयों की ओर ध्यान दिया। फिर अत्यन्त गम्भीरता के साथ यह प्रस्ताव उसके सम्मुख उपस्थित किया गया कि 'फ्रांस में राजतंत्र का अन्त कर दिया जाय।' सदस्यों ने उसे करतलध्वनि के साथ स्वीकार किया। २२ सितम्बर को यह समाचार प्रसिद्ध हुआ कि राजधानी शत्रु के हाथ से बच गई है और ब्रंज़विक अपनी सेनाओं के साथ पीछे हट गया है। उसी दिन प्रसभा ने इस बात का निर्णय कर दिया कि २२ सितम्बर सन् १७९२ ई० से गण-राज्य का प्रथम वर्ष गिना जायेगा। भागे हुये लोगों के विरुद्ध यह आज्ञा प्रकाशित की गई कि वे फ्रांस से सर्वदा के लिये निर्वासित किये जाते हैं। इसके पश्चात् शीघ्र ही यह प्रस्ताव भी स्वीकार कर लिया गया कि सम्राट के भाग्य का निर्णय प्रसभा द्वारा किया जायेगा। इस प्रकार प्रसभा के अधिवेशन के दो ही दिनों के अन्तर्गत फ्रांस में राजतन्त्र का स्थान गण-राज्य ने ले लिया। २१ जनवरी सन् १७९३ ई० को उसकी आज्ञा से, सोलहवें लूई का शीश भी गेओतीं के द्वारा शरीर से पृथक कर दिया गया। इस प्रकार फ्रांस में राजा तथा राजतन्त्र दोनों का अन्त कर दिया गया। सम्राट के भाग्य निर्णय का पूर्ण उत्तरदायित्व जेकोबिन दल

पर था। जिरोंदिन दल ने उसकी अर्ध स्वीकृति प्रकट की थी। वास्तव में उसके नेता उसे बचा लेना चाहते थे, किन्तु कुछ प्रमुख बाध्य परिस्थितियों के कारण उन्होंने भी उसकी स्वीकृति दे दी थी। अगले अध्याय में हम इस विषय पर विशद् विचार विमर्श उपस्थित करेंगे।

सोलहवाँ अध्याय

जिरोंडिन दल का पतन

अप्रैल सन् १७६० ई० में फ्रांस के एक पादरी ने यह आलोचना की थी कि राष्ट्रीय सभा को उन अधिकारों को ग्रहण करने का कोई अधिकार नहीं है जो उसने ले लिये हैं। "राष्ट्रीय सभा की स्थिति के लिये आवश्यक है कि समस्त राष्ट्र अपने शासन के विरुद्ध आन्दोलन करे, अपने बादशाह को त्याग दे तथा अपने मौलिक अधिकारों को अपनी सभा के अधीन कर दे।" उपरोक्त पादरी का विचार था कि इस प्रकार की परिस्थिति कभी उत्पन्न नहीं हो सकती। परन्तु हुआ इस के विरुद्ध। १० अगस्त को राष्ट्र ने सम्राट तथा सभा पर शक्तिशाली आक्रमण किया था। अब सितम्बर के मास में उसने कन्वेंशन अथवा प्रसभा को समस्त आवश्यक अधिकारों से वेष्टित करके फ्रांस के भाग्य निर्णय को उसी के हाथ में छोड़ दिया।

प्रत्येक वयस्क व्यक्ति को कन्वेंशन के लिये वोट देने का अधिकार दिया गया था। फिर भी ५० लाख अधिकृत मनुष्यों में से केवल १० लाख ने निर्वाचनों में भाग लिया था। सम्राट के पक्षपातियों ने उनकी ओर उदासीनता प्रकट की। कृषक भी उनकी ओर से निश्चिन्त रहे। कारण यह था कि जो कुछ उन्हें क्रांति से उस समय तक प्राप्त हो गया था, उस से वे संतुष्ट थे। उनके हृदयों में सम्राट के प्रति सहानुभूति अवश्य थी, किन्तु वे उसकी ओर से किसी प्रकार का पुरुषार्थ करना पसन्द न करते थे। न वे पेरिस के साम्प्रदायिक झगड़ों ही में किसी प्रकार से भाग लेना चाहते थे। अतएव वे बहुमत में होते हुये भी निर्वाचनों से दूर रहे। राष्ट्रीय संविधान-सभा तथा राष्ट्रीय विधान-सभा की भांति कन्वेंशन

कन्वेंशन के सदस्यों का निर्वाचन

के निर्वाचन भी सीधे न किये गये थे वरन् प्रत्येक डिपार्टमेंट के अधिकृत लोगों ने प्रथम कुछ निर्वाचकों को चुना। फिर इन लोगों ने कन्वेंशन के सदस्यों का निर्वाचन किया। सफल उम्मीदवारों में अधिकतर बड़ी आयु के तथा प्रतिष्ठावान पुरुष थे। उम्मीदवारों के लिये केवल २५ वर्ष की आयु का बन्धन था। किन्तु सदस्यों में केवल १० प्रतिशत ३१ साल से कम एवं १५ प्रतिशत ५० साल से ऊपर थे। सब से अल्प आयु का सदस्य सेंं ज्हूस्त (St. Just) था। वह आवश्यक बन्धन से केवल कुछ दिवस अधिक था। सब से बड़ी आयु रखने वाला व्यक्ति शार्त्र का सदस्य 'लांग के' (Longqueue) था जो सभा का 'बूढ़ा बाबा' कहलाता था। इसकी आयु ७४ वर्ष की थी। जिस वर्ष चौदहवें लूई का देहावसान हुआ था उस वर्ष उसकी आयु लगभग तीन वर्ष रही होगी।

इसी प्रकार प्रसभा में सभी पेशों का प्रतिनिधित्व था। सौदागर, रोज़गार वाले, कारखानों के स्वामी, विद्या, कला और विज्ञान के विशेषज्ञ, प्रोफ़ेसर तथा विद्यालयों के शिक्षक, चिकित्सक, पादरी, सैनिक, ज़मींदार, कृषक तथा अभिनेता आदि सभी उसके सदस्य थे। उनमें कुछ उपनिवेशों के प्रतिनिधि तथा कुछ यात्रियों की स्थिति में भी सम्मिलित थे। एक सदस्य ऐसा था जो निर्वाचन के समय नार्वे में था तथा जो कभी भी प्रसभा में उपस्थित नहीं हुआ। इस सम्बन्ध में एक विलक्षण बात यह है कि सदस्यों में एक सम्राट के परिवार का मनुष्य तथा सात मारकुइज़ भी थे। दूसरी अद्भुत बात यह है कि केवल दो श्रमजीवी उसके सदस्य बनाये गये थे। सदस्यों में एक प्रमुख व्यक्ति टामस पेन (Thomas Paine) नाम का अंगरेज़ था। हाल ही में उसकी प्रसिद्ध पुस्तक (Rights of Man) का दूसरा संस्करण प्रकाशित हो चुका था। उग्र विचार रखने के कारण वह इंग्लैंड से चला आया था। यदि वह ऐसा न करता तो अवश्य ही उसे हानि उठानी पड़ती।

उनके लिये दूमूरिये का बहुमूल्य उपहार

कुछ समय तक प्रसभा के सदस्य, जिनकी संख्या लगभग ८०० थी, स्वेच्छापूर्वक विभिन्न स्थानों में बैठे और युद्ध सम्बन्धी विजयों के समाचार सुनते रहे तथा परस्पर एक दूसरे को बधाई देते रहे। उन्होंने कुछ आवश्यक कार्य भी किये, जैसे उन्होंने गण-राज्य की घोषणा की, भागे हुये फ्रांस निवासियों के विरुद्ध एक आज्ञा प्रकाशित की, फ्रांस के निवासियों को इसका विश्वास दिलाया कि उनकी सम्पत्ति सदा सुरक्षित रहेगी आदि। किन्तु वे उत्तरी-पूर्वी सीमा की ओर अधिक दत्तचित्त थे। दूमूरिये ने उन्हें अधिवेशन करते ही एक बहुमूल्य उपहार बामी के रूप में पेश किया था। वास्तव में इस विजय का महत्व

अधिक था। गटे ने उसके सम्बन्ध में अपने विचारों का प्रकाशन किस प्रकार किया था, इसका वर्णन हो चुका है। अन्य लोगों ने भी इसी प्रकार से अपने विचार प्रकट किये थे। एक लेखक ने वामी को फ्रांस निवासियों का थर्मापली बतलाया है एवं दूमूरिये की समता उसके नायक लियोनिदस से की है। उपरोक्त युद्ध के दस दिवस पश्चात् तक मौरिस को इस बात का विश्वास न हुआ कि ब्रंजविक वास्तव में अपनी सेनाओं सहित पीछे हट रहा है। एक मास के अन्दर प्रशा का सेनापति पराजय और पेन्चिश की महामारी के कारण सीमा को दूसरी ओर निकल गया। फ्रांसीसी सेना निश्चिन्तिता से उसका पीछा कर रही थी, किन्तु उसके सैनिकों को यह आदेश दे दिया गया था कि शत्रु पर गोली न चलायें और न लूट करने का ही प्रयत्न करें। यह उन व्यंगात्मक शब्दों का प्रतिउत्तर था जो अस्ट्रिया के सैनिकों ने कुछ समय पूर्व कहे थे।

वामी की असाधारण सफलता का प्रभाव शीघ्र ही समस्त सीमा पर विदित हुआ। लिल (Lille) का विख्यात दुर्ग शत्रु के हाथ में जाने से बचा लिया गया (५ अक्टूबर)। इसके पश्चात् दूमूरिये ने सफलता के साथ सीमा को पार करके बेल्जियम में प्रवेश किया और ६ नवम्बर को शत्रु को जेमाप (Jemappes) के प्रसिद्ध युद्ध में पूर्णतया परास्त किया। इसके पश्चात् मांस (Mons) तथा ब्रूसेल्ज़ पर अधिकार करके लियेज़ नगर को उसने अपनी सेनाओं का केन्द्र बनाया। उसके अधीन सेनापति मीरांदा ने एन्टवर्प में सफलता के साथ प्रवेश कर लिया था। अब अस्ट्रियन नेदरलैंड्ज़ पर अधिकार करना बिल्कुल सरल था। राइन नदी की ओर अन्य फ्रांसीसी सेनापति विजय प्राप्त कर रहे थे। कस्ताइन (Custine) ने जर्मनी में दूर तक प्रवेश कर लिया था तथा स्पाइर्स, वर्म्स, मिन्ट्स और फ्रैंकफुर्ट पर अधिकार कर लिया था। दक्षिण-पूर्व की दिशा में मौंतस्क्यू ने सेवाय तथा नीस ले लिये थे। फ्रांस के अपूर्व विजयों के क्रम को देखकर सब को आश्चर्य था। इनका सब से प्रधान कारण यह था कि अब फ्रांसीसी जान हथेली पर रखकर युद्ध कर रहे थे एवं उन्हें पीछे की ओर किसी प्रकार की ग़द्दारी का भय भी न था। जिरोंदिन दल के लोग विशेष रूप से प्रसन्न थे। ब्रीसो ने एक सेनापति को, जिसका नाम सर्वन (Servan) था, नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में लिखा था,—"जब तक समस्त यूरोप में आग न फैल जाये तब तक हमें शांतिपूर्वक न बैठना चाहिये। हमारे प्रयत्नों में किसी प्रकार की निर्बलता न आनी चाहिये। हमें प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में विद्युत पैदा कर देनी चाहिए ताकि वह अपनी तरफ़ से क्रांति प्रारम्भ कर दे अथवा हमारी ओर से उसे स्वीकार कर ले।"

यह एक दुर्भाग्य की बात है कि जिस समय फ्रांस के सेनापति गण-राज्य की सीमाओं को उत्तर-पूर्व की दिशा में आगे बढ़ा रहे थे, ठीक उसी समय उसके राजनीतिवेत्ता उन्हें अन्दर की ओर सीमित कर रहे थे।

सदस्यों का विभाजन गत दो सभाओं की भांति प्रसभा के सदस्य भी शीघ्र ही कई भागों में विभाजित हो गये। ऐसा होना इसलिए और भी आवश्यक था कि उन में ३३ प्रति शत ऐसे थे जो राष्ट्रीय संविधान-सभा तथा राष्ट्रीय विधान-सभा में बैठ चुके थे। वे अभी तक प्राचीन दलों के अनुसार प्रसिद्ध थे तथा उन हिंसात्मक कार्यों को भी न भूल सकते थे जिनको उन्होंने अपनी आंखों से देखा था या जिन से उनका सीधा सम्बन्ध था।

कन्वेंशन के सदस्यों में सब से बड़ी संख्या गणतंत्रवाद के समर्थकों की थी। इनमें दो सौ ऐसे थे जो कुछ काल तक अपने नेताओं अर्थात् ब्रीसो, बुज़ो एवं रोलेंड आदि के दलों के लोग कहलाते थे, किन्तु बाद को जिरोंदी के डिपार्टमेंट के नाम पर 'जिरोंदिन' कहलाने लगे थे। चौदहवें अध्याय में हम इस दल तथा उसकी नीति पर विशेष प्रकाश डाल चुके हैं। प्रसभा में ये लोग अध्यक्ष के दाहिनी ओर बैठते थे। इन में सब से प्रमुख ब्रीसो, वर्नयो, कोंदोर्से तथा टामस पेन थे। जिरोंदिन दल के लोग स्वयं मध्यम श्रेणी के लोग थे और उनके मित्र भी धनी तथा सम्पत्ति के स्वामी थे। उनका कहना था कि शासन की प्रत्येक समस्या को हम बुद्धिमत्ता और विचार शक्ति से सुलझा सकते हैं। उनका सीधा सम्बन्ध पेरिस से बहुत कम था। वे वहां की जनता तथा निम्न लोगों के लिए अपने जीवन के उच्च आदर्श से नहीं गिरना चाहते थे। अस्तु वे इस बात के समझने का प्रयत्न न करते थे कि ये लोग क्या चाहते हैं। इसके अतिरिक्त वे राजधानी के क्लबों की ओर भी बहुत कम दत्तचित्त होते थे। अतः जितने समय तक वे पेरिस में रहते थे, वे स्वयं को नव आगन्तुक अनुभव करते थे। किन्तु शासन सूत्र इसी दल के हाथ में था एवं जून सन् १७९३ ई० तक यही दल शक्तिशाली रहा।

अध्यक्ष की बायीं ओर उच्च स्थानों पर वे लोग बैठते थे जो अधिकतर जेकोबिन क्लब के सदस्य थे एवं जो पेरिस के सेक्शनों तथा वहां के निम्न कोटि के व्यक्तियों को अपनी शक्ति का आधार मानते थे। उनको वे किसी भी दशा में अप्रसन्न न करना चाहते थे। उनके भरोसे इनके समाचारपत्रों की प्रतिष्ठा स्थापित की। उनको वे अपना सब से बड़ा समर्थक तथा सहायक समझते थे। उच्च स्थानों पर बैठने वालों की संख्या लगभग एक सौ थी। इतिहास में ये लोग अपने क्लब के नाम पर 'जेकोबिन' तथा अपने उच्च स्थानों के कारण 'माउनटेनिस्ट्स' (Mountainists) कहलाते थे। इनमें दांतों, रोबेस्पेयर, कार्नो एवं सें ज़्यूस्त विशेष महत्व

रखते थे। जिरोंदिन दल की भांति जेकोबिन दल के सदस्य भी युद्ध, गण-राज्य तथा प्रसभा के पक्षपाती तथा सहायक थे। उनकी भांति ये लोग भी अत्यन्त उच्च पर व्यवहार में न आने वाली योजनायें बनाते थे। रक्तपात से दोनों में से कोई भी न डरता था, किन्तु जेकोबिन दल के मनुष्यों के हृदयों में सर्वसाधारण के लिये अधिक स्थान था। वे जिरोंदिन दल की अपेक्षा अमल पर अधिक ज़ोर देते थे तथा राजनैतिक ढकोसलों की ओर कम ध्यान देते थे। इतना अवश्य था कि वे आंख बन्द करके अच्छे तथा बुरे सभी प्रकार के अनुभवों को प्राप्त करने के लिये सर्वदा तत्पर रहते थे।

'माउण्टेन' तथा जिरोंदिन दल की बैठक के बीच 'मैदान' (Plain) अथवा 'दलदल' (Marsh) था। प्रसभा में इसके सदस्यों का बहुमत था। किन्तु ये लोग किसी विशेष प्रकार के राजनैतिक सिद्धान्त अथवा किसी विशेष नीति प्रणाली का गर्व न कर सकते थे। वे स्वेच्छापूर्वक किसी भी पक्ष में वोट दे सकते थे। उनका सब से प्रमुख उदाहरण सीएयेस का था, जो एक अनुभवी तथा गम्भीर राजनीतिवेत्ता था। प्रारम्भ में 'मैदान' अथवा 'दलदल' में बैठने वाले लोगों ने जिरोंदिन दल का साथ दिया। किन्तु इसके पश्चात् वे पेरिस की जनता के भय से उनके प्रतिद्वन्द्वियों का साथ देने लगे। उनकी संख्या लगभग ५०० थी।

प्रसभा की एक विशेष निर्बलता

प्रसभा के सदस्यों में एक विशेष निर्बलता यह थी कि एक दल के व्यक्ति दूसरे दल के लोगों के दृष्टिकोण को समझने एवं उनके साथ सहानुभूति रखने का प्रयत्न नहीं करते थे। वे एक ऐसी राष्ट्रीय सभा के सदस्य थे जिसका कार्य एक नवीन संविधान को निर्मित करना था, न कि पुराने संविधान के अनुसार शासन का कार्य आगे बढ़ाना; जिसके सदस्य और नीतिज्ञ यदि एक स्थान पर बैठकर वार्तालाप अथवा भोजन करते थे तो वे सन्देह की दृष्टि से देखे जाते थे; जिसके सदस्यों का निर्वाचन करने वालों के प्रति कोई उत्तरदायित्व न था एवं जिसके दोष निकालने वाले इस बात को पूर्ण रीति से जानते थे कि उन्हें शायद ही कभी शासन का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर लेना पड़े। ऐसी दशा में प्रसभा के विषय में यह आशा करना कि वहां कभी भी आधुनिक दलबन्दी की प्रणाली (Party System) का उत्थान हो सकेगा, एक भारी भूल थी। अतएव पारस्परिक विरोध बहुधा वैमनस्य तथा शत्रुता में परिवर्तित हो जाता था। किसी सम्बन्ध में विरोधी मत रखने का अर्थ बहुधा यह होता है कि दोनों दल अथवा सदस्य एक दूसरे को अधिक से अधिक हानि पहुंचाने का प्रयत्न कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में जिरोंदिन दल के सदस्य अधिक दोषी थे। कारण यह था कि प्रारम्भ में वे जेकोबिन

दल की तुलना में अधिक शक्तिशाली थे एवं कुछ समय तक सभा की अध्यक्षता का श्रेय भी उन्हीं को प्राप्त था। प्रारम्भ में शासन कार्य भी उन्हीं के हाथों में था। वे अपने विरोधियों के प्रति गम्भीरता तथा उदारता से काम ले सकते थे, किन्तु सम्भवत: इसका अर्थ यह निकाला जाता कि वे निर्बल हैं तथा सहायता के अभिलाषी हैं।

सम्राट के साथ क्या व्यवहार किया जाय ?

जैसा कि बतलाया गया है, प्रसभा का प्रथम अधिवेशन २० सितम्बर सन् १७९२ ई० को हुआ। उपरोक्त मास के शेष दिनों में तथा अक्टूबर के मास में भी जेकोबिन एवं जिरोंदिन दल एक दूसरे के विरुद्ध शक्ति का प्रयोग तथा वाक् प्रहार करते रहे। रोलेंड और उसके साथियों ने पेरिस के विरुद्ध कार्य करने का प्रयत्न किया। बहाना भी शीघ्र ही मिल गया। सितम्बर की हत्याओं का पूरा उत्तरदायित्व उसी पर था। जिस समय ये हत्यायें हो रही थीं उस समय तो वे शान्त रहे। परन्तु अब उन्होंने उनके कारण जेकोबिन दल के सदस्यों को दंडित करने का प्रयत्न किया। एक मजेदार अपराध यह था कि पेरिस के निवासियों ने अपने भाग से अधिक राजनैतिक सत्ता प्राप्त कर ली है तथा वे ८३ डिपार्टमेण्टों पर एकशासता के रूप में शासन करना चाहते हैं। किन्तु वे अपने प्रतिद्वन्दियों को कुछ भी हानि न पहुंचा सके। इसके पश्चात् दोनों एक महत्वपूर्ण विषय की ओर दत्त-चित्त थे। सम्राट के भाग्य का निर्णय अभी तक नहीं हुआ था। वह सिंहासन से उतार दिया गया था तथा राजतन्त्र के स्थान पर गणतंत्र की घोषणा भी कर दी गई थी। किन्तु अभी तक यह निर्णय न हो सका था कि सम्राट के साथ क्या व्यवहार किया जाय। पेरिस के निवासी, उनके साथी 'माउण्टेन' के लोग एवं फ्रांस की प्रजा-तन्त्रीय परिषदों के सदस्य इस बात को पुकार पुकार कर कह रहे थे कि लूई प्राण दंड का अधिकारी है, किन्तु उनके प्रतिद्वन्दियों ने इसके विषय में कोई निश्चित मत स्थिर न किया था। वे इस बात को खूब समझते थे कि लूई निश्चित रूप में अपराधी है, किन्तु वे स्पष्ट शब्दों में यह न बतलाना चाहते थे कि उस पर मुकदमा चलाया जाये अथवा इसके बिना ही उसके लिये कोई दंड निश्चित कर दिया जाये। इस महत्वपूर्ण विषय पर अविश्रान्त रूप से नवम्बर के मास में वादविवाद होता रहा। एक सदस्य ने चार्ल्स प्रथम का उदाहरण उपस्थित करके इस बात पर जोर दिया कि गणतंत्र के हेतु सोलहवें लूई को भी मृत्यु दंड दिया जाय। कुछ सदस्य ऐसे भी थे जो इसके विरुद्ध थे। उनका कहना था कि मृत्यु दंड प्राकृतिक सिद्धान्त तथा स्वाधीन राष्ट्र के गौरव के विरुद्ध है। श्रेयस्कर यह होगा कि सम्राट का अस्तित्व अक्षुण्ण रक्खा जाय, जिस से अन्य सम्राटों को भी सावधानी प्राप्त हो सके।

सब से अल्प वयस्क सदस्य सें ज्यूस्त ने यह मत उपस्थित करके एक ही रात में कीर्ति उपार्जन कर ली कि जगत में कोई सम्राट निरपराध नहीं होता। अतएव बिना किसी संकोच तथा कानूनी कार्यवाही के, सोलहवें लूई का बध कर दिया जाय।

जिरोंदिन दल के सदस्य सें ज्यूस्त के मत से बिल्कुल अनुकूलता न रखते थे, किन्तु वे इस बात को भी सहन न कर सकते थे कि उनका महत्व किसी प्रकार से कम हो जाय। अस्तु १९ नवम्बर को अर्थात् दूमूरिये के ब्रूसेल्ज़ में प्रवेश करने के कुछ दिनों के पश्चात् ब्रीसो ने यह प्रस्ताव प्रसभा से स्वीकृत करा दिया कि जो राष्ट्र स्वाधीनता प्राप्त करने के प्रयत्न में संलग्न हैं, उनकी सहायता के लिये फ्रांस उसी प्रकार तैयार है जिस प्रकार एक भाई दूसरे भाई की सहायता के लिए तैयार रहता है। इस घोषणा को सुनकर यूरोप का कोई भी सम्राट सुख की नींद न सो सकता था। इस से क्रांति के विरोधियों में, जो समस्त यूरोप में उपस्थित थे, नये जोश व उत्साह का संचार हुआ। इसके पश्चात् २७ नवम्बर की घोषणा ने इंग्लैंड निवासियों के दिलों पर विशेष चोट पहुंचाई और उनके लिये युद्ध में सम्मिलित होना आवश्यक हो गया। इस दिन कन्वेंशन ने यह निश्चित किया था कि शैल्ड नदी से सभी राष्ट्र व्यापार कर सकते हैं। यह नदी बेल्जियम में है एवं एन्टवर्प का प्रसिद्ध नगर उसके दाहिने तट पर स्थित है। ८० वर्ष पूर्व यूट्रेक्ट की सन्धि से, जो इंग्लैंड और फ्रांस के बीच स्पेन के उत्तराधिकार के युद्ध के पश्चात् की गई थी, यह निश्चित किया जा चुका था कि डच के अतिरिक्त कोई अन्य यूरोपियन राष्ट्र उस नदी द्वारा व्यापार नहीं कर सकता। अत: एंटवर्प का बन्दरगाह लन्दन की समता में कम था। अब क्रांतिकारियों ने शैल्ड के व्यापार को स्वाधीन करके इंग्लैंड के प्रधान मंत्री छोटे पिट को विशेष रूप से अप्रसन्न कर दिया तथा उसके लिये युद्ध में भाग लेना आवश्यक हो गया।

नवम्बर सन् १७९२ ई० की घोषणायें

इस प्रकार की घोषणा करके जिरोंदिन मंत्री सोलहवें लूई के अपराध पर पर्दा नहीं डाल सकते थे। उसके भाग्य का निर्णय अत्यन्त आवश्यक था। विशेषत: ऐसी दशा में जब न केवल फ्रांस वरन् समस्त यूरोप उसकी ओर दत्तचित्त था तथा उसको फ्रांस से निकाल ले जाने का प्रयत्न भी बराबर चल रहा था। शीघ्र ही उक्त वादविवाद में नवीन स्फूर्ति उत्पन्न हो गई एवं प्रसभा के बहुत से सदस्य, जो सम्राट के पक्षपाती थे अथवा जो उस समय तक उसके सम्बन्ध में कोई निर्णय न कर सके थे, उसके विरुद्ध हो गये। २० नवम्बर को एक लोहार ने, जिसका

गुप्त तिजोरी

नाम गॅमेन (Gamain) था, रोलैंड को यह सूचना दी कि ट्वीलेरीज़ के प्रासाद में एक गुप्त तिजोरी है। यह एक विलक्षण रहस्य था। गॅमेन का पिता वर्सैल्ज़ में काम किया करता था। उसके पुत्र को राजप्रासाद में एक कमरा दे दिया गया था। वह वहां रहा करता था और सोलहवें लूई को, जब वह राजकुमार की स्थिति में था, तालों के बनाने में सहायता किया करता था। मई सन् १७९२ ई० में वह एक अलमारी निर्माण करने के लिये सम्राट के कमरे में बुलाया गया था। लौटने पर वह बहुत बीमार हो गया और इस सन्देह में कि किसी ने उसे प्रासाद में विष पान करा दिया था, उसने छः माह पश्चात् तिजोरी का रहस्य रोलैंड पर प्रकट कर दिया। इसके उपलक्ष में प्रसभा की ओर से उसके लिये वजीफ़ा नियत कर दिया गया। गॅमेन की कथा को सुन कर रोलैंड स्वयं राजप्रासाद में गया एवं तिजोरी खोली। उसे यह ज्ञात करके अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि उसके अन्दर अगणित काग़ज़ हैं। जब ये छपाये गये तो उनके लेख ६५० पृष्ठों से अधिक प्रमाणित हुये। उन में विभिन्न विषयों का उल्लेख था, जैसे सम्राट के भागने की योजना, शपथ न लेने वाले पादरियों के लिए आदेश, १० अगस्त से एक दिन पूर्व पेतियों तथा राष्ट्रीय नेताओं को घूस देने की योजना आदि। गुप्त तिजोरी के ज्ञात होने से सम्राट को दंड देने के लिये दोगुना शोर मचाया एवं उसको अपराधी सिद्ध करने के लिये जेकोबिन दल के हाथों में एक नया शस्त्र आ गया।

सम्राट के विरुद्ध अभियोग

३ व ४ दिसम्बर को रोबेस्पेयर ने दो जोशीले भाषण दिये, जिनमें उसने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि सोलहवें लूई के सम्बन्ध में नियम तथा प्राचीन प्रणाली से काम लेने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। इसलिए कि उसने क्रांति के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की थी एवं उसकी पराजय हो चुकी थी। उसे जीवित रहने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। प्रसभा का कर्तव्य है कि तुरन्त ही उसके विरुद्ध निर्णय सुना कर उसका शीश उतरवा ले। जो कुछ १० अगस्त को ठीक था, वह आज भी ठीक है। इस प्रकार की उक्तियों से सदस्य अधिक प्रभावित हुये एवं उन्होंने शीघ्र से शीघ्र सम्राट के भाग्य का निर्णय करने का निश्चय किया। अस्तु ११ दिसम्बर को वह प्रसभा में उपस्थित किया गया तथा उससे कई प्रश्न किये गये। किन्तु उसने किसी का भी ठीक उत्तर नहीं दिया। उसने लोहे की तिजोरी के सम्बन्ध में अनभिज्ञता दिखलाई एवं मीराबो के साथ पत्रव्यवहार के विषय में बतलाया कि उसके सम्बन्ध में वह बिल्कुल भूल गया है। जब उस पर यह अभियोग लगाया गया कि उसने फ्रांसीसियों का वध किया है तो वह क्रोध से विकल हो गया

एवं कड़क कर बोला, "जी नहीं श्री मान्, मैंने कभी फ्रांस के निवासियों का वध नहीं किया।" एक अंगरेज़ ने जो वहाँ उपस्थित था लिखा है कि "प्रकट है कि इस अभियोग को सुन कर उसके हृदय को गहरी चोट लगी और मैंने देखा कि एक अश्रुविन्दु उसके गाल से नीचे उतर रहा है।"

जब सम्राट लौट गया तो सभा के सदस्यों ने उसके लिए यह स्वीकृति दे दी कि वह अपनी सहायता के लिए दो विधानविज्ञों को नियुक्त कर सकता है। उन्होंने २६ दिसम्बर को उसकी ओर से वादविवाद किया, किन्तु उसका कुछ भी परिणाम न निकला। उनके वादविवाद का यह निष्कर्ष था कि सम्राट के विरुद्ध कोई अभियोग नहीं चलाया जा सकता। प्रसभा को इस बात का अधिकार नहीं है कि उसके मुक़दमे पर निर्णय दे। सभा के सदस्य इस प्रकार की उक्तियों को सुनने के लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने उनके प्रति उसी प्रकार की उदासीनता प्रकट की जिस प्रकार की उदासीनता इंग्लैंड में हाई कोर्ट आफ़ जस्टिस ने चार्ल्स प्रथम के सम्बन्ध में प्रकट की थी।

जिरोंदिन दल के लोगों ने अन्तिम समय तक उत्तरदायित्व से विरक्त रहने का प्रयत्न किया। २८ दिसम्बर को ब्रीसो ने यह मत उपस्थित किया कि सम्राट के सम्बन्ध में सार्वजनिक मतदान के द्वारा राष्ट्र से पूछ लिया जाये। अन्त में एक लम्बी बहस के पश्चात् १४ जनवरी को इस बात का निर्णय हो गया कि कन्वेंशन के सदस्यों से तीन प्रश्न किये जायें,—(१) क्या लूई अपराधी है? (२) क्या आप चाहते हैं कि आपके निर्णय के सम्बन्ध में राष्ट्र का मत ले लिया जाये? (३) लूई को क्या दंड दिया जाय? दूसरे दिन प्रथम प्रश्न के सम्बन्ध में अति अधिक बहुमत से लूई के विरुद्ध निर्णय दिया गया और यह बात स्वीकार कर ली गई कि उस ने देश के विरुद्ध षड्यन्त्र में भाग लिया है। जिरोंदिन दल के लोगों ने सम्राट को सुरक्षित रखने का प्रयत्न चालू रक्खा। इस विषय में लांज्यूईने (Lanjuinais) नाम के सदस्य ने यह मत उपस्थित किया कि सम्राट के भाग्य का निर्णय दो तिहाई बहुमत से किया जाय। इस विषय में दांतों ने यह ओजस्वी शब्द कहे कि यदि युद्ध की घोषणा तथा गण-राज्य की स्थापना के लिए केवल बहुमत काफ़ी हो सकता है तो इसी प्रकार से सम्राट के भाग्य का निर्णय भी किया जा सकता है। १६ दिसम्बर को अन्तिम प्रश्न पर रात के ८ बजे मतदान प्रारम्भ हुआ एवं दूसरे दिन उसी समय तक चालू रहा। २४ घंटों तक एक के पश्चात् दूसरा सदस्य उठा तथा अपना मत प्रकट कर के चला गया। किसी ने देशनिकाला, किसी ने कारावास, और किसी ने मृत्युदंड का निर्णय दिया। दूसरे दिन जब वोटों को गिना गया तो ज्ञात हुआ कि

सम्राट का भाग्य निर्णय

बहुमत मृत्यु दंड के पक्ष में है। दो दिन पश्चात् इस बात का प्रयत्न किया गया कि उपरोक्त निर्णय को कुछ काल तक कार्यान्वित न किया जाये। किन्तु यह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया गया।

उसका वध, २१ जनवरी १७९३ ई०

२० जनवरी को सोलहवें लुई को बतलाया गया कि उसे दूसरे दिन मृत्यु दंड दिया जायेगा। उसने तीन दिन के अवकाश की प्रार्थना की; किन्तु उसकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी गई। दूसरे दिन अर्थात् २१ जनवरी* की प्रभात को वह गिलोटीन पर चढ़ाया गया एवं पेरिस के जनसमूह के सम्मुख, जिसमें औरतें व बच्चे भी सम्मिलित थे, उसका शीश शरीर से पृथक कर दिया गया। मरने से पूर्व उसने उपस्थित जनसमूह को सम्बोधित करते हुये उच्च स्वर से कहा, 'मेरे राष्ट्र, मैं निरपराध अवस्था में मर रहा हूं।' अन्तिम वाक्य में उसके मुख से ये शब्द निकले, "मैं आशा करता हूं कि मेरे बलिदान से फ्रांसीसी राष्ट्र को सुख समृद्धि उपलब्ध हो सकेगी।" जिस साहस और शान्ति के साथ सोलहवें लुई ने अपने प्राणों को उत्सर्ग किया था, वे प्रशंसा के योग्य हैं। इस दृष्टिकोण से यह घटना हमें उन बलिदानों की स्मृति कराती है जो प्रोटेस्टेंट धर्म के अनुयायियों ने इंग्लैंड तथा अन्य देशों में अपने धर्म को अक्षुण्य रखने के हेतु किये थे। वास्तव में लुई जैसे सरल स्वभाव तथा अच्छी प्रकृति के बादशाह का परिणाम इतना बुरा न होना

---

* सोलहवें लुई की मृत्यु के एक सप्ताह पश्चात् पेरिस के एक समाचारपत्र ने उसकी जीवन घटनाओं पर प्रकाश डालते हुये इस बात पर जोर दिया कि उसके लिये २१ की संख्या अशुभ थी। इसके प्रमाण में उसने कई उदाहरण उपस्थित किये थे। जैसे २१ अप्रैल सन् १७७० ई० को उसका विवाह हुआ था, जिसके लोग विरुद्ध थे। इसी वर्ष २१ जून को विवाह समारोह के अवसर पर सैकड़ों दर्शकों को प्राणों से उन्मुक्त होना पड़ा था। २१ जनवरी सन् १७८१ ई० को उत्तराधिकारी के जन्म का उत्सव मनाया गया था, जिसके क्रांति के प्रारम्भिक काल में मर जाने से सम्राट के परिवार तथा उसके सम्बन्धियों को महाशोक में डूब जाना पड़ा था। २१ जून सन् १७९१ ई० को वह दिन था जब लुई देश से भागते समय वेरिनीज़ के स्थान पर बन्दी कर लिया गया था। २१ सितम्बर सन् १७९२ ई० को राजतन्त्र की अंत्येष्टि की गई थी एवं २१ जनवरी सन् १७९३ ई० को सम्राट का शीश शरीर से पृथक कर दिया गया था। इस अशुभ तारीख के प्रभाव का क्रम बाद को भी चलता रहा। यह एक ऐसी बात है जिस पर उपरोक्त समाचारपत्र पहले से प्रकाश न डाल सकता था। वह यह न बतला सकता था कि ट्रैफलगार (२१ अक्टूबर सन् १८०५ ई०), वीमीरो (२१ अगस्त सन् १८०८ ई०) एवं विटोरिया (२१ जून सन् १८१३ ई०) की पराजयों के कारण स्थल व समुद्र पर फ्रांस का प्रभुत्व समाप्त हो जायेगा एवं अपने स्वदेश की सीमाओं को पार करने के ठीक २१ वर्ष पश्चात् (लीपज़िग के युद्ध के पश्चात्) फ्रांस की सेनाओं को उनके पीछे लौट आना पड़ा।

चाहिये था। किन्तु जेकोबिन दल की इच्छा यही थी। उन्होंने ही उसके शीश को यूरोप के सम्राटों के सम्मुख फेंक कर उन्हें युद्ध के लिए ललकारा था। यदि सच पूछिये तो जिरोंदिन दल के लोग यह न चाहते थे कि लूई को मृत्यु दंड दिया जाय, किन्तु उन्होंने पेरिस के सर्वसाधारण को प्रसन्न करने के विचार से तथा इसलिए कि उन पर क्रांति के विषय में निर्बलता का अभियोग न लगाया जाय, उसका विरोध नहीं किया। उन्होंने जहाँ तक सम्भव था, उसके निर्णय में देर करने का प्रयत्न अवश्य किया, किन्तु वे उसे मृत्यु के मुख से न बचा सके। जैसा कि कन्वेंशन के एक सदस्य ने लिखा था, लूई को अपराधी ठहराने की अपेक्षा उसे बचाने के लिए अधिक साहस की आवश्यकता थी। इस में सन्देह नहीं कि सोलहवें लूई ने फ्रांस पर आक्रमण करने वालों से पत्रव्यवहार किया था, किन्तु फ्रांस की जो बुरी दशा उसके शासनकाल में थी उसके लिए केवल उसी का उत्तरदायित्व न था। अधिक अपराध उसके पुरुखों का था जिन्होंने युद्ध, कुव्यवस्था तथा अपव्ययिता के कारण देश की दशा इतनी बुरी कर दी थी कि क्रांति का घटित होना नितान्त आवश्यक हो गया था। उसके प्राणोत्सर्ग के समय एक क्रांतिकारी चिल्लाया था कि "हमने अपने पीछे समस्त मार्गों को विच्छेद कर दिया है।" इसका यह आशय था कि इस गम्भीर कार्य के परिणाम से बचना बहुत दुष्कर था। क्रांतिकारियों के लिए इसके अतिरिक्त कोई अन्य उपाय न था कि तीव्रता से आगे बढ़ते चले जायें। उन्होंने किया भी ऐसा ही। यहाँ तक कि एक महाशक्ति नैपोलियन बोनापार्ट के रूप में प्रकट हुई, जिसने अपने बाहुबल से शत्रु का सामना किया एवं बहुत समय तक फ्रांस को उसके पंजे में न पड़ने दिया।

इंग्लैंड तथा हालैंड के विरुद्ध युद्ध की घोषणा, १ फर्वरी १७९३ ई०

२१ जनवरी सन् १७९३ ई० की महान् घटना, जिसने सम्पूर्ण यूरोप में हलचल उत्पन्न कर दी थी, इस बात को प्रकट करती थी कि इसके पश्चात् अति शीघ्र राजक्रांति का नेतृत्व जेकोबिन दल के हाथों में आ जावेगा। जिरोंदिन दल के सदस्यों ने सम्राट के शीश के उतारे जाने के लिये मत अवश्य दिया था, किन्तु वे इस सम्बन्ध में बराबर कमज़ोरी दिखलाते रहे थे। इसके पश्चात् कुछ घटनायें ऐसी घटीं जिनके कारण केवल छः महीनों से भी कम में उन्हें न केवल शासन कार्य से ही पृथक हो जाना पड़ा वरन् उनका पतन भी होगया। फ्रांस की सीमा पर शत्रु की शक्ति बढ़ रही थी एवं अन्दर की ओर डिपार्टमेंटों तथा नगरों से बराबर विद्रोह के समाचार आ रहे थे। सब से प्रमुख बात यह थी कि इंग्लैंड के मन्त्री जो अभी तक फ्रांस की राज्यक्रांति का अभिनय दूर ही से देख रहे थे, लूई की कारुणिक मृत्यु के समाचार को सुनकर युद्ध

करने पर तत्पर हो गये थे। १० अगस्त सन् १७६२ ई० तक उनका विचार था कि उन्हें फ्रांस के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना पड़ेगा। फ्रांस के मध्यम श्रेणी के लोग तो वही कार्य कर रहे थे जो इंग्लैंड निवासी सौ वर्ष पूर्व कर चुके थे। स्वाधीनता प्रिय अंगरेज़ों को एक ऐसी क्रांति में हस्तक्षेप करने की क्या आवश्यकता थी जिसके बीच निरंकुश शासन के स्थान में गण-राज्य स्थापित कर दिया गया था तथा जिसका उद्देश्य दूसरे देशों में भी प्रजातन्त्र शासनों की स्थापना बतलाया जाता था? अतः इंग्लैंड के शासन पर फ्रांस से भागे हुये व्यक्तियों तथा बर्क की पुस्तक का कोई प्रकट प्रभाव न हुआ सा। प्रधान मन्त्री छोटे पिट को स्वयं इस बात का विश्वास था कि १५ वर्ष तक उसके देश को कोई युद्ध न करना पड़ेगा। वह इस प्रकार का विश्वास पार्लेमेंट को भी दिला चुका था। उसने घोषित कर दिया था कि "हम प्रलय के दिन तक इसी दशा में कार्य करते रहेंगे जिस में आज हैं।" उसने कुछ सेनायें भी कम कर दी थीं। किन्तु शीघ्र ही उसे तथा इंग्लैंड के अन्य निवासियों को अपनी धारणा बदल देनी पड़ी। १० अगस्त की घटना के पश्चात् पिट ने अंगरेज़ी राजदूत को पेरिस से वापस बुला लिया। बेल्जियम पर फ्रांस के आक्रमण तथा नवम्बर की घोषणा के पश्चात् उसने युद्ध की तैयारी कर दी। दिसम्बर के मास में क्रांतिकारियों ने एक अन्य घोषणा की, जिसके द्वारा उन्होंने यूरोप के राष्ट्रों को यह धमकी दी कि यदि वे स्वाधीनता तथा समानता के सिद्धान्तों को स्वीकार न करके अपने सम्राट तथा कुलीनों को बनाये रक्खेंगे तो वे उनको फ्रांस का शत्रु मानेंगे। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह वचन भी दिया था कि वे उस समय तक शस्त्र न डालेंगे एवं न किसी से सन्धि ही करेंगे जब तक कि वे उन देशों में गण-राज्य स्थापित न कर देंगे जिनमें उनकी सेनायें प्रविष्ट करेंगी। इस घोषणा के समाचार पाकर पिट पहले से भी अधिक सतर्क होगया था। सोलहवें लूई की हत्या का समाचार पाकर उसने फ्रांस के राजदूत को आज्ञा दी कि आठ दिन के अन्दर अपने देश को लौट जाये। अंगरेज़ों को मारा और रोबेस्पेयर के रूप में लिलबर्न तथा हेरिसन दिखाई पड़ने लगे। जब जिरोंदिन दल के शासन ने अपने पड़ोसी को रंग बदलते देखा तो उसने १ फर्वरी सन् १७६३ ई० को इंग्लैंड तथा हालैंड के विरुद्ध, युद्ध की घोषणा कर दी। इस प्रकार की घोषणा उसने कुछ काल पूर्व आस्ट्रिया के विरुद्ध भी की थी। इस प्रकार उसने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया कि वह 'माउन्टेन' की तुलना में किसी दशा में भी कम नहीं है। ब्रीसो ने इसका उत्तरदायित्व इंग्लैंड पर रक्खा था, किन्तु वास्तव में वह और उसके सहयोगी स्वयं इसके उत्तरदायी थे। "यदि हम (जंग की घोषणा करने में) संकोच करते तो शासन पर जेकोबिनों का अधिकार हो जाता।

फ्रांस आन्तरिक कुव्यवस्था के कारण यूरोप की संयुक्त शक्ति का सामना करने के लिये बिल्कुल तैयार न था। उसकी आर्थिक दशा प्रति दिन बिगड़ती जा रही थी। कागजी नोटों (Assignats) का मूल्य आधे से भी कम रह गया था। नगरों में अन्न की कमी थी। नानबाइयों की दूकानों पर ग्राहकों की पंक्तियां खड़ी दिखलाई देती थीं। ऐसी परिस्थिति में युद्ध का उचित प्रबन्ध करना अत्यन्त कठिन था। इसके प्रतिकूल कन्वेंशन ने फर्वरी में ३ लाख व्यक्तियों के भर्ती किये जाने की आज्ञा प्रकाशित की। मित्रों की सेनाओं में भी लगभग इतने ही सैनिक थे। २४ फर्वरी को पेरिस के कम्यून ने कन्वेंशन से आर्थिक सहायता की प्रार्थना की, किन्तु जिरोंदिन दल के सदस्यों ने उसे स्वीकृत न होने दिया। दूसरे दिन मारा ने अपने पत्र में यह मत प्रकट किया कि कुछ अधिक लाभ उठाने वालों को उनकी दूकानों के सामने फांसी दे दी जाय। फांसी तो किसी को न दी गई, किन्तु कई दूकानें लूट ली गईं। लीओं के विख्यात तिजारती शहर में मिल मालिकों तथा मजदूरों के बीच कई बार झगड़ा हुआ। दांतों ने प्रयत्न करके प्रसभा से यह प्रस्ताव स्वीकृत करा दिया कि वे समस्त बन्दी जो ऋण न दे सकने के कारण कारावास में बन्द हैं, स्वतन्त्र कर दिये जायं। उसने एक 'क्रांतिकारी न्यायालय' (Rovolutionary Tribunal) के बनाये जाने का भी आग्रह किया, जिससे शत्रु के पक्षपातियों को उचित दण्ड दिया जा सके तथा सितम्बर के रक्तपात की पुनरावृत्ति का अवसर भी न आये। उपरोक्त योजना पर अधिक ज़ोर डालने के विचार से उस रात्रि को क्रांतिकारियों ने पेरिस में जिरोंदिन समाचारपत्रों के कार्यालयों में आग लगाई तथा मशीनों को तोड़कर उन्हें अधिक हानि पहुंचाई। एक सम्पादक को प्राण बचाकर भाग जाना पड़ा। दूसरे ही दिन प्रसभा ने दांतों की योजना स्वीकार कर ली। यह इस बात का प्रकट प्रमाण है कि वास्तव में क्रांति का नेतृत्व पेरिस के निवासियों के हाथ में आगया था। इससे इस बात का भी अनुमान होता है कि जिरोंदिन दल का पतन सन्निकट था।

आन्तरिक कुव्यवस्था

आन्तरिक कुव्यवस्था का सब से ज्वलन्त उदाहरण वौंदे के डिपार्टमेंट ने उपस्थित किया। १० मार्च सन् १७९३ ई० को वहां एक ऐसा शक्तिशाली विद्रोह प्रारम्भ हुआ जिसको देखकर कन्वेंशन के सदस्य भी घबड़ा गये। उपरोक्त डिपार्टमेंट फ्रांस की पश्चिमी सीमा पर ल्वार नदी के दक्षिण में स्थित था। पर्वतीय श्रेणियों तथा सकरी घाटियों के कारण यह प्रांत विद्रोह तथा युद्ध के लिये पूर्ण रूप से उपयुक्त था। वहां बड़े नगरों एवं शिक्षित मध्यम श्रेणी के लोगों की भी कमी थी। उसके

वौंदे का विद्रोह

निवासियों की जीवनचर्या मध्यकाल के समान थी। वे सम्राट के पक्षपाती थे तथा उन पर शपथ न लेने वाले पादरियों का काफ़ी असर था। उन्होंने क्रांति में बहुत कम अभिरुचि प्रदर्शित की थी तथा लूई के कारुणिक परिणाम के विषय में शोक प्रकट किया था। ऐसी दशा में यदि उन्होंने विद्रोह करके अपनी अप्रसन्नता का परिचय दिया था तो यह कोई असाधारण बात नहीं थी।

१० मार्च, दिन रविवार, समस्त फ्रांस में सैनिक भर्ती के लिये निश्चित कर दी गई थी। तीन लाख की संख्या रखने वाले वौंदे के निवासियों को केवल चार हज़ार सैनिक देने थे। किन्तु वे क्रांति के लिये इतना कम बलिदान करने को भी तैयार न थे। उस दिन एक लाख विद्रोहियों ने धार्मिक बिल्ले लगाकर राष्ट्रीय रक्षा दल, शपथ लेने वाले पादरियों एवं गण-राज्य के अधिकारियों की हत्या करना प्रारम्भ किया एवं कई मास तक इस प्रकार के भयंकर कृत्य चालू रक्खे। प्रारम्भ में यह तूफ़ान पादरियों के षड्यन्त्र से कृषकों की ओर से उठाया गया था, किन्तु इसके पश्चात् जब उसकी सफलता की पूरी आशा हो गई तो वौंदे के कुलीन लोग भी उसमें सम्मिलित हो गये। कन्वेंशन ने विद्रोहियों को आतंकित करने के लिये यह घोषणा की कि जो विद्रोही शस्त्र सहित पकड़े जावेंगे उनको मृत्यु दंड दिया जायेगा तथा उनकी सम्पत्ति भी ज़ब्त कर ली जायेगी। १ मास तक इस बात का प्रयत्न होता रहा कि स्थानीय राष्ट्रीय रक्षा दल एवं कुछ राष्ट्रीय सैनिक दलों की सहायता से जो बेल्जियम से भेजे गये थे विद्रोह दबा दिया जाय, किन्तु इसमें सफलता प्राप्त न हुई। वह एक विशेष सीमा के अन्तर्गत अवश्य सीमित कर दिया गया जहां उसकी ज्वालायें कई मास तक प्रकाशित रहीं। अन्त में सितम्बर मास में कुछ सैनिक दलों के योग से, जो उत्तरीय-पूर्वीय सीमा पर मिन्ट्ज़ (Mainz) के दुर्ग के हाथ से निकल जाने से खाली होगये थे, विद्रोहियों पर अधिकार प्राप्त कर लिया गया।

जिस समय फ्रांस के कर्णधार उपरोक्त कुव्यवस्थाओं को दूर करने की कोशिश में संलग्न थे तथा उसके सेनाध्यक्ष उत्तर-पूर्व की दिशा में उसकी सीमायें आगे बढ़ा रहे थे, छोटा पिट उसके विरुद्ध यूरोपीय राष्ट्रों का प्रथम शक्तिशाली संघ (Coalition) निर्माण करने में लगा हुआ था। मार्च सन् १७९३ ई० के अन्त तक वह पूर्ण रूप से तैयार होगया था। आस्ट्रिया और प्रशा तो पहले ही से क्रांतिकारी सेनाओं के विरुद्ध मोर्चा ले रहे थे। उनके अतिरिक्त इंग्लैंड, हालैंड, स्पेन, सार्डीनिया, पुर्तगाल, नेपिल्ज़, टस्कनी, सारांश यह कि कुल मिलाकर १५ देश, संघ में सम्मिलित हुये। रूस तथा स्विटज़रलैंड उसमें सम्मिलित न हुये।

प्रथम यूरोपीय संघ की स्थापना

कैथराइन द्वितीय ने प्रकट सहानुभूति तो बहुत दिखलाई लेकिन वास्तव में वह फ्रांस की ओर कभी भी दत्तचित्त नहीं हुई। उसके सन्निकट ही एक बहुत अच्छा शिकार पोलैंड के रूप में विद्यमान था। अत: वह प्रशा से मिलकर उसके दूसरे विभाजन में संलग्न रही। स्विटज़रलैंड प्राचीन काल से स्वतन्त्रता का मूल स्थान था। अत: वह भी संघ में सम्मिलित न हुआ। फिर भी पिट को उसकी स्थापना में अधिक कठिनाई नहीं हुई। सोलहवें लूई के वध तथा क्रांतिकारियों की विजयों और उनकी घोषणाओं ने इस कार्य को सरल बना दिया था। सभी बड़े राष्ट्र उस असाधारण बाढ़ को रोकने के लिये, जो फ्रांस की ओर से अग्रसर हो रही थी, एक शक्तिशाली बांध बनाने के लिये तत्पर हो गये। उन्होंने परस्पर यह निश्चित किया कि फ्रांस पर चारों ओर से अकस्मात शक्तिशाली आक्रमण करके क्रांति के झंडे को नीचा कर दें। अंगरेज़ों को यह काम सौंपा गया कि फ्रांस के समुद्रतटों पर आक्रमण करें। स्पेन के निवासियों से कहा गया कि पिरेनीज़ को पार करके दक्षिण की दिशा से फ्रांस पर आक्रमण करें। पीडमोंट के सम्राट को आज्ञा हुई कि इटैलियन ऐल्प्स की दिशा से फ्रांस में प्रवेश करे। आस्ट्रिया और प्रशा को उत्तरीय-पूर्वीय सीमा पर युद्ध का उत्तरदायित्व दिया गया। इस प्रकार फ्रांस को चारों ओर से घेरने का पूरा प्रबन्ध कर दिया गया। किन्तु यह किसी ने न सोचा था कि सफलता इस प्रकार के संघ का अन्त तक कैसे साथ दे सकती थी जिसमें एकता का कोई वास्तविक सम्बन्ध न था? फलत: जिरोंदिन दल के शासनकाल में वह युद्ध में विजयी हुआ। इसके पश्चात् जैसे ही शासनसूत्र जेकोबिन दल के हाथ में आया वैसे ही उसकी पराजय प्रारम्भ हो गई।

यूरोप के प्रथम संघ को देखकर कन्वेंशन के सदस्य घबड़ाये नहीं। उन्होंने अत्यन्त संतोष तथा धैर्य से काम लिया। उनकी आज्ञा से दूमूरिये ने शीघ्र ही हालैंड पर आक्रमण किया, किन्तु उसे पराजय मिली।

दूमूरिये की कृतघ्नता तब कन्वेंशन ने उसे पीछे हटने तथा आस्ट्रियन नेदरलैंड्ज़ (बेल्जियम) की रक्षा करने की आज्ञा दी। किन्तु दूमूरिये के मस्तिष्क में दूसरे ही प्रकार के विचार कार्य कर रहे थे। कुछ लेखकों को यह भी सन्देह है कि वह शत्रु से मिल गया था। जनवरी के प्रारम्भ तक वह इस बात को भली भांति समझ गया था कि संघ के सम्मुख क्रांतिकारी सेनायें किसी भी प्रकार से विजयी नहीं हो सकतीं। अस्तु उसने इस बात का दृढ़ संकल्प कर लिया था कि सम्राट को वध करने वाले शासन का अन्त करके, उस पर स्वयं अधिकार कर ले एवं तब शत्रु से सन्धि करने को उद्यत हो जाय। ऐसा करने से पूर्व यह आवश्यक था कि वह किसी बड़े युद्ध में सफलता प्राप्त करके ख्याति व महत्व प्राप्त करे, किन्तु

भाग्य ने उसका साथ न दिया। १८ मार्च को शत्रु ने उसे न्येरविंडैन (Neerwinden) के युद्ध में पूर्णतया परास्त किया, जिसके कारण उसकी सेनायें बेल्जियम से भागती हुई दिखलाई पड़ीं। इस से दूमूरिये का बड़ा अपमान हुआ। कन्वेंशन के सदस्यों ने तुरन्त यह समझ लिया कि अवश्य कुछ दाल में काला है। अत: उन्होंने दोतों को उसकी जांच के लिये भेजा तथा उसकी रिपोर्ट के आधार पर युद्ध मन्त्री को तीन सदस्यों के साथ दूमूरिये को बन्दी करने के लिये भेजा। यह सब २ अप्रैल को उसके पास पहुंचे, किन्तु उसने उल्टा उन्हीं को बन्दी करके शत्रु के हाथों में दे दिया तथा अपनी सेना को पेरिस की ओर कूच करने की आज्ञा दी। उसके इन्कार करने पर वह उसकी गोलियों की वर्षा में शत्रु के पक्ष में चला गया तथा अपने साथ ड्यूक आफ़ ओर्लिओं के नवयुवक पुत्र लूई फ़िलिप को भी लेता गया। सम्भवत: उसका यह विचार था कि वह उसे किसी दिन फ्रांस के सिंहासन पर सुशोभित करने में सफल हो सकेगा। यह कृतघ्नतापूर्ण कृत्य उस दूमूरिये का था जिस पर न केवल जिरोंदिन दल वरन् समस्त फ्रांस को अभिमान था तथा जिसने कन्वेंशन के अधिवेशन के प्रारम्भ होने के पश्चात् ही वामी के रूप में सुन्दरतम उपहार भेंट किया था। वास्तव में वह पूर्ण रूप से एक सैनिक था एवं गणतंत्र का बिल्कुल भी समर्थक न था। उसका आदर्श वैधानिक राजतंत्र था, किन्तु जब सोलहवें लूई की हत्या की गई थी तो उसने उसके लिये आंसू न बहाये थे। कारण यह था कि वह उसकी अयोग्यता तथा निर्बलता से पूर्णतया परिचित था। वह फ्रांस की आंतरिक कमज़ोरियों को भी खूब समझता था। उसका विचार था कि प्रथम संघ की संयुक्त शक्ति के सम्मुख वह युद्ध में सफल न हो सकेगा। इन्हीं सब विचारों के कारण उसने देशद्रोह किया था।

दूमूरिये का विचार ठीक था। उसके चले जाने के पश्चात् मित्र राष्ट्रों ने बेल्जियम पर अधिकार कर लिया। इसके पश्चात् उन्होंने फ्रांस पर भी आक्रमण कर दिया। अंगरेज़ों ने दंकर्क को चारों ओर से घेर लिया। आस्ट्रिया की सेनायें जौलाई में कोंदे (Conde) तथा वालांशियेन (Valenciennes) पर अधिकार करके लिल की ओर बढ़ीं। अन्य स्थानों में भी फ्रांस को पराजय प्राप्त हुई। प्रशा तथा होली रोमन साम्राज्य की सेनाओं ने फ्रैंकफुर्ट तथा मिन्ट्स के दुर्गों को लौटा लिया। इसके पश्चात् वे आल्ज़ास में प्रविष्ट होने का प्रयत्न करने लगीं। दक्षिण में स्पेन की सेनायें पीरनीज़ की पर्वत श्रेणियों को पार करके फ्रांस में दाखिल हो गई थीं और उन्होंने एक दो नगरों पर भी अधिकार कर लिया था। इस प्रकार दूमूरिये की कृतघ्नता के पश्चात् ही युद्ध का चित्र परिवर्तित हो गया था तथा क्रांतिकारी सेनाओं को लगभग प्रत्येक स्थल पर पराजय प्राप्त हुई थी।

डुमूरिये की कृतघ्नता एवं युद्ध में पराजयों के कारण राजनैतिक तराजू में जिरोंदिन दल का पल्ला बहुत ऊपर उठ गया था। यह बात भी प्रकट हो गई थी, कि यदि उसके हाथ से शासनसूत्र न ले लिया जायेगा तो फ्रांस को युद्धक्षेत्र में अधिक पराजय मिलेगी तथा आंतरिक कुव्यवस्थाओं एवं विद्रोहों के कारण वह युद्ध की व्यवस्था में पूर्ण शक्ति का उपयोग भी न कर सकेगा।

शासन में परिवर्तन की आवश्यकता

किन्तु अपकीर्ति तथा असफलता प्राप्त होने के अतिरिक्त भी जिरोंदिन दल को किस प्रकार हटाया जाय, यह एक गम्भीर प्रश्न था। असेम्ब्ली में इंग्लैंड के सदृश कोई अनुपम दलबन्दी की प्रथा (Party System of Government) तो थी नहीं। वास्तव में उसका कार्य तो एक नवीन संविधान का निर्माण करना था, न कि कानून बनाना तथा शासन को संचालित करना। उस में जिस दल का ज़ोर था अगर उसके हाथ में शासन तथा विभिन्न कमेटियों की बागडोर होती तो ठीक था। अन्यथा बड़ी बुराई उत्पन्न होने की आशंका हो सकती थी। अब जबकि जिरोंदिन दल के पैरों के नीचे से पृथ्वी खिसक रही थी, यह वाञ्छनीय था कि जेकोबिन दल के हाथों में शासन सौंप दिया जाय। यह कार्य सर्वसाधारण की सहायता के बिना न हो सकता था। किन्तु उनके कहने से नवीन निर्वाचन तो हो नहीं सकते थे, क्योंकि फ्रांस में इस प्रकार की प्रथा न थी। वे इस कार्य को शक्ति प्रयोग से अवश्य सफलता तक पहुँचा सकते थे। एक प्रकट बात यह भी थी कि सर्वसाधारण से आशय था पेरिस के सेक्शनों एवं उनके निवासियों से। कन्वेंशन और शासन पर उन्हीं का प्रभाव था। प्रथम के अधिवेशन पेरिस में होते थे एवं द्वितीय का स्थान भी पेरिस नगर ही था। इन बातों पर विचार कर के हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि २ जून सन् १७९३ ई० को जिरोंदिन दल के विरुद्ध जो क्रांति की गई थी वह एक प्रकार से आवश्यक तथा वाञ्छनीय थी।

उपरोक्त तारीख तक जिरोंदिन दल का अन्त न हुआ, किन्तु दिन प्रति दिन उसकी शक्ति क्षीण होती गई। गत जनवरी में रोलैंड ने त्यागपत्र दे दिया था। युद्ध-मंत्री बर्नोंवील (Beurnonville) आस्ट्रिया में बन्दी था। कुछ जेकोबिन दल के सदस्य भी मंत्रिमण्डल में ले लिये गये थे। इस प्रकार अप्रैल के बीच तक जिरोंदिन दल का प्रभाव कार्यपालिका तथा शासन पर बहुत कम हो गया था। कन्वेंशन के अधीन कुछ समितियाँ कार्य कर रही थीं। इन में भी उपरोक्त दल की शक्ति क्षीण हो गई थी। इस क्रम में सब से महत्वपूर्ण विषय यह था कि ६ अप्रेल सन् १७९३ को कन्वेंशन ने नौ सदस्यों की एक 'लोक

लोक रक्षा समिति, ६ अप्रैल १७९३ ई०

रक्षा समिति' (Committee of Public Safety) का निर्वाचन किया, जिसे हम कार्यपालिका की सर्वोच्च समिति कह कर पुकार सकते हैं। इसके अतिरिक्त उसे युद्ध का प्रबन्ध भी करना पड़ता था। वह अपने अधिवेशन गुप्त रीति से करती थी। वह मंत्रियों पर भी प्रभुत्व रखती थी। उसे उनके प्रबन्ध में परिवर्तन तथा स्थानीय अधिकारियों को नियुक्त करने का भी अधिकार था। नौ सदस्यों में जिरोंदिन दल का एक भी प्रतिनिधि न था। यह एक ध्यान देने योग्य विषय है। इस से सिद्ध होता है कि उक्त दल का महत्व अधिक कम हो गया था। कुछ काल के पश्चात् लोक रक्षा समिति के सदस्यों की संख्या १४ तक पहुँच गई। इन में अधिकतर सदस्य ऐसे थे जो किसी राजनैतिक दल से सम्बन्ध न रखते थे। उदाहरण के रूप में, गूतन-मौर्वो (Guton-Morveau) जो एक रसायनिक था; त्रेलहार्द (Treilhard) जो प्राचीन ढंग के वैधानिक शासन का समर्थक था, बरत्रौं बारेयर (Bertrand Barere) जो प्राचीन ढंग के वैधानिक शासन का समर्थक होने के अतिरिक्त प्रभावशाली वक्ता भी था; राबर्ट लिन्देत (Robert Lindet) जो एक सद्भावनापूर्ण और उदार विचार का विधान शास्त्री था एवं कॉबों (Cambon) जो कन्वेंशन में सबसे अधिक व्यवहारिक मनुष्य था। ये सब लोग किसी भी राजनैतिक दल का समर्थन अथवा विरोध कर सकते थे, किन्तु वे युद्ध के हित में प्रसभा के सभी कामों को आगे बढ़ाने के लिए तत्पर रहते थे। प्रारम्भ में जेकोबिन दल का नेता दांतों भी लोक रक्षा समिति का सदस्य था। किन्तु १० जौलाई को जब सदस्यों में परिवर्तन किया गया तो उसको हट जाना पड़ा। इसके बाद रोबेस्पेयर उस में सम्मिलित कर लिया गया। उसकी उपस्थिति का एक परिणाम यह हुआ कि फ्रांस में कार्यपालिका तथा विधान-मंडल के बीच एकता स्थापित हो गई। यह एक ऐसी विशेषता थी जिसके लिए मीराबो तथा अन्य नीतिज्ञ प्रयत्न करते रहे थे, किन्तु वे सफल न हो सके थे। उक्त समिति के प्रयत्न से १३ अप्रैल को प्रसभा ने गत १६ नवम्बर की घोषणा को वापस ले लिया। इस प्रकार वह त्रुटि ठीक की गई जो जिरोंदिन दल के मंत्रियों ने की थी।

लोक रक्षा समिति के निर्वाचन के कुछ समय पश्चात् जिरोंदिन दल के एक सदस्य ने प्रसभा से विरोधी दल के विख्यात नेता मारा के विरुद्ध मुक़दमा चलाने की स्वीकृति ले ली। अतएव २४ अप्रैल को वह क्रांतिकारी न्यायालय के सम्मुख उपस्थित हुआ। उस पर यह अभियोग लगाया गया कि उसने क्रांति के विरुद्ध सर्वसाधारण को लूट मार तथा वध करने को उत्साहित किया है। वास्तव में मारा हाल ही में जेकोबिन क्लब का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। उक्त क्लब ने समस्त प्रान्तों में

मारा के विरुद्ध मुक़दमा

अधीन क्लबों के लिये उसकी लेखनी से लिखा गया यह आदेश भेजा था कि शत्रु के सहायक संदेह में बंदी कर लिये जायँ तथा प्रसभा के वे सदस्य–"देशद्रोही, सम्राट के पक्षपाती तथा मूर्ख,"—जिन्होंने सम्राट के बचाने का प्रयत्न किया था वापस बुला लिये जायँ। आदेश के शब्द इस प्रकार थे,—"मित्रो, हमको धोखा दिया गया है। शस्त्र लेकर तैयार हो जाओ। शासन तथा कन्वेंशन के अन्दर क्रांति के विरुद्ध एक लहर उठ रही है। उस स्थान में जहाँ हमारी आशाओं का दुर्ग है हमारे अपराधी मनोवृति के प्रतिनिधि उस षड्यन्त्र को आगे बढ़ा रहे हैं जो उन्होंने उन अगणित निरंकुश सम्राटों के साथ किया है जो हमारा गला काटने के लिए आ रहे हैं।" जिस दिन मारा क्रांतिकारी न्यायालय के सम्मुख उपस्थित हुआ उसी दिन वह मुक्त कर दिया गया। फिर क्या था, सर्वसाधारण उसे कंधों पर उठा कर कन्वेंशन में ले गये एवं उसे उसके स्थान पर बिठा कर घर लौटा आये।

कन्वेंशन तथा कम्यून में विरोध

जिरोंदिन दल की शक्ति दिन प्रति दिन क्षीण हो रही थी। दूमूरिये के देश-द्रोह तथा डा० मारा के मुक़दमे के कारण उसे गहरा आघात लगा था। अब उसके सदस्यों के विरुद्ध कार्य करने तथा उनको मृत्यु दंड देने का समय आ गया था। मारा के छुटकारे के केवल दो दिन पश्चात् पेरिस के ३५ सेक्शनों ने २२ ऐसे जिरों-दिस्तों की सूची तैयार की "जिन्होंने सर्वशक्तिमान जनता के विरुद्ध कोई गम्भीर अपराध किया था।" दूसरे दिन मेयर उसे लेकर स्वयं कन्वेन्शन में उपस्थित हुआ और इस बात पर ज़ोर दिया कि पेरिस के हेतु वे सब पदच्युत कर दिये जायें। किन्तु सदस्यों ने यह कह कर कि उक्त सूची हम लोगों के लिए अपमान का कारण है, उसे अस्वीकार कर दिया। २० अप्रैल को पेरिस के कुछ प्रतिनिधि इस सम्बन्ध में प्रसभा के सदस्यों से भेंट करने को आये। अबकी बार जेकोबिन दल के प्रयत्न से उन्हें सम्मानपूर्वक बिठलाया गया, किन्तु उनका प्रस्ताव स्वीकार न किया जा सका। फलत: कम्यून की ओर से कन्वेन्शन पर आक्रमण करने की तैयारियाँ बराबर चालू रहीं।

एक मास तक कन्वेन्शन और कम्यून के बीच विरोध चला रहा। कम्यून की ओर से जिरोंदिन नेताओं को दण्ड दिलाने के प्रयत्न भी चलते रहे, किन्तु वे 'मैदान' अथवा 'दलदल' के प्रतिनिधियों की सहायता से स्वयं को बचाते रहे। इसी बीच पेरिस के सेक्शनों ने कई बार सभा की तथा कम्यून की बैठकें भी हुईं। उनके आन्दोलन को देख कर जिरोंदिन दल को बड़ी चिन्ता हुई। जब गृह-मन्त्री उसको रोकने में सफल न हुआ तो उक्त दल के सदस्यों ने इस आने वाली विपत्ति का सीधा सामना किया। उन्होंने कम्यून को बिल्कुल समाप्त करने का दृढ़

संकल्प कर लिया, किन्तु वे इस कार्य में कृतकार्य न हुये। इतना अवश्य हुआ कि उनके कहने से कन्वेन्शन ने १२ सदस्यों की एक समिति बना दी, जिसका कार्य कम्यून एवं सेक्शनों के कामों की जाँच करना था। समिति ने २४ मई को पेरिस के कुछ नेताओं को गिरफ्तार करने की आज्ञा निकाल दी। किन्तु कम्यून ने प्रयत्न करके जाँच समिति को भंग करा दिया एवं बन्दी किये गये सदस्यों को भी स्वतन्त्र करा लिया। कुछ दिनों के पश्चात् जाँच समिति फिर से ज़िन्दा कर दी गई।

२ जून, १७९३ ई० की रक्तहीन क्रांति

कन्वेंशन के सदस्यों की अनिश्चित नीति को देखकर पेरिस के निवासी हैरान थे। अन्ततः उन्होंने ३० मई को जिरोंदिन दल के विरुद्ध कार्य करने के लिए एक विशेष कमेटी निर्मित की, जिसे हम आजकल की भाषा में 'संघर्ष समिति' (Action Committee) के नाम से पुकार सकते हैं। सौंतेयर के स्थान पर, जो वेंदे भेज दिया गया था, एक सर्वप्रिय सैनिक पदाधिकारी हैनरियत (Hanriot) राष्ट्रीय रक्षा दल का अधिकारी बनाया गया। जब सब तैयारियां हो गईं तो दूसरे दिन मारा ने स्वयं अपने हाथ से ओतेल-द-वील (टाउन हॉल) के घंटे को बड़े ज़ोर से बजाया। इसका यह अर्थ था कि सब लोग विद्रोह के लिए तैयार हो जायं। इसके पश्चात् दिन के समय हैनरियत और उसके आदमियों ने त्वीलेरीज़ को, जहां कन्वेंशन का अधिवेशन हो रहा था, चारों ओर से घेर लिया। यह देखकर कन्वेंशन ने १२ सदस्यों की जांच समिति को फिर तोड़ दिया, किन्तु पेरिस के निवासियों के लिए यह यथेष्ट न था। वे तो जिरोंदिन दल को पूर्ण रूप से नष्ट कर देने का निश्चय कर चुके थे। अतएव २ जून को राष्ट्रीय रक्षा दल ने उनकी सहायता से कन्वेंशन को दोबारा घेर लिया एवं यह आज्ञा दी कि जिरोंदिन दल तथा जांच समिति के सदस्य बन्दी कर लिये जायें। जब समिति के सदस्य बाहर निकलने लगे तो हैनरियत तथा उसके साथियों ने उन्हें रोक लिया। दोनों के बीच उल्लेखनीय वार्तालाप हुआ। समिति के अध्यक्ष एरो (Herault) ने पूछा, "सर्वसाधारण क्या चाहते हैं?" और बतलाया कि "कन्वेंशन को तो केवल तुम्हारी तथा तुम्हारी प्रसन्नता की चिन्ता है।" हैनरियत ने उत्तर दिया, "एरो, जनसाधारण ने इसलिये शस्त्र नहीं उठाये हैं कि वे वार्ता सुनें वरन् इसलिये कि आज्ञा दें। वे ३४ अपराधी व्यक्तियों को मांगते हैं।" मारा के प्रयत्न से उक्त सूची से तीन सदस्यों के नाम तो हटा दिये गये। शेष ३१ के विषय में कन्वेंशन ने बड़े बहुमत से यह प्रस्ताव स्वीकृत कर दिया कि वे सब अपने कर्तव्यों से उन्मुक्त कर दिये जायँ तथा बन्दी अवस्था में रक्खे जायँ। इनमें जिरोंदिन दल के समस्त प्रतिष्ठित व्यक्ति थे, जैसे सांतोतिचैन, वर्नयो, पेतियों,

ब्होंसौने, बुजों, बारबरा, ब्रीसो, लौंज्हईने तथा लब्रु इत्यादि। इनमें अन्तिम दो मन्त्री थे।

जिरोंदिन दल के लोग अपने पतन के लिये स्वयं उत्तरदायी थे। उनका पतन इसलिये हुआ था कि अपने ही प्रारम्भ किये हुए युद्ध का उचित प्रबन्ध न करके वे पारस्परिक वैमनस्य तथा सम्पत्ति के संरक्षण में संलग्न हो गये थे। उन लोगों ने तथा उनके पक्षपाती लेखकों ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि उनका सिद्धान्त, शासन तथा कार्य पद्धति सब उपयुक्त थे। उन्होंने यह भी बतलाया है कि उनके साथ बहुत ही अनुचित व्यवहार किया गया था। जैसे मैडेम रोलैंड ने शोक प्रदर्शित करते हुये बन्दीगृह से यह लिखा था कि "जिसको आज राजप्रासाद प्राप्त होता है उसे दूसरे दिन कारावास के संकट सहन करने पड़ते हैं।" इसके उत्तर में जेकोबिन दल का कथन था कि उस दिन जनसाधारण ने कोई प्रदर्शनीय कार्य नहीं किया था। उन्होंने केवल प्रार्थना करने के अधिकार को शक्ति का प्रयोग करके अधिक शक्तिपूर्ण बनाया था। उन्होंने केवल ऐसी शासन सत्ता के विरुद्ध प्रदर्शन किया था जिसके विचार उन से भिन्न थे। प्रदर्शन करने का ढंग भी ऐसा था जो नियमानुसार तथा उचित था। प्रशंसा की बात तो यह थी कि २ जून की क्रांति के सम्बन्ध में एक बूंद रक्त भी न गिरा था एवं न एक भी शीशा ही तोड़ा गया था। यदि उसके कर्णधारों के हाथ रक्त से रंजित हो जाते तो उनमें तथा १२ सदस्यों की जांच समिति में अन्तर ही क्या रहता? कन्वेंशन के बीच बैठने वालों ने उस दिन जेकोबिन दल का समर्थन किया था। यदि वे ऐसा न करते तो उन्हें सफलता प्राप्त न होती।

सन् १७९३ ई० का संविधान: प्रथम प्रयास

जैसा कि बतलाया गया है, कन्वेंशन का प्रमुख कार्य नवीन संविधान का निर्माण करना था। सन् १७९१ ई० का संविधान सीमित राजतन्त्र के आधार पर निर्मित किया गया था। उसको बड़ी सीमा तक व्यवहार में भी लाया गया था। किन्तु राजतन्त्र की समाप्ति तथा गण-राज्य की स्थापना से यह बात आवश्यक हो गई थी कि गणतंत्रवाद के आधार पर एक नया संविधान निर्मित किया जाय। जिरोंदिन दल का शासन, जिसका अन्त उसके पतन के साथ हुआ था, वास्तव में कोई स्थायी शासन न था। वह एक अन्तर्कालीन शासन (Interim Government) था। यह एक निश्चित बात थी कि जैसे ही नवीन संविधान कार्य में लाया जायेगा जिरोंदिन शासन हटा दिया जायेगा एवं एक नवीन शासनसत्ता उसका स्थान ग्रहण कर लेगी। कन्वेंशन के प्रथम अधिवेशन को आठ मास व्यतीत हो चुके थे। फिर भी नवीन संविधान निर्मित न हो पाया था।

इसका यह अर्थ नहीं है कि कन्वेंशन के सदस्य इस आवश्यक कर्तव्य की ओर से निश्चिन्त थे। अधिवेशन प्रारम्भ करने के केवल ६ दिन पश्चात् अर्थात् २६ सितम्बर सन् १७६२ ई० को उन्होंने संविधान तैयार करने के लिये एक समिति बना दी थी, जिसमें उस समय की साम्प्रदायिक प्रगति के अनुसार सदस्यों का प्रतिनिधित्व था। उसमें दांतों तथा बारेयर दो जेकोबिन थे। चार ब्रीसो के दल के मनुष्य थे अर्थात् ब्रीसो (जिसका स्थान बाद को बारबरा ने ले लिया), पेतियों, बर्नयो तथा ज्होंसौने, तीन सदस्य ऐसे थे जिनका सम्बन्ध किसी विशेष राजनैतिक दल से न था, किन्तु जो संविधान के सम्बन्ध में काफ़ी जानकारी रखते थे,—सीएयेस, पेन तथा कोंदोर्से। ब्रीसो ने एक अत्यन्त योग्य तथा स्वतन्त्र विचार के अंगरेज़ को, जिसका नाम डेविड विलियम्स (David Williams) था, अपने कार्य में सहायता लेने के लिये इंग्लैंड से बुलाया था। वह उपरोक्त समिति का सदस्य तो न था, किन्तु वह पेरिस में शासन के अतिथि के तुल्य रक्खा गया था। उससे सदस्यों को काफ़ी सहायता मिली थी। इस सम्बन्ध में सब से अधिक कार्य कोंदोर्से को करना पड़ा था। वह तूर्गो तथा विश्व-कोष का निर्माण करने वालों का शिष्य रह चुका था। उसके हृदय में जनसाधारण की स्थिति में सुधार करने के लिये स्वाभाविक उत्साह था। अतएव समिति ने जो संविधान १५ फर्वरी सन् १७६३ ई० को कन्वेंशन के सम्मुख उपस्थित किया, उसको हम कोंदोर्से का संविधान कह सकते हैं। लेकिन वह व्यवहार में न लाया जा सका। कारण यह था कि उसमें ३६८ धारायें थीं एवं २६ मई तक कन्वेंशन को केवल ६ धाराओं पर विचार करने का अवकाश मिल सका था। इसके पश्चात् २ जून की क्रांति घटित हुई थी, जिसके कारण प्रत्येक वस्तु जिसका जिरोंदिन दल से सम्बन्ध था, घृणा की दृष्टि से देखी जाने लगी। फलतः कोंदोर्से का संविधान भी स्वाभाविक रूप से समाप्त हो गया।

कोंदोर्से का संविधान, जो गणतन्त्रवाद के आधार पर बनाया गया था, सन् १७६१ ई० के संविधान से कई प्रकार से अच्छा था। उसके द्वारा भी मत दान का अधिकार समस्त वयस्क पुरुषों को प्रदान किया गया था। इसके अतिरिक्त मानव के जन्मसिद्ध अधिकारों की सूची में यह भी सम्मिलित कर लिया गया था, कि समाज का कर्तव्य है कि निर्धनों की सहायता तथा सर्वसाधारण की शिक्षा का प्रबन्ध करे। परन्तु अधिक विस्तार लिये हुये तथा बेडौल होने के कारण 'माउनटेन' के लोगों को वह पसन्द न था। रोबेस्पियर ने उसमें कई सुधार करने का प्रयत्न किया। कुछ अन्य सदस्यों ने भी उसमें यथेष्ट अभिरुचि प्रदर्शित की। इस सब के होते हुये भी वह एक स्वाभाविक मृत्यु को प्राप्त हुआ। अतएव उस पर अधिक प्रकाश डालना व्यर्थ है।

कोंदोर्से और उसके साथियों का प्रयत्न, जिसका कोई स्थायी परिणाम नहीं निकला था, संविधान बनाने का प्रथम प्रयास था जो सन् १७९३ ई० में किया गया था। इसी बीच में उसके लिए दूसरा प्रयास भी प्रारम्भ हो गया था। १७ अप्रैल को जब कोंदोर्से का प्रस्ताव कन्वेंशन के सम्मुख उपस्थित किया गया था उसे ज्ञात हो गया था कि हवा उल्टी चल रही है। कन्वेंशन ने ६ सदस्यों की एक अन्य समिति निर्मित कर दी थी। जेकोबिन क्लब इस कार्य के लिये पृथक रूप से प्रयत्नशील था। बेल्जियम की पराजयों तथा वांदे के विद्रोह के कारण लोग जिरोंदिन दल तथा उसके कार्यों को बुरी दृष्टि से देखने लगे थे। परिणाम यह हुआ कि, जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, कोंदोर्से का संविधान कन्वेंशन के द्वारा स्वीकृत न हो सका। पेरिस में जैसे ही जिरोंदिन दल के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ हुआ था वैसे ही लोक रक्षा समिति ने, जो उस समय तक कोंदोर्से की समिति का विरोध करती थी, अपनी नीति बदल दी। उसने नई समिति में सम्मिलित होने के लिये पांच जेकोबिन सदस्यों के नाम स्वीकृत करा दिये। अतएव उसके सदस्यों की संख्या ११ हो गई। नये सदस्य इस प्रकार थे,— ऐरो-द-सेशैल (Herault de Sechelles), रामिल (Ramel), सें जूस्त (St. Just), मैथ्यू (Mathiew) और कूतों (Cauthon)। इन सब ने केवल एक ही सप्ताह में नया संविधान तैयार कर लिया। ६ जून को वह समिति से स्वीकृत हुआ, १० जून को वह कन्वेंशन के सम्मुख उपस्थित किया गया एवं जिरोंदिन दल के विरोध करने के अतिरिक्त भी वह २४ जून को स्वीकार कर लिया गया। जिरोंदिन दल की मन्द गति एवं जेकोबिन दल की तीव्र प्रगति को देखकर आश्चर्य होता है। इसका कारण यह बतलाया गया था कि "वे फ्रांस निवासी जो वास्तव में देशभक्त हैं (अर्थात् जेकोबिन) उन्हें केवल अपने हृदय के भीतर देखना पड़ता है और उन्हें वहां शब्द 'गण-राज्य' लिखा हुआ मिल जाता है। इसके विरुद्ध जो अत्याचारी शासनों व गणतन्त्रवाद के विरुद्ध उपायों को अपनाते हैं (अर्थात् जिरोंदिन) उन्हें अपनी योजनाओं को तैयार करने में परिश्रम करना पड़ता है।"

१७९३ का संविधान : द्वितीय प्रयास

जेकोबिन दल का बनाया हुआ संविधान भी, जो इतिहास में नवीन कलेण्डर के अनुसार "प्रथम वर्ष का संविधान" कहलाता है, कोंदोर्से के संविधान की भांति समय के पूर्व समाप्त कर दिया गया। आतंकपूर्ण शासन (Reign of Terror) के कारण, जिसको रोबेस्पेयर तथा अन्य जेकोबिन नेताओं ने स्थापित किया था, उनको इतना अवकाश ही नहीं मिला जो उसको व्यवहार में लाने का प्रयत्न करते। सन् १७९५ ई० में जब उक्त दल का पतन हो गया और प्रसभा पर मध्यम

श्रेणी का प्रभाव स्थापित हो गया तो उसने पुनः एक संविधान बनाया, जो इतिहास में 'तृतीय वर्ष का संविधान' कहलाता है। यह भी गणतंत्र सिद्धान्त के अनुकूल बनाया गया था। इसको नियमानुसार कार्यान्वित भी किया गया। ऐसी परिस्थिति में सन् १७६३ ई० के संविधान पर, जो कन्वेंशन से स्वीकृत हो गया था, अधिक समय तथा प्रयत्न नष्ट न करके उस पर विहंगम दृष्टि डाल कर हम आगे बढ़ना ठीक समझेंगे।

उपरोक्त संविधान में भी सर्वप्रथम मानव के मूल अधिकारों का उल्लेख किया गया है। किन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जिनमें वह सन् १७८६ की घोषणा से बिल्कुल भिन्न है। जैसे समाज का उद्देश्य यह बतलाया गया है कि वह सब को प्रसन्न रखने का प्रयत्न करे। समानता का उल्लेख पहले किया गया है और सम्पत्ति का इसके पश्चात्। कानून का उद्देश्य केवल यह नहीं है कि वह ऐसे कार्यों को रोके जिनसे समाज को क्षति पहुंचने की आशंका है, वरन् यह भी है कि ऐसे कार्यों के करने वालों का उत्साह वर्धन करे जो उचित तथा वांछनीय हैं। भाषण की स्वतन्त्रता, पुस्तकों एवं समाचारपत्रों आदि के प्रकाशन की स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतन्त्रता, शान्ति व व्यवस्था में विघ्न किये बिना सभा करने की स्वतंत्रता आदि को अधिक महत्व दिया गया है। एक विशेष बात यह है कि कोंदोर्से के संविधान की भांति उसमें भी यह बतलाया गया है कि समाज को निर्धनों का संरक्षण तथा जनसाधारण की शिक्षा की विशेष व्यवस्था करनी चाहिये। वोट देने का अधिकार भी वयस्क पुरुषों को प्रदान किया गया है। सब से प्रमुख बात यह है कि उसमें स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया गया है कि "जिस समय शासन सर्वसाधारण के अधिकारों के विरुद्ध कार्य करे तो ऐसी अवस्था में सर्वसाधारण के लिये तथा सर्वसाधारण के किसी भी भाग के लिये विद्रोह करना सब से उत्कृष्ट अधिकार तथा सब से आवश्यक कर्तव्य बन जाता है।" संविधान में कुछ अन्य आवश्यकीय बातें भी दी गई हैं जैसे निर्वाचन के लिए देश को समान जनसंख्या वाले भागों में विभाजित किया जायगा, लोक सभा (पार्लेमेंट) का अधिवेशन प्रति वर्ष होगा, प्रत्येक वोटर अपना वोट गुप्त अथवा प्रकट रूप में दे सकेगा, लोक सभा के सदस्यों की भांति मंत्रियों का भी प्रत्येक वर्ष चुनाव हुआ करेगा। इसके लिए डिपार्टमेंट कुछ नाम प्रस्तावित किया करेंगे तथा लोक सभा उन में से मंत्रियों को चुनेगी।

ऐसे देश में जहां आन्तरिक कलह ज़ोर पकड़े हुये थी एवं जिसके एक भाग में विद्रोह की भयंकर ज्वाला एवं दूसरे भाग में शत्रु के शक्तिशाली आक्रमण मनुष्यों को विकल किये हुये थे, कन्वेंशन को अथवा वहां के अन्य निवासियों

को इतना अवकाश तथा इतनी निश्चिन्तता कैसे प्राप्त हो सकती थी कि वे नये संविधान के अनुसार निर्वाचन की ओर दत्तचित्त होते।

नगरों के विद्रोह जून—दिसम्बर, सन् १७९३ ई०

अतएव जेकोबिन दल, जिसके हाथों में जून की क्रांति के पश्चात् शासन सूत्र आ गया था, केवल अधिक आवश्यक कार्यों की ओर ध्यान दे सका। एक आवश्यक प्रश्न यह भी था कि जिरोंदिन नेताओं के साथ जो हिरासत में ले लिये गये थे क्या व्यवहार किया जाय? इनमें से कुछ नज़र बचा कर प्रान्तों में चले गये थे तथा वहां विद्रोह की अग्नि भड़का रहे थे। यह उनकी सब से बड़ी भूल थी। इस से यह बात सिद्ध हो गई कि जिरोंदिन देश व क्रांति दोनों के शत्रु हैं। नवीन शासन को प्रथम यूरोपियन संघ की सेनाओं का सामना करना था और वाँदे के विद्रोह को भी समाप्त करना था। इसके अतिरिक्त उसको एक अन्य कठिनाई का सामना भी करना पड़ा, जो नगरों के विद्रोहों के रूप में प्रकट हुई। ये विद्रोह फ्रांस के सभी भागों में बड़े नगरों की ओर से किये गये थे, किन्तु मज़ेदार बात यह थी कि प्रत्येक नगर ने विद्रोह का झंडा पृथक उठाया था तथा निकटवर्ती कृषकों से भी कोई विशेष सहायता नहीं मिली थी। उक्त विद्रोह जेकोबिन दल तथा पेरिस के कम्यून के अत्याचारों के विरुद्ध किये गये थे। इनका एक विशेष कारण २ जून की क्रांति भी थी, जिसके द्वारा जिरोंदिन नेता बंदी बनाये गये थे तथा शासनाधिकार से वंचित कर दिये गये थे। बहुत से जिरोंदिन जो पेरिस से अदृश्य हो गये थे, उनमें सम्मिलित थे। विशेष रूप से कान तथा बोर्दो नगरों में विद्रोहियों को उनसे अधिक सहायता मिली थी। जेकोबिन शासन ने विद्रोहों को कठोरता से दबा दिया। एक के बाद दूसरे नगर में सरलता से विद्रोह का अन्त कर दिया गया। मार्सेल्ज़ नगर ने जिसके निवासियों में समकालीन शासन के पक्षपाती थे अक्टूबर में शस्त्र रख दिये। इसी मास में बोर्दो तथा लीओं पर अधिकार कर लिया गया। तूलों के निवासियों ने एक अंगरेज़ी सेना को दाखिल कर लिया था। परन्तु एक नवयुवक सैनिक पदाधिकारी नैपोलियन की सहायता से सितम्बर के मास में इस नगर पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया गया। इन सभी नगरों में विद्रोहियों को कठोर दंड दिये गये तथा समस्त फ्रांस में पेरिस के ढंग पर दमन चक्र चलाया गया। केन नगर में १७ जिरोंदिन नेताओं ने शरण ली थी, किन्तु वहां भी उनकी दाल न गल सकी। कारण कि वहां के जेकोबिन पदाधिकारी ने उनके साथ मानवता का व्यवहार किया था। इसके अतिरिक्त जब १७९३ ई० का संविधान प्रकाशित किया गया तो उसकी धाराओं को पढ़कर नगरों के विद्रोही भी शान्त हो गये। इस सम्बन्ध में एक प्रमुख घटना डाक्टर

मारा की हत्या है, जिसका उल्लेख चौथे अध्याय में हो चुका है। यह रोमांचकारी कृत्य जौलाई मास में किया गया था।

जिरोंदिन दल के नेताओं ने अनेक भूलें की थीं। उनकी अन्तिम भूल यह थी कि उन्होंने नगरों के विद्रोहियों से मिलकर जेकोबिन दल का सामना किया था। उपरोक्त विद्रोहों के बीच उनका सर्वनाश कर दिया गया।

जिरोंदिन नेताओं का सर्वनाश

वे अपने सिद्धान्तों के पालन करने में पक्के थे। अन्तिम श्वांस तक वे उन पर दृढ़ रहे एवं विरोधी दल के नेताओं तथा पेरिस के निवासियों को गाली देते रहे। एक समय उन्होंने यह इच्छा प्रकट की थी कि पेरिस का प्रभाव घटाकर $\frac{1}{८३}$ कर दिया जाय, क्योंकि कोई भी डिपार्टमेंट इस से अधिक का अधिकारी नहीं था। दूसरे समय उन्होंने यह धमकी दी थी कि वे राजधानी का सर्वनाश कर देंगे, जिस से "आने वाली सन्तान यह पूछे कि वह सीन नदी के किस तट पर स्थित था।" एक समय दांतों जैसे बड़े नेता ने उन से समझौता करने का प्रयत्न किया था, किन्तु उन्होंने यह प्रस्ताव पूर्णत: अस्वीकार कर दिया था। इस पर दांतों यह कह कर शांत हो गया था कि "तुम किसी को क्षमा करना जानते ही नहीं।" सारांश यह कि इस प्रकार की मूर्खता का प्रमाण देते हुये जिरोंदिन दल के नेताओं ने अपना सर्वनाश कर लिया। उनमें से बीस के शीश अक्टूबर में राजधानी में गेल्योतीं के द्वारा धड़ से अलग कर दिये गये, कुछ अन्य नगरों में मृत्यु के ग्रास बने और कुछ बनों की दिशा में भाग गये एवं वहां उनका बुरा परिणाम हुआ। इस प्रकार भागने वालों में बुज़ो और पेतियों प्रधान थे। यह था परिणाम उन लोगों का जिन्होंने समस्त जीवन हवाई महल बनाये थे तथा जिन्होंने फ्रांस को कठिनाइयों में फंसा कर संकट के गहरे गर्त में फेंक दिया था।

सत्रहवाँ अध्याय

जेकोबिन दल का शासन

२ जून की क्रांति तथा जिरोंदिन दल के पतन से यह बात प्रकट हो गई थी कि भावी वर्षों में क्रांति की गति अति तीव्र रहेगी। इन दोनों महत्वपूर्ण घटनाओं का, जो एक दूसरे से पृथक नहीं की जा सकतीं, यह अर्थ था कि शासन में तथा उसके बाहर भी सब स्थानों में जेकोबिन एवं उनके सिद्धान्तों का प्रभाव रहेगा। इसका यह भी अर्थ था कि शासन के कार्यों में सर्वसाधारण का प्रभाव तथा हस्तक्षेप प्रकट रूप से बढ़ जायेंगे एवं उनको प्रसन्न करने के लिए ऐसे कार्य किये जायेंगे जिनसे जिरोंदिन किसी सीमा तक घृणा करते थे। जिरोंदिन तथा जेकोबिन दोनों ही उन्मूलनवाद के समर्थक थे, किन्तु प्रथम की तुलना में द्वितीय अधिक उग्रवादी थे। वे क्रांति की गाड़ी को अधिक तीव्रता से आगे बढ़ाना चाहते थे। सब से महत्वपूर्ण बात यह थी कि वे स्वदेश तथा विदेश के शत्रुओं का सामना करने के उद्देश्य से अधिक हिंसक कार्य करने को तैयार रहते थे। अन्यथा शासन की साधारण गति विधि वही रही जो पूर्व काल से चली आ रही थी। जिरोंदिन तथा जेकोबिन दोनों जनता का नियंत्रण स्वीकार करते थे। दोनों केन्द्रीय शासन एवं केन्द्रीय प्रभुत्व को महत्व देते थे तथा दोनों ने अपने शासन को सफल बनाने के लिए भयंकर कृत्यों का आश्रय लिया था। अतएव हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार सम्राट के पृथक हो जाने के पश्चात् भी शासन यंत्र की दिशा परिवर्तित न की जा सकी थी, उसी प्रकार जिरोंदिन दल के पतन के पश्चात् भी उसकी वही दिशा रही। भेद केवल इतना हुआ था कि अब उसके चक्र, जो उसको पहले तीव्रता से आगे न बढ़ने देते थे, ढीले कर दिये गये थे।

जिस समय शासन सूत्र जेकोबिन दल के हाथ में आया फ्रांस की दशा अच्छी न थी। वरन् यों कहिये कि कई प्रकार से वह सन् १७६० ई० की तुलना में अधिक खराब थी। उसकी सेनाओं ने हॉलैंड को विजय करने का प्रयत्न किया था, किन्तु सफल न हो सकी थीं। इसके विरुद्ध उन्हें बेल्जियम से भी शीघ्र लौट आना पड़ा था। राइन नदी की दिशा में जो देश विजय किये गये थे वे सब भी त्याग दिये गये थे। पिट के बनाये हुये प्रथम संघ को प्रत्येक दिशा में सफलता प्राप्त हो रही थी। फ्रांस का सब से बड़ा और विख्यात सेनापति दूमूरिये शत्रु से जा मिला था। यह फ्रांसीसियों के लिए सब से लज्जा और शोक का विषय था। मित्र राष्ट्रों के हृदयों से क्रांतिकारी सेनाओं का आतंक बिल्कुल दूर हो गया था। इसके विरुद्ध उन्होंने फ्रांस को पददलित करके उसे परस्पर विभाजित करने की वार्ता भी प्रारम्भ कर दी थी। फ्रांस की सीमाओं के अंतर्गत, विशेषकर पश्चिम की दिशा में, गृहयुद्ध ज़ोर पकड़े हुये था, जिसके कारण कन्वेंशन के सदस्यों को शान्ति तथा निश्चिन्तता प्राप्त न हो सकती थी। इसके अतिरिक्त देश की शक्ति, जो दूसरे स्थानों में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती थी, उपरोक्त युद्ध में व्यर्थ ही व्यय हो रही थी। फ्रांस की आर्थिक दशा ज्यों की त्यों असंतोषजनक थी। काग़ज़ी नोटों का मूल्य दिन प्रति दिन कम हो रहा था। पेरिस में अन्न की अभी तक कमी थी। शासन ने बेकारी दूर करने की भी कोई व्यवस्था नहीं की थी।

फ्रांस की राजनैतिक तथा आर्थिक दशा

जेकोबिन दल के सदस्यों ने फ्रांस की बिगड़ी हुई दशा से काफ़ी फ़ायदा उठाया। उनके हृदयों में सच्ची देशभक्ति का प्रवाह उमड़ रहा था। वे प्रयोग को अधिक महत्व देते थे एवं समय की आवश्यकता के अनुसार कार्य करते थे। समय की मांग यह थी कि शासन की नाव को तूफ़ानी सागर से निकालने के ध्येय से एक अत्यन्त प्रभावशाली केन्द्रीय कार्यपालिका की स्थापना की जाय एवं उसे सब प्रकार के आवश्यकीय अधिकारों से सम्पन्न करके शक्तिशाली बनाया जाय। इसकी अनुपस्थिति में न तो विदेशी सेनाओं का सामना ही सफलता के साथ किया जा सकता था और न आंतरिक दोष ही सुधारे जा सकते थे। प्रारम्भ में जेकोबिन दल विदेशों से युद्ध करने के विरुद्ध था; किन्तु इसके पश्चात् आवश्यकतानुसार उसे अपनी नीति बदल देनी पड़ी। वे इस बात को खूब समझते थे कि केवल युद्ध की दशा में वे देश के हित के अतिरिक्त अपना हित भी कर सकते थे। बस उन्होंने विदेशी शत्रु तथा विद्रोहियों का

जेकोबिन दल की शासन पद्धति

सामना करने के लिए पूर्ण शक्ति से काम लिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने जिरों-दिन दल तथा शपथ न लेने वाले पादरियों को भी नष्ट करने का संकल्प किया। उन्होंने सैनिक भर्ती में अतिरिक्त रुचि प्रदर्शित की एवं सन् १७६१ ई० व १७६२ ई० के स्वयंसेवकों की सहायता के लिए नवीन सेनायें भेजीं। उन्होंने धनी मानियों पर कर लगाये, मज़दूरों को उचित मज़दूरी दिलवाई, रोटी की दर निश्चित की, व्यापार व हस्तकला का समुचित प्रबन्ध किया एवं पेरिस के निवासियों को भोजन दिलवाया। इन कार्यों के कारण जेकोबिन नेताओं ने पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की। अपनी धारणा के अनुसार जेकोबिन पेरिस के महत्व पर अधिक ज़ोर देते थे। दांतों ने एक बार कहा था, "पेरिस ने क्रांति को जन्म दिया है एवं जब उसका नाश हो जायेगा तब क्रांति का अस्तित्व ही न रहेगा।"

जेकोबिन दल के नेता रोबेस्पेयर, दांतों एवं सैं ज्हूस्त आदि की वक्तृताओं तथा लेखों से भी उसके शासन तथा कार्य पद्धति पर प्रकाश पड़ता है। उनके विचार तथा सिद्धान्त अत्यन्त उग्रवादी थे। वे सर्वसाधारण का सम्मान करते थे तथा उन्हें सीधे सीधे राजतंत्रवाद के अधिकारों से सम्पन्न करना चाहते थे। उक्त नेताओं को कभी कभी लोक रक्षा समिति का सदस्य होने का गौरव प्राप्त हुआ और अन्ततः तीनों को अपने शीश गेओतीं की भेंट कर देने पड़े। शासन के सफल बनाने के लिए वे कठोरता, साहस और आतंक से काम लेना अत्यन्त आवश्यक बतलाते थे। जून सन् १७६३ ई० में जब शासन सूत्र जेकोबिन दल के हाथ में आया उस समय फ्रांस चारों ओर से भय और संकटों से घिरा हुआ था। देश के अन्दर भी भय के साधन उपस्थित थे। अतः उन्होंने यही वांछनीय समझा कि भय का सामना भय के द्वारा किया जाय; आतंक को दूर करने के लिये आतंक से काम लिया जाय। यह कोई विलक्षण बात न थी। विश्व के इतिहास में सदा ही तथा सभी देशों में आकस्मिक विपत्ति के समय इस प्रकार की कार्य पद्धति रही है। फ्रांस के इतिहास में स्वयं इसके अन्य उदाहरण उपस्थित हैं। दांतों का सिद्धान्त था, 'साहस, अधिक साहस तथा सर्वदा अधिक साहस।' रोबेस्पेयर ने अपने लेखों तथा भाषणों में कई बार आतंकपूर्ण कार्य पद्धति तथा जनसाधारण के एकशास्ता शासन पर ज़ोर दिया था। 'शान्ति के समय यदि जनता के शासन का आधार लोक हित होता है तो क्रांति के समय लोक हित तथा आतंक दोनों ही उसके आधार बन जाते हैं,—लोक हित जिसके बिना आतंक का परिणाम अत्यन्त नाशकारी प्रमाणित होता है और आतंक जिसके बिना लोक हित व्यर्थ हो जाता है।' रोबेस्पेयर का एक साथी सैं ज्हूस्त था। २८ जौलाई सन् १७६४ ई० को रोबेस्पेयर

के साथ उसका शीश भी गेलोतीं की भेंट कर दिया गया था। जीवन के अंतिम दिनों में उसने कुछ सूक्ष्म लेख लिखे थे जिनके अवलोकन से प्रकट होता है कि जेकोबिन दल के नेता रूसो को अपना गुरु समझते थे एवं उसके सिद्धान्तों को कार्य रूप में परिणित करने के लिये प्रत्येक प्रकार से तैयार रहते थे। उन्हें इसकी किंचित भी चिन्ता न थी कि इस सम्बन्ध में कितना रक्तपात होगा। "क्रांतिकारी का आदर्श यह होता है कि क्रांति सफल प्रमाणित हो। अतएव वह उसमें कभी भी दोष नहीं निकालता। इसके प्रतिकूल वह उसके शत्रुओं को अपराधी ठहराता है, परन्तु वह शत्रुओं के अपमान के साथ उसका अपमान कभी सहन नहीं करता।"

अपनी शासन पद्धति को व्यवहृत रूप देने के लिये जेकोबिन शासन ने उचित प्रबन्ध किया। इस काम में उसे कुछ विशेष साधनों से सहायता मिली:—

(१) **कन्वेंशन**—प्रथम तो कन्वेंशन अथवा प्रसभा ही इस कार्य के लिये प्रत्येक रूप से ठीक थी। उसके सदस्यों का निर्वाचन समस्त समझदार एवं व्यस्क निवासियों के द्वारा किया गया था। अतएव वह संविधान-सभा से भी अधिक जनता का प्रतिनिधित्व करती थी। जनता का पूर्ण शासन तथा जनता का पूर्ण प्रतिनिधित्व, इन दोनों का अच्छा मेल था। इसके अतिरिक्त २ जून की क्रांति के पश्चात् विरोधी दल के प्रतिनिधि प्रसभा से हटा दिये गये थे। अतएव उसका कार्य सुविधा के अनुसार किन्तु अधिक तीव्रता से संचालित किया जा सकता था। अब उसके वादविवाद में लम्बी वक्तृताओं की आवश्यकता भी नहीं थी। इन कारणों से तथा इसलिए कि प्रसभा का पूरा प्रभाव मन्त्रियों तथा अधीन समितियों पर स्थापित हो गया था, वह जेकोबिन दल के उद्देश्य पूर्ति के लिए अधिक वांछनीय हो गई थी।

उसको कार्य रूप में लाने का उचित प्रबंध

(२) **जेकोबिन क्लब तथा अन्य प्रजातन्त्रीय समितियां**—पेरिस की जेकोबिन क्लब के अधीन तीन हज़ार क्लब डिपार्टमेंटों में काम कर रही थीं। इसके अतिरिक्त अन्य अगणित प्रजातन्त्रीय समितियां भी उसकी सहायता कर रहीं थीं। इन्हें हम जेकोबिन प्रभाव तथा जेकोबिन शासन की मूल शक्ति कह सकते हैं। उनमें आवश्यक समस्याओं पर विवाद होता था। उनके निर्णय प्रधान क्लब के पास भेज दिये जाते थे। वहां आवश्यक परिवर्तन के पश्चात् यही निर्णय माउन्टेन तथा कन्वेंशन की कार्य पद्धति का रूप ग्रहण कर लेते थे। कन्वेंशन का कोई भी सदस्य जो इनका अधिक विरोध करता था, बलपूर्वक बिठला दिया जाता था एवं इस बात की आशंका रहती थी कि कहीं बाहर आने पर पेरिस के निम्न श्रेणी के लोगों के हाथों उसकी मरम्मत न कर दी जाय। जिरोंदिस्तों के पतन के पश्चात् जनसाधारण

का प्रभाव कन्वेंशन पर पूर्ण रूप से स्थापित होगया था। एक अंगरेज़ यात्री ने जो कन्वेंशन के अधिवेशन के समय उपस्थित था, दर्शकों में बैठे हुये सर्वसाधारण के पशुवत हस्तक्षेप पर आश्चर्य प्रकट किया था। उसको आशा थी कि पुलिस इन लोगों को अवश्य बाहर कर देगी, किन्तु उसका आश्चर्य उस समय दोगुना होगया जब उसे यह बतलाया गया कि पुलिस उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकती, वरन अधिक आशंका इस बात की है कि कहीं ये लोग विरोधी सदस्यों ही को बाहर न निकाल दें।

(३) लोक रक्षा समिति—(Committee of Public Safety)—यह जेकोबिन शासन का मुख्य आधार तथा कार्यपालिका के रूप में थी। इस से भी उसे अपने उद्देश्यों की पूर्ति एवं सफलता पाने में अधिक सहायता प्राप्त हुई थी। इसका विशिष्ट वर्णन गत अध्याय में किया जा चुका है। इसके सदस्यों की संख्या घटती बढ़ती रहती थी। यह अप्रैल में ६, ३० सितम्बर को १४, १० जौलाई को ६ एवं २० सितम्बर सन् १७९३ ई० से १२ तक सीमित रही। इसके पश्चात् सदस्यों की संख्या में परिवर्तन नहीं हुआ। उन में सब से प्रसिद्ध बारेयर, लिनदेत, कूतों, सैं ज्हूस्त, रोबेस्पेयर एवं कारनो थे। यह उपरोक्त समिति का अन्तिम रूप था। इसी रूप में उसने फ्रांस में एक वर्ष तक शासन किया।

(४) सुरक्षा समिति—(Committee of General Security) यह भी शासन के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुई। इसकी स्थापना अक्टूबर सन् १७९२ ई० में हुई थी। उसका महत्व अधिक था। पुलिस का सम्पूर्ण प्रबन्ध उसके अधीन था। उसकी जांच के आधार पर लोक रक्षा समिति पद वितरण करती थी तथा शासन सम्बन्धी निर्णय करती थी।

(५) क्रांतिकारी न्यायालय—(Revolutionary Tribunal) इसका जन्म मार्च सन् १७९३ ई० में हुआ था। इसका मुख्य कर्तव्य उन लोगों के अभियोगों का निर्णय करना था जो सन्देह में बन्दी बना लिये जाते थे। उसकी सफलता का प्रमाण यह था कि वह अधिक से अधिक व्यक्तियों को शीघ्र से शीघ्र दंड देती थी। उसके न्यायाधीश व जूरी इत्यादि कन्वेंशन की ओर से नियुक्त किये जाते थे। उसकी कार्य पद्धति आवश्यकतानुसार परिवर्तित होती रहती थी। उदाहरणार्थ, जब इस बात की आवश्यकता अनुभव हुई, तो उसने जेकोबिन दल के आतंकपूर्ण शासन के समय समस्त आचार को एक ओर रखकर अत्यन्त स्वतन्त्रता से काम किया।

(६) गेओतीं—जिन अभियुक्तों को उपरोक्त न्यायालय से मृत्यु दंड दिया जाता था उनके शीश गेओतीं (Guillotine) के द्वारा धड़ से अलग कर दिये

जाते थे। इसका प्रयोग उसी काल में प्रारम्भ किया गया था, किन्तु वह उसी प्रकार आज भी स्थापित है। उसके आविष्कार का श्रेय पेरिस के एक सद्भावनापूर्ण डाक्टर को प्राप्त है जिसके नाम पर वह प्रसिद्ध है। उसकी बनावट बिल्कुल साधारण होती है। दो खड़े डंडों के बीच एक तीसरे डंडे से, जो उसमें आबद्ध रहता है, एक फलका लटका रहता है। जब किसी को वध करना होता है तो उसे एक तख्ते पर लिटा कर उसकी गर्दन डंडों के बीच कर दी जाती है एवं फलका गिरा दिया जाता है। इस प्रकार बिना किसी प्रकार के कष्ट तथा कारुणिक स्थिति के कार्य सम्पन्न हो जाता है। यदि यही कार्य कुठार के द्वारा हाथ से किया जाता तो प्रथम तो समय अधिक व्यय होता। दूसरे, उस कोटि की करुणाजनक स्थिति के उपस्थित होने की आशंका रहती जो इंग्लैंड में मॉनमथ के वध के समय उपस्थित हुई थी। किन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि इस प्रकार की स्थितियों के कारण वह रोमांचकारी रक्तपात भी शीघ्र ही रोक दिया जाता जो जौलाई सन् १७९३ ई० एवं जौलाई सन् १७९४ ई० के बीच किया गया था। वास्तव में गेश्रोतीं तो एक सुन्दर यंत्र है, किन्तु जेकोबिन दल ने उसका प्रयोग अत्यन्त अधिक तथा समय कुसमय किया था। अक्टूबर सन् १७९३ ई० में उसके द्वारा २१ जिरोंदिन दल के नेताओं के शीश केवल आधे घंटे में उतार लिये गये थे एवं जून सन् १७९४ ई० में ६१ अभियुक्तों का अन्त केवल ४५ मिनटों में कर दिया गया था। यह प्रमाण गेश्रोतीं की तीव्र गति का है।

(७) **कन्वेंशन के सदस्यों को प्रान्तों में भेजे जाने की प्रथा**—इससे भी जेकोबिन शासन को अधिक सहायता प्राप्त हुई थी। संविधान-सभा तथा विधान-सभा के सदस्यों को भी इसी प्रकार विशिष्ट कार्यों के लिये प्रान्तों में भेज दिया जाता था। कन्वेंशन को स्थायी रूप से विदेशी युद्ध, गृह युद्ध तथा पदाधिकारियों की अयोग्यता का सामना करना पड़ा था। इसलिये उसने उक्त प्रथा को अधिक प्रयुक्त किया। मार्च सन् १७९३ ई० में उसकी ओर से ८२ सदस्य प्रान्तों में नियुक्त किये गये थे एवं सैनिक भर्ती तथा स्थानीय शासन में सुधार के उद्देश्य से उन्हें विशद अधिकार प्रदान किये गये थे। अप्रैल में यह क़ानून निर्मित किया गया कि कन्वेंशन के तीन सदस्य सर्वदा प्रत्येक सेना के साथ युद्धक्षेत्र में उपस्थित रहेंगे। उनको भी अधिक अधिकारों से वेष्ठित किया गया था। घूमने वाले प्रतिनिधियों का प्रभाव सदैव अधिक होता है। उपरोक्त उदाहरण में उसका महत्व दोगुना हो गया था। इसलिये कि वे स्थायी रूप से सेना के साथ रहते थे अथवा दीर्घ काल तक एक ही प्रान्त में ठहरे रहते थे।

गत पृष्ठों में हमने जेकोबिन दल के सिद्धान्तों तथा उस शासन यन्त्र पर प्रकाश डाला है जिसकी सहायता से वह फ्रांस में कुछ काल तक आतंकपूर्ण शासन (Reign of Terror) के स्थापित रखने में कृतकार्य हुआ था। यह शासन अधिक काल तक स्थापित न रह सका। वह विदेशी संकट का सामना करने के लिये स्थापित किया गया था। अतएव जैसे ही वह संकट समाप्त हुआ, उपरोक्त शासन का भी अन्त कर दिया गया। उसका प्रारम्भ २ जून सन् १७६३ ई० को किया गया था एवं २८ जौलाई सन् १७६४ ई० को उसके सब से बड़े समर्थक रोबेस्पेयर को अपना शीश गेओर्ती को भेंट कर देना पड़ा था। इसके पश्चात् उपरोक्त शासन का भी अन्त कर दिया गया। फ्रांस में इस कोटि का आतंकपूर्ण शासन सन् १७६२ ई० के अगस्त तथा सितम्बर में भी रह चुका था, किन्तु उसकी समाप्ति शीघ्र ही हो गई थी। उपरोक्त आतंकपूर्ण शासन के यंत्र को ठीक करके जेकोबिन दल के शासन ने दमनचक्र चालू कर दिया। सबसे पूर्व प्रसभा ने मेरी ऐन्तोयनेत पर कड़ी नज़र डाली। बादशाह के वध के पश्चात् वह टेम्पिल के प्राचीन दुर्ग में जीवन के अंतिम दिन व्यतीत कर रही थी। उसके साथ उसका पुत्र, उसकी पुत्री तथा लुई की बहिन मैडेम ऐलिज़बेथ भी थे। बादशाह तथा राजतंत्र दोनों का अन्त हो चुका था, किन्तु सम्राट के परिवार को लोगों ने सन्देह की दृष्टि से देखना बन्द न किया था। वे सदा मेरी ऐन्तोयनेत को विदेशी समझते थे एवं उस से घृणा भी करते थे। इसके अतिरिक्त विगत जनवरी के पश्चात् आस्ट्रिया की ओर से उसे टेम्पिल से निकाल ले जाने का प्रयत्न भी कई बार किया जा चुका था। गत वसंत में फ्रांस की ओर से उसकी मुक्ति का एक अपूर्व अवसर भी दिया गया था, किन्तु मित्र राष्ट्रों ने उस से लाभ न उठाया था। उन से कहा गया था कि यदि वे चाहें तो उसकी उन्मुक्ति कन्वेंशन के उन सदस्यों के स्थान में प्राप्त कर सकते हैं जिन्हें दूमूरिये ने बन्दी बना लिया था। किन्तु उन्होंने उक्त प्रस्ताव से लाभ न उठाया था। ऐसी दशा में आवश्यक था कि जेकोबिन शासन मेरी पर तीक्ष्ण दृष्टि रक्खे एवं उसके भाग्य का निर्णय भी अति शीघ्र कर दे। अतएव १ अगस्त सन् १७६३ ई० को कन्वेंशन ने यह आज्ञा दी कि उसे उपरोक्त दुर्ग से हटाकर पेरिस के कोंसियर्झरी (Conciegerie) नाम के कारावास में रक्खा जाय। यहां वह प्रसभा के निर्णय की प्रतीक्षा करने लगी। शासन ने उस पर पहले से भी अधिक कड़ी नज़र रक्खी। इसके होते हुये भी उसको निकाल ले जाने के प्रयत्न बराबर चालू रहे।

मेरी ऐन्तोयनेत पर कड़ी नज़र

२३ अगस्त को लोक रक्षा समिति के मत से कन्वेंशन ने समस्त राष्ट्र के

संसजन के उद्देश्य से एक प्रसिद्ध क़ानून बनाया। इसके अतिरिक्त शत्रु को पीछे हटाने का कोई दूसरा उपाय उसकी समझ में न आया। गत फर्वरी में तीन लाख व्यक्तियों की भर्ती की आज्ञा प्रकाशित की गई थी, किन्तु इससे आधे मनुष्य भी भर्ती न हो सके थे। नये क़ानून के द्वारा फ्रांस को एक बहुत विशाल युद्ध का डेरा माना गया और पेरिस को उसका तोपखाना। "समस्त फ्रांस के निवासियों को चाहे वे किसी लिंग अथवा आयु के क्यों न हों, आज्ञा दी जाती है कि वे स्वाधीनता की रक्षा करें।" युवकों से कहा गया कि सेना में प्रवेश करें। विवाहित पुरुषों को आज्ञा दी गई कि बारूद तथा युद्ध सम्बन्धी सामान तैयार करें। स्त्रियों को डेरे व कपड़े बनाने तथा अस्पतालों में सेवा करने का काम दिया गया। जो लोग वृद्ध एवं कमज़ोर थे उन्हें यह कार्य दिया गया कि सैनिकों का साहस और उत्साह बढ़ायें एवं सम्राटों के प्रति घृणा तथा गणतन्त्र के हित में संगठन का पाठ पढ़ायें। इन दिनों प्रांतों के प्रतिनिधि १० अगस्त के महापर्व में सम्मिलित होने के लिये पेरिस आये हुये थे। दोंतों के मत से नवीन क़ानून को प्रांतों में व्यवहारिक रूप देने के लिए उनको उत्तरदायी बनाया गया।

राष्ट्रीय संसजन की आज्ञा

उपरोक्त कानून के निर्माण करने में कारनो ने विशेष अभिरुचि प्रदर्शित की थी। इस हेतु वह उसी के नाम से प्रसिद्ध है। वह इस सिद्धांत के अनुसार निर्मित किया गया था, कि जो बात सबों को सहन करनी पड़ती है उसका विरोध कोई नहीं करता। फ्रांस के निवासियों ने इसका बहुत ही संतोषजनक रीति से अनुकरण किया। प्रथम प्रकार के लोगों से आगे बढ़ने की कभी आवश्यकता ही अनुभव नहीं हुई। इसका यह अर्थ है कि १८ वर्ष से २५ वर्ष तक के युवक इतनी बड़ी संख्या में भर्ती हो गये एवं इसके बाद भी भर्ती होते रहे कि पाँच वर्ष तक गणतन्त्री सेनाओं में सैनिकों की कमी अनुभव नहीं हुई। कारनो ने अन्य युद्ध सम्बन्धी तैयारियों की ओर भी ध्यान दिया। उसने सेनाओं को क़वायद सिखलाने तथा युद्ध में खाद्य सामग्री पहुँचाने का उचित प्रबन्ध किया। उसके प्रयत्नों से शस्त्र तथा बारूद बनाने का कार्य इतने बड़े परिमाण में प्रारम्भ कर दिया गया कि उसका वर्णन पढ़ कर आश्चर्य होता है। इसके लिए प्रत्येक सम्भव स्थान से धातुएँ मगवाई गई यहाँ तक कि गिर्जाघरों के घण्टे तथा कठहरे की छड़ें तक मँगा ली गईं। भट्ठियों की संख्या तो अपरिमित थी। केवल पेरिस के चौराहों एवं वाटिकाओं आदि में उनकी संख्या २५० से अधिक थी। मठों की इमारतों को कारखानों में परिवर्तित कर दिया गया था। पृथ्वी के नीचे स्थित कमरों से जहाँ तक सम्भव हो सका

युद्ध सम्बन्धी अन्य तैयारियाँ

शोरा खोद लिया गया था। अतएव ग्रेनेल (Grenelle) के विशाल कारखाने में प्रति दिन तीस सहस्र पौंड बारूद तैयार हो जाती थी। फ्लरस के युद्धक्षेत्र में फ्रांस की ओर से एक युद्ध का गुब्बारा भी उड़ाया गया था। उसको देखकर सब को उसी प्रकार आश्चर्य हुआ था जिस प्रकार सन् १९१४ ई० में उसी युद्धक्षेत्र में हवाई जहाजों को देख कर हुआ था। गण-राज्य के सैनिकों ने एक बार सीमाफ़ोर के द्वारा समाचार भेजने में भी सफलता प्राप्त की थी। इसका हाल पढ़कर हमारे आश्चर्य की सीमा नहीं रहती। इन असाधारण तैयारियों की सहायता से युद्धमंत्री कारनो (Carnot) ने युद्ध का रूप ही बदल दिया। पराजयों को उसने विजयों में परिणित कर दिया। उसने न केवल विदेशी सेनाओं को फ्रांस की सीमा से हट जाने को बाध्य किया, वरन् क्रांतिकारी सेनाओं ने विदेशों में प्रवेश करके महत्वपूर्ण विजयों को भी प्राप्त किया।

कन्वेंशन ने व्यापारिक उपकरणों का मूल्य बढ़ने न देने का भी प्रयत्न किया। मई सन् १७९३ ई० में आटे का मूल्य नियत करने के लिए एक क़ानून निर्मित किया जा चुका था। उससे यह भी निश्चित कर दिया गया था कि आटा खुले बाजार में बेचा जायेगा तथा उसको बृहद राशि में रखने वालों को नगर-पालिका में लेखा जोखा देना पड़ेगा। जून में इस प्रकार का दूसरा क़ानून कुछ अन्य वस्तुओं के सम्बन्ध में बनाया गया, किन्तु उससे भी अधिक लाभ न हुआ। कारण यह था कि चोर बाज़ारी बराबर चालू थी। व्यापारी अन्न को एक स्थान में कम मूल्य पर मोल लेकर दूसरे स्थान में अधिक मूल्य पर बेचने से न रुकते थे। उनके विरुद्ध बराबर शिकायतें शासन के पास पहुंचती रही थीं। कभी कभी ऐसा भी होता था कि मध्याह्न को वे कोई वस्तु ५ शिलिंग में क्रय करते एवं उसके घंटा दो घंटे पश्चात् उसे दस शिलिंग को विक्रय कर देते थे। ईंधन के व्यापारी ८ शिलिंग को एक गट्ठा देते थे। इसके अतिरिक्त वह तौल में भी कम होता था। अन्य वस्तुयें भी इसी प्रकार महंगी थीं, जैसे कॉफ़ी, जिसको लोग सार्वजनिक रूप से पीने लगे थे, ४ शिलिंग ५ पैंस से ५ शिलिंग प्रति पौंड, शकर १ शिलिंग १ पेंस प्रति पौंड, अंडे २ पेंस प्रति अंडा, मोमबत्तियां २ शि० २ पैं० प्रति पौंड, साबुन जो इतना ख़राब था कि कपड़े भी ख़राब हो जाते थे, ३ शि० ५ पैं० प्रति पौंड, सुअर की चर्बी जो गाड़ियों में देने वाली ग्रीज़ के समान थी, १ शि० ८ पैं० प्रति पौंड तथा 'जहर से कुछ ही अच्छी' चर्बी १ शि० प्रति पौंड आदि। नित्य प्रति के उपयोग में आने वाली वस्तुओं का मूल्य इसी प्रकार अक्सर बढ़ जाया करता था। किन्तु सब से बड़ी कठिनाई यह थी कि पेरिस के कारीगरों तथा मज़दूरों की आय का

महंगाई रोकने का प्रयत्न

औसत बहुत कम था। अतएव आवश्यक था कि वे शिकायत करें तथा इस प्रकार के विचार अपने मस्तिष्क में लायें कि कोई व्यक्ति व्यापारियों से मिलकर षड्यंत्र कर रहा है जिस से हमारा जीवन दुष्कर हो जाय। इस दशा को देख कर क्रांति के शत्रु बहुत हर्षित हुये। एक भागे हुये अमीर ने जो लौट आया था गेओर्ती की ओर बढ़ते हुये अपने विचारों को इन शब्दों में विदित किया था,—"कायर और बुद्धू, ये लोग गणतंत्र के अभिलाषी हैं किन्तु उन्हें रोटियां तक प्राप्त नहीं होतीं। इसके पूर्व कि छः सप्ताह व्यतीत हों तुम्हारे बीच में एक सम्राट आ जायेगा, और तुमको इसकी आवश्यकता भी है।"

कुछ अन्य लोग भी ऐसे थे जिन्होंने वस्तुओं की महंगाई तथा सर्वसाधारण की अप्रसन्नता से काफ़ी लाभ उठाया। ये लोग जेकोबिन दल के सब से उग्रवादी सदस्य थे। उनकी इच्छा थी कि क्रांति का कार्य अधिक तीव्रता से आगे बढ़ाया जाय। उन्होंने निर्धन मज़दूरों एवं कारीगरों की ओर से आन्दोलन किया एवं उनकी शिकायतों को दूर करने के लिये शासन पर ज़ोर डाला। यदि वे एक शताब्दी बाद जन्म लेते तो लोग उन्हें मज़दूरों के नेता होने का श्रेय देते। किन्तु उस समय कुलीनों ने उन्हें 'असभ्य' (Enrages) के नाम से पुकारना प्रारम्भ कर दिया। अतएव इतिहास में वे इसी नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्होंने अपनी वक्तृताओं, लेखों, पोस्टरों तथा समाचारपत्रों के द्वारा इस बात का प्रयत्न किया कि धनी मनुष्य लाभ उपार्जन के विचार से व्यापारिक उपकरणों का एकत्रीकरण बन्द कर दें, उन्हें साधारण लाभ पर बेचें तथा सट्टे की वृत्ति को त्याग दें। 'असभ्यों' का प्रभाव केवल राजधानी में न था वरन् अन्य नगरों तथा ग्रामों में भी वे उपस्थित थे। इनमें बड़ी संख्या डा० मारा के समर्थकों की थी। कन्वेंशन में उनकी ओर से आवाज़ उठाने वाला हैबर (Hebert) नाम का व्यक्ति था। वह एक समाचारपत्र भी प्रकाशित करता था, जिसके ग्राहक साधारणतया समाज के निम्न श्रेणी के लोग थे। वह मारा का स्थान लेने का प्रयत्न कर रहा था, किन्तु उसमें उसके समान गुण न थे। शासन इन लोगों से उतना ही पीड़ित था जितना कि राजतंत्र के प्रतिपक्षियों से। अन्ततः उसे उनके दो नेताओं को लोक रक्षा समिति में स्थान देना पड़ा। (६ सितम्बर सन् १७९३ ई०)। इस प्रकार वे पेरिस के दूषित वातावरण से पृथक कर दिये गये एवं शासन कार्य का उत्तरदायित्व उनके कंधों पर लाद दिया गया। इनके नाम बीयोवारैन (Billaud-Varenne) व कालो-द-हर्बोइस (Collot-D' Herbois) थे। इसके होते हुये भी 'असभ्यों' का आन्दोलन समाप्त न हुआ।

'असभ्य'

हैबर का एक पृथक दल भी था, जिसके उद्देश्य एवं सिद्धान्त उसके मित्र

तथा सहायक 'असभ्यों' से मिलते जुलते थे। यही कारण था कि हैबर कन्वेंशन में उनकी ओर से आवाज़ उठाता था। दोनों के बीच गाढ़ी एकता

हैबर का दल

स्थापित हो गई थी, जिसके कारण शासन भी उनकी ओर से आतंकित था। पेरिस का कम्यून हैबर के दल का सबसे बड़ा सहायक था। उपरोक्त दल की अगणित शाखायें थीं। अतएव उसके सदस्य तथा सहायक देश भर में पाये जाते थे। कार्डीलियर क्लब, जिसका वर्णन पहले हो चुका है, उनके लिये राजनैतिक केन्द्र का काम करता था। यहां उसके सदस्य एकत्रित होते थे एवं अपने लिये उचित नीति निर्धारित करते थे। पहले की भांति अब भी शासन के विरोध का यही सब से बड़ा केन्द्र था। इस दल का एक प्रसिद्ध सदस्य एफ़० एन० विंसेंट (F. N. Vincent) था, जो युद्ध विभाग में एक प्रतिष्ठित पद पर सुशोभित था। इसका एक अन्य स्तम्भ शोमेत (Chaumette) था, जो पेरिस के कम्यून के अधीन अदालती विभाग का अधिकारी था। इस दल का एक विशेष सिद्धान्त यह था कि शासन पर सर्वसाधारण का पूरा प्रभाव होना चाहिये। अतएव हैबर, विंसेंट एवं उसके अन्य नेताओं का यह प्रयत्न था कि किसी प्रकार शासन पर कन्वेंशन और लोक रक्षा समिति का प्रभाव कम हो जाय एवं उसके स्थान पर सर्वसाधारण का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से बढ़ा दिया जाय। उनका यह भी प्रयत्न था कि वे पदाधिकारी एवं कर्मचारी पदच्युत कर दिये जायें जो वास्तव में देशभक्त न थे। हैबर के दल की कोशिश से राष्ट्रीय रक्षा दल की तुलना में, जिसमें अधिकतर मध्यम श्रेणी के लोग थे, एक क्रांतिकारी सेना भी निर्मित की गई थी जिसमें समाज के सब से निम्न कोटि के लोग एवं श्रमजीवी सम्मिलित थे। हैबर तथा अन्य नेताओं का प्रयत्न था कि उक्त सेना की सहायता से विद्रोही कर्मचारियों को पदच्युत कर दें, पेरिस के लिये अन्न का सब से उपयुक्त प्रबन्ध करें एवं जनसाधारण के शत्रुओं को वध करा दें। इस प्रकार के कार्यक्रम तथा कार्यों को देखकर शासन के अधिकारी तथा कर्मचारी भयभीत हुये एवं उन्होंने हैबर तथा उसके साथियों के विरुद्ध कठोरता से काम लिया।

अनेक आवश्यकीय सुधार जो प्रसभा की ओर से किये गये थे ऐसे थे जिनका जन्मदाता हैबर का दल था, जैसे पेरिस के चिकित्सालयों तथा समाधि-स्थलों का सुधार। दशमलव के प्रयोग का विचार भी सर्वप्रथम इसी दल के लोगों को हुआ था। यह नापने व तौलने की सबसे सरल प्रणाली है, जिसका उपयोग आधुनिक काल में संसार के अधिक देशों में किया जाता है। इस से इस बात का प्रमाण मिलता है कि हैबर तथा उसके अनुयायी प्राचीन तथा अप्राकृतिक बातों को पसन्द न करते थे। एक अन्य सुधार, जो उनके प्रभाव डालने पर किया गया था,

क्रांतिकारी कलैंडर के रूप में प्रकट हुआ। इसे शासन ने २४ नवम्बर सन् १७६३ ई० (दूसरा वर्ष ४ फ्रीमेयर) को स्वीकार कर लिया था। उसकी रचना भी प्राकृतिक सिद्धान्त पर की गई थी। यह गणतंत्र की स्थापना के दिन अर्थात् २२ सितम्बर सन् १७६२ ई० से प्रारम्भ होता है। महीनों के नाम उस समय की प्राकृतिक दशा के अनुसार निश्चित किये गये थे।* सात दिन के सप्ताहों के स्थान पर वर्ष को १० दिन वाले भागों में विभाजित किया गया है। दस दिनों में एक दिवस छुट्टी के लिये नियत है। नवीन धर्म की संस्थापना का विचार भी सर्वप्रथम उपरोक्त दल ही को हुआ था। अतएव पेरिस तथा अन्य डिपार्टमेंटों में प्राचीन ईसाई धर्म के स्थान पर बुद्धिवाद की प्रतिष्ठा प्रारम्भ हुई। इसका व्याख्यात्मक वर्णन अगले अध्याय में किया जायेगा।

सितम्बर के क़ानून १७९३ ई०

सितम्बर सन् १७६३ ई० में जेकोबिन शासन ने हैबर की सहायता से दो विख्यात क़ानून निर्मित किये। प्रथम क़ानून (Law of Suspects) जो उपरोक्त मास की १७ तारीख़ को स्वीकृत किया गया था, संदिग्ध लोगों को बन्दी बनाने के लिये रचा गया था। द्वितीय क़ानून २६ सितम्बर को इन दिनों की मंहगाई के रोकने के उद्देश्य से बनाया गया था। प्रथम क़ानून से शासन को इस बात का अधिकार प्राप्त हो गया कि वह युद्ध के समय प्राचीन अमीर उमरा, पदाधिकारियों तथा अन्य संदिग्ध लोगों को बन्दी करके कारावास में रक्खे। इसका यह अर्थ न था कि फ्रांस के समस्त अमीर जो भाग न सके थे अथवा समस्त पदाधिकारी जो बूरबन सम्राटों के शासनकाल में कर्मचारी रह चुके थे, बन्दी बना लिये गये। उनमें से बहुत से ऐसे भी थे जो क्रांति के समर्थक

---

*			
Vendemiaire	(month of vintage),	begins	September 22.
Brumaire	(month of fog),	,,	October 22.
Frimaire	(month of frost),	,,	November 21.
Nivose	(month of snow),	,,	December 21.
Pluviose	(month of rain),	,,	January 20.
Ventose	(month of wind),	,,	February 19.
Germinal	(month of sprouting),	,,	March 21.
Floreal	(month of flowers),	,,	April 20.
Prairial	(month of meadows),	,,	May 20.
Messidor	(month of harvest),	,,	June 19.
Thermidor	(month of heat),	,,	July 19.
Fructidor	(month of fruit),	,,	August 18.

तथा सहायक थे एवं शांतिपूर्ण ढंग से जीवन यापन कर रहे थे। कुछ कन्वेंशन के सदस्य थे तथा कुछ को कम्यून का सदस्य बना लिया गया था। अतएव उन्नीसवीं शताब्दी के लेखकों का अनुचित रूप से उक्त क़ानून का विरोध करना व्यर्थ है। उदाहरणत: कार्लाइल ने लिखा है कि "मानवों के किसी भी राष्ट्र में इससे अधिक भयंकर क़ानून कभी भी निर्मित नहीं किया गया।" जो लोग गत महायुद्धों के समय निर्मित क़ानूनों से अवगत हैं, वे उपरोक्त क़ानून का समर्थन अवश्य करेंगे। इस प्रसंग में हमें यह बात भी विस्मृत न करनी चाहिये कि जो लोग बन्दी बनाये गये थे उनमें से अधिकतर गिरफ्तारी के पश्चात् स्वतन्त्र कर दिये गये थे। जिनके विरुद्ध कोई अभियोग था उनका मुक़दमा क्रांतिकारी न्यायालय में अथवा किसी अन्य न्यायालय में किया गया। इसका यह अर्थ न था कि उन्हें मृत्यु दंड का निर्णय सुनाया गया। कारण कि सन् १७९३ ई० की शीत ऋतु में पेरिस में वध किये जाने वालों की संख्या अधिकतर २ अथवा ३ प्रति दिन थी। इसके पश्चात् सन् १७९४ ई० के शीतकाल में वहां यही संख्या ५० तक पहुंची थी। जो कुछ क्रांति के शत्रुओं को दंड देने के लिये किया जा रहा था उसे अन्य लोग हर्ष के साथ सहन कर रहे थे। इस सम्बन्ध में एक पुलिस के पदाधिकारी ने पेरिस के किसी विशेष भाग के निवासियों के विषय में अपने विचारों का प्रकाशन इन शब्दों में किया है,—"मैं सें मार्सो (Saint-Marceau) के कई कारखानों में गया। लोग क्रांति को हृदय की अन्तरात्मा से चाहते हैं। वास्तव में मुझे यह देखकर प्रसन्नता प्राप्त हुई कि ज़बानें तथा औज़ार तीव्रता से स्वर में स्वर मिलाकर आवाज़ कर रहे थे।"

द्वितीय क़ानून जनता के लिये अधिक हितकारी प्रमाणित हुआ। उसके द्वारा आवश्यकता के सभी उपकरणों का मूल्य निश्चित कर दिया गया। इनमें भोजन, ईंधन, कपड़े, और कारखानों में उपयोग होने वाले कच्चे पदार्थ भी सम्मिलित थे। मज़दूरी की दर भी निश्चित कर दी गई। यह सन् १७९० ई० से ५० प्रतिशत अधिक थी। जो कोई उसे अस्वीकार करता था वह दण्डनीय बन जाता था। किन्तु उक्त क़ानून से आशा के अनुसार लाभ न हुआ। कारण यह था कि शासन अपनी ओर से वस्तुओं के बनाने तथा उनके वितरण के लिये तैयार न था। इसके अतिरिक्त काग़ज़ी नोटों के कारण भी कठिनाइयां उत्पन्न हो रहीं थीं। यह बात भी ध्यान देने के योग्य है कि शासन ने उस क़ानून का भी अन्त न किया था जिसके कारण मज़दूर तथा कारीगर अपनी समितियां स्थापित न कर सकते थे। 'माउन्टेन' उनका राजनैतिक दल न था वरन् वह मध्यम श्रेणी के लोगों का दल था। इसके अतिरिक्त उसे सर्वदा विदेशी युद्धों की ओर भी दत्तचित्त रहना पड़ता था।

इस प्रकार के शासन की दृष्टि में पारस्परिक वैमनस्य फैलाना बहुत बड़ा अपराध था। अतएव ३ अक्टूबर को कन्वेंशन में यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि जिरोंदिन दल के नेताओं के विरुद्ध जो पेरिस के वन्दीगृहों में थे मुक़दमा चलाया जाय। इसके अतिरिक्त उन ७३ सदस्यों को भी दण्ड दिया जाय जिन्होंने उनके वन्दी किये जाने के समय विरोध किया था। रोबेस्पेयर अन्तिम प्रस्ताव से सहमत न था। उसने ब्रीसो एवं उसके साथियों को, जिन्होंने प्रत्यक्ष रूप से फ्रांस को युद्ध में ढकेल दिया था, अभी तक क्षमा न किया था। किन्तु वह यह न चाहता था कि सदस्यों को केवल अपने मत प्रकाशन के लिये दण्ड दिया जाय। यह बात उस समय भी अनियमित समझी जाती थी एवं अब भी समझी जाती है। इसके विपरीत वे बन्दी बना लिये गये पर उन्हें किसी अन्य विपत्ति का सामना न करना पड़ा। दिसम्बर सन् १७९४ ई० में जब जेकोबिन दल एवं उसकी आतंकपूर्ण सरकार का पतन होगया तो वे कन्वेंशन में पुन: बुला लिये गये। ७ अक्टूबर को गोरास (Goras) नाम का जिरोंदिस्त पेरिस में गेश्रोतीं की भेंट कर दिया गया। वह अदृश्य हो गया था, किन्तु बाद को बन्दी कर लिया गया था।

७३ सदस्यों का कारावास भेजा जाना

१० अगस्त को सें ज्यूस्त ने कन्वेंशन में शासन की नीति का ज़ोरदार शब्दों में समर्थन किया। उसने बतलाया कि यह ठीक है कि शासन को अपना कार्य शान्तिपूर्ण ढंग से चलाना चाहिये, किन्तु शान्तिपूर्ण ढंग उन लोगों के लिये ठीक है जो एक दूसरे की स्वतन्त्रता का ध्यान रखते हैं। किन्तु वर्तमान परिस्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। आजकल जनता एवं जनता के शत्रुओं के बीच भयंकर संघर्ष है। उसमें कृतकार्य होना आवश्यक है। "जिस समय तक स्वतंत्रता का एक भी शत्रु विद्यमान है उस समय तक हम सुख व शांति की आशा नहीं कर सकते। आप को केवल विद्रोहियों ही को दंड नहीं देना है, किन्तु उन लोगों को भी जो हमारे न शत्रु हैं और न मित्र। आपको उन सब लोगों को दंड देना है जो सार्वजनिक शासन के कार्य में कोई अभिरुचि प्रदर्शित नहीं करते तथा उसके लिये कोई प्रत्यक्ष कार्य नहीं करते।...जनसाधारण तथा उनके शत्रुओं का फ़ैसला तलवार के अतिरिक्त किसी अन्य उपाय से नहीं हो सकता।"

आतंकपूर्ण शासन का ज़ोरदार समर्थन

सें ज्यूस्त ने, जिससे सभी लोग डरते थे, इस बात पर भी ज़ोर दिया कि सेना के ठेकेदारों को जो शासन को धोखा देते हैं एवं अनुचित लाभ उठाने वालों को जो जनता को लूटते हैं, कठोर दंड मिलना चाहिये। सर्वसाधारण के हित के लिये सब कुछ ठीक और उचित है। "जो लोग क्रांति के जन्मदाता हैं, जो संसार में कोई

भलाई करना चाहते हैं, उन्हें उस समय तक निद्रा में न रहना चाहिये जब तक कि वे मृत्यु का ग्रास न बन जायें।"

सें ज्यूस्त कन्वेंशन का सब से कम आयु वाला तथा सुन्दर सदस्य था। वह अपने ओजस्वी भाषणों तथा स्पष्ट युक्तियों के लिए प्रसिद्ध था। क्रांति के हित में वह अपने सब से बड़े मित्र का भी बलिदान दे सकता था। उसका सब से बड़ा मित्र रोबेस्पेयर था। उसे वह अपना राजनैतिक पथप्रदर्शक भी समझता था। बहुत से विचार तथा सिद्धान्त ऐसे थे जो दोनों में समान रूप से पाये जाते थे। उदाहरणार्थ, सन् १७९३ ई० एवं सन् १७९४ ई० के आतंकपूर्ण शासन के दोनों समर्थक थे। उसकी सफलता के लिये वे बड़े से बड़ा बलिदान देने को तत्पर रहते थे। उसकी आवश्यकता तथा महत्व को रोबेस्पेयर ने भी भली प्रकार समझाया था। प्रथम तो उसकी उक्ति यह थी कि क्रांति के काल में आतंकपूर्ण शासन की स्थिति सर्वथा उचित है। इसका उल्लेख गत पृष्ठों में किया जा चुका है। दूसरे, उसने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि आतंक भलाई का दूसरा नाम है। उसका अर्थ है 'न्याय जो बिना किसी पक्षपात के कठोरता और तीव्र गति से किया जाय। ......उसकी मूलभूमि पृथक नहीं होती बल्कि उसका जन्म उस समय होता है जब हम राष्ट्र की सब से बड़ी आवश्यकताओं के [illegible] प्रजातंत्र शासन प्रणाली से काम लेना चाहते हैं।" रोबेस्पेयर ने इस विषय पर भी प्रकाश डाला है कि राष्ट्र को दो ओर मोर्चा लेना है जो वास्तव में एक ही हैं। उसे अपने शत्रु का सिर घर में भी कुचलना है एवं बाहर भी। "फ्रांसीसी राष्ट्र के आन्तरिक शत्रु दो सैनिक टुकड़ियों की भांति दो दलों में विभक्त हैं। वे दो विभिन्न मार्गों से विभिन्न झण्डे लेकर आगे बढ़ते हैं, किन्तु उनका निर्दिष्ट लक्ष्य एक ही है और वह लक्ष्य है जनता के शासन को विफल करना, कन्वेंशन को नष्ट करना तथा आतंक व अत्याचार को सफल बनाना। इन दलों में से एक हमें निर्बलता की ओर ले जाना चाहता है एवं दूसरा कठोर व्यवहार की ओर।" स्पष्ट है कि रोबेस्पेयर का संकेत प्रथम से दांतों तथा उसके दल की ओर था एवं द्वितीय से उसका आशय हैबर तथा उसके साथियों की ओर था। कुछ महीनों के पश्चात् इन दोनों की समाप्ति कर दी गई।

मेरी ऐन्तोयनेत का वध

१६ अक्टूबर सन् १७९३ ई० को जेकोबिन दल के आतंकपूर्ण शासन ने मेरी ऐन्तोयनेत का वध कर दिया। गत अगस्त से वह कौंसियेर्ज्हरी के कारावास में जीवन के अन्तिम दिवस व्यतीत कर रही थी। उसके बच्चे तथा लूई की छोटी बहिन ऐलिज़बेथ 'टेम्पिल' में थे। उसके स्वतन्त्र करने के लिये प्रयत्न बराबर चालू थे। क्रांति से सहानुभूति रखने वाले भी उसके विरुद्ध उच्च स्वर कर

रहे थे। ऐसी दशा में प्रजा के सदस्य उसकी ओर से उदासीन कैसे रह सकते थे? उन्होंने ३ अक्टूबर को उस पर मुक़दमा चलाने की आज्ञा दी एवं १६ अक्टूबर को उसे गेओर्तां के नज़र कर दिया। उस पर ये अभियोग लगाये गये कि उसने फ्रांस के विदेशी शत्रुओं को उस पर आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहन दिया है एवं आन्तरिक शत्रुओं से मिलकर गृह युद्ध के लिये षड्यंत्र किया है। उससे अनेक प्रश्न किये गये, किन्तु उसने उनका यही उत्तर दिया कि "मैंने सर्वदा लूई की नीति पद्धति के साथ, उसकी पत्नी की स्थिति से, अनुकूलता की है।" इस प्रकार के उत्तर न तो कन्वेंशन के सदस्यों को संतोष दे सकते थे और न सर्वसाधारण जनता को। उसको तो लोग पूर्व ही से अपराधी एवं अभियुक्त समझते थे। कारण यह था कि उसने विदेशी शासनों को फ्रांस पर आक्रमण करने के लिए निमंत्रण दिया था। उसने उनके हाथों सैनिक नक्शे तथा अन्य काग़ज़ बिक्री किये थे। उसके ज़ोर देने पर ब्रंज़विक ने अपनी घोषणा प्रकाशित की थी। अतएव उसको मृत्यु दंड दिया गया। जब वह गेओर्तां के सन्निकट लाई गई तो जनसमूह ने जो दो घंटे से प्रतीक्षा कर रहा था, करतल ध्वनि की एवं उसके वध के क्षण टोप उछाल कर 'क्रांति ज़िन्दाबाद' के नारे लगाये। जब एक सैनिक उसके अस्ट्रियन रक्त से रूमाल रंगने लगा तो उन्होंने उसको इतना मारा कि वह बेचारा प्राण रहित सा हो गया। जब ये समाचार प्रान्तों में पहुंचा तो वहाँ से कन्वेंशन के लिए बधाइयां आईं।

मेरी ऐन्तोयनेत के पश्चात् शाही कुटुम्ब के कुछ अन्य प्रतिनिधियों को भी समाप्त कर दिया गया। नवम्बर के पहले सप्ताह में लूई फ़िलिप को वध कर दिया गया। उसके विरुद्ध यह अभियोग लगाया गया कि उसने जिरोंदिन दल से मिल कर शासन के विरुद्ध षड्यंत्र किया है। वह आरम्भ से सोलहवें लूई के विरुद्ध था। अतएव उसने कन्वेंशन के सदस्य की स्थिति से उसके वध का मत दिया था। इसके पश्चात् वह अपने प्राण बचाने के लिए जेकोबिन क्लब का सदस्य बन गया था। उसने अपने वंशानुगत उपाधियों को भी लौटा कर 'नागरिक समता' (Citizen Equality or Egalite) का नाम ग्रहण कर लिया था। उस पर सभी व्यक्ति हंसते थे। उसके वध के छः मास पश्चात् लूई की बहिन मैडेम एलिज़बेथ का शीश उतार लिया गया। केवल सम्राट लूई के दो निर्दोष बालक अर्थात् राजकुमार तथा उसकी बहिन शेष रहे। प्रथम की आयु केवल आठ वर्ष तथा द्वितीय की आयु केवल १५ वर्ष थी। इस-

लूई के अन्य नातेदारों की समाप्ति

लिए कन्वेंशन के सदस्यों ने उनकी हत्या से हाथ खींच लिये। सन् १७६५ ई० में बन्दी की स्थिति में प्रथम की मृत्यु हो गई और द्वितीय को दो साल बाद उन सदस्यों के बदले में जिन्हें डूमुरिये ने गत अप्रैल में बन्दी बना लिया था, स्वतंत्र कर दिया गया। इस समय तक सम्राट के परिवार के सिंहासनारूढ़ होने की आशा बिल्कुल समाप्त हो चुकी थी। इसलिये कन्वेंशन ने उपरोक्त अदला बदली को अनुचित नहीं समझा।

जिरोंदिन नेताओं का अन्त

२४ अक्टूबर को जिरोंदिन दल के सदस्यों का मुक़दमा प्रारम्भ हुआ। बर्नेयो, ब्रीसो, ज्होंसोंने एवं १८ अन्य सदस्यों के विरुद्ध यह अभियोग था कि उन्होंने राज्य के विरुद्ध षड्यंत्र किया है। उनके विरुद्ध सन् १७६२ ई० की युद्ध घोषणा से नगरों के विद्रोहों तक समस्त राजनैतिक इतिहास का उल्लेख किया गया। वास्तव में वे मारा की हत्या के उत्तरदायी थे। अतएव पेरिस के निवासी उनसे बदला लेना चाहते थे। जिरोंदिन नेताओं ने अपनी प्राण रक्षा के हेतु प्रत्येक प्रकार का प्रयत्न किया, किन्तु वे कृतकार्य न हुये। विशेष रूप से बर्नेयो ने अपनी उक्तियां बड़ी योग्यता से उपस्थित की थीं। उनमें से एक बन्दी ने तो आत्म हत्या कर ली। शेष बीस के शीश ३१ अक्टूबर को गेओतीं के द्वारा उतार लिये गये। उस समय तक किसी दिन भी इतनी अधिक हत्यायें नहीं की गईं थीं। किन्तु इन्हें हम जेकोबिन दल के भयंकर कार्यों की सीमा नहीं कह सकते। अन्य नगरों तथा ग्रामों में किन्हीं अवसरों पर इससे भी अधिक भयंकर दृश्य देखने को मिले। पेरिस के निवासी अत्यन्त प्रसन्न थे। किन्तु एक महान् दल का सर्वनाश जिसने राष्ट्रीय विपत्तियों का सामना योग्यता तथा कर्मठ बन कर किया था, जेको-बिन दल के कतिपय नेताओं के लिए चिन्ता व उद्विग्नता का विषय प्रमाणित हुआ। उदाहरणात: कामील देमूलें के विषय में यह लेख है कि वह स्वयं पर अधि-कार न रख सका तथा न्यायालय में रोने लगा। दांतों इस समय देहात में था, उसे भी दुख हु:आ। अत: वह कहने लगा, "उनके बाद, एक के पश्चात् दूसरे, हमारी भी बारी आयेगी।" ८ नवम्बर को मेडेम रोलेंड, जिसके निवास स्थान पर जिरोंदिन नेता एकत्रित हुआ करते थे तथा जो अपने पति के स्थान पर मंत्री का कार्य कर लिया करती थी, गेओतीं की भेंट कर दी गई। दो दिन पश्चात् उसके पति ने, जो अदृश्य हो गया था, रूआं के निकट अपने जीवन का अंत कर लिया। उसी दिन पेरिस के कम्यून का प्राचीन अध्यक्ष तथा वैधानिक शासन का प्रतिपक्षी बाई पेरिस के मैदान में गेओतीं की वेदी पर बलिदान कर दिया गया। पेरिस के

निवासियों ने अभी तक उसे क्षमा न किया था। उन्हें जौलाई सन् १७९१ ई० की घटना, जब उसने निरपराधियों पर गोली वर्षा की आज्ञा दी थी, विस्मृत न हुई थी। १७ नवम्बर को पेरिस के प्राचीन न्याय विभाग के अधिकारी मेनुअल का शीश उतार लिया गया था। उसका अपराध यह था कि वह जेकोबिन शासन के विरुद्ध हो गया था एवं उसने सम्राट के परिवार के प्रति अनुकूलता प्रदर्शित की थी।

अन्य नगरों में दमनचक्र का प्रभाव

जेकोबिन शासन का दमनचक्र पेरिस की भांति अन्य नगरों में भी अपना नाटक दिखला रहा था। विशेष रूप में, दक्षिण के नगरों के निवासियों को विद्रोह के लिये कठोर दंड दिया गया था। कन्वेंशन ने कुछ सदस्यों को वहां विद्रोह शान्त करने के लिए भेजा था। मार्सेल्ज़, बोर्दो तथा लीओं में विद्रोह की शक्ति सब से अधिक थी। कन्वेंशन के सदस्यों ने तीनों नगरों में गेओतीं खड़ी कीं एवं शत्रुओं को बड़ी निर्दयता तथा कठोरता से पीस डाला। उदाहरणार्थ, जब वामी के वीर केल्लरमान ने लीयों का दुर्ग विजय कर लिया तो कन्वेंशन के सदस्यों ने जोश में आकर यह आज्ञा दी कि नगर पूर्णतया नष्ट कर दिया जाय, उसका नाम परिवर्तित कर दिया जाय तथा उसके भग्नावशेषों के बीच में एक स्तम्भ पर यह खोद दिया जाय, 'लीओं ने स्वाधीनता के विरुद्ध युद्ध किया था; लीओं का अब अस्तित्व तक शेष नहीं है।' उपरोक्त आज्ञा के लेख का सामयिक औचित्य यह है कि वह आज्ञा कार्यान्वित नहीं हुई। परन्तु वहां ६ मास में दो हज़ार व्यक्ति वध कर दिये गये। इनमें से कुछ गेओतीं की भेंट किये गये तथा कुछ गोली के द्वारा उड़ा दिये गये। एक अन्य प्रकट उदाहरण नेन्स नगर का है जहां वौंदे के विद्रोहियों ने प्रलय उपस्थित कर दी थी। इस नगर के लिए जीन बैप्तिस्त कारिये (Jean Baptiste Carrier) नाम का सदस्य नियुक्त किया गया था। उसने जब नगर की दशा देखी तो वह इस परिणाम पर पहुंचा कि यहां केवल गेओतीं तथा बन्दूक की गोलियों से काम न चलेगा। अतएव उसने हज़ारों विद्रोहियों को नौकाओं में भर के ल्वार नदी में डुबो दिया। किन्तु इस प्रकार के कामों से कन्वेंशन के सदस्यों के हृदय भी कम्पायमान हो गये। अतएव उन्होंने कैरियेर को लौटा लिया। सब मिलाकर पेरिस नगर में लगभग पांच हज़ार तथा अन्य नगरों और ग्रामों में लगभग १५ हज़ार व्यक्ति जेकोबिन दल के आतंकपूर्ण शासन का लक्ष्य बने थे।

जेकोबिन दल के आतंकपूर्ण शासन तथा उनके भयानक कृत्यों को सभी

ने बुरा बतलाया है, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उसके सम्बन्ध में अतिशयोक्ति-पूर्ण प्रत्येक लेख को अक्षरश: सत्य मान लिया जाय।

आतंकपूर्ण शासन पर आलोचनात्मक दृष्टि

इस प्रकार का एक लेख "गणतन्त्रीय विवाहों" के विषय में भी है। दूसरे शब्दों में इसका यह अर्थ है कि कारियै ने नग्न पुरुष व स्त्रियों को एक साथ बंधवाकर नदी में डुबो दिया था। इस प्रकार का एक अन्य भ्रम यह भी है कि अधिकतर अमीर उमरा की गैओतीं पर भेंट चढ़ाई गई थी। पेरिस की नगर पालिका के रजिस्टर के परीक्षण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि नवम्बर सन् १७९३ ई० से मार्च सन् १७९४ ई० तक बलिदान किये जाने वालों में उक्त प्रकार के लोगों की संख्या कम थी। इससे अधिक संख्या पादरियों तथा धार्मिक संस्थाओं के लोगों अथवा शासन के पदाधिकारियों की थी। इतना अवश्य है कि आतंकपूर्ण शासन के अन्तिम तीन मासों में मृत्यु को प्राप्त होने वाले कुलीनों की संख्या पादरियों इत्यादि से अधिक लेकिन सरकारी पदाधिकारियों से कम थी। इस काल में उनकी अपेक्षा मध्यम एवं निम्न श्रेणी के व्यक्तियों की भेंट अधिक चढ़ाई गई थी। कुछ लेखकों ने पेरिस का वर्णन लिखने में अतिरंजना से काम लिया है और कहा है कि वह मृतकों का नगर था जहां कोई भी व्यक्ति लोक रक्षा समिति के भय से सिर न उठा सकता था एवं जहां उन गाड़ियों के चक्रों की ध्वनि के अतिरिक्त जिनमें अपराधी गैओतीं तक पहुंचाये जाते थे अथवा उस छुरी के स्वर के अतिरिक्त जिससे उनकी गर्दन उड़ाई जाती थी कोई स्वर सुनाई न देता था। फ्रांस के निवासियों को इससे अधिक आतंक तथा अत्याचार अन्य अवसरों पर सहन करना पड़ा था। एक ऐसा अवसर सन् १८५२ ई० में आया था जब फ्रांस में द्वितीय साम्राज्य (Second Empire) की स्थापना की गई थी। उस समय वहां ३२ प्रान्तों में सेना-शासन स्थापित कर दिया गया था, कम से कम २७ हज़ार व्यक्ति बन्दी बनाये गये थे एवं मार्गों के रक्तपात में लगभग १५० व्यक्ति जान से मारे गये थे। न्यायालयों ने १५ हज़ार व्यक्तियों को अपराधी घोषित किया था। इनमें से १० हज़ार को देश से निर्वासित कर दिया गया था। एक अन्य अवसर सन् १८७१ ई० में आया था जब पेरिस नगर ५ सप्ताहों तक घेरे की स्थिति में रहा था एवं जब वहां एक सप्ताह तक रक्तपात तथा अग्निकांडों का ज़ोर रहा था। इस सम्बन्ध में वहां १७ हज़ार निवासियों को प्राणों से हाथ धोने पड़े अथवा बुरी तरह घायल होना पड़ा। एक अन्य प्रकट उदाहरण प्रथम विश्व महायुद्ध का है जब फ्रांसीसियों की स्वतन्त्रता पूर्ण रूप से समाप्त कर दी गई थी और समस्त देश सेना-शासन के अधीन कर दिया गया था। कम से कम इतना तो हमें अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा कि जैकोबिन शासन ने,

जिसका वर्णन हम कर रहे हैं, पेरिस में कभी भी सेना-शासन से काम नहीं लिया। उसने समाचारपत्रों आदि की स्वाधीनता को भी कभी नष्ट नहीं किया था। उसने कभी उसके निवासियों को सैनिक न्यायालय के अधीन नहीं किया था। उसने कन्वेंशन तथा क्लबों में भाषण की स्वतन्त्रता सदा अक्षुण्ण रक्खी थी।

सन् १७९३ ई० तथा सन् १७९४ ई० के शासन का यह आशय कभी न था कि वह प्रलय उपस्थित कर दे। वरन् उसका उद्देश्य यह था कि ऐसे समय में जब मित्र राष्ट्र सैनिक शक्ति की सहायता से क्रांति को बिल्कुल समाप्त करने का संकल्प कर चुके थे न केवल पेरिस वरन् समस्त फ्रांस के निवासी दबे रहें एवं कोई ऐसी कठिनाई उपस्थित न करें जिससे क्रांति के काम में किसी भी प्रकार का विघ्न पड़े। उपरोक्त शासन युद्ध सम्बन्धी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर स्थापित किया गया था। अतएव उसका कर्तव्य था कि वह शत्रु के गुप्तचरों तथा उन व्यक्तियों को दंड दे जो विदेशों के निवासियों तथा भागे हुये लोगों से पत्रव्यवहार कर रहे थे। वह एक राष्ट्रीय शासन था। अतएव उसने कुलीनों, सम्राट के पक्षपातियों, देश के संविधान को स्वीकार न करने वाले पादरियों तथा क्रांति के अन्य शत्रुओं को दंड दिया था। वह जन कल्याण पर ज़ोर देने वाला शासन था। अस्तु उसने अनुचित लाभ उपार्जन करने वालों, अन्न को एकत्र करके रखने वालों, कर्तव्यहीन एवं रिश्वत लेने वाले पदाधिकारियों एवं विद्रोही सेनापतियों को अपराधी ठहराया था। इस सब के होते हुये भी जेकोबिन शासन कुछ ऐसी बातों के लिये उत्तरदायी था जिन्हें हम उचित नहीं कह सकते। किन्तु उसने दया तथा न्याय को बिल्कुल विस्मृत न किया था। स्वयं गैग्रोतीं का सृजन उक्त सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर किया गया था। अन्ततः हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि जेकोबिन शासन ने जो कुछ भी किया था वह समय की मांग के अनुसार थी। जो रक्तपात उसने किया था वह उस अत्याचार व आतंक की तुलना में कम था जो दूसरे अवसरों पर फ्रांस में किया गया था।

अठारहवां अध्याय

नये संकट तथा नई सफलतायें

उस दमनचक्र के पश्चात् भी, जो जेकोबिन शासन की ओर से संचालित किया जा रहा था, उसकी विपत्तियों का अन्त न हुआ था। अक्टूबर सन् १७९३ ई० के अन्त तक वह महत्वपूर्ण सफलतायें उपलब्ध कर चुका था। सम्राट का परिवार नष्ट कर दिया गया था। बहुत से जिरोंदिन नेताओं को बन्दी बना कर गैल्योतीं की भेंट कर दिया गया था। जो बचे थे वे बन्दीगृह में थे अथवा अदृश्य हो गये थे। कुछ अन्य संकटों पर भी विजय प्राप्त कर ली गई थी। जैसे वांदे का विद्रोह शान्त कर दिया गया था, नगरों के विद्रोहियों का दमन भी बड़ी निर्दयता के साथ किया जा चुका था तथा उत्तरी-पूर्वी सीमा के युद्ध का संतोषजनक प्रबंध कर दिया गया था। अतएव गत् जौलाई से वहां विजयों का क्रम प्रारम्भ हो गया था। इन सफलताओं के कारण जेकोबिन शासन की शक्ति में अधिक वृद्धि हो गई हो गई थी, किन्तु उसके संकटों का अन्त न हुआ था। अक्टूबर सन् १७९३ ई० के पश्चात् उसे कुछ नये संकटों का सामना करना पड़ा। इसमें भी उसे सफलता प्राप्त हुई। संकटों तथा सफलताओं के इस नव प्रवाह के पश्चात् जेकोबिन दल के सब से महान् स्तम्भ रोबेस्पेयर का सामना करने को कोई नहीं रहा। अतः वह स्वयं को फ्रांस का एकशास्ता समझने लगा। इसके बाद शीघ्र ही ऐसी परिस्थिति उपस्थित हुई कि उसे भी अपना शीश गैल्योतीं की भेंट चढ़ा देना पड़ा।

इस काल में जिसका वर्णन लेखनी बद्ध किया जा रहा है, जेकोबिन दल को अधिकतर गृह संकटों का सामना करना पड़ा। इनमें से कुछ ऐसे थे जिनका सम्बन्ध जेकोबिन दल से था। उदाहरण के रूप में,

शासन के कर्मचारियों में छटनी की आवश्यकता

शासन की सेवा में अगणित ऐसे पदाधिकारी तथा सेवक थे जिनके विश्वासपात्र होने पर सन्देह किया जा सकता था अथवा जो अनुचित मार्गों से धन उपार्जन करके सम्पन्न हो रहे थे। यह बात सार्वजनिक रूप से प्रसिद्ध थी कि बहुत से कर्मचारी

गण-राज्य के विरुद्ध षड्यन्त्र रच रहे हैं। इस प्रकार के संकटों का सामना रोलैंड तथा डूमूरियें को भी करना पड़ा था। उन्होंने कठोरता से देशद्रोही सेवकों की छटनी कर दी थी, किन्तु इसका परिणाम केवल यह हुआ था कि सम्राट के पक्षपातियों के स्थान पर जिरोंदिस्त रख लिये गये थे। अब जेकोबिन शासन के सम्मुख यह कठिनाई उपस्थित हुई कि विरोधी कर्मचारियों की छटनी किस प्रकार की जाय। विशेषकर ऐसी परिस्थिति में जब उनमें से कुछ स्थली व जल सेना के उच्च पदों पर सुशोभित थे। इस सम्बन्ध में १८ नवम्बर को बीयोवारेन नाम के सदस्य ने, जो हाल ही में लोक रक्षा समिति का सदस्य नियुक्त कर लिया गया था, एक ओजस्वी भाषण दिया, जिसके द्वारा उसने अनुचित उपायों से धन उपार्जन करने वाले पदाधिकारियों की छटनी के लिये आतंकपूर्ण शासन को आवश्यक सिद्ध करने का प्रयत्न किया। उसने बतलाया कि क्रांति का वास्तविक आदर्श यह है कि सर्वसाधारण के लिये प्रत्येक प्रकार की सुविधायें उपलब्ध हों। किन्तु इस सम्बन्ध में जो क़ानून सृजित किये गये हैं वे सब व्यर्थ हैं। कारण कि उनका संचालन ऐसे लोगों के अधीन है जो जनसाधारण की कठिनाइयों से लाभ उठा रहे हैं। "शासन की रेलगाड़ी से उन लोगों को लाभ पहुंचता है जो उसके संचालक हैं, न कि सर्वसाधारण को।" उसने अपने भाषण में निम्न भाव भी प्रकट किये:—

"सर्वसाधारण को तो केवल इस बात की आवश्यकता होती है कि उनके साधारण लाभ को दृष्टिकोण में रखकर उन्हें आगे बढ़ाया जाय। इसके विरुद्ध एक सार्वजनिक अधिकारी की स्थिति पूर्णत: भिन्न होती है। उसके लिये एक ही समय में प्रोत्साहन तथा नियंत्रण की आवश्यकता होती है। जो लोग सबसे श्रेष्ठ स्थिति रखते हैं उन्हीं से सर्वसाधारण के सुधार का कार्य प्रारम्भ करना चाहिये। उनका कर्तव्य केवल यही नहीं है कि दूसरों के लिये आदर्श उदाहरण उपस्थित करें, किन्तु इस कारण से कि उनकी उत्तेजनायें अधिक तीव्र होती हैं, इस कोटि के लोगों के हाथ सब से कम साफ होते हैं, विशेषकर ऐसी दशा में जब दासता के लम्बे युग के पश्चात् स्वाधीन शासन का उदय हो रहा हो।"

बीयोवारेन का भाषण केवल ओजस्वी ही नहीं वरन् नूतन ढंग का भी था। जिन शब्दों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग उस में किया गया था वे अट्ठारहवीं शताब्दी के पूर्णत: प्रतिकूल थे। इस प्रकार का भाषण कभी रोबेस्पेयर ने भी न दिया था। कन्वेंशन के सदस्यों पर इसका अत्यधिक प्रभाव पड़ा। अस्तु नमकहराम कर्मचारियों के वध ज्यों के त्यों चलते रहे। यही कारण है कि वे आतंकपूर्ण शासन के समय

में वध किये जाने वाले पदाधिकारियों की संख्या कुलीनों की संख्या से अधिक थी। यह ज्ञात करके आश्चर्य अवश्य होता है किन्तु वास्तव में हुआ ऐसा ही।

बुद्धिवाद का प्रचार

यह काल 'बुद्धिवाद' के प्रचार के लिये भी प्रसिद्ध है। फ्रांस के अगणित गिर्जों में बुद्धि की उपासना होने लगी। लोग ईश्वर के स्थान पर उसको अपना आराध्य देव मानने लगे। इसका उत्तरदायित्व पूर्ण रूप से शासन पर नहीं लादा जा सकता। यद्यपि यह ठीक है कि जिस समय से पादरियों ने बहुत बड़ी संख्या में सन् १७९१ ई० के संविधान की शपथ लेना अस्वीकृत किया था, उसी समय से उनकी प्रतिष्ठा शासन तथा सर्वसाधारण की दृष्टि में कम होगई थी। किन्तु जेकोबिन शासनकाल में जो अधार्मिक कृत्य किये गये थे, उनसे शासन की पूर्ण अनुकूलता न थी। कम से कम कन्वेंशन तथा लोक रक्षा समिति ने उनके किये जाने की आज्ञा नहीं निकाली थी। विशेषत: रोबेस्पेयर 'बुद्धि' की आराधना के पूर्ण रीति से विरुद्ध था। देश की गणतन्त्रीय समितियों और पेरिस के कम्यून की उनके साथ पूर्ण सहानुभूति थी। इसके सबसे महान समर्थक हैबर, शोमेत तथा क्लोट्स (Cloots) थे। कन्वेंशन के कुछ सदस्यों ने भी जो प्रान्तों में नियुक्त किये गये थे, उसकी आज्ञा दे दी थी। उदाहरणार्थ, फूशे (Fouche) नामक सदस्य ने, जो मध्य तथा पश्चिम के सूबों में नियुक्त किया गया था, गिर्जाघरों की आराधना अर्चना सब बन्द करा दी थी एवं सार्वजनिक रूप से धार्मिक चिन्हों तथा पादरियों की पोशाक के प्रयोग किये जाने के विरुद्ध भी आदेश प्रकाशित कर दिया था। इसी प्रकार शोमैत (Chaumette) नामक व्यक्ति ने, जो पेरिस के कम्यून के अधीन न्याय विभाग का अधिकारी था, सन् १७९३ ई० के अक्टूबर व नवम्बर मास में राजधानी में ईसाई धर्म के विरुद्ध धर्म युद्ध में प्रकट सहायता की थी। वहां के पादरियों को आज्ञा दी गई कि वे अपने कर्तव्य गिर्जाघरों तक सीमित रक्खें, नगर भवन के गिर्जे के बर्तन सरकारी टकसाल को भेज दिये गये, सीसे के ताबूतों से गोलाबारूद निर्माण करने का कार्य लिया गया, धार्मिक पुस्तकें पंसारियों के हाथों बेच दी गईं, मूर्तियों को कुरूप कर दिया गया एवं धर्म चिन्हों को जलाकर भस्म कर दिया गया। कम्यून के ज़ोर देने पर कई सेक्शनों के निवासियों ने कैथोलिक धर्म त्याग दिया एवं गिर्जाघरों को बन्द कर दिया अथवा वहां किसी अन्य सेंट के नाम पर आराधना प्रारम्भ कर दी गई। अधार्मिक कार्यों का सबसे महान् प्रदर्शन १० नवम्बर को नोत्रदाम के गिर्जाघर में किया गया। वहां स्वतन्त्रता के नाम पर गाने गाये गये और एक अभिनेत्री ने 'बुद्धि' की देवी का अभिनय किया। इस प्रदर्शन के अवसर पर कन्वेंशन के सदस्य भी उपस्थित थे। इस प्रकार के अधार्मिक कृत्य

फ्रांस के अन्य नगरों में भी किये गये थे। उदाहरण के रूप में, ल्लवा नगर में सार्वजनिक सभा की ओर से समस्त गिर्जाघर बन्द कर दिये गये तथा लोगों से कहा गया कि 'बुद्धि' की उपासना करें तथा घर में रहकर हितकारी कार्य तथा क़ानून का परिपालन करें। रीम्ज़ में लोक रक्षा समिति के एक सदस्य ने, जिसका नाम रूल (Ruhl) था, पवित्र सुराही के, जिसमें फ्रांस के सम्राटों को राज्याभिषेक के अवसर पर पवित्रता प्रदान करने के लिये तेल रक्खा रहता था, टुकड़े टुकड़े कर डाले। नेन्सी में समस्त पादरियों से त्यागपत्र दिला दिया गया एवं उनके लैसंसों को बड़ी धूमधाम के साथ गिर्जाघरों में जला दिया गया। समस्त फ्रांस में २४०० ईसाई गिर्जाघरों में 'बुद्धि' की उपासना होने लगी।

प्रकट था कि शासन इस प्रकार के अधार्मिक कामों की अधिक समय तक उपेक्षा न करेगा। यह एक महान् संकट का अग्र सूचक चिह्न था, जिसका नष्ट कर देना ही उचित था। नगरों व ग्रामों में कैथोलिक धर्म के हज़ारों व्यक्ति ऐसे थे जो जेकोबिन शासन के सहायक थे। उन्हें वह किसी भी दशा में अप्रसन्न न करना चाहता था। इसके अतिरिक्त इस बात की भी आशंका थी कि यदि यह धर्म विरोधी आन्दोलन समाप्त न किया गया तो विदेशों में इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा। इन बातों को ध्यान में रख कर ६ दिसम्बर को धार्मिक स्वतन्त्रता की पुनः घोषणा की गई, किन्तु शपथ न लेने वाले पादरियों के विरुद्ध जो क़ानून रचे जा चुके थे वे ज्यों के त्यों स्थिर रहे। रोबेस्पेयर के ज़ोर देने पर शोमैत भी हैबर के समर्थकों के साथ बंदी कर लिया गया एवं १३ अप्रैल सन् १७९४ ई० को वध कर दिया गया। धर्म विरोधी आन्दोलन के कुछ अन्य परिणाम भी हुये। गिर्जाघरों तथा मठों के बर्तनों आदि के गला दिये जाने से शासन की आय में वृद्धि हो-गई। इसके विपरीत मनुष्यों का नैतिक स्तर नीचा हो गया तथा धर्म के प्रति उदासीनता उत्पन्न हो गई। उसके विरुद्ध जो कार्य किये गये थे उनका ईसाई धर्म पर कोई दीर्घकालीन प्रभाव न पड़ा। एक अंग्रेज़ यात्री ने जो उस समय फ्रांस में था लिखा है कि धार्मिक किताबों की बिक्री में कमी हो गई है एवं भीख मांगने वाले 'राष्ट्र जिन्दाबाद' के नारे लगा कर भीख मांगते हैं। एक अन्य साक्ष्य से यह मालूम हुआ है कि इस काल में गन्दी पुस्तकें एवं समाचारपत्र बहुत बड़ी संख्या में बिक रहे थे। उनका लोगों के शिष्टाचार तथा मस्तिष्क पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ रहा था। उपरोक्त आन्दोलन का सब से बुरा परिणाम यह हुआ कि जेकोबिन दल में अधिक वैमनस्य उत्पन्न हो गया। हैबर तथा उसके साथियों की उक्त आन्दोलन से पूर्ण सहानुभूति थी। अतएव वे शासन की दृष्टि में पहले से भी अधिक हीन बन गये।

जेकोबिन शासन को 'असभ्यों', हैबर के दल वालों, कृतघ्न पदाधिकारियों तथा ईसाई धर्म के विरुद्ध आन्दोलन करने वालों के अतिरिक्त कुछ अन्य नये संकटों का सामना भी करना पड़ा। जैसे वे लोग जो किसी प्रधान राजनैतिक दल के सदस्य न थे किन्तु जिनका मुख्य उद्देश्य उचित व अनुचित उपायों से धनोपार्जन था। इस प्रकार के लोगों के कारण फ्रांस की राज्यक्रांति के नाम पर अवांछनीय कालिमा है। ये लोग घूस लेते थे, सरकारी धन का अपहरण करते थे, अपने मित्रों को सब से अधिक आय वाले पदों पर नियुक्त करते थे तथा सैनिक ठेकों आदि के द्वारा शासन को धोखा देते थे। ये लोग भीतर ही भीतर शासन की जड़ काट रहे थे। अतः उन्होंने एक बहुत बड़े संकट का रूप ग्रहण कर लिया था। बहुत से विदेशी भी शासन के सद्व्यवहार से लाभ उठा रहे थे। उनके विषय में एक विशेष भ्रम यह था कि वे एक बहुत बड़े षड्यंत्र में भाग ले रहे हैं जिसका सूत्र इंग्लैंड का प्रधान मंत्री छोटा पिट है। पिट ने फ्रांस की राज्यक्रांति के विरुद्ध कोई गुप्त षड्यंत्र नहीं रचा था, किन्तु इस भ्रम ने बड़ा महत्व प्राप्त कर लिया था। जेकोबिन शासन ने वास्तविक तथा काल्पनिक दोनों प्रकार के संकटों का सामना बड़ी कठोरता से किया। सन् १७९३ के अन्त तक उनसे सम्बन्ध रखने वाले नेता बहुत बड़ी संख्या में कारावास में बन्द कर दिये गये एवं शासन उनके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। अन्ततः हैबर एवं दांतों के विरुद्ध मुकदमा चलाना पड़ा। इस सम्बन्ध में उसे ज्ञात हो गया कि वास्तव में कौन शत्रु है तथा कौन मित्र।

अन्य संकट

जेकोबिन दल में पारस्परिक वैमनस्य के चिह्न कुछ काल पूर्व ही से प्रकट हो गये थे। हैबर तथा दांतों दोनों ही उसके स्तम्भ थे। तीसरा स्तम्भ रोबेस्पेयर था। किन्तु इन तीनों के विचारों में अन्तर उत्पन्न हो गया था। हैबर सब से उग्रवादी था। उसका तथा उसके दल का सिद्धांत था कि शासन का आदर्श सर्वसाधारण को लाभ पहुंचाना है एवं यह कार्य श्रेष्ठता से तभी सम्पन्न हो सकता है जब उसका सूत्र सीधे रूप से सर्वसाधारण के हाथ में हो। ये लोग दमन-चक्र को अधिक तीव्रता से चलाना चाहते थे। दांतों तथा उसका मित्र देमूलें नम्रता प्रिय थे। उनका कथन था कि दमनचक्र की तीव्रता कम कर दी जाय जिससे वास्तविक दोषी तथा निर्दोष लोगों में अन्तर किया जा सके। ५ दिसम्बर को देमूलें ने एक नये पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया था। उसके तीसरे संस्करण में जो १५ दिसम्बर को प्रकाशित किया गया था उसने इस बात की सिफ़ारिश की थी कि शासन

जेकोबिन दल में पारस्परिक वैमनस्य के चिह्न

को एक 'दयामय समिति' स्थापित करनी चाहिये जिससे निर्दोष लोग संदिग्ध लोगों से पृथक कर दिये जायँ एवं उन्हें मुक्त कर दिया जाय। इस प्रकार के प्रस्तावों और सिफ़ारिशों से रोबेस्पेयर एवं उसके मित्रों को आश्चर्य हुआ। संभव था कि उनका उसी समय पतन हो जाता, किन्तु सौभाग्य से शासन को कुछ महान् युद्ध सम्बन्धी विजय प्राप्त हुईं, जिनके कारण वे अपनी प्रतिष्ठा तथा प्रभाव को बनाये रखने में सफल हुआ।

१० दिसम्बर को सेनापति वैस्तरमान ने वोंदे की सेना को ल-मौं (Le Mans) के स्थान पर पूर्णतया परास्त किया एवं २३ दिसम्बर को सावने (Savenay) के स्थान पर उसका सर्वनाश कर दिया। नैपोलियन बोनापार्ट की सहायता से क्रांतिकारी सेनापतियों को तूलौं नगर में भी सफलता प्राप्त हो चुकी थी। यह समाचार २४ दिसम्बर को पेरिस पहुंचा। इससे लोक रक्षा समिति को अपने प्रभुत्व को बनाये रखने में सफलता प्राप्त हुई। उधर गत नवम्बर में शासन के दो प्रतिनिधि अर्थात् लोक रक्षा समिति का सदस्य सैं ज्हूस्त एवं सुरक्षा समिति का सदस्य लबा (Labas) पूर्वी सीमा को भेज दिये गये थे। उन्होंने सेनाओं के शिष्टाचार में सुधार किया एवं कायर तथा अनुशासनहीन पदाधिकारियों को दंड दिया। इसका बहुत सुन्दर प्रभाव पड़ा। अस्तु २६ दिसम्बर को लज़ारे ओश नाम के सेनापति ने शत्रु पर ऐसी वीरता से आक्रमण किया कि वीस्सैनबूर्ग (Weissenburg) की सुदृढ़ क़िलेबन्दी पर फ्रांसीसियों का पुन: अधिकार हो गया। इससे न केवल स्ट्रैसबर्ग के दुर्ग की रक्षा हुई वरन् शत्रु को फ्रांसीसी भूमि से भागते ही बना। उपरोक्त युद्ध में सैं ज्हूस्त ने सब से आगे रह कर महान् वीरता का प्रमाण दिया था।

जेकोबिन शासन ने सफलता के साथ फ्रांस की रक्षा कर ली थी, किन्तु वह अपनी तथा अपने दल वालों की रक्षा न कर सका। विदेशी सम्राट फ्रांस के दीर्घकालीन शासन तथा दीर्घकालीन समाज की पुन: स्थापना में कृतकार्य न हुये थे, किन्तु जेकोबिन दल के नेता एक दूसरे का सर्वनाश करने में कृतकार्य हुये। प्रारम्भ से क्रांति का नेतृत्व मध्यम श्रेणी के लोगों के हाथ में था। उन्होंने उसके द्वारा सबसे अधिक लाभ उठाया था, किन्तु वे अपने उद्देश्य में केवल सर्वसाधारण की सहायता से सफलता की चरम सीमा तक पहुंच सके थे। सर्वसाधारण ने बैस्तील के दुर्ग को विजय किया था। सर्वसाधारण ने १० अगस्त को त्वीलेरीज़ पर आक्रमण किया था। सर्वसाधारण ही ने सोलहवें लूई को भागते समय बंदी किया था। सर्वसाधारण ने लाखों की संख्या में सेनाओं में भर्ती होकर रणक्षेत्र में शत्रु के छक्के छुड़ाये थे। सर्वसाधारण

दो राहों पर

ही ने पेरिस के कम्यून तथा कन्वेंशन के सदस्यों पर प्रभाव डालकर उन्हें प्रोत्साहन दिया था। जिरोंदिन दल के लोग जो सर्वसाधारण के महत्व को स्वीकार करने से इन्कार करते थे, पृथक कर दिये गये थे। इन समस्त सफलताओं के होते हुये भी क्रांति का नेतृत्व मध्यम श्रेणी के हाथ में था। अब प्रश्न यह था कि विदेशों पर जो विजय प्राप्त की गई थी उससे किस प्रकार लाभ उठाया जाय ? दूसरे शब्दों में हम इस प्रश्न को इस प्रकार रख सकते हैं कि शासन का दमनचक्र जो अविरल गति से उसी प्रकार चल रहा था, रोक दिया जाय अथवा गेश्रोतों पर बलिदानों का नाटक जारी रक्खा जाय ? इस प्रकार के प्रश्नों पर मतभेद होने के कारण हैबर, दोंतों तथा रोबेस्पेयर, इन तीनों जेकोबिन नेताओं तथा उनके मित्रों का पतन हो गया।

दोंतों एवं उसके मित्रों का विचार था कि अब शासन की कठोरता को समाप्त करने का समय आ गया है। आवश्यकता इस बात की थी कि उसको रोक कर विदेशों से संधि कर ली जाय एवं क्रांति के द्वारा जो कुछ भी प्राप्त किया गया था, उसको सुदृढ़ बनाया जाय। यह मत कहने को उचित प्रतीत होता था किन्तु दोंतों के आचरण पर सब को संदेह था। सबों को ज्ञात था कि वह इंग्लैंड के लिये विशेष सहानुभूति रखता है। अस्तु कुछ लोगों को यह संदेह था कि उसने गुप्त रूप से शत्रु से घूस ली है। किन्तु इसका कोई सुदृढ़ प्रमाण उपलब्ध नहीं हुआ था। यदि विदेशों के शासकों की ओर से दोंतों को किसी प्रकार की घूस दी गई थी तो उनका धन व्यर्थ गया था। कारण कि उसने उनके प्रसन्न करने के लिये कभी भी कोई अनुचित कार्य नहीं किया था। उसके साथियों के आचरण तथा उपरोक्त मत को ध्यान में रखते हुये हम कह सकते हैं कि कुछ दाल में काला अवश्य था। वाह्य संकटों की भी उस समय तक समाप्ति न हुई थी। इस प्रकार के कारणों से जेकोबिन शासन तथा रोबेस्पेयर दमनचक्र को रोकने तथा शत्रु से संधि करने को राज़ी न हुये। उनका यह भी विचार था कि यदि ऐसा किया जायेगा तो गणतंत्र की सुरक्षा अनुचित लाभ उपार्जन करने वालों के हाथों में चली जायेगी। इस सम्बन्ध में रोबेस्पैयर ने अपनी नोट बुक में ये विचार प्रकट किये थे, "हमारा कर्तव्य है कि हम दुष्टों तथा सम्पत्तिशालियों को अपना शत्रु समझें। हमको मध्यम श्रेणी के लोगों पर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहिये, क्योंकि वे हमारे समस्त गृह संकटों के स्रष्टा हैं। हमको चाहिये कि नगरों के मज़दूरों तथा कारीगरों को तैयार करें। उनको धन दें, उनमें हलचल उत्पन्न करें, उन्हें शस्त्रादि से सज्जित करें तथा उनको शिक्षा दें। इस कार्यक्रम से आधुनिक काल के साम्यवाद अथवा समाजवाद की गन्ध आती है। इसके अतिरिक्त

यह उस काल के 'असभ्यों' का कार्यक्रम था। वह मारा के लिये अधिक उपयुक्त था, न कि रोबेस्पेयर के लिये।

शासन ने अपनी कार्य प्रणाली में कोई परिवर्तन न किया, किन्तु बिना किसी दया के गृह शत्रुओं का दमन जारी रक्खा। राजतंत्र के पक्षपाती, जिरोंदिस्त, हैबर के समर्थक, दांतों के दल वाले इन सभी को उसके द्वारा हानि उठानी पड़ी। बारनाव, जो सोलहवें लूई के समर्थकों में से था, सन् १७९२ ई० में बंदी कर लिया गया था, परन्तु एक वर्ष तक उसकी ओर किसी ने ध्यान न दिया था। नवम्बर सन् १७९३ ई० में उसका शीश उतार लिया गया। जिरोंदिन दल का नेता सांतेलियन जिसे कानून का विरोधी घोषित किया गया था दिसम्बर में वध कर दिया गया। इसी माह में पूर्व मंत्री क्लावियेर ने जेल में आत्म-हत्या कर ली। इस प्रकार उसने क्रांतिकारी न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने से मुक्ति प्राप्त की। दांतों के समर्थकों में कोंदोर्से एवं वेज़ायर दो अन्य जेकोबिनों के साथ बंदी कर लिये गये। उनके विरुद्ध यह अभियोग लगाया गया था कि उन्होंने अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये 'इंडीज़ की कम्पनी' के सम्बन्ध में कुछ सरकारी काग़ज़ों में परिवर्तन कर दिया था। यह एक बहुत बड़ी कम्पनी थी जो पूर्वीय देशों से व्यापार करने के लिये बूरबन वंश के मंत्री कालोन की ओर से स्थापित की गई थी। इस समय के जेकोबिन शासन के हाथों हानि उठाने वालों में एक जर्मन अमीर क्लोट्स (Cloots) भी था। उसने फ्रांस में निवास ग्रहण कर लिया था। अस्तु वह जेकोबिन क्लब तथा कन्वेंशन का सदस्य निर्वाचित कर लिया गया था। जो काम कैथोलिक धर्म के विरुद्ध किये गये थे उनके साथ उसकी पूरी सहानुभूति थी। अतएव पहले रोबेस्पेयर ने उसे उक्त क्लब से निकलवाया। फिर २८ दिसम्बर को वह किसी साधारण अपराध में बंदी कर लिया गया। जनवरी में क्लब के दो अन्य सदस्य देमूलें तथा फ़ाब्र दे ग्लांतीन (Fabre d' Eglantine) भी गिरफ्तार कर लिये गये। इसके साथ साथ 'असभ्यों' का नेता 'रो' (Roux) नाम का पादरी भी चोरी के अपराध में बंदी कर लिया गया। इस प्रकार शासन ने रोबेस्पेयर के नेतृत्व में हैबर और दांतों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये भूमि साफ़ कर ली।

आतंकवाद की वेदी पर अन्य बलिदान

इसके पश्चात् हैबर तथा उसके साथियों ने अपने पैरों में स्वयं कुल्हाड़ी मारने का प्रयत्न किया। उन्होंने प्रथम दांतों और उसके साथियों के विरुद्ध विष उगला। फिर समस्त जेकोबिन दल के विरुद्ध कार्यवाही करने की धमकी दी। विंसेंट ने अपने भाषण में एक षड्यन्त्र की ओर संकेत किया "जो ब्रीसो के षड्यन्त्र

से भी अधिक भयंकर था" और बतलाया कि देश की स्वतन्त्रता संकट में पड़ जायेगी यदि "गोलियों का प्रयोग बिना किसी संकोच के सर्वसाधारण के शत्रुओं के विरुद्ध न किया जायेगा।" कारियेर ने, जो हाल ही में नन्त्स में विरोधियों को बड़ी संख्या में डुबोकर लौटा था, उच्च स्वर से कहा, "इन दुष्टों के विरुद्ध जिस शस्त्र का प्रयोग हमें करना होगा वह है विद्रोह। हां, पवित्र विद्रोह।" इस प्रकार की बातों से दुखित होकर शासन ने हैबर तथा उसके दल के विरुद्ध मुक़दमा चलाने का निर्णय किया।

हैबर और उसके दल के विरुद्ध मुक़दमा, मार्च १७९४ ई०

इसी काल में उनके विरुद्ध निराधार अफवाहें भी फैल रहीं थीं। अतएव शासन का कार्य अधिक सरल हो गया था। उसी रात्रि को वे गिरफ्तार कर लिये गये तथा बन्दीगृह में डाल दिये गये। एक सप्ताह के पश्चात् उन्हें न्यायालय में उपस्थित किया गया। उनके विरुद्ध यह अभियोग लगाया गया कि उन्होंने तत्कालीन शासन को नष्ट करके एक अत्याचारी शासन के स्थापित करने का प्रयत्न किया है। २४ मार्च को वे सब क़त्ल कर दिये गये। उनकी संख्या १८ थी। केवल एक सरकारी गुप्तचर को मुक्ति प्राप्त हुई जो भेद लेने के लिये हैबर तथा उसके साथियों के साथ बन्दीगृह में डाल दिया गया था। निर्णय के सम्बन्ध में रोनसिन ने, जो हैबर के तुल्य एक महान् व्यक्ति था, एक उल्लेखनीय भविष्यवाणी की थी। "यह एक राजनैतिक मुक़दमा है" एवं जो भाषण कार्डीलियर्स में ४ मार्च को दिये गये थे वे हमें अपराधी घोषित करने के लिये काफ़ी हैं किन्तु किसी दिन इसका बदला अवश्य लिया जायेगा। "स्वतन्त्रता मर नहीं सकती और उन लोगों का भी जो हमें मृत्यु के मुख में ढकेल रहे हैं, जब उनका समय आवेगा यही परिणाम होगा।" उसी दिन कार्डीलियर क्लब ने अपने सदस्यों की बड़ी संख्या में छटनी प्रारम्भ कर दी एवं कन्वेंशन ने क्रांतिकारी सेना को भंग कर दिया। इस प्रकार हैबर के आन्दोलन का पूर्णतया अन्त हो गया। रोबेस्पेयर तथा उसके साथियों की सफलता का एक विशेष कारण दो प्रसिद्ध क़ानून हैं जो क्रांतिकारी कलेण्डर के अनुसार तीसरे वर्ष के मास वांतोज़ (फर्वरी-मार्च, सन् १७९४ ई०) में बनाये गये थे। इनसे यह निश्चित किया गया था कि जो लोग शासन के वास्तविक शत्रु निश्चित किये जायेंगे उनकी सम्पत्ति निर्धनों में बाँट दी जायेगी। किन्तु उपरोक्त विधान कभी भी व्यवहार में नहीं लाये गये। परन्तु पेरिस के सर्वसाधारणों के लिये, जिनके नेता 'असभ्य' तथा हैबर के दल वाले थे, उन्होंने एक बहुत बड़े प्रलोभन का काम किया। उन्होंने उनका मुंह बन्द कर दिया तथा वे अपने नेताओं के पतन का अभिनय दूर ही से देखते रहे।

हैबर तथा उसके दल के पश्चात् दांतों एवं उसके साथियों की बारी आई। शासन के दोनों ही शत्रु थे। यदि प्रथम सर्वो के विषय में बहुत आगे बढ़ना चाहते थे, तो द्वितीय इस सम्बन्ध में ठहर जाना अधिक श्रेयस्कर समझते थे। शासन की दृष्टि में द्वितीय दल अधिक हानिकारक था। इस सम्बन्ध में रोबेस्पेयर ने अपने भाई को लिखा था, "मेरा सदा से यह सन्देह रहा है कि कन्वेंशन की दो बड़ी डी (D) विशेष रूप से षड्यन्त्रकारी हैं।" उसका संकेत दांतों तथा देलाक्रुवा (Delacroix) की ओर था। उसने यह लेख इन नेताओं के वध के केवल दो दिन पूर्व लिखा था। वास्तव में ये लोग इस कारण से अधिक हानिकारक थे कि उन्होंने अधिक प्रसिद्धि तथा प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी। कन्वेंशन के सदस्य होने के नाते शासन के कार्यों से उनका सम्बन्ध अधिक गहरा रह चुका था। इस दल के जिन १४ सदस्यों को अन्त में गेओर्ती को भेंट किया गया था, उनमें से ६ कन्वेंशन के सदस्य थे एवं ६ शासन की समितियों में रह चुके थे। उपरोक्त दल का सब से बड़ा नेता दांतों ही एक ऐसा व्यक्ति था जो विरोधी शासन का अध्यक्ष बनाये जाने की योग्यता रखता था। इन समस्त उक्तियों के होते हुये भी रोबेस्पेयर की दृष्टि में उसका तथा उसके साथियों का कोई मूल्य न था। रोबेस्पेयर तथा उसके साथियों ने शासन पर पूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। वे उसे किसी भी दशा में त्यागने अथवा कम करने के लिये तैयार न थे। अतएव कोई भी व्यक्ति जो उसमें हस्तक्षेप करने का प्रयत्न करता था उनका शत्रु बन जाता था। इसी कारण हैबर तथा उसके साथियों का पतन हुआ था। इसी कारण दांतों तथा उसके साथियों को भी अपने प्राण गेओर्ती पर उत्सर्ग करने पड़े।

दांतों एवं उसके साथियों की गिरफ्तारी

३० मार्च को लोक रक्षा समिति तथा सुरक्षा समिति ने दांतों तथा उसके साथियों को गिरफ्तार करने का निर्णय किया। प्रथम समिति के सबसे प्राचीन सदस्य लिनदेत ने वारंट पर हस्ताक्षर करने से साफ़ इन्कार कर दिया, और कहा, "मैं इस स्थान में इसलिये हूं कि नागरिकों के लिये भोजन की व्यवस्था करूं, न कि इसलिये कि उनका वध करूं।" उसी रात को दांतों, देमूलें तथा उसके दो अन्य साथी बन्दीगृह को भेज दिये गये। वहां उनका मिलन ऐरो द सेशेल, फाब्र दे ग्लोतीन एवं पेन इत्यादि से हुआ। पेन को देखकर दांतों ने शोक प्रकट किया एवं कहा, "जो कुछ तुमने अमेरिका में किया था, मैंने वही फ्रांस में करने का प्रयत्न किया था। तुम सफल हुये और मैं असफल रहा।"

दूसरे दिन सैं जूस्त ने प्रसभा में बड़ा ओजस्वी भाषण दिया एवं ६ पुराने

सहयोगी सदस्यों तथा उनके ७ साथियों के लिये मृत्यु का इच्छुक हुआ। वह एक ऐसा भाषण था एवं एक अभिमानी व गम्भीर नवयुवक की ओर से ऐसे उत्कृष्ट स्तरपर दी गई थी, कि कुछ समय तक उसके सुनने वालों के मस्तिष्क से उसका प्रभाव न गया। उसने उनके विरुद्ध जो अभियोग लगाये थे वे

उनका अंतिम परिणाम १ अप्रैल १७९४ ई०

पुराने ढंग के थे। यही अभियोग हैबर तथा उसके साथियों के विरुद्ध भी लगाये जा चुके थे। उसने बतलाया कि देश हित की यह मांग है कि क्रांति के शत्रुओं के विरुद्ध निर्दयता से काम लिया जाय, चाहे उनका मूल कितना ही प्रतिष्ठित क्यों न रहा हो। प्रारम्भ से कोई न कोई दल ऐसा रहा है जो हृदय से राजतन्त्र का समर्थक था तथा जो विदेशों की सरकारों से मिला हुआ था। इसी का नाम ओर्लेओं का दल था और इसी का नाम ब्रीसो अथवा हैबर का दल। वर्तमान समय में इसने दांतों के दल का रूप ग्रहण कर लिया है। दूसरे शब्दों में सैं ज्हूस्त के कहने का यह अर्थ था कि वास्तव में दांतों तथा उसके साथी देशद्रोही हैं। इसीलिए वे दमनचक्र को रोकने का मत देते हैं। उनके विरुद्ध एक विशेष अभियोग यह भी लगाया गया कि वे कन्वेंशन तथा समितियों को समाप्त करके सन् १७९३ ई० के संविधान के अनुसार कार्य करना चाहते हैं। उनके विरुद्ध यह भी कहा गया कि उनका आचरण तथा जीवनक्रम उचित नहीं रहे हैं, किन्तु दांतों पर घूस लेने तथा बेल्जियम में लूटमार करने का अभियोग न लगाया गया। मुक़दमा चलाने वाले इस बात को भली भांति जानते थे कि इसमें वे कृतकार्य न होंगे। यदि ऐसा न होता तो वे अवश्य अपशब्दों के स्थान में विषपूर्ण शस्त्रों से काम लेते। अस्तु हम कह सकते हैं कि उनके मतानुसार हैबर तथा दांतों दोनों ही ने शासन को हानि पहुंचाने की चेष्टा की थी, किन्तु द्वितीय उसके पूर्ण विद्रोही थे तथा उनका जीवन स्तर भी गिरा हुआ था।

मुक़दमा चार दिन तक चलता रहा। अधिकतर अभियुक्तों ने स्वयं को बचाने का प्रयत्न किया। विशेषकर दांतों ने सैं ज्हूस्त की उक्तियों का उत्तर देते हुये इस बात पर ज़ोर दिया कि उसने सदा देशभक्ति तथा साहस का प्रमाण दिया है तथा उसने विशेष ख्याति भी उपलब्ध की है। इसके उत्तर में क्रांतिकारी न्यायालय के अध्यक्ष ने यह कहा कि साहस अपराध की विशेषता है। जो लोग वास्तव में निरपराध होते हैं उनमें साहस नहीं होता। पेरिस के निवासी अभी तक दांतों से प्रेम करते थे। जूरी में भी उसके मित्र उपस्थित थे। अस्तु जब तीन दिन समाप्त होगयें तथा अभियुक्तों ने इस बात पर ज़ोर देना बन्द न किया कि शासन के जिन लोगों ने उनके विरुद्ध मुक़दमा चलाया है, उनको उत्तर देने के लिये न्यायालय

में बुलाया जाय, तो मैं रूसन तथा उसके साथियों के होश उड़ गये। बाध्य होकर उन्होंने ४ अप्रैल को यह क़ानून बनवा दिया कि यदि कोई भी व्यक्ति जिसके विरुद्ध षड्यन्त्र का अभियोग है राष्ट्रीय न्याय का विरोध अथवा अनादर करेगा तो वह स्वयं को मुक्ति पाने के अधिकार से वंचित कर लेगा। इसके दूसरे दिन एक के अतिरिक्त शेष बन्दियों को मृत्युदंड सुनाया गया एवं उनकी उक्तियां निष्फल सिद्ध हुई। उसी दिन तीसरे पहर वे वध कर दिये गये। जिस साहस तथा धैर्य से उन्होंने बन्दीगृह में तथा गेक्रोती पर व्यवहार किया था, वे प्रशंसा के योग्य हैं। ऐरो सब से पूर्व वध किया गया। उसने दांतों से गले मिलने का प्रयत्न किया, किन्तु जल्लाद ने उसे रोक दिया। यह देखकर दांतों ने कहा, "ये लोग मूर्ख हैं। वे हमारे सिरों को टोकरी के अन्दर चुम्बन लेने से वंचित न कर सकेंगे।" जब उसकी बारी आई तो दांतों बोला, "मेरा शीश सर्वसाधारण को दिखाना न भूल जाना। वह इस कष्ट के योग्य है।"

आतंक तथा अत्याचार की चरम सीमा

जब हम हैबर तथा दांतों के मुक़दमों का हाल पढ़ते हैं तो इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि जिन लोगों के हाथ में शासन सूत्र था, वे स्वयं भयभीत थे तथा उनकी बुद्धि तथा विवेक विलुप्त हो गये थे। वे उचित तथा अनुचित ढंगों से, ऐसे लोगों को अपने मार्ग से हटाने के लिये तत्पर रहते थे जिन्हें वे अपना शत्रु समझ लेते थे। उन्हें शासन का कल्याण इसी में दिखलाई देता था। यदि सच पूछिये तो उनके लिए दो उचित मार्ग थे। उनको या तो 'असभ्यों' के मार्ग पर चल कर सामाजिक क्रांति करनी थी अथवा दांतों की नीति पद्धति का अनुसरण करके वैधानिक नीति के अनुसार कार्य करना था। किन्तु उन्होंने दोनों ही मार्गों को बंद करके उन लोगों को समाप्त कर दिया था जो उनके विरुद्ध अग्रसर होना चाहते थे। ऐसा करके उन्होंने अपने लिए भी मृत्यु का द्वार खोल लिया था। वध किये जाने वालों का औसत भी बढ़ गया था। यदि गत शीत ऋतु में उनका औसत दो अथवा तीन प्रति दिन था तो अप्रैल में वह ६ अथवा ७ प्रति दिन और मई में ६ अथवा १० प्रति दिन तक पहुंच गया। जून मास में यही औसत २० प्रति दिन तक पहुंच गया। इसे हम जेकोबिन शासन के अत्याचार की चरम सीमा कह सकते हैं। इस काल में हैबर तथा दांतों के अतिरिक्त कई अन्य महान् आत्मायें बलिदान की गई थीं। उदाहरण के रूप में, विख्यात दार्शनिक कॉदौर्से, जिसने सन् १७६१ ई० के संविधान निर्माण में अधिक सहायता प्रदान की थी। जिरोंदिन नेताओं की गिरफ्तारियों के पश्चात् वह गुप्त रूप से एक मित्र के मकान में पेरिस में रहता था। वहां से निकल कर वह १७ अप्रैल को किसी गांव की सराय में पहुंचा, परन्तु बन्दी बना लिया गया तथा

जेल भेज दिया गया। वहां उसने आत्मघात कर लिया। १३ अप्रैल को १६ व्यक्तियों के शीश गेओर्ती की भेंट किये गये। इनमें पेरिस का प्राचीन बिशप गोबेल, शामेत तथा हेबर व देमूलें की विधवायें मुख्य थीं। २२ अप्रैल को सोलहवें लुई के क़ानूनी सलाहकार मालश्वेर्ब (Malesherbes), जिसने मुक़द्दमे के समय उसकी पैरवी की थी, अपने वंश के साथ वध कर दिया गया। उसी दिन वैधानिक शासन के समर्थक थोरे तथा ला शेपेलियर (Le Chapelier) गेओर्ती की भेंट किये गये। ८ मई को जेकोबिन शासन ने २८ ऐसे व्यक्तियों के रक्त से हाथ रंगे जिन्होंने बूरबन सम्राटों के काल में सरकारी करों के वसूल करने का कार्य किया था। उनका केवल यही अपराध था। दूसरे दिन सोलहवें लुई की बहिन ऐलिज़बेथ की बारी आई। वह अपने भाई तथा भाभी के अपराधों में पूर्णतया सम्मिलित रही थी। इसलिये उसका शीश भी उतार लिया गया। सारांश यह कि जून के मास में शासन का अत्याचार तथा आतंक अपनी चरम सीमा पर था। इसका एक कारण तो यह था कि गत अप्रैल में षड्यंत्र के अनेक मुक़द्दमे प्रान्तों से राजधानी में भिजवाये गये थे। दूसरा सब से प्रकट कारण यह था कि रोबेस्पेयर तथा अन्य लोगों का, जिनके हाथ में शासन सूत्र था, विवेक नष्ट हो गया था। अतएव वे उचित तथा अनुचित कार्यों में भेद न कर सकते थे।

युद्ध में विजय

इसी बीच में फ्रांसीसी सेनाओं ने विदेशी शत्रुओं के विरुद्ध कई बड़ी सफलतायें प्राप्त कर ली थीं। सन् १७९३ ई० की ग्रीष्म ऋतु में दूमरिये के देशद्रोह के पश्चात् फ्रांस को कई स्थानों में असफलतायें प्राप्त हुई थीं, किन्तु इसी वर्ष जौलाई के मास से फ्रांसीसी विजयों का क्रम आरम्भ हो गया था। सितम्बर सन् १७९३ ई० में फ्रांस की एक सेना ने, जो ऊशार (Houchard) के अधीन थी, होंड्सकूटे (Hondschoote) के युद्ध में अंगरेज़ों को पूर्ण रूप से परास्त किया। परिणाम यह हुआ कि ड्यूक आफ़ यार्क को डंकर्क का घेरा उठा लेना पड़ा। अक्टूबर सन् १७९३ ई० में ज्हूरदाँ (Jourdan) ने वातीनई (Wattignies) के स्थान पर विजय प्राप्त की। इसके कारण फ्रांसीसी सेनाओं के लिये राइन नदी को पार करने का मार्ग निष्कंटक हो गया। दिसम्बर मास में जैसा कि इसके पूर्व बतला चुके हैं, सेनापति ओश ने विस्सेनबूर्ग की सुदृढ़ पंक्तियों पर अधिकार कर लिया। अस्तु शत्रु को फ्रांस की भूमि त्याग देनी पड़ी।

सन् १७९३ ई० का विजय क्रम सन् १७९४ ई० में भी चलता रहा। स्पेन की सेनायें पिरीनीज़ के पीछे हटा दी गईं। आस्ट्रियन नेदरलैंड्ज़ के विरुद्ध एक नवीन शक्तिशाली आक्रमण किया गया। जून में फ्रांस के सेनापति ज्हूरदाँ ने आस्ट्रिया

की सेनाओं को फ्लरूस (Fleurus) के युद्ध में पूर्ण रूप से परास्त किया। ड्यूक आफ़ यार्क को भी हालैंड की ओर चला जाना पड़ा। वहां से वह शीघ्र ही इंग्लैंड बुला लिया गया। आस्ट्रिया और प्रशा की कुछ सेनायें पोलैंड की ओर बुला ली गईं, क्योंकि वहां उसका तीसरा विभाजन होने वाला था। १ जून के समुद्री युद्ध में अवश्य, जो अंगरेज़ी बेड़े के विरुद्ध उत्तर-पश्चिम की दिशा में उशेन्त (Ushant) के द्वीप के सन्निकट किया गया था, फ्रांस की जल सेना को पराजय प्राप्त हुई। किन्तु अमेरिका से आने वाले अन्न के जहाज़, जिनको शरण देने के लिये वह भेजी गई थी, सुरक्षित फ्रांस पहुंच गये थे। उक्त युद्ध के कारण दीर्घ काल के लिए इंगलिश चैनल में अंगरेज़ी बेड़े का प्रभुत्व स्थापित हो गया।

जौलाई सन् १७९३ ई० से युद्ध के चित्र के अकस्मात बदल जाने के चार प्रधान कारण थे। प्रथम, फ्रांस का शासन अब अधिक केन्द्रीय, सुदृढ़ तथा शक्तिशाली था तथा वह विदेशी शत्रुओं के विरुद्ध पूरे प्रयत्न तथा तत्परता से युद्ध करने को अपना कर्तव्य समझता था। इस समय लोक रक्षा समिति का नेतृत्व दांतों ने किया था एवं युद्ध क्षेत्र का नेतृत्व कारनो के हाथ में था। इस कारण से फ्रांसीसियों को महत्वपूर्ण सफलतायें उपलब्ध हो सकतीं थीं। कारनो ने फ्रांसीसी सेनाओं को केवल नया उत्साह और नवीन शक्ति ही प्रदान नहीं की थी वरन् उसने युद्ध में नवीन शस्त्रों का भी प्रयोग किया था। इसके अतिरिक्त वह सैनिक क़वायद तथा युद्ध करने के लिए नवीन सिद्धान्तों को भी महत्व देता था। द्वितीय, फ्रांस के सैनिक अधिकारी भी बदल गये थे। ज्हूरदाँ, पीशगुरु तथा मूरा इत्यादि मध्यम श्रेणी के व्यक्ति थे, जो केवल अपनी योग्यता के कारण उच्च पदों पर पहुंचे थे। ये लोग क्रांति के सच्चे समर्थक तथा सहायक थे एवं युद्ध करते समय, राजतंत्र तथा प्राचीन शासन व्यवस्था का किंचित ध्यान न करते थे। उनके हृदयों में अतुलनीय उत्साह व स्फूर्ति विद्यमान थी जिसका सुन्दर प्रभाव अधीन सेनाओं पर भी पड़ता था। तृतीय, फ्रांस के सौभाग्य से उसके शत्रुओं में पूर्ण एकता तथा मेल का अभाव था। मुख्यत: पोलैंड के विभाजन के विचार से आस्ट्रिया तथा प्रशा के शासनों को निश्चिन्तता प्राप्त न होती थी। अत: वे फ्रांस के विरुद्ध पूर्ण प्रयत्न तथा शक्ति से युद्ध न कर सकते थे। इसीलिए उन्होंने सन् १७९४ ई० के अन्तिम भाग में अपनी सेनायें युद्धक्षेत्र से वापस बुला ली थीं।

उसके प्रधान कारण

उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त फ्रांसीसी सेनाओं की सफलताओं का एक चतुर्थ कारण भी था, जिसका महत्व सब से अधिक है। जिरोंदिन शासन के प्रतिकूल जेकोबिन शासन की युद्ध योजनायें राष्ट्रीयता के नवीन सिद्धान्त पर आश्रित की गई थीं। इसका सविस्तार वर्णन इसके पूर्व किया जा चुका है (पृष्ठ २०६-२०७)। इसका

श्रेय भी कारनो को प्राप्त था। यूरोप के इतिहास में यह एक नवीन विशेषता थी। किन्तु यह आश्चर्य की बात है कि कारनो की युद्ध प्रणाली में वे दोष दृष्टिगोचर न हुये थे जिनके कारण १९वीं तथा २०वीं शताब्दियों के राष्ट्रीय युद्धों के नाम पर कलंकित धब्बे हैं। एक समय कारनो ने स्वयं कहा था कि "युद्ध का राष्ट्रीयकरण न करना चाहिये, फ्रांस के नाम से सब को डरना चाहिये किन्तु उससे घृणा न करनी चाहिये।" उसने जो उपदेश गणतंत्रीय सेनाओं को दिया था वह भी उल्लेखनीय है। "पूजन अर्चन की समस्त वस्तुओं का सम्मान करो। झोपड़ियों में रहने वालों, स्त्रियों, बालकों तथा वृद्धों का आदर सत्कार करो। जिस स्थान को भी तुम जाओ वहाँ सर्वसाधारण के हितकारियों की स्थिति से जाओ।"

उन्नीसवां अध्याय

अन्धकार के अनन्तर गौरवपूर्ण प्रकाश

जिस रक्तपात का उल्लेख गत अध्याय में किया गया है, वह फ्रांसीसी क्रांति के इतिहास में अन्तिम रक्तपात न था। इसके पश्चात् थर्मेदोर (जौलाई–अगस्त) का महीना आया जब रोबेस्पेयर तथा उसके दल का पतन हुआ, उनके शीश भी गेओतीं की भेंट किये गये तथा देश में पुन: अमन व संतोष स्थापित हुआ। शासन के दमनचक्र का उल्टा घूमना प्रारम्भ हुआ एवं उपरोक्त नेता तथा उसके साथी सैं ज्हूस्त एवं कूतों आदि सभी उसकी भेंट किये गये। जो कुआं उन्होंने दूसरों के लिये खोदा था, उसमें वे स्वयं गिर गये। उस कारुणिक परिणाम से बचने का केवल एक ही उपाय था। वह यह कि हैबर तथा दांतों के दलों के पतन के पश्चात् रोबेस्पेयर के साथियों में संगठन स्थापित रहता, किन्तु ऐसा न हो सका। अस्तु उनका भी वही परिणाम हुआ जो उनके प्रतिद्वन्दियों का हुआ था।

जेकोबिन एकशास्तृत्व, १ अप्रैल–१ अगस्त १७९४ ई०

१ अप्रैल सन् १७९४ ई० से १ अगस्त सन् १७९४ ई० तक जेकोबिन शासन के एकशास्तृत्व का समय था। यह वह समय था जब उसके अत्याचार तथा आतंक की चरम सीमा थी एवं जब उसके सब से बड़े प्रतिद्वन्दी अर्थात् हैबर तथा दांतों अपने समर्थकों के साथ वध किये गये थे। इस काल में कुछ अन्य ऐसे कार्य भी किये गये थे जिनसे उसका पतन सन्निकट आ गया था। इसी काल के अन्तिम दिनों में रोबेस्पेयर को भी अपना शीश गेओतीं को भेंट कर देना पड़ा था। जेकोबिन एकशास्तृत्व की प्रथम

विशेषता यह थी कि शासन के सभी अंग प्रत्यंग पर उसका पूर्ण प्रभाव स्थापित हो गया था। जैसे कन्वेंशन तथा लोक रक्षा समिति को लीजिये। कन्वेंशन के अधिवेशनों में अब कम लोग सम्मिलित होते थे, क्योंकि उनके बहुत से सदस्य सरकारी काम पर प्रान्तों में अथवा सीमाओं की ओर भेज दिये गये थे। जो शेष थे वे अपने कार्य में कम आनन्द लेते थे तथा गत मुकदमों के कारण शासन का बहुत कम विरोध करते थे। उसके सदस्यों पर शासन की समितियों का भी पूरा प्रभाव था। इस सब के होते हुये भी कन्वेंशन ने धन स्वीकृत करने के अधिकार को हाथ से न छोड़ा था। इसके अतिरिक्त उसमें शासन के शत्रु तथा दोष निकालने वाले इतनी बड़ी संख्या में सर्वदा उपस्थित रहते थे कि वह कभी भी शासन के प्रभुत्व से उन्मुक्त हो सकता था।

लोक रक्षा समिति (Committee of Public Safety) जेकोबिन एकशास्तृत्व का सब से बड़ा यन्त्र था। उसकी शक्ति तथा उसके अधिकारों में अधिक वृद्धि हो गई थी। पेरिस के कम्यून के अधिकारी भी पूर्ण रूप से उसके अधीन हो गये थे। उसने हैबर तथा शोमेत के स्थान पर अपने प्रतिनिधि नियुक्त कर दिये थे एवं पियान (Payan) को पेरिस के शासन का सर्वोच्च अधिकारी बना दिया था। १० मई को कम्यून का मेयर पाचे (Pache) हैबर के अभियोग के सम्बन्ध में गिरफ्तार कर लिया गया तथा उसके स्थान पर एक अधिक चापलूस व्यक्ति नियुक्त कर दिया गया। इस प्रकार से शासन के कुछ पदाधिकारी, जो विभिन्न कार्यों के लिए प्रांतों में अथवा सीमाओं पर नियुक्त किये गये थे, इसलिए लौटा लिये गये थे कि वे अपनी स्वाधीनता के लिए प्रसिद्ध थे। क्रांतिकारी समितियां तथा परिषदों में भी, जो समस्त देश में फैली हुई थीं, छटनी कर दी गई थी अथवा उनको बिल्कुल समाप्त कर दिया गया था।

जेकोबिन शासन के एकशास्ता की स्थिति से कार्य करने के अन्य प्रमाण भी उपस्थित थे। जैसे केन्द्रीय जेकोबिन क्लब की स्वतन्त्रता एक दम समाप्त कर दी गई थी। समाचारपत्रों की संख्या में प्रकट कमी कर दी गई थी। रंगमंच पर कार्य करने वाले अभिनेताओं तथा उसके लिये नाटक लिखने वालों को कन्वेंशन या पेरिस के कम्यून के आदेश मानने पड़ते थे। यदि नाटकों के लेखक अथवा नाटक खेलने वाली कंपनियां उनकी आज्ञा की अवहेलना करती थीं तो उन्हें दंड दिया जाता था। गुप्तचरों पर भी बहुत बड़ी धन राशि व्यय की जाती थी। उनकी संख्या अधिक कर दी गई थी तथा उन्हें आज्ञा दे दी गई थी कि अपनी रिपोर्ट सीधे गृह विभाग में भेजा करें। अधिकारियों के दिलों में सर्वसाधारण की प्रतिष्ठा कम हो गई थी। उनसे परामर्श करने के स्थान में वे उन्हें भाषण देने लगे थे। मूर्तियों तथा भवनों की

सुन्दरता पर ज़ोर दिया जाने लगा एवं नगरों, कस्बों और सड़कों आदि के नाम प्रजातंत्रीय ढंग के अनुसार रक्खे जाने लगे। इस प्रकार प्रान्तों में कम से कम तीन सौ अथवा चार सौ कम्यूनों के नाम परिवर्तित कर दिये गये। राष्ट्रीय भाषा में भी प्रजातंत्रीय नाम बड़ी संख्या में सम्मिलित कर लिये गये थे।

संसार का इतिहास इस विषय का साक्षी है कि एकशास्ताओं के शासन अधिक समय तक स्थापित नहीं रहते। यही बात जेकोबिन शासन के विषय में भी सत्य प्रमाणित हुई। एकशास्तृत्व ग्रहण करने के केवल चार मास के पश्चात् उसका पतन हो गया। उसके पतन के अनेक कारण थे। इनमें तीन प्रधान हैं,—(१) आर्थिक व्यवस्था के दोष (२) अदालती प्रबन्ध के दोष तथा (३) धार्मिक नीति के दोष। इन पर हम क्रमानुसार संक्षिप्त रूप से विचार करेंगे। इसके पश्चात् जेकोबिन शासन के पतन के अन्य कारणों पर भी प्रकाश डालेंगे। कहा जाता है कि जब लोग दाँतों को गाड़ी में बिठलाकर गेओतीं की ओर ले जा रहे थे तो रोबेस्पेयर के घर की ओर संकेत करके उसने कहा था, 'मेरे पश्चात् तुम्हारी बारी भी शीघ्र ही आवेगी।' वास्तव में हुआ भी ऐसा ही।

आर्थिक व्यवस्था

जेकोबिन शासन के सामने एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि पेरिस तथा अन्य नगरों के निवासियों के लिये अन्नादि का प्रबन्ध किस प्रकार किया जाय। फ्रांस कृषि प्रधान देश अवश्य था, किन्तु उसे अपने निवासियों का पेट भरने के लिये विदेशों से भी अन्न मंगाना पड़ता था। इसके प्रतिकूल इंग्लैंड कृषि प्रधान देश नहीं है, किन्तु उस समय उसे विदेशों से अन्न बहुत कम मंगाना पड़ता था। यदि फ्रांसीसियों को पेट भर भोजन न मिलेगा तो वे युद्ध के कार्य को कैसे आगे बढ़ा सकेंगे? यदि शासन रात दिन अन्न की कमी के कारण बेचैन रहेगा तो वह अन्य आवश्यक कार्यों की ओर किस प्रकार ध्यान दे सकेगा? इस प्रकार के प्रश्न जेकोबिन शासन तथा उसके सब से बड़े नेता रोबेस्पेयर की चिन्ता के कारण थे। यदि अन्न किसी प्रकार पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कर दिया जाता था तो मार्गों के ख़राब होने के कारण उसके एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने में कठिनाई का सामना करना पड़ता था। इस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करके शासन ने अन्न की प्राप्ति तथा उसके वितरण का उचित प्रबन्ध किया। सब से पहले उसने पेरिस में रोटियों का राशन किया। अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने राशनकार्ड के अनुसार रोटियां नानबाइयों की दूकान से प्राप्त करने लगा। इसके पश्चात् मांस का भी राशन कर दिया गया, किन्तु इस नीति में सफलता प्राप्त नहीं हुई। कारण

यह था कि अनुचित लाभ उठाने वालों ने अन्न बहुत बड़े परिमाण में एकत्रित कर लिया था तथा वे उसे आवश्यकतानुसार बाज़ारों में न पहुंचने देते थे। सेना की आवश्यकताओं एवं कुछ प्रान्तों में, जहां पशु अधिक संख्या में थे, विद्रोह के फैल जाने से, मांस के उपलब्ध करने में बहुधा कठिनाई होती थी। इस प्रकार की बातों से पीड़ित होकर शासन ने अन्न संग्रह करने के विरुद्ध क़ानून निर्मित किये। जब इस से भी काम न चला तो उसने अन्न का मूल्य निर्धारित करने का प्रयत्न किया। इस प्रकार का प्रथम क़ानून जिरोंदिन दल के शासनकाल में मई सन् १७९३ ई० में बनाया गया था। इसके पश्चात् दूसरा क़ानून जेकोबिन शासन की ओर से सितम्बर सन् १७९३ ई० में बनाया गया किन्तु अनुचित लाभ उपार्जन करने वालों के कारण उपरोक्त विधानों से कोई विशेष लाभ न हो सका। इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि ग्राहक तथा बेचने वाले दोनों काग़जी नोटों की ओर से निश्चिन्त न हो सकते थे, क्योंकि उनका मूल्य बराबर गिर रहा था।

जेकोबिन एकशासत्व के शासनकाल में सर्वसाधारण का असंतोष अन्य कारणों से भी बढ़ गया था। जेकोबिन नेताओं ने उनकी सहायता से महान् सफलतायें प्राप्त की थीं। वे उनकी शक्ति का सब से बड़ा आधार थे। परन्तु उनका काम निकल गया था। अस्तु उपरोक्त शासन ने सितम्बर के क़ानून के द्वारा, जो उपकरणों के मूल्य को निर्धारित करने के उद्देश्य से बनाया गया था, मज़दूरी की दर भी निश्चित कर दी थी। हैबर तथा उसके साथी, जिनका पेरिस के कम्यून पर पूरा प्रभाव था, उक्त क़ानून को कठोरता से लागू न करते थे। किन्तु उनके पतन के पश्चात् जेकोबिन शासन ने उसको कठोरता से संचालित किया। जब किसी कारखाने के मज़दूर हड़ताल करने का साहस करते थे तो शासन उन्हें निश्चित दर पर काम करने को बाध्य करती थी। यह एक बिल्कुल नया सिद्धान्त था जिससे श्रमजीवी परिचित न थे। २१ अप्रैल सन् १७९४ ई० को तम्बाकू के एक कारखाने में दो सौ मज़दूरों ने मज़दूरी के बढ़ाये जाने के उद्देश्य से प्रार्थनापत्र दिया, किन्तु शासन ने उन्हें अवैधानिक सभा घोषित कर दिया तथा उनके नेताओं को बन्दी बना लिया। इस प्रकार का व्यवहार अन्य अवसरों पर भी किया गया। श्रमजीवियों तथा कारीगरों को एक साधारण रक़म प्रति दिन के हिसाब से सैक्शन की सभा में उपस्थित होने के बदले में मिला करती थी। जेकोबिन शासन ने उसमें भी हस्तक्षेप करने का प्रयत्न किया। उसने क्रांतिकारियों तथा सर्वसाधारण की समितियों को बन्द करने का प्रयत्न भी किया। कारण यह बतलाया गया कि उनके सदस्यों का हैबर के आन्दोलन से गहरा सम्बन्ध था। उसने इस बात को भी सहन न किया कि पेरिस के निर्धन लोग सड़कों पर एक स्थान पर बैठकर प्रेमपूर्वक

भोजन करें। इस प्रकार की बातों का सर्वसाधारण के हृदयों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। वे सोचते थे कि क्रांति में सफलता उन्हीं के कारण प्राप्त हुई थी, किन्तु जब पारितोषिक वितरण करने का समय आया तो शासन ने उन पर अत्याचार करना प्रारम्भ कर दिया। शासन ने क़ानून बनाकर भीख मांगने की प्रथा को रोकने का भी प्रयत्न किया। जो लोग स्वस्थ थे उनके लिये काम का प्रबन्ध कर दिया गया, किन्तु जो लोग भीख मांगते थे अथवा जो भीख देते थे, उन दोनों को दंड दिया जाता था। परिणाम यह हुआ कि प्रत्यक्ष रूप से भीख न मांग कर इन लोगों ने भिन्न बहानों से अपना कार्य जारी रक्खा। शहरों के स्थान पर ग्रामों में तथा ग्राम मार्गों पर उनकी संख्या में वृद्धि होगई।

न्यायालयों का प्रबन्ध

जेकोबिन एकशास्तृत्व के पतन का एक महत्वपूर्ण कारण उसका आलोचना के योग्य न्यायालयों का प्रबन्ध भी है। इस सम्बन्ध में शासन ने अपने अधिकारों का जो उसे प्राप्त थे बहुत ही बुरा प्रयोग किया। जिस प्रकार असाधारण कारणों से लोक रक्षा समिति निर्मित की गई थी तथा शासन का कार्य उसके अधीन कर दिया था उसी प्रकार असाधारण परिस्थितियों के कारण कुछ सैनिक तथा अन्य असाधारण न्यायालयों का सृजन किया गया तथा न्याय करने का प्रमुख कार्य उनके अधीन कर दिया गया। उनका सब से महान उदाहरण क्रांतिकारी न्यायालय (Revolutionary Tribunal) का है, जिसका उल्लेख पहले भी हुआ है। यदि ये असाधारण न्यायालय दो बातों पर दृष्टि रखते तो उनका तथा जेकोबिन शासन का विरोध कम होता। प्रथम यह कि उनको अपने अधिकारों का प्रयोग केवल उन लोगों के विरुद्ध करना चाहिये था जो वास्तव में सर्वसाधारण के शत्रु थे। द्वितीय, उन्हें अपने कर्तव्यों का पालन इस प्रकार करना चाहिये था कि देश के साधारण न्यायालयों के काम में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न होता किन्तु सन् १७९४ ई० में दोनों ही ओर से संकट का घंटा बजता रहा परन्तु उपरोक्त न्यायालयों ने उसकी ओर ध्यान न दिया। फल यह हुआ कि, जैसा कि बतला चुके हैं, इस वर्ष जून में वधिकों के प्रति दिन का औसत बढ़ते बढ़ते २० तक पहुंच गया।

इसमें सन्देह नहीं कि क्रांतिकारी न्यायालय के अधिकार विस्तृत थे, किन्तु कन्वेंशन ने उस पर अपना नियंत्रण सर्वदा स्थिर रक्खा था। आतंकपूर्ण शासन के समय उसके अधिकारों में प्रकट वृद्धि कर दी गई थी, किन्तु किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध मुक़दमा केवल कन्वेंशन की ओर से चलाया जा सकता था। यह एक महत्वपूर्ण विषय है। दूसरा महत्वपूर्ण विषय यह है कि कन्वेंशन को इस बात का अधिकार भी था कि उपरोक्त न्यायालय द्वारा जो निर्णय उसके सदस्यों, मंत्रियों

तथा सेना के अध्यक्षों के सम्बन्ध में किया जाय उसे वह रद कर दे। इस प्रकार के नियंत्रणों के होते हुये भी उपरोक्त न्यायालय ने अपने अधिकारों का अनुचित प्रयोग किया तथा अगणित निरपराधियों को बन्दीगृह में डाल दिया। कुछ क़ानून भी ऐसे थे जिनसे उसे अपने कार्य में अधिक सहायता मिलती थी। इनमें सब से प्रकट उदाहरण २२ परेरियल (१० जून सन् १७९४ ई०) के क़ानून की है। उसका उद्देश्य यह बतलाया गया था कि सर्वसाधारण के शत्रुओं को उचित दंड दिया जाय, किन्तु सर्वसाधारण के शत्रुओं की सूची में बहुधा ऐसे लोग भी सम्मिलित कर दिये गये थे जो वास्तव में अपराधी नहीं कहे जा सकते थे। उदाहरण के लिये—वे लोग जिन्होंने राजतंत्र के अनुकूल अथवा गण-राज्य के विरुद्ध काम किया था; जिन्होंने किसी भी प्रकार से युद्ध की तैयारी में हस्तक्षेप किया था; जिन्होंने सरकारी भोजन सामग्री के स्टाक को कम करने का प्रयत्न किया था अथवा शासन के मित्रों का विरोध या उसके शत्रुओं की सहायता की थी; जिन्होंने भ्रमपूर्ण अफ़वाहें फैलाई थीं अथवा जनता में निराशा उत्पन्न करने का प्रयत्न किया था अथवा शासन के विरुद्ध कोई लेख लिखा था। इसके अतिरिक्त उपरोक्त सूची में बेईमान ठेकेदार, कठिनाइयां उत्पन्न करने वाले पदाधिकारी तथा वे लोग भी सम्मिलित कर दिये गये थे जिन्होंने गण-राज्य की स्वतन्त्रता, एकता तथा सुरक्षा में हस्तक्षेप किया था। ये अभियोग ऐसे थे जिन से बहुत कम लोग स्वयं को सुरक्षित रख सकते थे। परेरियल के क़ानून की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि उसके अधीन न्यायालयों को केवल मृत्यु दंड देने का अधिकार था। इसके अतिरिक्त अभियुक्त न किसी प्रकार का गवाह ही उपस्थित कर सकता था और न जिरह करने के लिये किसी वकील अथवा बैरिस्टर को नियत कर सकता था। उक्त क़ानून के द्वारा लोक रक्षा समिति तथा क्रांतिकारी न्यायालय के अधिकार अत्यन्त अधिक हो गये थे। जो संदिग्ध लोग कारावास में बन्द थे उन में से अधिकतर बध कर दिये गये एवं उन के स्थान पर दूसरे लोग बन्दी बना दिये गये। ऐसे शासन की छत्रछाया में जो संदिग्धों के क़ानून (Law of Suspects), वौंतोज़ के क़ानून (Law of Ventose) एवं २२ परेरियल के क़ानून (Law of 22nd Prairial) एवं इसी प्रकार के अन्य क़ानूनों पर ज़ोर देता था, जनता कैसे प्रसन्न रह सकती थी? विशेषकर ऐसी परिस्थिति में जब सरकारी गुप्तचरों का भय उसको सदैव बेचैन किये रहता था। ऐसे लोगों के उदाहरण भी विद्यमान हैं जिन्होंने केवल शासन की ओर से निराश हो जाने के कारण स्वयं ही प्राणों को उत्सर्ग कर दिया था। एक बालिका के विषय में बतलाया जाता है कि जब किसी प्रकार पुलिस ने उसे गिरफ्तार न किया तो उसने अपने घर की खिड़की से झांक कर 'सम्राट

चिरंजीवी हो' के नारे लगाये। अस्तु वह पकड़ ली गई। फिर भी वह उक्त नारा लगाने से बाज़ न आई। न्यायालय के समक्ष उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया एवं गेओर्ती पर उसने उसी नारे को उच्च स्वर से लगाते हुये अपने प्राणों की भेंट चढ़ा दी।

इस प्रकार के कारणों से, जिन पर प्रकाश डाला गया है, जेकोबिन शासन के सब से महान् स्तम्भ, रोबेस्पेयर की अप्रतिष्ठा एवं बेचैनी बढ़ती जा रही थी। उन से मुक्ति पाने के उद्देश्य से उसने धर्म का आश्रय लिया। उसका विचार था कि इसके बिना काम न चलेगा। कैथोलिक धर्म को तो वह प्राचीन पद न दे सकता था, क्योंकि वह क्रांति के सिद्धान्तों के विरुद्ध था। दोनों के बीच का अन्तर भी बहुत बढ़ गया था। सन् १७६० ई० में धर्म को वैधानिक रूप देने का प्रयत्न किया गया था, किन्तु अब उस से भी काम न चल सकता था। सुधार युक्त चर्च के पादरियों ने त्यागपत्र दे दिया था अथवा वे कैथोलिक गिर्जाघरों में लौट गये थे। बुद्धिवाद की उपासना भी रोबेस्पेयर के सिद्धान्त के विरुद्ध थी। ऐसी दशा में उसको किसी नूतन कार्य-पद्धति से काम लेना आवश्यक था। वह रूसो का सच्चा भक्त था। अपने पथप्रदर्शक की भांति उसका भी सिद्धान्त था कि किसी न किसी रूप में उस सर्वोच्च शक्ति की प्रतिष्ठा करना आवश्यक है जो समस्त संसार का संचालन करती है। उसके दबाव डालने पर कन्वेंशन ने 'बुद्धि' की उपासना के स्थान पर उस सर्वोच्च शक्ति (Supreme Being) की उपासना करना स्वीकार कर लिया। इसका प्रारम्भ एक महान् समारोह से किया गया जो ८ जून सन् १७६४ ई० को पेरिस के बड़े मैदान (Champ de Mars) में किया गया था। रोबेस्पेयर स्वयं इस समारोह के अवसर पर प्रधान बनाया गया था। वह एवं अन्य सदस्य बड़ी गम्भीरता के साथ वहां गये तथा नये धर्म की प्रथाओं का सृजन किया। इस सम्बन्ध में कई गान भी गाये गये एवं बनावटी मूर्तियां जलाई गईं। सब से अन्त में कई मनुष्यों ने भाषण दिये। इनमें रोबेस्पेयर का भाषण महत्व लिये हुये था। उससे स्पष्ट होता था कि उसे नवीन नीति की सफलता पर अभिमान है। वास्तव में फ्रांस के निवासी नये धर्म के सिद्धान्तों से सहमत नहीं थे, परन्तु उन्होंने उसका विरोध न किया था। उनका विचार था कि इसके द्वारा शासन के अत्याचार व आतंक सम्भवत: समाप्त हो जायेंगे, किन्तु ऐसा न हुआ। कारण कि उसके केवल दो दिन पश्चात् २२ परेरियल का क़ानून निर्मित किया गया था। इसके निर्मित किये जाने से यह भी प्रकट होता है कि रोबेस्पेयर जनता को धमकाना चाहता था जिससे वह नये धर्म को स्वीकार कर लें। उसका सिद्धान्त था कि यदि शांति के

धार्मिक नीति

समय सर्वसाधारण के शासन का आधार लोकहित होता है तो क्रांति के काल में लोकहित तथा आतंक दोनों उसके आधार बन जाते हैं,—लोकहित जिसके बिना आतंक का परिणाम विनाशकारी होता है तथा आतंक जिसके बिना लोकहित व्यर्थ हो जाता है।"

पेरिस की भांति प्रान्तों में भी शासन के प्रतिनिधियों तथा म्यूनिस्पल अधिकारियों ने नये धर्म को चलाने का प्रयत्न किया, किन्तु विभिन्न स्थानों में उसे नये ढंग से संचालित करने का प्रयत्न किया गया। इसको सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार से प्रतिष्ठित किये जाने के लिये कहा गया। यह भी प्रयत्न किया गया कि ८ जून की भांति प्रत्येक सप्ताह में (१ सप्ताह = १० दिन) धार्मिक पर्व मनाया जाय। कुछ महीनों तक प्रमुख स्थानों में ऐसा प्रतीत हुआ कि शासन की नवीन नीति सफल हो गई है। इसके पश्चात् सभी स्थानों में उसकी समाप्ति कर दी गई। इसका मुख्य कारण यह था कि जनता ने उसमें बहुत कम योग दिया था।

जेकोबिन एकशास्तृत्व के पतन के कुछ अन्य कारण भी हैं। इन पर प्रकाश डालना भी अत्यन्त आवश्यक है। उक्त शासन ने एक बहुत बड़ी भूल यह की थी कि उसने हैबर के दल के लोगों को कम संख्या में नष्ट किया था, परन्तु दांतों के दल वालों को अधिक संख्या में समाप्त कर दिया था। हैबर तथा उसके दल के लोग निम्न कोटि के व्यक्ति थे, किन्तु उनकी संख्या अत्यन्त अधिक थी। इसके विरुद्ध दांतों एवं उसके समर्थक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे, किन्तु उनकी संख्या बहुत कम थी। उनके पतन का शासन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। उसके पदाधिकारियों तथा कर्मचारियों के हृदयों में भय समा गया तथा वे अपने प्राणों की खैर मनाने लगे। इसके अतिरिक्त कम्यून, समितियों के शासन एवं गेस्तोतीं के व्यस्त रहने के कारण अन्य लोग भी आतंकित थे एवं भय व संदेह का वातावरण चारों ओर फैला हुआ था। ऐसी परिस्थिति में रोबेस्पेयर के उच्च आदर्श तथा सिद्धान्त किस प्रकार कृतकार्य हो सकते थे? आवश्यक रूप से शासन के शत्रु, जिनमें हैबर तथा दांतों के समर्थकों के अतिरिक्त अन्य लोग भी सम्मिलित थे, उसके विरुद्ध गुप्त रूप से कार्य करने लगे तथा उसके पतन के पश्चात् ही शांत होकर बैठे।

पतन के अन्य कारण

प्रत्यक्ष रूप से भी शासन के प्रति विरोध बढ़ रहा था। उसकी आर्थिक नीति के कारण कई कारखानों में हड़तालें हुईं। सैं ज़ूस्त तथा रोबेस्पेयर की हत्या करने का प्रयत्न भी किया गया। सब से बुरी बात यह थी कि जिन लोगों ने ब्हेयर-

मीनाल की विजय प्राप्त की थी, उन लोगों में स्वयं फूट के चिह्न विद्यमान थे। रोबेस्पेयर एवं उसके साथी इस बात का अनुभव करने लगे थे कि वे अकेले रह गये हैं। एक व्यक्ति की असफलता दूसरे के लिये अप्रसन्नता का कारण प्रमाणित होने लगी। पारस्परिक विरोध बढ़ने लगा। शासन पर आन्तरिक तथा वाह्य दोनों प्रकार के आक्रमण प्रारम्भ हो गये। अतएव उसका अन्त हो गया। उसके साथ ही समस्त जेकोबिन दल का भी पतन हो गया। जेकोबिन एकशास्तृत्व के पतन का एक कारण यह भी था कि प्रान्तों में उसके विरोधियों की संख्या बढ़ गई थी। कुछ लोग तो काग़ज़ी नोटों तथा खाद्य सामग्री के सम्बन्ध में जो क़ानून रचे गये थे, उनके कारण रुष्ट थे। कुछ विरोधी अमीर उमरा तथा पादरियों की स्थिति रखते थे। इसके अतिरिक्त कुछ लोग ऐसे भी थे जो शासन के अधिकारियों तथा प्रतिनिधियों की कठोरता के कारण विरुद्ध हो गये थे। अस्तु प्रान्तों में जेकोबिन एकशास्तृत्व का विरोध बढ़ गया था, किन्तु उसने कोई उग्र रूप धारण नहीं किया था। उसके शत्रु सब काम शान्तिपूर्वक कर रहे थे, किन्तु उनके कारण शासन की नींव खोखली होती जा रही थी।

रोबेस्पेयर का एकांतवास

१ जौलाई सन् १७९४ ई० से तीन सप्ताह तक रोबेस्पेयर एकान्तवास में रहा। इसका सब से बड़ा कारण पारस्परिक वैमनस्य था। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य घटनायें भी ऐसी हुई थीं जो उसके विरुद्ध थीं। जैसे १ जून को उसका शत्रु फूशे (Fouche) जेकोबिन क्लब का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया गया। ८ जून को धार्मिक समारोह के अवसर पर दो सदस्यों ने उसका अपमान किया था तथा उसे दंड दिलवाने की धमकी दी थी। उसी दिन कुछ शस्त्रों के कारखानों में हड़ताल हो गई थी। उसके जीवन को समाप्त करने के लिये कई षड़यंत्र भी हो चुके थे। सब से प्रधान बात यह थी कि रोबेस्पेयर को इस बात का आभास हो गया था कि वह शासन के काम में विफल सिद्ध हुआ है। वस्तुओं की बढ़ती हुई दर, हड़तालें, षड़-यंत्र, दंगे और झगड़े, गेओर्तीं के बलिदान स्थल पर मृतकों का समूह,—ये सब बातें इस बात का प्रमाण थीं कि रोबेस्पेयर सफल नहीं हुआ है। इन कारणों से समस्त देश में उसके मित्रों तथा सहानुभूति रखने वालों की संख्या बहुत कम हो-गई थी। लोक रक्षा समिति में दो दल हो गये थे। उसके दस सदस्यों में से पांच एक ओर थे एवं पांच दूसरी ओर। सुरक्षा समिति के सदस्य विशेष रूप से उसके विरुद्ध थे। इसका सब से बड़ा कारण यह था कि उसने पुलिस के कार्यों में हस्तक्षेप किया था एवं प्रथम समिति को अपना पुलिस का प्रबन्ध पृथक करने के विचार से एक पुलिस संस्था (Police Bureau) खोलने का मत दिया था। इसमें एक संचा-

लक, दो अधीन अधिकारी तथा दस लेखक थे। २८ अप्रैल से ३० जून तक यह रोबेस्पेयर के अधीन काम करता रहा, किन्तु इसके पश्चात् उसने काम में दिलचस्पी लेना कम कर दिया। रोबेस्पेयर के एकान्तवास का एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि परेरियल के विधान की सहायता से वह कन्वेंशन के उन सदस्यों को, जो उसकी धार्मिक नीति के विरुद्ध थे, गिरफ्तार कराने में सफल न हुआ था। अस्तु इस प्रकार की बातों से उसने लोक रक्षा समिति के अधिवेशनों में उपस्थित होना बन्द कर दिया था। कभी कभी आवश्यकीय काग़ज़ उसके हस्ताक्षरों के लिए उसके घर पर भेज दिये जाते थे। कभी कभी वह जेकोबिन क्लब में भी उपस्थित हो जाया करता था। अन्यथा उसका मित्र सेंजूस्त उसे उपरोक्त समिति की आन्तरिक व्यवस्था के विषय में बतलाता रहता था। उसके अन्य सदस्यों ने उसकी अनुपस्थिति की चिन्ता न करके रक्तपात के प्रवाह को उसी प्रकार स्थापित रक्खा था। रोबेस्पेयर उसकी ओर से उदासीन सा हो गया था। इतना अवश्य था कि यदि वह प्रयत्न करता तो अपने प्रभाव से मृतकों की संख्या में कमी कर सकता था। ऐसा न करके उसने केवल कैथरिन थियो (Catherine Theot) नाम की स्त्री को, जो वृद्धा थी तथा जिसका दिमाग़ ख़राब हो गया था, स्वतंत्र कराया था। वह उसे 'मसीह' समझती थी, किन्तु सुरक्षा समिति ने उसको भयंकर षड्यंत्र के सन्देह में गिरफ्तार कर लिया था। यह घटना जून के मध्य भाग की थी।

समझौते का प्रयत्न

सुरक्षा समिति के एक सदस्य ने, जिसका नाम वदियर (Vadier) था, थियो के विषय में बहुत ही बुरी रिपोर्ट कन्वेंशन में उपस्थित की थी। इसके कारण रोबेस्पेयर की अवशेष शक्ति को भी अधिक क्षति पहुंची थी। इसके कारण दोनों समितियों का पारस्परिक अन्तर भी अधिक हो गया था। अन्ततः दोनों ही पक्षों से इस बात का प्रयत्न किया गया कि किसी प्रकार पारस्परिक विद्वेष मेल व प्रेम में परिवर्तित हो जाय। इस कार्य में लोक रक्षा समिति के एक सदस्य ने, जिसका नाम बारेयर (Barere) था, अत्यधिक योग दिया था। वह इस सेवा के लिये प्रत्येक प्रकार से योग्य था। उसके हृदय में देश के लिये सच्चा प्रेम था। वह ऐसे प्रत्येक काम के करने के लिए तत्पर रहता था जिससे स्वदेश का हित हो सकता था। अतएव प्रत्येक दिशा में उसके मित्र तथा हितकारी उपस्थित थे। गैओतीं के मुंह से जितने व्यक्ति उसने बचाये थे उतने किसी अन्य व्यक्ति ने नहीं बचाये थे। अब उसने प्रयत्न करके २३ जौलाई को दोनों समितियों का संयुक्त अधिवेशन कराया। इसमें रोबेस्पेयर तीन सप्ताहों से अधिक की अनुपस्थिति के उपरान्त प्रथम बार सम्मिलित हुआ। उसको यह लालच दिया गया था कि अब वोंतोज़ के क़ानून, जिनका महत्व उसके तथा

उसके मित्र सेंं ज्हूस्त के लिए अधिक था, पूरे प्रयत्न से व्यवहार में लाये जायेंगे। रोबेस्पेयर को प्रसन्न करने के लिए यह भी निश्चित कर दिया गया था कि देश के विरुद्ध षड्यंत्र करने वालों के सम्बन्ध में नवीन रिपोर्ट तैयार की जायेगी तथा उनको उचित दंड दिलाने की व्यवस्था की जायेगी। परन्तु ये प्रलोभन उस पर प्रभाव न डाल सके। रोबेस्पेयर ने अपना पुराना ढंग बिना किसी परिवर्तन के स्थापित रक्खा एवं एकशास्ताओं की भांति उसने गर्व एवं दबदबे से काम लेने का प्रयत्न किया। उसने इस बात को भी स्पष्ट कर दिया कि उसे नवीन सुधारों की आवश्यकता नहीं है, वरन् नवीन मनुष्यों की। ऐसी परिस्थिति में जब रोबेस्पेयर कम्यून तथा कन्वेंशन दोनों के सदस्यों के विरुद्ध विचार रखता था समझौता कैसे हो सकता था? इसके पश्चात् भी बारेयर, सेंं ज्हूस्त तथा कूतों ने उसे प्रसन्न करने की प्रत्येक प्रकार से कोशिश की किन्तु उसने अपनी कठोर नीति को न बदला।

अब क्या हो सकता था? यदि रोबेस्पेयर के शत्रुओं को, जो कन्वेंशन, लोक रक्षा समिति अथवा सुरक्षा समिति के सदस्य थे, अपनी गर्दनें सुरक्षित रखनी थीं तो उन सब को उस पर एक साथ आक्रमण करना था। इस आक्रमण के करने का सब से श्रेष्ठ स्थान कन्वेंशन अथवा प्रसभा का भवन था, क्योंकि कन्वेंशन को इस बात का अधिकार था कि अवांछनीय सदस्यों के विरुद्ध कार्य करे। यह सोच कर रोबेस्पेयर के शत्रुओं ने उसके तथा उसके साथियों के पतन का निश्चित विचार कर लिया था। इस काम में 'मैदान' अथवा 'दलदल' में बैठने वाले उदार नीति रखने वालों से सहायता के अभिलाषी हुये। किन्तु उनको किस प्रकार मनाया जाय, यह उनकी समझ के बाहर था।

रोबेस्पेयर का नया भाषण
२६ जौलाई १७९४

दोनों के बीच विचार विमर्श का अन्त न हुआ था कि रोबेस्पेयर ने २६ जौलाई को कन्वेंशन में अपना विख्यात भाषण दिया, जिसको सुनकर उदार दल के सदस्य उसके शत्रुओं का साथ देने को तत्पर हो गये। इस भाषण में उसने 'नास्तिकों' के विरुद्ध आवाज़ उठाई। सुरक्षा समिति के सदस्यों पर उसने यह अभियोग लगाया कि उन्होंने थियो के सम्बन्ध में अन्याय किया है। उसने इस बात की शिकायत की कि शासन पर उसके शत्रुओं का प्रभुत्व स्थापित हो गया है तथा इस बात पर भी प्रकाश डाला कि निरपराध लोग बन्दी कर लिये गये हैं एवं जो वास्तव में अपराधी हैं, वे सर्वथा स्वतन्त्र हैं। उसने इस बात की भी इच्छा प्रकट की कि दोनों समितियों के सदस्यों की छटनी कर दी जाय। रोबेस्पेयर ने सब कुछ कहा, किन्तु वह कन्वेंशन के सदस्यों पर प्रभाव न डाल सका। यह एक विचित्र बात थी, किन्तु

इसका महत्व भाषण करने वाले की समझ में न आया। अस्तु घर लौटकर उसने अपने गृहपति से कहा कि माउन्टेन पर तो मैं विश्वास नहीं कर सकता परन्तु कन्वेंशन के अन्य सदस्य गण मेरी बात अवश्य सुनेंगे। यह उसकी भूल थी। उसी रात्रि को उसके शत्रुओं ने उदार दल की सहायता से इस बात का प्रबंध कर लिया कि दूसरे दिन उसके भाषण के बीच कोलाहल करके उसे बैठने पर बाध्य कर दिया जाय।

दूसरे दिन क्रांतिकारी कलेंडर के अनुसार दूसरे वर्ष का ६ वां थर्मीदोर था। यह एक ऐसा दिवस था जो फ्रांसीसी क्रांति के इतिहास में विशेष महत्व रखता है।

उसका तथा उसके सहयोगियों का बन्दी होना

इस दिन उन लोगों की गिरफ्तारी की गई जो गत एक वर्ष के अत्याचार तथा रक्तपात के उत्तरदायी थे। इस दिन दीर्घकालीन अन्धकार के पश्चात् प्रकाश की किरणें प्रथम बार स्फुटित हुई थीं। इस दिन सैं जूस्त ने कन्वेंशन में भाषण देने का प्रयत्न किया। उसने एक बुद्धिमान वृद्ध पुरुष की भांति, शासन में जो परस्पर वैमनस्य उत्पन्न होगया था उस पर शोक प्रकट किया एवं रोबेस्पेयर के सबसे बड़े शत्रु, कालो-द-हर्बोयस तथा बीयो बारैन से कहा कि अपने निर्दोष होने की सफ़ाई पेश करें। जैसे ही सैं जूस्त ने बोलना प्रारंभ किया वैसे ही विरोधी लोगों की ओर से कोलाहल प्रारम्भ हुआ। परिणाम यह हुआ कि वह तथा उसका गुरू रोबेस्पेयर अपने भाषण समाप्त न कर सके। इस शक्तिशाली षड्यन्त्र तथा विद्रोह के सम्मुख रोबेस्पेयर जैसे व्यक्ति को भी, जो कन्वेंशन, पेरिस के कम्यून तथा जेकोबिन क्लब पर प्रभुत्व स्थापित रखा करता था, पराजय स्वीकार करनी पड़ी। जैसे ही उसका स्वर मन्द पड़ने लगा वैसे ही माउन्टेन का एक सदस्य उच्च स्वर से बोला, "दांतों का रक्त उसका गला घोट रहा है।" इसको सुनकर रोबेस्पेयर ने उत्तर दिया, 'इसका अर्थ है कि तुम दांतों का बदला लेना चाहते हो। कायरों, तब तुमने उसके बचाने का प्रयत्न क्यों नहीं किया था?' इसके पश्चात् 'माउन्टेन' के एक अन्य सदस्य ने उसकी गिरफ्तारी का प्रस्ताव उपस्थित किया। यह प्रस्ताव तत्क्षण स्वीकार कर लिया गया। अत: वह सैं जूस्त तथा कूतों के साथ पकड़लिया गया। उसके छोटे भाई आगस्टन तथा सुरक्षा समिति के सदस्य लेबास ने भी स्वयं को पकड़वा दिया। उसके जो मित्र उसकी सहानुभूति में शस्त्र प्रयोग कर सकते थे, उनके विरुद्ध गिरफ्तारी के वारंट निकाल दिये गये। इनमें सबसे प्रधान राष्ट्रीय रक्षा दल का पदाधिकारी हैनरियट था।

इस दीन अवस्था में भी रोबेस्पेयर के कुछ मित्र एवं सहायक ऐसे थे जिन्होंने

उसके बचाने का प्रयत्न किया। जेकोबिन क्लब और पेरिस के कम्यून के सदस्य इस बात को खूब जानते थे कि यदि रोबेस्पेयर वध कर दिया जायेगा तो उनकी भी रक्षा न हो सकेगी। अतएव उन्होंने इस बात का निर्णय किया कि किसी न किसी प्रकार से उसे मृत्यु के मुख से बचा लिया जाय। उस दिन कम्यून में सन्ध्या के समय कई विफल प्रस्ताव स्वीकृत किये गये। इसके पश्चात् उसकी एक कार्यकारिणी समिति समस्त रात्रि इस विषय पर विचार करती रही। उस दिन सन्ध्या के सात बजे जेकोबिन क्लब ने भी इस बात का निर्णय किया कि इस महत्वपूर्ण विषय पर विचार करने के हेतु उसका अधिवेशन भी समस्त रात्रि होगा। किन्तु भाषण तथा वादविवाद का समय बीत चुका था। यदि रोबेस्पेयर तथा उसके साथी बचाये जा सकते थे तो केवल सैनिक शक्ति के बल पर बचाये जा सकते थे। २ जून सन् १७६३ ई० की भांति २८ जौलाई सन् १७६४ ई० का अंतिम निर्णय भी राष्ट्रीय रक्षा दल के हाथ में था। पेरिस में जेकोबिन क्लब के नेतागण अपने आर्थिक प्रबन्ध तथा नित्य के रक्तपात के कारण पर्याप्त अपकीर्ति कमा चुके थे। तथापि उसके निवासियों के हृदयों में उनके लिये सहानुभूति शेष थी। कम्यून की ओर से भी लोग क्रुद्ध थे। कारण यह था कि उसकी ओर से हाल ही में मजदूरी की दरों की एक तालिका प्रकाशित की गई थी जो सर्वसाधारण के विरुद्ध थी। उसके कुछ सदस्य भी ऐसे थे जो विभिन्न वस्तुओं का मूल्य निर्धारित हो जाने के कारण अपने ग्राहकों अथवा चाकरों के द्वारा अनुचित लाभ उठा रहे थे। ऐसी परिस्थिति में सेक्शनों ने पूर्ण रूप से कम्यून का साथ न दिया। ६ थर्मीदोर की सन्ध्या को केवल २७ सेक्शनों ने कम्यून से यह ज्ञात किया कि उन्हें क्या करना है एवं उनमें से भी केवल १३ ने उसकी सहायता के लिये सैनिक दल भेजे। इनमें से कई दक्षिण तथा पूर्व के सेक्शन थे जहां श्रमजीवियों की संख्या अधिक थी। शेष २१ सेक्शन बिल्कुल अकर्मण्य रहे। इनमें कुछ ऐसे भी थे जहां मध्यवर्ग के प्रतिष्ठित व्यक्तियों का प्रभाव अधिक था। उन्होंने कम्यून का साथ नहीं दिया। इसके प्रतिकूल वे इस बात की प्रतीक्षा करते रहे कि सुयोग प्राप्त होते ही कन्वेंशन की ओर से युद्ध की घोषणा कर दी जाय।

रोबेस्पेयर के बचाने का प्रयत्न

सन्ध्या को सात बजे कन्वेंशन का दूसरा अधिवेशन हुआ। नगर की बिगड़ती हुई दशा को देखकर उसके सदस्यों के होश उड़ गये। उन्हें इस बात की कभी आशा न थी कि कुछ घंटों की देरी में समस्या इतनी गम्भीर हो जायेगी। दोपहर की विजय संध्या की पराजय में परिवर्तित होती हुई दिखाई दे रही थी। कम्यून की आज्ञा से रोबेस्पेयर एवं उसके साथी मुक्त कर दिये गये थे। अब वे

ओतेल-द-वील में विद्रोह की अग्नि प्रज्वलित कर रहे थे। राष्ट्रीय रक्षा दल का अधिकारी हैनरियट भी गिरफ्तारी के पश्चात् स्वाधीन कर दिया गया था। कई सेक्शनों के सदस्य विद्रोह के लिये तत्पर थे। ऐसी अवस्था में कन्वेंशन के सदस्यों ने वीरता तथा बुद्धिमानी से काम लिया। उन्होंने तत्काल रोबेस्पेयर तथा उसके साथियों के विरुद्ध आज्ञा निकाल कर उन्हें ग़ैर-क़ानूनी निश्चित कर दिया। इसका यह अर्थ था कि कोई भी व्यक्ति उनको देखते ही बन्दी बना सकता था तथा बिना किसी वैधानिक कार्यवाही के उनका वध भी कर सकता है। इस गम्भीर परिस्थिति के कारण जो सैनिक दल कम्यून की सहायता के लिये आये थे वे सब लौट गये। सेक्शनों के जो निवासी किंकर्तव्य विमूढ़ थे, वे सब शासन के पक्ष में होगये। कम्यून की कार्यपालिका जिसमें रोबेस्पेयर आदि उन्मुक्त लोग भी बैठे थे समस्त रात्रि घोषणायें तथा आदेश प्रकाशित करती रही तथा गिरफ्तारी के आज्ञापत्र भी निकालती रही, किन्तु उसका कोई प्रभाव न हुआ।

रोबेस्पेयर एवं उसके साथियों का बलिदान २८ जौलाई १७९४

रात्रि के दो बजे बारास तथा उसके सैनिकों ने ओतेल-द-वील में प्रवेश किया। उनको देखकर हैनरियट तथा रोबेस्पेयर के भाई ने खिड़की द्वारा भागने का प्रयत्न किया, किन्तु वे घायल हो गये तथा बन्दी बना लिये गये। बेचारे कूतों ने, जिसकी टांगें गठिया के कारण बेकाम सी हो गई थीं, ज़ीने के रास्ते से भागने का प्रयत्न किया, किन्तु वह पकड़ लिया गया। शेष लोग कार्यपालिका के कमरे में थे, किन्तु उनके वेष भिन्न थे। लबा ने आत्महत्या कर ली थी। रोबेस्पेयर एक मेज़ पर पड़ा हुआ था। उसका जबड़ा बुरी तरह घायल था। ऐसा प्रतीत होता था कि उसने भी आत्महत्या का प्रयत्न किया था, किन्तु वह सफल न हुआ था। सैं ज्यूस्त अच्छी अवस्था में था तथा गिरफ्तारी के लिये बिल्कुल तैयार था। समीप के कमरे से, जहां कम्यून का अधिवेशन हुआ करता था, उसके ६० सदस्य बन्दी कर लिये गये। इसी रात को पुलिस के दस अधिकारी बन्दी किये गये। इसके पश्चात् दो तीन दिन के अन्दर रोबेस्पेयर के दल के शेष सदस्य भी पकड़ लिये गये। जिस गैओतीं ने २७ जौलाई को रोबेस्पेयर के ४५ विरोधियों को मौत के घाट उतारा था, उसी गैओतीं ने २७ तथा २८ जौलाई को उसके दल के ८३ व्यक्तियों के शीश उतार लिये। जनता के जिस समूह ने बिना किसी विरोध तथा आपत्ति के हैबर तथा दांतों को समाप्त होते देखा था उसी ने शान्तिपूर्वक रोबेस्पेयर के बलिदान का दृश्य भी देखा। क्रांति के युग में ऐसा ही हुआ करता है।

रोबेस्पेयर तथा उसके साथियों के वध के पश्चात् आतंक तथा रक्तपात का शासन समाप्त हुआ। जिस उद्देश्य से आतंकपूर्ण शासन स्थापित किया गया था,

वह सिद्ध हो गया था। फ्रांस की राज्यक्रांति में सफलता प्राप्त हो चुकी थी। उसं जो सुन्दर परिणाम विद्यमान थे उनको कोई भी फ्रांस से पृथक नहीं कर सकत था। विदेशी सेनाओं के सम्मुख भी फ्रांसीसी सेनाओं को सफलता प्राप्त हो चुव थी। विदेशों की सेनायें न केवल फ्रांस की सीमा से हटा दी गई थीं, वरन् उसव सेनायें दूसरे देशों में भी प्रवेश कर चुकी थीं अथवा प्रवेश करने का प्रयत्न क रहीं थीं। सब से प्रकट बात यह थी कि कन्वेंशन तथा कम्यून के बीच जो संघ हुआ था, उसमें प्रथम को विजय उपलब्ध हो चुकी थी। इसका यह अर्थ था कि फ्रां अथवा उसके निर्वाचित सदस्यों ने पेरिस अथवा उसके निर्वाचित सदस्यों पर विज प्राप्त कर ली थी। फ्रांस की राज्यक्रांथि के युग में प्रथम अवसर पर सर्वसाधारः की सहायता के अतिरिक्त भी फ्रांस की निर्वाचित सभा पर प्रभुत्व स्थापित कर में असफलता प्राप्त हुई थी। ऐसा अनुभव इससे पूर्व कभी नहीं हुआ था। अ कन्वेंशन के सदस्य स्वयं पर पहले की अपेक्षा अधिक भरोसा कर सकते थे। अत रोबेस्पेयर की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने शीघ्र ही इस बात का प्रबन्ध किया वि जो सफलता उन्होंने प्राप्त की थी, वह विफल सिद्ध न हो। उन्हें इस बात का भः था कि जिस अन्धकार को उन्होंने दूर किया था, वह कहीं लौटकर न आ जाय; जि गौरवपूर्ण प्रकाश कीवे आकांक्षा कर रहे थे, वह कहीं अकस्मात लोप न हो जाय।

थर्मीदोर की सफलता वास्तव में कन्वेंशन के उदार दल की सफलता थी उसी की सहायता से रोबेस्पेयर तथा उसके साथियों का अन्त किया गया था

नये युग का प्रकाश

अब उन्होंने फ्रांस में एक नवयुग के लाने का पूर्ण प्रयत्न किया यदि सत्य पूछिये तो यह कोई नया युग न था। कारण कि शासन वे जिस प्रजातन्त्रीय सिद्धान्त पर थर्मीदोर के पश्चात् कार्य किया गय था, वह एक पुरातन सिद्धान्त था। यह वही सिद्धान्त था जिस प जिरोंदिन तथा जेकोबिन दलों के पारस्परिक विद्वेष के पूर्व, कार्य किया जा चुक था। कन्वेंशन के सदस्यों ने उस युग प्रवाह को नमस्कार किया जिसका सबसे बड़ गौरव परस्पर की फूट और नित्य प्रति की हत्यायें तथा रक्तपात था। उसके स्थान पर उन्होंने प्रभात की उस प्रकाशमय किरण का आवाहन किया जिसके बल प फ्रांस के निवासी अपने नित्य प्रति के कार्यों में बिना किसी प्रकार के भय के संलग्न रह सकते थे तथा विदेशों में ख्याति प्राप्त कर सकते थे। लोक रक्षा समिति तथ सुरक्षा समिति का शासन, जो एकाशास्तृत्व के आधार पर था एवं जिसके कारण कन्वेंशन के सदस्यों को बहुधा शांत रह जाना पड़ता था, समाप्त कर दिया गया उनकी शक्ति को कम करने के उद्देश्य से यह क़ानून तुरन्त बना दिया गया कि उनका कोई भी सदस्य अपने पद पर ४ माह से अधिक नहीं ठहर सकता और

उनके काम में धारा सभा की एक समिति भी भाग लिया करेगी। प्रथम में जो स्थान रिक्त हुये थे उन पर थर्मीदोर के वे मनुष्य सुशोभित किये गये जिनके सिर पर सफलता का मुकुट था। १० अगस्त को परेरियल का विधान भी समाप्त कर दिया गया तथा क्रांतिकारी न्यायालय के अधिकार पूर्ण रूप से सीमित कर दिये गये। अगस्त के अन्त में पेरिस के कम्यून को भी समाप्त कर दिया गया। उसका कार्य समितियों तथा कमिश्नरों के अधीन कर दिया गया। नवम्बर में जेकोबिन क्लब भी बन्द कर दिया गया। जो उल्टी हवा चल रही थी, वह न केवल रोबेस्पेयर के दल विशेष के विरुद्ध थी वरन् समस्त जेकोबिन दल के विरुद्ध थी। सितम्बर के मास में कार्लो-द-हर्बोयस तथा बीयोवारेन जो उक्त दल के दो महान नेता थे, लोक रक्षा समिति में सम्मिलित होने से वंचित कर दिये गये। माउन्टेन के अवशेष सदस्यों के हाथ से भी शासन का कार्य ले लिया गया। जिरोंदिन दल के ७३ सदस्य, जो कन्वेंशन के सदस्य होने के अतिरिक्त भी बन्दी कर लिये गये थे, सितम्बर के मास में मुक्त कर दिये गये तथा उन्हें कन्वेंशन में पुन: आमन्त्रित कर लिया गया। इसी प्रकार मार्च सन् १७६५ ई० में उपरोक्त दल के अवशेष नेता अर्थात् लौंज्हूयेने तथा इसनार आदि को उसमें बैठने की आज्ञा दी गई। पेरिस के निवासी बन्दियों की गाड़ियों अथवा गेओर्ती का दृश्य देखने के स्थान पर पुराने दृश्य पुन: देखने लगे। जो मनुष्य अपराधी होने के सन्देह में कारागृहों में बन्द कर दिये गये थे, वे सब छोड़ दिये गये। मध्यम श्रेणी के लोग सोचते थे कि हमारे लिये आशापूर्ण समय फिर लौट आया है।

कन्वेंशन के कुछ कार्य ऐसे थे जिनसे सर्वसाधारण को संतोष न हुआ था। उसने चर्च एवं शासन को एक दूसरे से बिल्कुल पृथक करके (सितम्बर सन् १७६४ ई०) एवं धार्मिक स्वतन्त्रता की घोषणा करके

ह्वेयरमीनाल का विद्रोह (फर्वरी सन् १७६५ ई०) धार्मिक समस्या का हल *(अप्रैल १७९५ ई०)* तो निकाल लिया था, किन्तु उसने शिक्षा के सुधार की ओर बिल्कुल ही ध्यान न दिया था। फर्वरी सन् १७६५ ई० में शिक्षा समिति के अध्यक्ष जोज़ेफ़ लेकनल (Joseph Lakanal) ने प्राथमिक शिक्षा की एक योजना बनाई थी, किन्तु कन्वेंशन के सदस्यों ने उसकी ओर किंचित मात्र भी ध्यान न दिया। वास्तव में वे थर्मीदोर के पश्चात् सर्वसाधारण की आवश्यकताओं की ओर उदासीन से हो गये थे। शासन की ओर से काग़ज़ी नोट (Assignats) लाखों की संख्या में वितरण किये जा रहे थे। अतः उद्योग धन्धों की बिगड़ी हुई दशा पहले से भी अधिक बिगड़ गई थी। सर्वसाधारण की निर्धनता तथा बुरी अवस्था के कारण जेकोबिन दल में पुन: स्फूर्ति आने लगी

एवं कारिये जैसे व्यक्ति को जिसने नैन्तूस में अगणित व्यक्तियों को ठिकाने लगा दिया था, राष्ट्रीय योद्धा का पद दिया जाने लगा। यह देखकर शासन ने नवम्बर मास में, जैसा कि वर्णन कर चुके हैं, जेकोबिन क्लब को बंद करा दिया एवं कारिये को गेओर्ती की भेंट कर दिया। किन्तु उसने सर्वसाधारण की करुण दशा में सुधार करने की कोई व्यवस्था न की। इसके प्रतिकूल उसने दिसम्बर के मास में वस्तुओं के मूल्य की तालिका को, जो पहले बनाई गई थी, स्थगित कर दिया। इस से जनसाधारण को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। इसका एक कारण यह भी था कि सन् १७६४-१७६५ ई० की शीत ऋतु बड़ी ही कठोर प्रमाणित हुई थी। इस प्रकार की कठिनाइयों से वाध्य होकर जनता ने राजधानी में अप्रैल सन् १७६५ ई० में पुराने ढंग का विद्रोह किया, जिस से पेरिस के निवासी भली भांति परिचित थे। यह विद्रोह क्रांतिकारी कलैंडर के अनुसार जेर्मीनाल का विद्रोह कहलाता है। जनता की दो मांगें थीं—अन्न और सन् १७६३ ई० का संविधान। विद्रोह का रूप नाम मात्र के लिए भी भयानक न था। हालैंड के विजेता सैनिक अधिकारी पीशगुरु (Pichegru) की सहायता से विद्रोह सरलता से दबा दिया गया। सर्वसाधारण के सामने कन्वेंशन को पुन: विजय प्राप्त हुई थी। अत: उन्होंने जेकोबिन दल तथा आतंकपूर्ण शासन के शेष सदस्यों से कठोरता का व्यवहार किया। उनमें से कुछ देश से निर्वासित कर दिये गये अथवा गेओर्ती के द्वारा वध कर दिये गये। अन्त में सरकारी वकील फौके तिनविल (Fouquier-Tinville) की भी बारी आई। उसने सैकड़ों व्यक्तियों को मौत के मुंह में ढकेल दिया था। राष्ट्रीय रक्षा दल का संगठन इस प्रकार किया गया कि वह सरलता से मध्य वर्ग के लोगों की रक्षा कर सकता था। जो लोग इस समय तक गेओर्ती पर भेंट चढ़ा दिये गये थे, उनकी सम्पत्ति उनके सम्बन्धियों को लौटा दी गई।

परेरियल का विद्रोह (मई सन् १७९५ ई०)

क्रांतिकारी कलैंडर के परेरियल मास अर्थात् मई सन् १७६५ ई० में शासन को एक नये विद्रोह का सामना करना पड़ा। उसके सृष्टा भी जेकोबिन क्लब के लोग थे। यह विशेष रूप से राजनैतिक उद्देश्य को दृष्टिकोण में रख कर किया गया था। वह अधिक भयंकर भी प्रमाणित हुआ। विद्रोहियों ने कन्वेंशन के अधिवेशन भवन में प्रवेश करके एक सदस्य के प्राण ले लिये तथा अधिकों को भाग जाने के लिए विवश किया। फिर वे 'माउण्टेन' की सहायता से इस बात का प्रयत्न करने लगे कि कुछ ऐसे क़ानून निर्मित किये जाँय जिनसे घड़ी की सुई उल्टी घूमने लगे तथा फ्रांस का शासन सन् १७६३ ई० तथा १७६४ के सिद्धान्तों के अनुसार संगठित किया जाय। इस अवसर पर राष्ट्रीय रक्षा

दल के स्थान पर सरकारी सेनाओं ने, मेनो (Menou) तथा मूरा (Murat) के सेनापतित्व में कन्वेंशन की सहायता की। विद्रोही बिना किसी आपत्ति के बाहर कर दिये गये तथा भविष्य के लिए सुरक्षा का उचित प्रबन्ध कर दिया गया। 'माउण्टेन' के जिन व्यक्तियों ने विद्रोहियों के कथनानुसार क़ानून बनाने में सहायता की थी, उनके विरुद्ध मुक़दमा चलाया गया। उनमें से कुछ ने आत्महत्या कर ली तथा कुछ गिलोटीन की भेंट कर दिये गये। इस दल के शेष व्यक्ति बन्दी कर लिये गये अथवा अज्ञातवास में रहकर जीवन व्यतीत करने लगे। केवल कारनो स्वतंत्र छोड़ दिया गया। थर्मीडोर के सफल व्यक्तियों में इतना साहस न था कि उस व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करें जिसने फ्रांस को विदेशी युद्ध में विजय उपलब्ध कराई थी। इसी काल में प्रान्तों में, और विशेषकर दक्षिण में, राजतंत्र के पक्षपातियों ने प्रजातन्त्रवाद के समर्थकों को बड़ी संख्या में वध कर दिया। सन् १७९३ ई० के 'लाल आतंक' (Red Terror) के स्थान पर यह 'श्वेत आतंक' (White Terror) कहलाता है। द्वितीय के द्वारा प्रथम का बदला खूब लिया गया।

१० जून सन् १७९५ ई० को एक घटना ऐसी घटी जिसके कारण फ्रांस के विद्वज्जनों तथा शासन के कर्णधारों को नवीन संविधान के निर्माण की ओर दत्तचित्त होना पड़ा। इस दिन सोलहवें लुई के अल्प वयस्क बालक की मृत्यु बन्दीगृह में हुई। राजपरिवार के हितचिन्तक, जो फ्रांस अथवा विदेशों में थे, उसकी ओर इस आशा से दृष्टि लगाये हुये थे, कि सम्भवत: उसे कभी फ्रांस के राजसिंहासन पर सुशोभित करने में सफल हो-सकें। विशेषकर ऐसी दशा में जब यूरोप के सम्राटों ने

१७९५ का संविधान

राज्यक्रांति के विरुद्ध शत्रुता बन्द न की थी एवं वे निरन्तर तलवार के बल पर बूरबन वंश को लौटा लाने के सुख स्वप्न देखा करते थे। राजकुमार की मृत्यु के कारण अब राजसिंहासन का उत्तराधिकारी सम्राट का भाई काऊंट आफ़ प्रोवांस (Count of Provence) था, जो उसके भागते समय बेल्जियम पहुंच गया था। यही राजकुमार नैपोलियन के पतन के पश्चात् अठारहवें लुई (Louis XVIII) के नाम से फ्रांस के राजसिंहासन पर सुशोभित हुआ। राजकुमार की मृत्यु के समय वह विरोधी सेनाओं की सेवा कर रहा था। अत: वह शत्रु की स्थिति में था। फ्रांस के निवासी, जो राजवंश के पक्षपाती थे, उसे पसन्द न करते थे। ऐसी दशा में यही आवश्यक समझा गया कि लोकतंत्र के आधार पर एक नवीन संविधान निर्मित किया जाय। यह क्रांतिकारी कलैंडर के अनुसार तीसरे वर्ष का संविधान कहलाता है। इसके निर्मित होने से शासन के विषय में भ्रम दूर हो गया तथा बहुत से लोग जो उसके विरुद्ध रहा करते थे, उसके शुभचिन्तक हो गये। उक्त

संविधान साधारण परिवर्तनों के साथ सन् १७९९ तक संचालित रहा। इस वर्ष नैपोलियन बोनापार्ट ने उसे स्थगित कर दिया।

जैसा कि बतलाया गया है, नया संविधान लोकतंत्र के सिद्धान्त पर बनाया गया था। उसके प्रारम्भिक भाग में मानवी अधिकारों के साथ साथ मनुष्य के कर्तव्यों पर भी प्रकाश डाला गया है। यह एक बिल्कुल नई बात थी। परन्तु मत दान के लिये निवास स्थान तथा कर अदा करने का प्रतिबन्ध रक्खा गया था। अतएव बहुत कम लोग इस आवश्यक अधिकार से लाभ उठा सके। लोकतंत्रीय रूप रखते हुये भी नवीन संविधान में किसी प्रकार के अध्यक्ष (President) अथवा कौंसल (Consul) को स्थान नहीं दिया गया था। इसका कारण यह था कि फ्रांस के निवासी एकशास्ताओं की ओर से डरे हुये थे। वे इस बात को सहन न कर सकते थे, कि फ्रांस का अध्यक्ष अथवा कौंसल एकशास्ता का रूप ग्रहण कर ले। अतः शासन का सर्वोच्च अधिकार पांच संचालकों की सभा (Directory) को प्रदान किया गया। ये लोग पांच वर्ष तक अपने पद पर सुरक्षित रह सकते थे, किन्तु प्रति वर्ष उनमें से एक का हट जाना आवश्यक था। उनका निर्वाचन विधान मंडल की ओर से होता था। यह फ्रांस की कार्यपालिका का सर्वोच्च अंग था। अतएव संचालकों को अधिकार था कि वे शासन के मन्त्रिमण्डल का निर्माण करें। वे इस बात पर भी दृष्टि रखते थे कि क़ानून का पालन उचित रूप से होता है अथवा नहीं। क़ानून बनाने के लिए भी एक के स्थान पर दो सभायें रक्खी गई थीं। फ्रांसीसी राज्यक्रांति के समय में ऐसा पहली बार हुआ था। विशेषतः सन् १७९० ई० में तो दूसरी सभा का विचार बिल्कुल ही त्याग दिया गया था। सन् १७९५ ई० के संविधान के निर्माता इस बात से भयभीत थे कि कहीं कुछ लोग एक मत होकर उसे समाप्त न कर दें अथवा आतंकपूर्ण शासन फिर से स्थापित न कर दिया जाय। अतएव उन्होंने शासन के अधिकारों को एक सभा में सीमित न करके कार्यपालिका तथा दो अंगी विधान मण्डल में विभाजित कर दिया था। विधान मण्डल में दो सभायें थीं। एक ५०० सदस्यों की सभा (Council of Five Hundred) थी। यह क़ानूनों के सम्बन्ध में प्रस्ताव उपस्थित करती थी। दूसरी वृद्ध जनों की सभा (Council of Ancients) थी, जिसमें २५० सदस्य बैठते थे तथा जिसका मुख्य कार्य पहली सभा के प्रस्तावों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करना था। किन्तु उसकी अस्वीकृति की अवधि केवल एक वर्ष रक्खी गई थी। प्रथम सभा के सदस्यों के लिए ३० वर्ष की आयु तथा दूसरी सभा के सदस्यों के लिये ४० वर्ष की आयु का प्रतिबन्ध था। ये सभायें अपने अधिवेशन पेरिस के अतिरिक्त अन्य स्थानों में भी कर सकती थीं। प्रकट है कि सभाओं को यह स्वतंत्रता

इस कारण दी गई थी कि वे पेरिस के सर्वसाधारण के दूषित प्रभाव से दूर रह सकें। उपरोक्त संविधान की एक शर्त यह थी कि विधान मंडल के सदस्यों में से एक तिहाई प्रति वर्ष हट जाया करेंगे एवं प्रारम्भ में जब उनका निर्वाचन किया जायेगा तो उनके दो तिहाई सदस्य कन्वेंशन से लिये जायेंगे। बहुत से लोग अंतिम प्रतिबन्ध के पूर्णतया विरोधी थे। उनके विरोध ने शीघ्र ही भयानक रूप धारण कर लिया।

सन् १७९५ ई० के संविधान के अधीन स्थानीय शासन में भी परिवर्तन किये गये। इसके पूर्व फ्रांस डिपार्टमेंटों तथा ज़िलों में विभाजित था। उनके नीचे अगणित कम्यून थे। इनकी संख्या ४० हज़ार से कुछ ही कम होगी। नवीन संविधान से प्रत्येक डिपार्टमेंट में संचालक मंडल के ढंग पर ५ सदस्यों का एक केन्द्रीय शासन स्थापित किया गया, जिसके सदस्यों का निर्वाचन किया जाता था। किन्तु संचालक उक्त शासनों के निर्णयों को स्थगित कर सकते थे तथा उनको भंग भी कर सकते थे। प्रत्येक डिपार्टमेंट में वहां के शासन की सहायता के लिये एक विशेष अफ़सर रहता था जो वहां के निवासियों से लिया जाता था। वह भी संचालक मंडल के अधीन था। सन् १७९० ई० के ज़िले हटा दिये गये। अतएव डिपार्टमेंट के शासन एवं कम्यूनों के बीच किसी प्रकार की रुकावट न रही। इस तरह उनका सम्बन्ध एक दूसरे से सीधा हो गया। ग्रामों के कुछ कम्यून इतने छोटे थे कि वे अपनी ओर से कोई कार्य नहीं कर सकते थे। इसके विरुद्ध कुछ कम्यून इतने बड़े थे कि वे हानिकारक सिद्ध हो सकते थे। अतएव स्थानीय शासन की एक नवीन संस्था को जन्म दिया गया जो केन्टन (Canton) कहलाती थी। इसका अस्तित्व छोटे कम्यूनों को सम्मिलित करके तथा बड़े कम्यूनों को सीमित करके हुआ था। इस प्रकार फ्रांस में पूर्ण रूप से केन्द्रीय शासन की स्थापना हो गई।

सन् १७९५ ई० के संविधान के निर्माताओं ने प्रत्येक प्रकार की सावधानी तथा दूरदर्शिता से काम लिया था। तथापि उसमें कई दोष रह गये थे। उसके

वैंदेमियर का विद्रोह, अक्टूबर १७९५ ई०

दो तिहाई सदस्यों वाले प्रतिबन्ध के कारण ५ अक्टूबर सन् १७९५ ई० को एक विद्रोह हुआ, जो क्रांतिकारी कलैंडर के वैंदेमियर (Vendemiaire) के मास में घटित होने के कारण इसी नाम से प्रसिद्ध है। उपरोक्त प्रतिबन्ध इसलिए सम्मिलित कर दिया गया था कि निर्वाचन के समय राजतंत्र के पक्षपाती बड़ी संख्या में सफल न हों। किन्तु इससे लोगों ने यह परिणाम निकाला कि कन्वेंशन अपने शासन को कम से कम कुछ समय के लिये स्थापित रखना

चाहता है। वे यह भी सोचते थे कि नये निर्वाचनों से कम से कम कुछ समय तक कार्यप्रणाली में कोई परिवर्तन न हो सकेगा। जेकोबिन, जिरोंदिन तथा राजतंत्र के पक्षपाती सभी उपरोक्त प्रतिबन्ध के विरुद्ध थे। ऐसी दशा में पेरिस के सम्पन्न सेक्शनों ने कन्वेंशन पर आक्रमण करने का प्रबन्ध किया। कन्वेंशन की ओर से भी काफ़ी प्रबन्ध था। शासन ने अपनी सहायता के लिये बारास को नियत किया था। उसने अपनी सहायतार्थ नैपोलियन बोनापार्ट को, जो कुछ समय पूर्व तूलों के घेरे के सम्बन्ध में पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका था, बुला लिया था। ५ अक्टूबर को जब कन्वेंशन पर आक्रमण किया गया तो नैपोलियन ने अपनी तोपें दाग़ कर विद्रोहियों को बात की बात में तितर बितर कर दिया। जो संघर्ष हुआ था उसके विषय में बहुत कुछ बढ़ाकर लिखा गया है। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उस दिन विद्रोहियों की ओर से एक सौ व्यक्तियों से कुछ ही कम रण में खेत रहे थे। वँदेमियर के विद्रोह का महत्व यह है कि केन्द्रीय शासन ने सर्वसाधारण पर पुनः विजय प्राप्त की थी और अबकी बार तो विद्रोहियों पर सरलता से प्रभुत्व स्थापित कर लिया गया था। जनसाधारण के नाम में अब वह आकर्षण शेष न था जो पहले सब लोगों को चकित कर दिया करता था। पहले वे घटनाचक्र पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाला करते थे, किन्तु अब उनका राजनैतिक महत्व समाप्त हो गया था। उपरोक्त विद्रोह का दूसरा महत्व यह है कि उसने नैपोलियन बोनापार्ट के उत्कर्ष में प्रकट रूप से सहायता पहुंचाई। इसके पश्चात् वह गृह सेना का सेनापति बनाया गया। इस प्रकार उसने अभ्युदय व उन्नति की उस सीढ़ी पर क़दम रखना प्रारम्भ किया जिसने उसको एक दिन फ्रांस के राजसिंहासन पर सम्राट के रूप में सुशोभित कर दिया।

२६ अक्टूबर सन् १७६५ ई० को कन्वेंशन अथवा प्रसभा समाप्त हो गई। इतिहास में उसके समान किसी अन्य निर्वाचित सभा ने महत्व प्राप्त नहीं किया। यदि उसकी समता हो सकती है तो केवल इंग्लैंड की दीर्घ पार्लमेंट (१६४०—१६५३) से हो सकती है।

इस अध्याय को हम युद्ध सम्बन्धी सफलताओं पर दृष्टि डाले बिना समाप्त नहीं रह सकते। उक्त सफलताओं का जो क्रम जौलाई सन् १७६३ ई० में प्रारम्भ हुआ था, वह सन् १७६३ ई० तथा १७६४ ई० की भांति सन् १७६५ ई० में भी चलता रहा। १ जून सन् १७६४ ई० के जल युद्ध के एक वर्ष पश्चात् अर्थात् जौलाई सन् १७६५ ई० में अंगरेज़ों ने भागे हुये कुलीनों की सहायता से एक सेना उत्तरी-पश्चिमी तट पर केब्रों की खाड़ी में उतार दी, किन्तु सेनापति फ़ूशे ने उसे आगे न बढ़ने दिया।

युद्ध की स्थिति

वौंदे के विद्रोही, जिनसे शत्रु को अधिक सहायता मिली थी, बड़ी संख्या में वध कर दिये गये। इस प्रकार पश्चिम की ओर सफलता के साथ विद्रोह करने के स्वप्न पूर्णतः नष्ट कर दिये गये। स्थल पर भी लगभग सभी स्थानों में फ्रांस की सेनाओं को सफलता प्राप्त हुई। उसकी सफलताओं के प्रमुख कारणों पर हम गत अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं। यहां केवल इतना कह देना काफ़ी होगा कि सन् १७६५ ई० में उसके विजयी होने का सबसे प्रमुख कारण आस्ट्रिया तथा प्रशा की पारस्परिक प्रतिद्वन्दिता थी। इस वर्ष अप्रैल के महीने में प्रशा ने फ्रांस से बाल (Basel) की सन्धि कर ली। इसकी कुछ शर्तें गुप्त रक्खी गई थीं और कुछ प्रकट थीं। उनके अनुसार फ्रांस ने राइन नदी के पश्चिमी प्रदेश पर अधिकार कर लिया। उसने इस बात का भी वचन दिया कि वह उत्तरी जर्मनी में युद्ध न करेगा एवं जब आवश्यकता होगी तब जर्मन रियासतों से प्रशा के द्वारा वार्तालाप करेगा। उक्त संधि का दूसरे देशों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा। इसी वर्ष मई के मास में हालैंड ने एवं जौलाई के मास में स्पेन ने फ्रांस से सन्धि कर ली। प्रथम देश ने प्रत्येक प्रकार से स्वयं को फ्रांस के अधीन कर लिया एवं अंगरेज़ों के विरुद्ध सहायता देने का वचन भी दिया। दूसरे देश ने फ्रांस को पश्चिमी द्वीपसमूह में सान डोमिंगो (San Domingo) का द्वीप दिया एवं अन्य अधिकार देने का वचन भी दिया। अब प्रथम संघ के देशों में केवल आस्ट्रिया तथा इंग्लैंड दो ऐसे बड़े देश थे जिन्होंने युद्ध बन्द करने की घोषणा न की थी। फ्रांसीसी गण-राज्य की इन अतुलनीय सफलताओं को देखकर, जिनका उल्लेख इस अध्याय में तथा गत अध्याय में किया गया है, बड़ा आश्चर्य होता है। सन् १७६२ तथा १७६३ ई० में लोगों का विचार था कि उसका अन्त शीघ्र ही हो जायेगा। परन्तु सन् १७६५ ई० तक उनकी धारणा बदल गई थी। अब वे इस परिणाम पर पहुंचे कि वास्तव में यूरोप में एक विशाल शक्ति का उदय हुआ है, जो किसी समय भी अन्य देशों के लिये संकट का विषय बन सकती है।

बीसवां अध्याय

फ्रांसीसी क्रांति की अमूल्य भेंट

नैपोलियन बोनापार्ट

जेकोबिन दल के नेता रोबेस्पेयर की हत्या (२८ जौलाई, १७९४ ई०) से फ्रांस में उग्रवादियों का पल्ला अधिक कमज़ोर हो गया था और घड़ी की सुई का सहसा उल्टा घूमना आरम्भ होगया था। संचालकों के पदासीन होने का यह आशय था कि भविष्य में उदार दल वालों का बोल बाला होगा। उनके पदासीन किये जाने का वास्तविक अभिप्राय यह था कि किसी दशा में भी राजतंत्र अथवा अराजकता वापस न आ सके। ये दोनों बातें ऐसी थीं जिनके लोग पूर्ण रूप से विरुद्ध थे। अन्य दिशाओं में भी उन्हें तत्कालीन शासन से यथेष्ट आशायें थीं, परन्तु संचालक अपने पद पर अधिक समय तक आसीन न रह सके। इसके दो विशेष कारण थे। प्रथम यह कि वे राजनीतिज्ञों की द्वितीय श्रेणी के लोग थे। दूसरे यह कि फ्रांस पर विदेशी आक्रमण की आशंका का अन्त नहीं हुआ था। इसमें सन्देह नहीं कि बारास के अतिरिक्त सभी संचालक अपने कर्तव्य का पालन बड़े विवेक, धैर्य तथा उदार हृदय से करते थे, परन्तु वे राज्य की विषम समस्याओं को हल करते समय उस दूरदर्शिता तथा मतैक्यता से कार्य नहीं कर सकते थे जिसकी उस समय विशेष आवश्यकता थी। सबसे अधिक प्रसिद्ध संचालक कारनो था, जिसने सैनिक प्रबन्ध को अपने हाथ में लेकर शत्रु के मुक़ाबले में विजय प्राप्त की थी। फ्रांसवासी उसका बड़ा सम्मान करते थे। इसके विपरीत बारास अपनी विलासता और बेईमानी के लिये मशहूर था। प्राय: यह भी होता था कि संचालकगण आपस में झगड़ा कर बैठते और तत्कालीन समस्याओं की ओर से उदासीन से हो जाते थे।

संचालकवर्ग की दुर्बलतायें

इस समय तक मनुष्यों के हृदयों में क्रांति की उत्तेजना, जिसने उन्हें अन्धा बना दिया था, बिल्कुल समाप्त हो चुकी थी। अब वे शान्ति एवं सुरक्षा के इच्छुक थे। श्रमजीवी चाहते थे कि उन्हें काम मिले और उसके साथ जीवन निर्वाह के हेतु पर्याप्त मज़दूरी। किसान भूमि के इच्छुक थे। इसके अतिरिक्त वे यह भी चाहते थे कि अराजकता की इतिश्री हो जाय। व्यापारी वर्ग भी शान्ति तथा व्यवस्था चाहते थे जिससे वे अपने कार्यों में बिना किसी विघ्न के संलग्न हो सकें। इसके विपरीत फ्रांस में हज़ारों सैनिक तथा युद्ध के प्रेमी भी थे, जिनकी हार्दिक इच्छा थी कि सरकार विदेशी युद्ध को महत्ता दे। संचालकों ने सब प्रकार के मनुष्यों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया, परन्तु कहीं ऐसा सम्भव हो सकता था? कई बार विद्रोह हुये। उनका ज्वलन्त उदाहरण वैंदेमियर के विद्रोह का है, जिस पर हम गत अध्याय में समुचित प्रकाश डाल चुके हैं। यह विद्रोह नैपोलियन की सहायता से सहज ही में "बारूद के छर्रे उड़ा कर" समाप्त कर दिया गया था। संचालकों को आर्थिक कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा। इसके फलस्वरूप वे सदैव चिन्तित व दुखी रहते थे। आमदनी की कमी और दिन प्रति दिन बढ़ते हुये ऋण के कारण उनकी नींद जाती रही थी। कर्ज़ की एक रक़म ऐसी भी थी जिसको स्वीकार करने से सरकार ने साफ़ इन्कार कर दिया था। उन्होंने दो तिहाई गृह ऋण भी स्थगित कर दिया था। इस भांति सरकार को कुछ समय के लिए शान्ति प्राप्त हो गई थी। परन्तु इस प्रकार के आपत्तिजनक कार्यों से साहूकारों तथा जनता का विश्वास समाप्त हो गया था। दूसरी ओर विदेशी युद्ध से मुक्ति प्राप्त करना भी कठिन प्रतीत होता था। फ्रांस ने बेल्जियम को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया था (सन् १७६५ ई०)। अतएव किसी समय भी इंग्लैंड से पुनः युद्ध आरम्भ हो सकता था।

एकशास्ता का आगमन

संचालक मंडल (१७६५–१७६६) की कमज़ोरियों और अयोग्यता के कारण इस बात का डर था कि कहीं क्रांति के समय की अशान्ति तथा कुव्यवस्था पुनः स्थापित न हो जाय। इस बात की परम आवश्यकता थी कि फ्रांस में एक सुदृढ़ शासन स्थापित किया जाय, जो देश में शान्ति एवं सुरक्षा स्थापित करने के अतिरिक्त उसके विदेशी प्रतिपक्षियों का सामना भी सफलतापूर्वक कर सके। इस प्रकार वहां नैपोलियन बोनापार्ट जैसे योग्य तथा शक्तिशाली मनुष्य का पदासीन होना केवल सरल ही नहीं वरन् आवश्यक हो गया था। अन्य देशों का इतिहास भी इस सम्बन्ध में यथेष्ट प्रमाण उपस्थित करता है। रोम में सौ वर्ष की कुव्यवस्था तथा क्रांति के पश्चात् जूलियस सीज़र का प्रादुर्भाव हुआ था। इंग्लैंड में प्यूरिटन क्रांति

के उपरान्त शासन की बागडोर ऑलिवर क्रॉम्वेल के हाथों में आ गई थी। इस प्रकार के उदाहरण अन्य देशों से भी दिये जा सकते हैं। इसी प्रकार के कारणों से प्रथम महायुद्ध के पश्चात् यूरोप तथा एशिया के कई देशों में एकशास्ताओं का प्रादुर्भाव हुआ था। जिस बात का परामर्श रूसो ने अपने 'सोशल कन्ट्रेक्ट' में दिया था तथा जिसकी पूर्व सूचना अंगरेज़ राजनीतिज्ञ बर्क ने अपनी अनुपम पुस्तक 'रिफ्लैक्शंस' में दी थी, वह बात अब फ्रांस में घटित होने ही वाली थी। "जब कोई राष्ट्र स्वतन्त्रता के लिए दीवाना होकर महान आन्दोलन करता है तो साधारणतया उसके पश्चात् किसी एकशास्ता को शासन की बागडोर अपने हाथ में लेने का अवसर प्राप्त हो जाता है।" अतएव फ्रांस में सन् १७८९ ई० की राज्यक्रान्ति के पश्चात् नैपोलियन बोनापार्ट का अभ्युदय हुआ।

नैपोलियन का चरित्र तथा आकर्षण

नैपोलियन बोनापार्ट सीज़र, क्रॉम्वेल और इसी प्रकार की अन्य विभूतियों से भिन्न था। वह अपने समय के साहसी वीरों में स्वयं अपना उदाहरण था। जब हम उसका विचार करते हैं तो हमारे सामने विभिन्न प्रकार के दृश्य तथा घटनायें घूमने लगती हैं। ऐसा कौन व्यक्ति है जिसने यूरोप के अर्वाचीन इतिहास का अध्ययन करते समय नैपोलियन के असाधारण उत्कर्ष पर आश्चर्य प्रकट न किया हो? ऐसा कौन व्यक्ति है जिसने उसकी दिल खोलकर प्रशंसा न की हो? इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसके व्यक्तित्व में कुछ दोष ऐसे थे जिनके लिये हम उसे क्षमा नहीं कर सकते। तथापि वह उस निन्दा तथा घृणित अपमान के योग्य कदापि न था जिसका शिकार इंग्लैंड के कुछ इतिहासज्ञों ने उसे बनाया है। इतिहास का ऐसा कौन प्रेमी है जो अर्वाचीन यूरोप के इस सर्वश्रेष्ठ सैनिक तथा विजेता की शारीरिक शक्तियों की प्रशंसा न करता हो? उसका छोटा क़द, गोल तथा सुडौल सिर, चौड़ा ललाट तथा सुन्दर नासिका व होंठ जिन्हें देखते ही बनता था; उसके प्रकाशयुक्त भूरे नेत्र जो कभी कांति बरसाते और कभी विचार विमर्श के अवसर पर आभाहीन हो जाते थे,—ये समस्त विशेषतायें ऐसी हैं जो उनके रखने वालों को प्रेम तथा प्रशंसा का पात्र बनाती हैं। नैपोलियन बोनापार्ट सब स्थानों तथा दशाओं में अपने प्रताप तथा आकर्षण से दूसरों को प्रभावित करता था। बहुधा लोग उसके चित्र को देखकर मोहित हो जाते थे। गण-राज्य के नौजवान सेनापति की स्थिति में जब झंडे को हाथ में लेकर उसने आरकोला के रणक्षेत्र में आक्रमण किया था; सम्राट की स्थिति में जब वह नोत्रदाम के गिर्जे में शानदार वस्त्रों से सुशोभित होकर बलिवेदी पर घुटने टेक कर बैठा था; निराश नेता के रूप में जब वह अपनी थकी हुई सेना के साथ शीतकाल में जीर्ण-शीर्ण अवस्था में रूस

के बर्फीले मैदान से वापस आया था; बंदी की हैसियत में जब वह वाटरलू के युद्ध के पश्चात् निराशापूर्ण दशा में जहाज़ पर बिठा कर सेंट हेलीना के द्वीप को भेजा गया था, इन सब स्थितियों के चित्र यूरोप के अजायबघरों में मौजूद हैं। सब दशाओं में उसके चित्र से एक अनोखी शान टपकती है, जो हम बहुधा अन्य महान् व्यक्तियों के चित्रों में नहीं पाते। संसार में अगणित महान् व्यक्ति तथा सेनानायक हुये हैं, परन्तु कदाचित् ही किसी अन्य व्यक्ति के विषय में इतनी प्रशंसा अथवा अपवाद किया गया हो जितना नेपोलियन के विषय में किया गया है। जब वह जीवित था उस समय भी बहुधा लोग उसके समझने में ग़लती करते थे। उसकी मृत्यु के पश्चात् भी उसके प्रतिपक्षियों ने उसको अपमानित करने में कोई युक्ति शेष नहीं छोड़ी। यूरोप के सर्वश्रेष्ठ वीर के साथ ऐसा अनुचित व्यवहार सरासर अन्यायपूर्ण था। नेपोलियन बोनापार्ट फ्रांसीसी क्रांति की अमूल्य देन था। उसने उपरोक्त क्रांति के मौलिक सिद्धान्तों में संशोधन करके उन्हें आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया था। उसका जीवन इस बात का सब से बड़ा प्रमाण है कि प्रखर मानसिक बुद्धि, राजनीति, व्यवहार कुशलता तथा शासन कला केवल उच्च वंशों में उत्पन्न व्यक्तियों के लिये सुरक्षित नहीं होते। वह सदैव गणतंत्र के इस सिद्धान्त पर ज़ोर दिया करता था कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को योग्यता के अनुसार उन्नति करने का पूर्ण अवसर प्राप्त होना चाहिये। वह स्वयं भी इस क्रांतिकारी सिद्धान्त का देदीप्यमान उदाहरण था। उसकी भांति उसके सेनानायकों ने भी निम्न श्रेणी से उन्नति करके उच्च पद प्राप्त किया था। यदि कोई मनुष्य यह ज्ञात करना चाहे कि किस प्रकार जीवन की कठिनाइयों तथा समय के उलट फेर के विपरीत हम उन्नति के शिखर पर पहुंच सकते हैं, अथवा यह कि मानवीय शौर्य, साहस, दृढ़ संकल्प तथा उत्साह की अन्तिम सीमा क्या हो सकती है, अथवा यदि वह उन शक्तियों को मालूम करना चाहता है जिनकी सहायता से हम आकाश को भी कम्पायमान कर सकते हैं, तो उसे नेपोलियन बोनापार्ट की जीवनी का सांगोपांग अध्ययन करना चाहिये।

नेपोलियन का जन्म कोर्सिका द्वीप के प्रसिद्ध नगर आयाच्चो (Ajaccio) में १५ अगस्त सन् १७६९ ई० को हुआ था। उसके माता पिता होने का श्रेय मेरी लेटीज़िया रेमोलिनो (Marie-Latizia Ramolino) तथा

उसका प्रारम्भिक जीवन

चार्ल्ज़ मेरी बोनापार्ट (Charles Marie Bonaparte) को था। उसके पूर्वजों का प्राथमिक संबंध फ्लोरेंस नगर से था, किन्तु सन् १५२९ ई० से वे इस द्वीप में रहते थे। यहां के प्राकृतिक सौंदर्य एवं मनोरम जलवायु में बोनापार्ट परिवार ने उन्नति करके यहां के

निवासियों के हृदयों में आदरणीय स्थान प्राप्त कर लिया था। उसके वंश के पांच व्यक्तियों को विभिन्न समय में द्वीप की व्यवस्थापिका सभा में बैठने का गौरव प्राप्त हुआ था। नैपोलियन का पिता जो वकालत करता था, रूपवान, बुद्धिवान तथा इटली निवासियों की भांति काव्य एवं सम्भाषण का प्रेमी था। उसकी आमदनी कम थी और खर्च अधिक। अतएव उसे बहुधा आर्थिक कठिनाइयों से पीड़ित होना पड़ता था तथा धनोपार्जन के हेतु विभिन्न उपायों से लोगों को प्रसन्न रखना पड़ता था। नैपोलियन की माता लेटीज़िया सुन्दरता, हावभाव तथा आकर्षण में अद्वितीय थी। जब वह वृद्धा हो गई तब भी वह इन गुणों से सम्पन्न रही। उसने बहुत कम शिक्षा पाई थी। जीवन के अन्तिम काल तक वह फ्रांसीसी भाषा शुद्ध रूप में नहीं बोल सकती थी। वह गृह प्रबन्ध में निपुण थी तथा मितव्ययता पर इतना ज़ोर देती थी कि कुछ लोग उसे कृपण मानते थे। उसने अपने पति के साथ संकटों का सामना बड़े धैर्य से किया था। अतएव उसके चरित्र की विशेषतायें चट्टान की भांति सुदृढ़ तथा न बदलने वाली थीं। एक सराहनीय बात यह थी कि जब उसे फ्रांस के सम्राट की मां बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तब भी उसके चरित्र व स्वभाव में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आया। नैपोलियन के हृदय में उसके प्रति बड़ा आदर था, जो उसके जीवन के अन्तिम समय तक रहा।

अठारहवीं शताब्दी के मध्यकाल में कोर्सिका के निवासी विशेषतया स्वतंत्रता संग्राम में संलग्न थे। पहले उनको जेनोआ के कुत्सित शासन के विरुद्ध और इसके बाद फ्रांस के विरुद्ध युद्ध करना पड़ा। देश की प्राकृतिक दशा बहुत सी बातों में यूनान से समता रखती थी। उसके निवासी भी यूनानियों की तरह पराक्रमी, लड़ाकू तथा परिश्रमी थे। उनका नेता पास्केल पावली (Pasquale Paoli) था, जो स्वतन्त्रता संग्राम में उनका पथप्रदर्शन करने के अतिरिक्त शासन तथा विधान निर्माण के कार्यों में भी उनकी अधिक सहायता करता था। जिस प्रकार यूरोप के प्राचीन इतिहास में यूनानियों ने अपूर्व ख्याति प्राप्त की थी, उसी भांति यूरोप के अर्वाचीन इतिहास में कोर्सिका के निवासी अपने त्याग और साहस के लिये प्रसिद्ध हैं। कोर्सिका में केवल जन्म लेना ही सम्मान तथा गौरव का कारण बन जाता था। इसके सम्बन्ध में रूसो ने सन् १७६२ ई० में यह लिखा था—"मेरा विचार है कि यह छोटा सा द्वीप एक दिन यूरोप को आश्चर्य चकित कर देगा।" वास्तव में उसकी भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई, क्योंकि चालीस वर्ष उपरान्त न केवल यूरोप वरन् संसार के अन्य देश भी नैपोलियन बोनापार्ट के कृत्यों से गूंज उठे। परन्तु दुःख की बात है कि अपने बलिदानों के अतिरिक्त भी इस द्वीप के निवासी अपनी स्वाधीनता को सुरक्षित नहीं रख सके। जिस वर्ष नैपोलियन ने जन्म लिया था

उसी वर्ष उसका देश फ्रांसीसी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया था। जब वह बड़ा हुआ तो उसने अपनी माता के मुख से स्वाधीनता संग्राम के विषय में अनेक वीरगाथायें सुनीं। उसे यह भी विदित हुआ कि उसके जन्म के कुछ ही वर्ष पूर्व उसकी माता को राष्ट्रीय सेना के साथ जंगलों और पहाड़ों में अपना जीवन व्यतीत करना पड़ा था। युवावस्था में नैपोलियन पावली का भक्त था। इस स्थिति में कभी वह अपने द्वीप के इतिहास लिखने के लिए प्रेरित होता और कभी वह उसे फ्रांस की गुलामी से मुक्त कराने के स्वप्न देखा करता था।

देश की प्राकृतिक सुन्दरता तथा उसके पराक्रमी निवासियों के सत्संग का प्रभाव नौजवान नैपोलियन की प्रवृत्तियों पर भी पड़ा। वह प्रारम्भ से ही साहसी तथा कठिन परिश्रम का आदी हो गया। कुछ गुण उसने अपने पिता से प्राप्त किये थे। उदाहरणार्थ अपूर्व मानसिक शक्ति और सर्वतोमुखी ज्ञान। अपनी माता से उसे अपूर्व साहस, गर्व तथा यथार्थता के गुण प्राप्त हुये थे। उच्च परिवार में पैदा होने का गर्व एक ऐसा गुण था जिसे उसने अपने माता पिता दोनों से प्राप्त किया था। अभी वह पूरे दस साल का भी न था कि स्काटलैंड के हाइलैंडरों और अफ्रीका के जूलू जाति की भांति उसे भी अपनी जातीय प्रतिष्ठा का बोध हुआ और उसके जोश में वह स्वयं को दूसरा पावली मानने लगा।

नैपोलियन ने अपनी शिक्षा का अधिकांश भाग कोर्सिका की अपेक्षा फ्रांस में प्राप्त किया था। १५ अक्टूबर सन् १७७८ ई० को चार्ल्स मेरी बोनापार्ट अपने दो बड़े पुत्रों के साथ जहाज़ पर सवार होकर फ्रांस गया और तूलों के बन्दरगाह से वर्सेल्ज़ पहुंचा और शीघ्र ही ब्रीन (Brienne) के स्कूल में नैपोलियन को प्रविष्ट कराने में सफलता पाई। परन्तु ऐसा करने में उसे सोलहवें लूई से आर्थिक सहायता प्राप्त करनी पड़ी थी तथा इस बात का भी प्रमाण देना पड़ा था कि वह इटैली के कुलीन परिवार से है। अतएव कतिपय इतिहासकारों ने नैपोलियन के उत्थान का वर्णन करते समय इसका भी उल्लेख किया है कि वह जीवन पर्यन्त पारिवारिक महत्व और पारिवारिक अधिकारों को घृणित समझता रहा, परन्तु उसने इस बात पर कभी ध्यान न दिया कि उसकी उन्नति की आधार शिला भी पारिवारिक महत्व तथा राजकीय अनुकम्पा पर स्थापित की गई थी। ७ वर्ष और ९ मास तक नैपोलियन कोर्सिका से अनुपस्थित रहा। जब वह आयाचो से रवाना हुआ था उस समय उसकी आयु केवल ९ वर्ष की थी। जब वह छुट्टी लेकर सितम्बर सन् १७८६ ई० में लौटा तो उसकी उम्र १७ वर्ष की थी और उस समय वह फ्रांस की एक तोपची

शिक्षा

सेना में छोटे लेफ्टीनेन्ट के पद पर आसीन था। इस बीच में उसने कुछ समय तक ब्रीन के स्कूल में साहित्यिक शिक्षा प्राप्त की थी और बाद को वह पेरिस के स्कूल में सैनिक शिक्षा प्राप्त करता रहा था। दोनों ही स्थानों में उसे धनिकों के पुत्रों के साथ रहना पड़ा था तथा फ्रेंच भाषा बोलनी पड़ी थी। अतएव वह स्वयं को एक अज्ञात व्यक्ति के समान समझता था। उसकी निर्धनता एवं फ्रांस के किसी श्रेष्ठ वंश से सम्बन्धित न होने के कारण उसके साथी उससे घृणा करते थे और बहुधा उसका मज़ाक भी उड़ाते थे, किन्तु नैपोलियन को इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं थी। वह धुन का पक्का और कठिन परिश्रम करने वाला व्यक्ति था। वह बहुधा बाग़ों और खेतों में बैठकर पुस्तकों का अध्ययन करता और उनमें इतना मग्न रहता कि उसके चारों ओर क्या हो रहा है, इसका उसे तनिक भी आभास नहीं होता। यही कारण है कि उसके शिक्षक ने उसे देखकर एक बार कहा था,—"यह नवयुवक कठोर पाषाण का बना हुआ है, किन्तु उसकी अन्तरात्मा में एक ज्वालामुखी पर्वत धधक रहा है।" एक बार नैपोलियन के किसी साथी ने उस पर व्यंग करते हुये कहा,—"यदि तुम कोर्सिका के निवासी ऐसे वीर हो तो तुमने फ्रांसीसी सेनाओं के समक्ष पराजय क्यों स्वीकार की?" उसने क्रोधित हो उत्तर दिया, "हम लोग एक थे और तुम दस। तनिक धैर्य धरो, जब मैं बड़ा हो जाऊंगा तो मैं फ्रांसीसियों को इसका मज़ा चखाऊँगा।" इस उत्तर को सुन कर सब आश्चर्य चकित हो गये।

यों तो नैपोलियन को सभी विषयों के पढ़ने में अभिरुचि थी, किन्तु गणित, भूगोल तथा इतिहास से उसे विशेष प्रेम था। उसे अपने देश के विषय में पुस्तकें पढ़ने में भी अभिरुचि थी। उसकी स्वाधीनता के सम्बन्ध में वाल्तेयर, रूसो तथा प्रशा के प्रसिद्ध सम्राट फ्रेडरिक महान् ने जो विचार व्यक्त किये थे, उन्हें नैपोलियन ने पूर्ण रूप से हृदयंगम कर लिया था। चौदह वर्ष का एक विद्यार्थी इस से अधिक कर ही क्या सकता था? जब वह कोर्सिका में था तो वह शान्ति से बैठना नहीं जानता था और प्रायः साधारण बातों के लिये झगड़ा कर बैठता था। ब्रीन में एकान्तमय जीवन व्यतीत करने के कारण वह शान्त एवं गम्भीर हो गया, परन्तु उच्च पद प्राप्त करने की आकांक्षायें एवं उत्साह की ज्वालायें उसके हृदय में निरन्तर प्रज्वलित होती रहीं। उसके पिता की अभिलाषा थी कि वह जल सेना में प्रविष्ट हो, परन्तु ब्रीन के स्कूल का पांच वर्षीय अध्ययन अभी समाप्त भी नहीं हुआ था कि पुत्र के आग्रह पर चार्ल्स मेरी बोनापार्ट को अपनी इच्छा परिवर्तित करनी पड़ी और उसे तोपखाने में दाखिल होने की स्वीकृति देनी पड़ी। यह सेना विभाग का एक ऐसा अंग था जहां नैपोलियन जैसा बुद्धिमान तथा परिश्रमी युवक, जिसके

पास कोई बाहरी सिफ़ारिश नहीं थी, अपने व्यक्तिगत जौहर सरलता से दिखला सकता था।

२८ अक्टूबर सन् १७८५ ई० को नेपोलियन ने पेरिस के सैनिक स्कूल से बिदा लेकर सरकारी नौकरी में क़दम रक्खा। वह लाफ़ेर (La Fere) नगर की तोपची फ़ौज में, जो इस समय वालांस (Valence) नगर में नियत थी, छोटे लेफ़्टीनेन्ट के पद पर काम करने लगा। इस समय उसकी आयु १६ वर्ष की थी। वह धनहीन था और उसका कोई ऐसा मित्र अथवा सहायक भी न था जिसकी सहायता द्वारा वह क्रमश: उन्नति करके उच्च पद को प्राप्त कर सकता। उसके पिता की मृत्यु हो चुकी थी। कौर्सिका के वे दो उच्च अधिकारी भी स्वर्गवासी हो चुके थे जिनकी सिफ़ारिश लेकर वह आरम्भ में अपने भाई के साथ फ्रांस आया था। उसकी माता अत्यन्त दरिद्रता की अवस्था में अपना जीवन व्यतीत कर रही थी। नियमानुसार नेपोलियन लेफ़्टीनेन्ट के पद पर छ: वर्ष में और कप्तान के पद पर १२ वर्ष में पहुंच सकता था। अतएव उसका भविष्य इतना भव्य तथा उज्ज्वल नहीं था जिसकी आशा एक होनहार युवक कर सकता था, परन्तु उसने इसकी किंचित भी चिन्ता न करके अपने गुणों के द्वारा उसे परिवर्तित करने की चेष्टा की। उसने मितव्ययता एवं दूरदर्शिता से कार्य किया तथा अवकाश के समय को नष्ट नहीं होने दिया। पुस्तकों के अध्ययन का शौक़ उसे प्रारम्भ ही से था। उस समय, जिसका उल्लेख किया जा रहा है, उसने इस ओर विशेष ध्यान दिया और फ्रांसीसी दार्शनिकों तथा ग्रन्थकारों के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों तथा विषयों की पुस्तकों का अध्ययन भी किया। इस से उसे उन्नति के शिखर तक पहुंचने में पर्याप्त सहायता मिली। वह बेकार बैठना जानता ही न था। प्रात:काल से सायंकाल तक वह किसी न किसी कार्य में संलग्न रहता था। इस सम्बन्ध में उसने सन् १७८८ ई० में अपनी माता को लिखा था, "इस स्थान में कार्य के अतिरिक्त मेरा कोई सहायक नहीं है। बीमारी के बाद से मैं बहुत कम सोता हूं। मैं दस बजे सो जाता हूं और चार बजे उठ बैठता हूं। मैं दिन में केवल एक बार अर्थात् ३ बजे भोजन करता हूं।"

पुस्तकों के अध्ययन का शौक़

नेपोलियन उत्कृष्ट विषयों की पुस्तकों का अध्ययन करता था। इन पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि यह नवयुवक सैनिक अधिकारी उनको पसन्द करने में बड़ी सावधानी तथा दूरदर्शिता से काम लेता था। इस से यह भी विदित होता है कि जीवन में उसने अपने लिये कोई उच्च आदर्श नियत किया था। सैनिक

कार्यों को पूर्ण करने के पश्चात् जब उसके साथी बिलियर्ड खेलने और घूमने तथा मनोरंजन में संलग्न हो जाते थे, वह अपने कमरे को बन्द करके पुस्तकों के अध्ययन में व्यस्त हो जाता तथा बौद्धिक विकास की कोशिश करता था। उसे विभिन्न विषयों की पुस्तकों के पढ़ने में रुचि थी। जैसे तोपखाना, उसके सिद्धान्त तथा उसका इतिहास; घेरा डालने की कला; प्लूटार्क की रिपब्लिक; फ़ारस, एथेन्ज़ तथा स्पार्टा के संविधान; इंग्लैंड का इतिहास; फ्रैडरिक महान् का सैनिक प्रवाह; फ्रांस की आर्थिक स्थिति; तातारी और तुर्क, उनके रीति रिवाज तथा उनके देश की बनावट; मिश्र का इतिहास और कर्थेज का इतिहास; भारत का वर्णन; चीन तथा भारत आदि का इतिहास तथा उनका शासन प्रबन्ध; कुलीन वर्ग का इतिहास तथा उच्च वंश के व्यक्तियों के कुकर्मों का वर्णन; ज्योतिष, भूगर्भ शास्त्र, अन्तरिक्ष विद्या, जनसंख्या की वृद्धि के सिद्धान्त तथा मृतकों की क्रमबद्ध गणना इत्यादि। इस विषय में एक ध्यान देने योग्य बात यह है कि नैपोलियन उपरोक्त विषयों का बड़े ध्यान-पूर्वक अध्ययन करता था और उनके नोट भी बनाता जाता था। इन नोटों को जिनका लेख बहुत ही भद्दा है, जब मुद्रित किया गया तो ४०० पृष्ठों की एक पुस्तक तैयार हो गई। इसमें मिस्र तथा भारत का उल्लेख प्राय: किया गया है। एक स्थान पर मिस्र के सर्वोच्च पिरामिड का नाम दिया हुआ है। दूसरे स्थान पर ब्राह्मणों के विभिन्न सम्प्रदाय दिये हुये हैं। नैपोलियन को उपन्यास तथा निबन्ध लिखने का भी शौक था। परन्तु उसकी सबसे प्रबल इच्छा थी कि स्वदेश तथा उसके साथ किये गये अत्याचारों का इतिहास ठीक तरह से लिखे।

पुस्तकों के अध्ययन ने नैपोलियन के मस्तिष्क तथा स्वभाव पर अपूर्व प्रभाव डाला। दर्शन शास्त्र की पुस्तकों के पढ़ने से वह इस नतीजे पर पहुंचा कि राजा तथा रंक दोनों ही घृणा के पात्र हैं और ईसाई मत के सिद्धान्त इस योग्य नहीं हैं कि उन पर विश्वास किया जाय। परन्तु दर्शन की पुस्तकों का प्रभाव सीमित रहा। कारण कि उसे इनमें अधिक रुचि नहीं थी। पूर्वी देशों के वर्णन ने उसके हृदय में भारत की ओर अग्रसर होने की इच्छा पैदा की। फ्रैडरिक महान् से उसने युद्ध कला के विषय में बहुत सी उपयोगी बातें सीखीं। कोर्नै (Corneille) और रासेन (Racine) ने उसके समक्ष नागरिक महत्व का उच्च आदर्श प्रस्तुत किया। इतिहास उसके लिए केवल महत्वपूर्ण घटनाओं का भण्डार ही नहीं था, बरन् वह "शील विज्ञानों की आधार शिला तथा सचाई की ज्योति व पक्षपात का शत्रु" भी था। पुस्तकाध्ययन के शौक़ ने उसके सौजन्यपूर्ण गुणों से मिलकर नैपो-लियन के जीवन को एक विशेष सांचे में ढाला तथा उसके हृदय में ख्याति तथा महान् पद प्राप्त करने की उत्कृष्ट लालसा विकसित की।

कोर्सिका के मामलों में संलग्नता

सैनिक जीवन के प्रारम्भिक सात वर्षों तक नैपोलियन कोर्सिका के मामलों में ऐसा व्यस्त रहा कि उसे अन्य बातों की ओर ध्यान देने का अवकाश बहुत कम मिला। जैसा कि उल्लेख कर चुके हैं, इस समय उक्त द्वीप के निवासी फ्रांस के विरुद्ध स्वाधीनता संग्राम कर रहे थे। जैसे ही फ्रांस में क्रांति प्रारम्भ हुई, नैपोलियन भी छुट्टी लेकर अपने बड़े भाई जोसेफ़ के साथ स्वदेश वापस आया और उसे गुलामी की जंजीर से मुक्त कराने में प्रयत्नशील हुआ (सितम्बर १७८९ ई०)। उसने बड़े ओजस्वी भाषण दिये तथा एक राष्ट्रीय सेना दल के निर्माण करने में भी सहायक हुआ। आयाच्चो जैसे नगर में, जिसके अधिकांश निवासी मछुये और गड़रिये थे, उसने कुलीन वर्ग तथा पादरियों का विरोध करके सफलता से ख्याति प्राप्त कर ली, परन्तु शीघ्र ही उसके विचारों तथा आचरण में एक अपूर्व परिवर्तन हुआ। फ्रांसीसी क्रांति के आरम्भ होने के कुछ ही मास पश्चात् अर्थात् ३० नवम्बर सन् १७८९ ई० को फ्रांस की राष्ट्रीय सभा ने कोर्सिका के 'क्राउन कालोनी शासन' का अन्त करके उसे उक्त देश का डिपार्टमेंट बना दिया। ऐसा होने से उसके अधिकारों में वृद्धि हो गई। इसके अतिरिक्त उसके सर्वश्रेष्ठ नेता पावली को, जो सन् १७६९ ई० में निर्वासित कर दिया गया था, वापस आने की आज्ञा मिल गई। इन बातों से नैपोलियन अधिक प्रसन्न हुआ और इसके फलस्वरूप उसके हृदय में फ्रांस तथा उसके निवासियों के प्रति जो घृणा थी वह कुछ मात्रा में कम हो गई। परन्तु वह कोर्सिका के स्वाधीनता संग्राम में पावली के साथ क़दम मिलाकर काम न कर सका। कारण कि पावली ने अपना निर्वासन काल इंग्लैंड में व्यतीत किया था। इसलिए उसके विचार विशेष रूप से उदार नीति की ओर झुक गये थे और वह अंगरेज़ी शासन प्रणाली का समर्थक बन गया था। इसके अतिरिक्त वह स्वाधीनता संग्राम में सफलता प्राप्त करने के हेतु इंग्लैंड से सैनिक सहायता प्राप्त करने का अभिलाषी भी हो गया था। ये दोनों बातें नैपोलियन के सिद्धान्तों के प्रतिकूल थीं। २ अप्रैल सन् १७९३ ई० को फ्रांस के शासन ने देशद्रोही होने के संदेह में पावली की गिरफ़्तारी की आज्ञा निकाल दी। यह मालूम करके सारे द्वीप में विद्रोह के चिह्न प्रकट हुये। नैपोलियन ने, जो इस समय कप्तान के पद पर सुशोभित था, उसके बचाने का भरसक प्रयत्न किया तथा प्रसभा से भी उसकी सिफ़ारिश की, परन्तु वह सफल न हुआ। पावली की गिरफ़्तारी में नैपोलियन के अनुज लूसीन (Lucien) का भी हाथ था। अतएव इन दो बड़ी विभूतियों में सम्बन्ध विच्छेद हो गया। इसका एक विशेष कारण यह भी था कि बोनापार्ट वंश के लोग राजधानी बास्तीआ के फ्रांसीसी राज्यपाल सालीसीती (Salicetti)

के हितचिंतक तथा सहायक थे। अतएव पावली के समर्थकों तथा बोनापार्ट वंश के सहायकों के बीच नियमपूर्वक युद्ध प्रारम्भ हो गया। इसका परिणाम स्पष्ट था। नैपोलियन बोनापार्ट और उसके वंश वालों को जान बचाकर भागना पड़ा। अन्त में कुछ समय तक इधर उधर गुप्त रहने के पश्चात् उसे १० जून सन् १७९३ ई० को कालवी (Calvi) के बन्दरगाह में एक नौका पर सवार होकर उसे अपने स्वदेश से बिदा होना पड़ा। तीन दिन के उपरान्त वे सब तूलों के बन्दरगाह में उतरे और अपने भाग्य निर्णय की प्रतीक्षा करने लगे।

इसी बीच में नैपोलियन बोनापार्ट के विचारों में अपूर्व परिवर्तन हो चुका था। उसके हृदय में फ्रांसीसी क्रांति के प्रति जो उत्साह था वह अधिकांश में ठंडा हो चुका था। सन् १७९२ ई० के ग्रीष्मकाल में, जब जनता ने राजप्रासाद पर आक्रमण किया था, वह पेरिस में था। १० अगस्त को उसने अपनी आंखों से स्वीज़ रक्षा दल के हत्याकाण्ड का कारुणिक दृश्य देखा था। कोई भी वीर पुरुष इस प्रकार की घटनाओं को देखकर शान्त नहीं रह सकता था। इसलिये प्रथम घटना के अवसर पर जब जनसाधारण की भीड़ नारे लगाती हुई ट्वीलेरीज़ में प्रविष्ट हुई, नैपोलियन ने अपने मित्र बूरीयेन (Bourrienne) से कहा, "यहां के लोग कैसे कायर हैं। उन्होंने इस भीड़ को अन्दर आने ही क्यों दिया? वे इनमें से चार अथवा पांच सौ को तोप से क्यों नहीं उड़ा देते? शेष मनुष्य स्वयं शीघ्रता से घर लौट जायेंगे।" १० अगस्त के भीषण हत्याकांड के समय उसने यह कहकर कि "ऐ दक्षिण के निवासी, आओ इस करुणाजनक दृश्य को रोकने का प्रयत्न करें" मार्सेल्ज़ के एक स्वयंसेवक को हत्याकांड में भाग लेने से रोक दिया था। इस प्रकार की घटनाओं का नैपोलियन बोनापार्ट के हृदय पर अधिक प्रभाव पड़ा। अतएव उसने एक पत्र में, जो उसने कोर्सिका भेजा था, इस प्रकार के भावों को व्यक्त किया था कि जेकोबिन दल के लोगों का सिर फिर गया है। शासन के चक्र को घुमाने वाले कुछ बुरी प्रकृति के लोग हैं। यदि सच पूछिये तो जनसाधारण उन प्रयत्नों के योग्य नहीं हैं जो उनको प्रसन्न करने के उद्देश्य में किये गये हैं।

इस प्रकार की विचार धारा रखते हुये कोई भी नवयुवक अठारहवीं शताब्दी के क्रांतिकारी फ्रांस में उन्नति की आशा नहीं कर सकता था। किन्तु नैपोलियन का उदाहरण दूसरे ही प्रकार का था।

ख्याति प्राप्त करने के दो अपूर्व अवसर

उसके लिये वह समय आ गया था जब भाग्य तथा व्यक्तिगत असाधारण गुणों ने उसे धीरे धीरे ऊपर उठा कर उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर बिठला दिया। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि जब वह स्वदेश से बिदा होकर तूलों के बन्दरगाह में

उतरा था उस समय तक उसके विचारों में प्रत्यक्ष परिवर्तन हो चुका था, किन्तु वह तत्कालीन शासन का समर्थक तथा हितैषी था। अतएव सितम्बर सन् १७६३ ई० में उसने अपने मित्र सालीसेती के आग्रह पर गण-राज्य की सेना में, जो तूलों नगर के समक्ष पड़ी थी, तोपख़ाने के नायक का पद स्वीकार कर लिया। इस पद पर रहकर उसे शीघ्र ही अपनी असाधारण विशेषताओं को प्रदर्शित करने तथा ख्याति प्राप्त करने का अनुपम अवसर मिला। जैसा कि हमने सोलहवें अध्याय में उल्लेख किया था, यह वह समय था जब फ्रांस के कई नगरों ने शासन के विरुद्ध विद्रोह का झंडा फहरा दिया था। शासन के सामने यह एक कठिन समस्या थी कि अंग्रेज़ी बेड़े को बाहर करके उक्त नगर पर किस तरह अधिकार किया जाय। ऐसे संकट के समय में कोर्सिका का नवयुवक सेनानायक उसके काम आया। नेपोलियन की दूरदर्शिता ने उसे तुरन्त बोध करा दिया कि गण-राज्य की सेना को घेरे में केवल उसी समय सफलता प्राप्त हो सकती है जब अंगरेज़ी बेड़ा बन्दरगाह से हटा दिया जाय और यह उस अवस्था में सम्भव हो सकता था जब उस पर ठीक स्थान से उचित कोण बनाते हुये गोले बरसाये जायं। यह एक ऐसी सूझ थी जो इससे पहले किसी के मस्तिष्क में नहीं आई थी। जब नेपोलियन की युक्ति का प्रयोग किया गया तो अंगरेज़ी बेड़े को भागते ही बना। १६ दिसम्बर सन् १७६३ ई० को प्रसभा की सेना ने तूलों में प्रवेश किया। इस सफलता पर प्रसन्न होकर रोबेस्पेयर के शासन ने नेपोलियन को ब्रिगेडियर जनरल के पद पर सुशोभित कर दिया। इस घटना से उसकी ख्याति बढ़ी और फ्रांस के निवासी उसके नाम से परिचित हो गये।

इसके दो वर्ष उपरान्त नेपोलियन को ख्याति प्राप्त करने का दूसरा अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ। इसका विस्तृत वर्णन उन्नीसवें अध्याय में किया जा चुका है। सन् १७६५ ई० के संविधान में एक असाधारण शर्त यह सम्मिलित कर दी गई थी कि आगामी धारा सभा में दो तिहाई सदस्य प्रसभा से लिये जायेंगे। यह एक ऐसी शर्त थी जिसके लोग साधारणतया विरोधी थे और जिसके प्रति वे प्रकट रूप से कटु आलोचना करते थे। उनका कथन था कि नवीन संविधान से उस समय तक कोई लाभ नहीं हो सकता जब तक शासन की बागडोर उन पुराने लोगों के हाथ में है जो सितम्बर के हत्याकाण्ड के उत्तरदायी हैं, जिन्होंने सम्राट और सम्राज्ञी को इस संसार से विदा कर दिया है, जिन्होंने पेरिस को रक्तपात का सब से बड़ा केन्द्र बना दिया है तथा जिन्होंने राजकुमार को बध करके हाल ही में अपने दया भाव का अद्भुत प्रमाण दिया है। १५ अक्टूबर सन् १७६५ ई० को अपराह्न के समय कन्वेंशन अथवा प्रसभा पर भीषण आक्रमण किया गया, परन्तु वह नेपोलियन की तोपों द्वारा विफल बना दिया गया। गत सात वर्षों से पेरिस निवासियों ने ऐसे

सैनिक विरोध का सामना कभी नहीं किया था। यही कारण था कि क्रांति की उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। बोनापार्ट ने प्रथम बार पेरिस निवासियों का सामना सैनिक शक्ति द्वारा किया था। एक ही रात्रि में उसने कन्वेंशन को किले के रूप में परिवर्तित कर दिया था। यहां तक जो सदस्य भयभीत थे, उनको भी शस्त्र दे दिये गये थे। इस सम्बन्ध में थीबाल्ट ने नेपोलियन की सराहना इन शब्दों में की है,—"उसकी स्फूर्ति प्रशंसनीय थी। ऐसा प्रतीत होता था कि वह एक ही समय में प्रत्येक स्थान पर उपस्थित रहता था। उसके लघु, स्पष्ट तथा अविलम्ब आदेशों को सुनकर आश्चर्य होता था। उसके प्रबन्ध की दृढ़ता को देखकर प्रत्येक व्यक्ति आश्चर्य चकित था। पहले वह उसकी सराहना करता था, फिर उस पर पूर्ण विश्वास प्रकट करता था और इसके बाद उसके चातुर्य को देखकर गद्गद् हो जाता था।" उसके कारण शासन ने केवल दो सौ सैनिकों की आहुति देकर विद्रोहियों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली थी। यदि युद्ध का परिणाम इसके प्रतिकूल होता तो फ्रांस में निस्सन्देह पुनः अशान्ति फैल जाती और हजारों निरपराधों के रक्त से पृथ्वी रंग जाती। उपरोक्त विजय के उपलक्ष्य में नेपोलियन केवल २७ वर्ष की अवस्था में गृह सेना का सेनापति बना दिया गया। कन्वेंशन को सुरक्षित करके उसने न केवल फ्रांस की सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक समानता के सिद्धान्त को स्थिर रक्खा था, वरन् ऐसे शासन को भी स्थिर रखने में सहायता दी थी जो सम्राट की हत्या का उत्तरदायी था तथा जिसकी शासन नीति का एक मुख्य सिद्धान्त विदेशवासियों से युद्ध करना था।

नवीन पद को प्राप्त करने के पश्चात् नेपोलियन बोनापार्ट ने शस्त्रों को अपहरण करने की आज्ञा घोषित की। इस सम्बन्ध में उसका परिचय एक युवती

जोज़फाइन बोआरने (Josephine Beauharnais) से

जोज़फाइन बोआरने हुआ, जो उससे आयु में ६ वर्ष बड़ी थी। उसका रंग तो

ज्यादा साफ न था, किन्तु उसके मुख की सुन्दरता तथा

व्यवहार में ऐसी आकर्षण शक्ति थी कि गृह सेना का सेनापति उसे देखते ही मोहित हो गया। जोज़फाइन पश्चिमी द्वीप समूह के प्रसिद्ध द्वीप मार्टनीक (Martinique) की निवासिनी थी। उसका पति मारक्वीज़ एलेक्जेंडर द बोआरने (Marquis Alexander de Beauharnais) गण-राज्य की सेना का सेनानायक था, जिसका शीश अगणित अन्य निरपराधियों की भाँति गेलोटीन पर उतार लिया गया था। जोज़फाइन को भी तीन मास तक बन्दीगृह में रहना पड़ा था। रोबेस्पेयर के पतन के पश्चात् वह मुक्त कर दी गई, परन्तु उसे तथा उसके पुत्र ओरतांस (Hortense) तथा यूजीन (Eugene) को दरिद्रतापूर्ण जीवन व्यतीत करना

पड़ा। जिस समय नेपोलियन की दृष्टि उस पर पड़ी उस समय वह बाराम (Barras) की वेश्या थी। अन्य अधिकारी भी उसके घर आते जाते थे। जोज़फाइन अधिक शिक्षित तथा योग्य भी नहीं थी, परन्तु नेपोलियन को इस प्रकार की बातों की तनिक भी पर्वाह नहीं थी। इस युवती के सौंदर्य, उसकी छवि, उसकी वाणी तथा उसके व्यवहार ने उसे ऐसा आकर्षित किया कि वह उससे प्रेम करने लगा। नवयुवक सेनानायक की सूरत तथा आचरण में ऐसा कोई भी आकर्षण नहीं था जो जोज़फाइन जैसी कुलटा स्त्री को आकर्षित कर सकता। इसके अतिरिक्त वह इसका अनुमान भी नहीं कर सकती थी कि एक दिन ऐसा आयेगा जब वह फ्रांस के राजसिंहासन को सुशोभित करेगा और उसके ऐश्वर्य तथा महानता का डंका सारे संसार में बजाया जायेगा। पारस्परिक मित्रों के आग्रह पर उसने नेपोलियन से विवाह करने की स्वीकृति दे दी और ६ मार्च सन् १७६६ ई० को दोनों जीवन के साथी बना दिये गये। इसके केवल दो दिवस पूर्व कारनो के आग्रह पर बोनापार्ट इटैली की सेना का सेनापति नियत कर दिया गया था। कारनो, जिसके प्रयत्न से क्रान्ति के समय में सैनिक विजयों का क्रम सम्भव हो सका था, इस बात को पूर्ण रूप से जानता था कि नेपोलियन ही एक ऐसा व्यक्ति है जो इटैली के युद्ध की योजना को सफल बना सकता है। वास्तव में यह प्रस्ताव भी नेपोलियन ही का था। अतएव उसी को उसे सफल बनाने का भार सौंपा गया।

इक्कीसवां अध्याय

इटैली के प्रदेश में नैपोलियन की असाधारण सफलतायें।

क्रांतिकारी फ्रांस को यूरोप के देशों तथा शाही खानदानों से युद्ध करते चार वर्ष से भी अधिक व्यतीत हो चुके थे। इस बीच में उसे कई अपूर्व सफलतायें प्राप्त हो चुकी थीं। इसमें सन्देह नहीं की प्रारम्भ में उसकी सेनाओं को असफलता तथा अपकीर्ति प्राप्त हुई थी तथा उसके पदाधिकारी गण अधिक सुन्दर कारनामे नहीं दिखा सके थे। परन्तु इसके बाद ही भाग्य ने पल्टा खाया और क्रांतिकारी सेनाओं की विजयों को देख कर न केवल यूरोप वरन् अन्य देश वासियों को भी आश्चर्य चकित होना पड़ा। उन्होंने उत्तर-पूर्व की ओर बेल्जियम पर अधिकार कर लिया था और हालैंड को पददलित कर दिया था। दक्षिण-पूर्व में सेवाय तथा नीस विजय कर लिये गये थे। कई बार वे युद्ध करती जर्मनी में भी प्रवेश कर चुकी थीं। सारांश यह कि तिरंगे झण्डे की छत्रछाया में उन्होंने ऐसी मार्मिक सफलतायें प्राप्त कीं थीं जिनका स्वप्न बूरबन वंश के बादशाह दीर्घ काल तक देखते रहे थे, परन्तु जो कभी पूर्ण नहीं हो सका था।

इन सफलताओं का फल यह हुआ था कि फ्रांस का शासन तथा उसके उत्साहित सेनानायक व राजनीतिज्ञ अपने देश की पूर्वी सीमा राइन नदी तथा ऐल्प्स पर्वत तक पहुँचाने के स्वर्ण स्वप्न देख रहे थे। दूसरे शब्दों में वे उस बात को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे थे जो चौदहवें लुई की

वैदेशिक नीति का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य था। विजय-लक्ष्मी के प्रकाश ने फ्रांसीसियों के नेत्रों में चकाचौंध उत्पन्न कर दी थी, परन्तु वे उसे दूर नहीं करना चाहते थे। इसके विपरीत वे उसके प्रति दस सहस्र सैनिकों को प्रति सप्ताह बलिदान करने को तैयार थे। यह एक ऐसी विशेषता थी जो यूरोप के प्राचीन राजवंशों तथा उनके मंत्रियों की कल्पना के बाहर थी। उनकी सेनाओं में धन के लोभी सैनिक थे, जो राष्ट्रीय भावनाओं से हीन थे और जो व्यक्तिगत स्वार्थ को बड़ा महत्व देते थे। वे उन पर कम से कम धन व्यय करना चाहते थे और यह भी चाहते थे कि युद्धकाल में कम से कम सैनिकों से काम चल जाय। इस प्रकार के शासन तथा इस प्रकार की सेनायें फ्रांस की क्रान्तिकारी सेनाओं का सामना कैसे कर सकतीं थीं, जिनके अधिकारी तथा सैनिक स्वदेश के प्रति महान से महान त्याग करने को प्रस्तुत थे और जो दूसरे देशों में "स्वतन्त्रता, समानता तथा भ्रातत्व" के सिद्धान्तों का प्रचार करना अपना कर्तव्य समझते थे।

जिस समय नेपोलियन बोनापार्ट इटली की सेना का सेनाध्यक्ष नियत किया गया था, उस समय तक यूरोपीय देशों के प्रथम संघ (First Coalition) का अन्त हो चुका था। सन् १७९५ ई० में प्रशा युद्ध से पृथक होगया था। इसका आशय यह था कि समस्त उत्तरी जर्मनी निष्पक्षी दल में सम्मिलित होगया था। प्रशा का अनुमोदन स्पेन और हालैंड ने भी किया था। बेल्जियम पर फ्रांस का अधिकार हो चुका था। रूस का भाव आरम्भ ही से फ्रांस के प्रतिकूल था, परन्तु वह युद्ध में सम्मिलित न हुआ था। उसका ध्यान कुछ वर्षों से पोलैंड की ओर था। इसके अतिरिक्त वहां की सुप्रसिद्ध ज़ारीना कैथरिन द्वितीय, जिसने रूस की शक्ति तथा महानता के लिये बहुत कुछ किया था, जीवन के अन्तिम दिवस समाप्त कर रही थी। प्रथम संघ के सदस्यों में केवल इंग्लैंड, आस्ट्रिया तथा सार्डिनिया तीन ऐसे देश थे जिन्होंने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध समाप्त करने की घोषणा नहीं की थी; शेष सब किसी न किसी कारण अथवा बहाने से पृथक हो गये थे। इंग्लैंड ने विगत प्रतिकूल अनुभव के उपरान्त स्थल पर युद्ध न करने का निर्णय कर लिया था। हां, उसका समुद्री बेड़ा अवश्य ही बड़ा सुदृढ़ तथा शक्तिशाली था, जिसके कारण फ्रांसीसी उपनिवेशों तथा अधीन देशों के लिये किसी समय भी संकट उपस्थित हो सकता था। इसके अतिरिक्त इंग्लैंड अपने बेड़े की सहायता से शत्रु के व्यापारिक जलयानों को भी हानि पहुंचा सकता था तथा उसके तट पर किसी समय भी सेना उतार सकता था। फ्रांस की सरकार इस बात के लिये लालायित थी कि किसी प्रकार इंग्लैंड और आस्ट्रिया उसके प्राकृतिक सीमा वाले सिद्धान्त से सहमत हो जांय जिससे अन्य

युद्ध के मुख्य कारण

देश भी राइन नदी के पश्चिमी भाग पर फ्रांस का अधिकार स्वीकार कर लें। किन्तु इंग्लैंड के मन्त्री इसके लिये कदापि तैयार न थे। विशेषतया ऐसी दशा में जब बेल्जियम पर फ्रांस का अधिकार हो चुका था और शेल्ड नदी तथा एन्टवर्प का बन्दरगाह जिनका महत्व अंगरेजी व्यापार के लिये अत्यधिक था, उसके प्रभाव के बाहर हो गये थे। जब फ्रांस के संचालक इंग्लैंड की ओर से निराश हो गये तो उन्होंने इस बात का प्रयत्न किया कि किसी प्रकार आस्ट्रिया का सम्राट फ्रांस की 'प्राकृतिक सीमा' की मांग को स्वीकार कर ले। परन्तु युद्ध के बिना यह सम्भव न हो सकता था। अतएव उन्होंने अपनी कामनाओं को कार्य रूप में परिणित करने के उद्देश्य से फ्रांस की मुख्य सेनाओं को मोरो (Moreau) और जूरदाँ (Jourdan) की कमान में ब्लैक फारेस्ट तथा डेन्यूब के मार्ग से आस्ट्रिया की राजधानी वियेना पर आक्रमण करने को भेजा। उनकी सहायता के लिये तीसरी सेना उत्तरी इटेली में आस्ट्रिया के आधीन देशों पर अधिकार करने के लिये भेजी गई। संचालक वर्ग का अनुमान था कि यदि उत्तरी इटेली पर हमला कर दिया जायेगा तो आस्ट्रिया की सरकार उसकी रक्षा के हेतु अवश्य ही कुछ फौजें उत्तर से भेजेगी और इस दिशा में मोरो तथा जूरदाँ का कार्य सरलता से पूर्ण हो जायेगा। इटेली की सेना का नेतृत्व नेपोलियन को सौंपा गया। कारण कि शासन की दृष्टि से उपर्युक्त सेना का महत्व कम था। किन्तु बोनापार्ट ने अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण इटेली में आस्ट्रिया की शक्ति को ऐसी क्षति पहुंचाई कि उसे सन्धि के लिये बाध्य होना पड़ा। संचालक वर्ग ऐसे खतरनाक व्यक्ति को पेरिस से दूर भेजने के लिये शीघ्र ही राजी हो गये जो हाल ही में अपने पराक्रम योग्यता तथा स्वाधीनता का परिचय दे चुका था। वास्तव में केवल कारनो ही उसकी सैनिक योग्यता से परिचित था, किन्तु अन्य लोगों का विचार था कि यदि नेपोलियन इटली भेज दिया जायेगा तो उसकी शक्ति का ह्रास हो जायेगा और इटैलियन सेना को, जो ऐल्प्स पर्वत की श्रेणियों की तराई में तीन वर्ष से जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पड़ी थी, आगे बढ़ने का अवसर मिल जायेगा। अतएव जब उपरोक्त सेना के अध्यक्ष को नेपोलियन द्वारा निर्मित युद्ध का चित्र भेजा गया और उसने यह लिख कर भेज दिया कि जिस 'जड़ बुद्धि व्यक्ति' ने इस चित्र को बनाया है उसी को उसके अनुसार कार्य करने को भेज दिया जाय तो संचालकों ने तुरन्त उसकी बात मान ली और उसे हटाकर नैपोलियन बोनापार्ट को उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया।

आस्ट्रिया का बादशाह फ्रांसिस प्रथम (१७९२—१८३५) फ्रांसीसी सेनाओं के स्वागत के लिये तैयार था। उसके लिये क्रांतिकारी फ्रांस के विरुद्ध युद्ध को

अविरत रखना मान और प्रतिष्ठा का प्रश्न था। इसके अतिरिक्त वह होली रोमन सम्राट था तथा मेरी ऐन्तोयनेत का भतीजा भी था। ऐसी परिस्थिति में वह फ्रांसीसी शासन की 'प्राकृतिक सीमा' वाली नीति से किस प्रकार सहमत हो सकता था? होली रोमन सम्राट होने के कारण उसका कर्तव्य था कि फ्रांस को राइन नदी की घाटी में हस्तक्षेप न करने दे। बूरबन वंश का सर्वोत्तम मित्र तथा सम्बन्धी होने के नाते आवश्यक था कि वह उस अपमान तथा क्षति का बदला ले जो दोनों राजवंशों को सहन करने पड़े थे। वह सार्डिनिया का मित्र तथा सहायक भी था। अतएव वह इस बात को कैसे सहन कर सकता था कि फ्रांसीसी सेनायें उसे पददलित करें अथवा फ्रांस की सरकार सेवाय और नीस को, जिन्हें उसने सन् १७६२ ई० में अपने राज्य में मिला लिया था, अपने अधिकार में रक्खे? सार्डिनिया का छोटा सा देश इटैली प्रायद्वीप की रक्षार्थ उत्तर-पश्चिम में चौकीदारी का कार्य कर रहा था। उसके परास्त होने का यह आशय था कि आक्रमणकारी सेनायें 'पो' नदी की घाटी पर भी सरलता से अधिकार कर सकती थीं। अस्ट्रिया का बादशाह इस भेद से भली भांति परिचित था। वह अपनी बड़ी से बड़ी सेनाओं को इटैली में नष्ट करने को तैयार था, परन्तु वह सार्डिनिया को पराजित अवस्था में नहीं देख सकता था। वह इस बात को भी सहन नहीं कर सकता था कि फ्रांस की सेनायें वहां क्रान्तिकारी भावनाओं तथा सिद्धान्तों का प्रचार करें।

इटैली के प्रदेश ने कुछ विगत शताब्दियों से यूरोप की राजनैतिक घटनाओं में कोई विशेष भाग नहीं लिया था। १५० वर्ष से उसने साहित्य, कला तथा विज्ञान आदि के विकास में भी बहुत कम प्रयास किया था। इटैली के अन्तर्गत कई राज्य थे। जैसे सार्डिनिया, वेनिस, जेनाओ, टस्कनी, पारमा तथा मोडेना आदि। इन पर हम द्वितीय अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं। राजनैतिक तथा सांस्कृतिक उन्नति के दृष्टिकोण से सार्डिनिया के द्वीप की अपेक्षा पीडमोंट का अधिक महत्व था। सार्डिनिया राज्य की भौगोलिक स्थिति तथा उसके निवासियों के सैनिक व अनुशासनपूर्ण जीवन के कारण यूरोप के राजनीतिज्ञों तथा विद्वानों ने प्राय: उसे अपने प्रभाव में रखने का प्रयत्न किया था, परन्तु वहां उस समय तक ऐसी कोई बात नहीं हुई थी जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि किसी समय उसके बादशाह समस्त इटैली के एकीकरण तथा उसकी राजनैतिक प्रगति के कार्यों में वहां के मनुष्यों का नेतृत्व करेंगे। इसके पूर्व की ओर मिलन का अत्यन्त धनी तथा व्यापारी देश था, जो अस्ट्रिया के शासन में था। उसकी एक विशेषता यह थी कि वह दर्रा जिसके द्वारा अस्ट्रिया की सेनाओं को इटैली में प्रवेश करना पड़ता था, इसी देश में स्थित

इटैली के राज्य

था। इसके पूर्व में एक चतुर्भुज बनाते हुये मानटोवा (Mantua), लेनयागो (Legnago), वेरोना (Verona) तथा पेस्कीयेरा (Peschiera) के सुदृढ़ क़िले थे, जिनको विजय किये बिना नैपोलियन उत्तरी इटैली पर अपना अधिकार स्थापित नहीं कर सकता था। वेनिस का गण-राज्य सब से पुराना था तथा किसी समय में उसका महत्व भी अधिक रह चुका था। नैपोलियन बोनापार्ट ने उसको विभाजित करके भारी क्षति पहुंचाई, जिसके कारण उसकी शेष शक्ति भी
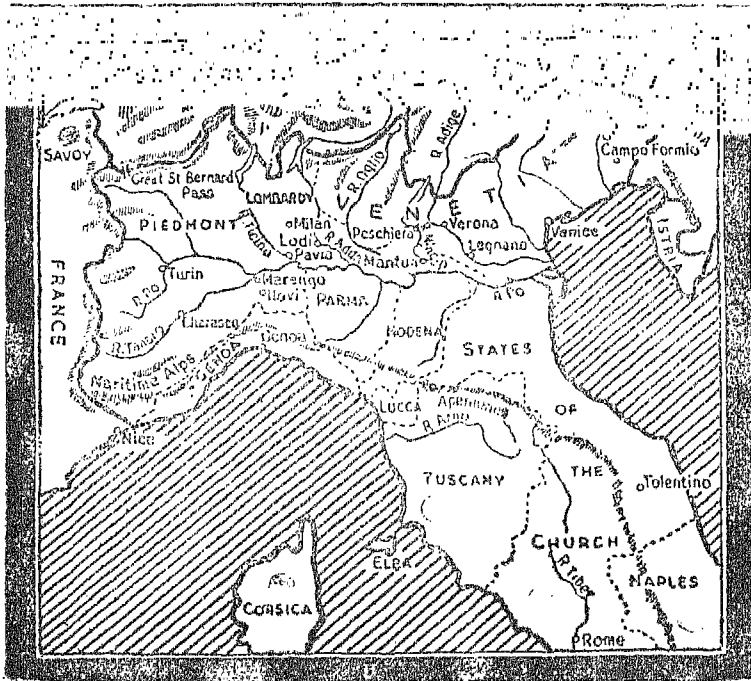
क्षीण हो गई। पारमा, मोडेना तथा टस्कनी के राज्य वैवाहिक तथा राजनीतिक सम्बन्धों द्वारा आस्ट्रिया से सम्बन्धित थे। चर्च अथवा पोप का शासन मध्य भाग में था। इटैली के दक्षिणी भाग में नेपिल्ज़ (Naples) का विस्तृत राज्य था जिसमें इटैली का लगभग आधा क्षेत्रफल सम्मिलित था। इसके निवासी अन्य राज्यों के निवासियों से इतने भिन्न थे कि उन्नसवीं शताब्दी के एकीकरण के उपरान्त भी कुछ लोग यही कहते रहे कि नेपिल्ज़ का उसमें सम्मिलित होना निरर्थक है। यहां बूरबन वंश के एक बादशाह का राज्य था, परन्तु विवाह के द्वारा आस्ट्रिया के

वंश से भी उसका घनिष्ट सम्बन्ध था। अतएव संकटकाल में वह उस ओर से सहायता की आशा रख सकता था।

इटैली का युद्ध जिसका संक्षिप्त विवरण विचाराधीन है नेपोलियन बोनापार्ट के जीवन में विशेष महत्व रखता है। इस नवयुवक सेनाध्यक्ष ने जिसकी आयु केवल २७ वर्ष थी उपरोक्त देश में विजय का ऐसा क्रम आरम्भ किया जो एक दो बार के अतिरिक्त दीर्घ काल तक स्थापित रहा। वहाँ उसने

नैपोलियन के असाधारण गुणों का प्राथमिक प्रदर्शन

पहली बार उन असाधारण गुणों का दिग्दर्शन कराया जिन्हें हम उसकी सफलता का प्रधान कारण मान सकते हैं। सेनापति, राजनीतिज्ञ अथवा किसी भी दृष्टि से हम उसे एक साधारण मनुष्य से बहुत ऊँचा पाते हैं। जो सफलतायें उसने प्राप्त कीं थीं वे संयोग अथवा भाग्य से नहीं वरन् अपने व्यक्तिगत गुणों द्वारा प्राप्त कीं थीं। बहुधा ऐसा हुआ कि उसने समयानुकूल कार्य कर के पराजय को जय में परिवर्तित कर दिया। इसका एक अपूर्व उदाहरण आरकोला (Arcola) के युद्ध का है जहाँ उसने हाथ में झण्डा लेकर गोलियों की बौछार में पुल पार करने का प्रयत्न किया था तथा घायल हो जाने के अतिरिक्त भी पराजय को विजय में बदल दिया था (नवम्बर, १७९६ ई०)। कोर्सिका के इस निवासी को इटैली में प्रथम बार यह सुअवसर प्राप्त हुआ कि राजप्रासादों में विश्राम करे, अन्य देशों के शासकों से शर्तें निश्चित करे तथा पोप को अपनी इच्छानुकूल कार्य करने के लिए विवश करे। युवावस्था, उत्साह तथा उमंग के समय में, जो पराजय के कटु अनुभव से रिक्त था, नैपोलियन ने प्रथम बार इस बात का प्रमाण दिया कि वह युद्ध की कला तथा तोपों की विद्या से पूर्ण रूप से परिचित है, अन्य लोगों पर प्रभुत्व रख सकता है, उनके मुर्दा दिलों में जान फूंक सकता है तथा समयानुकूल दो चार शब्द कह कर उनके हृदयों को प्रभावित कर सकता है। "मैं तुमको संसार के सर्वोत्तम उपजाऊ मैदानों में ले चलूंगा..........वहाँ पहुँच कर तुम मान, प्रतिष्ठा तथा सम्पत्ति प्राप्त करोगे।" जो व्यक्ति इस वचन को पूरा कर सकता था उसने साधारण नाविकों को जहाज़ी अफ़सरों के पद पर आरूढ़ कर दिया, विद्रोह के लिये कटिबद्ध तथा जीर्ण-शीर्ण सेना को वीरों की सेना में परिणित कर दिया, तथा अपने लिये "छोटे कप्तान" (Little Corporal) का नाम प्राप्त कर के बीस वर्ष तक सैनिकों के लिए आकर्षण का विषय रहा। पेरिस में बैठे हुए आधे दर्जन निर्बल मनुष्य, जिनमें से कुछ बहरे अथवा गठिया के रोगी थे और जो एक विशेष सभा के कारण स्वतन्त्रता से कार्य नहीं कर सकते थे, इस नवयुवक सैनिक का मुक़ाबला कैसे कर सकते थे जो स्वच्छंदता से कार्य करना चाहता था तथा जिसमें इतनी स्फूर्ति थी

कि इटैली में पदार्पण करने के तीसरे ही दिन उसने "११० मजदूरों को एक सड़क निर्माण करने के हेतु भेजा, एक सैनिक टुकड़ी में विद्रोह शान्त किया, तोपखाने के दो दलों के ठहरने के लिये स्थान निश्चित किया, घोड़े की चोरी के किसी मामले का निर्णय किया, दो सेनापतियों को उनके कर्तव्यों के सम्बन्ध में उत्तर दिया, एक सेनापति को आज्ञा दी कि ऐंटीब (Antibes) के राष्ट्रीय रक्षा दल को आने का आदेश दे, दूसरी आज्ञा दी कि विद्रोही सेना में सब से योग्य अफ़सर की खोज की जाय, अधीन पदाधिकारियों के सामने व्याख्यान दिया, सेना का निरीक्षण किया तथा प्रति दिन के साधारण आदेश दिये।" यह सब कार्य करने के उपरान्त भी नैपोलियन को इतना समय मिल जाता था कि प्रत्येक पड़ाव से संचालकों तथा अपनी पत्नी को पत्र लिखे। संचालकों की कमज़ोरी से वह पहले ही से परिचित था। इटैली के लिए प्रस्थान करने के पूर्व ही उसने जोज़फाइन को एक पत्र में यह विचार व्यक्त किये थे। "ये संचालक वर्ग समझते हैं कि मुझे उनके संरक्षण की आवश्यकता है। किसी दिन वे मेरा संरक्षण प्राप्त कर के प्रसन्नता अनुभव करेंगे। मैं तलवार के बल पर अपने लिये रास्ता बना लूंगा।"

इटैली के युद्ध ने बोनापार्ट की कुछ अन्य असाधारण विशेषताओं का भी प्रदर्शन किया। उसने इस बात को भली भाँति प्रकट कर दिया कि उस में कितना साहस, धैर्य तथा कष्टों को सहन करने की शक्ति है। उसने इस बात का प्रमाण दिया कि वह शीघ्रता से उपयुक्त निर्णय पर पहुँच सकता है तथा समय नष्ट किये बिना कार्य कर सकता है, सम्भव तथा असम्भव को ज्ञात कर सकता है तथा सेना को युद्ध स्थल में खड़ा करके उससे अपनी इच्छानुकूल कार्य ले सकता है। नैपोलियन इस भेद से भली भांति परिचित था कि एक स्थल पर खड़े होकर केवल अपने बचाव की चिन्ता न करके किसी भी सेनापति को अपनी ओर से अवसर तथा परिस्थिति देखकर शत्रु पर आक्रमण करना चाहिये तथा आक्रमण के महत्व को कभी विस्मरण नहीं करना चाहिये। उसकी सेना में विभिन्न देशों के व्यक्ति थे, परन्तु वे उन उद्देश्यों के महत्व से परिचित थे जिनके लिये वह युद्ध कर रहा था। वह उन पर पूर्ण विश्वास करता था और उन से इच्छानुकूल कार्य लेता था। वह एक सैनिक को अथवा एक से अधिक सैनिकों को शत्रु के विषय में सूचना प्राप्त करने का का कार्य बिना किसी संकोच के सौंप दिया करता था। उसने इटैली में यह भी प्रमाणित किया कि वह कूटनीति, धमकी, झूठी प्रशंसा तथा प्रभावशाली भाषण के द्वारा दुष्कर समस्याओं को हल करने में अद्वितीय था। जैसे जैसे इटैली का युद्ध आगे बढ़ता था नैपोलियन यह अनुभव करता था कि अवश्य ही उसका जन्म किसी उच्च पद को प्राप्त करने के हेतु हुआ है। "मेरा वर्णन आधे पृष्ठ से

अधिक में नहीं लिखा जायेगा" यह विषय शीघ्र ही "मेरा विचार है कि मुझे ऐसे कार्य करने हैं जिनका वर्तमान पीढ़ी के व्यक्ति अनुमान नहीं कर सकते" में बदल गया।

नैपोलियन बोनापार्ट ने २७ मार्च सन् १७९६ ई० को नीस नगर में इटली की सेना की अध्यक्षता ग्रहण की थी। उसके अधीन जनरलों में से कोई भी उस से परिचित नहीं था। उसकी पूर्ण जवानी, उसके बैठे हुये गाल, उसका बड़े चाव से अपनी प्रियतमा जोज़ेफाइन के चित्र को दिखाना,—ये सब बातें इस बात का प्रमाण थीं कि उसकी नियुक्ति योग्यता को ध्यान में रखकर नहीं की गई है। "सेना के लोग उसे इस तरह देखते थे मानो वह कोई गणित का विशेषज्ञ अथवा झूठे स्वप्न देखने वाला मनुष्य हो।" "परन्तु एक पल के पश्चात्" यह मासेना (Massena) का लेख है "उसने अपना सेनापति का टोप पहना और ऐसा प्रतीत होने लगा कि वह दो फुट बढ़ गया है। उसने हम लोगों से हमारे सैन्य दलों तथा प्रत्येक टुकड़ी के उत्साह तथा वास्तविक शक्ति के विषय में प्रश्न किये, हमको बतलाया कि हमें क्या करना है, इस बात की घोषणा की कि वह सेना का निरीक्षण करेगा तथा दूसरे दिन शत्रु पर आक्रमण कर देगा।" मासेना, बर्तिये (Berthier) और ओज़रो (Augereau) ये तीनों अधीनस्थ कर्मचारी नवीन सेनापति से आयु में बड़े थे। नवीन सेनापति इतने विश्वास, शान तथा योग्यता के साथ वार्तालाप करता था कि सुनने वाले आश्चर्य चकित हो जाते थे। फ्रांसीसी राष्ट्र को, जिसमें अतुलित लगन तथा शक्ति उत्पन्न कर दी गई थी, वास्तव में ऐसे ही सुयोग्य, दृढ़ संकल्प तथा दूरदर्शी व्यक्ति की आवश्यकता थी जो स्वयं अत्यन्त ख्याति तथा गौरव के स्वप्न देखता हो और जो उसे भी यूरोप के राष्ट्रों में सर्वश्रेष्ठ स्थान दिला सकता हो।

प्रजातंत्र फ्रांस की सेना

फ्रांस की सेना जो चौदहवें लुई के अन्तिम काल में सर्वश्रेष्ठ समझी जाती थी, देश के राजनैतिक आन्दोलन के कारण योग्यता के उत्कृष्ट स्थान पर पहुँच गई थी। राज्यक्रांति के समय में बहुत से सैनिक अफ़सर स्वदेश को नमस्कार करके विदेश चले गये थे, परन्तु सम्राट की सेना के अधिकतर तोपची और इंजीनियर तिरंगे झंडे के नीचे कार्य करने के लिये उद्यत हो गये थे। अस्तु गोलाबारी की कला में किसी प्रकार की कमी न आने पाई थी। सेना का सुधार राष्ट्रीयता और प्रजातन्त्रीय सिद्धान्त के आधार पर कर दिया गया था। अस्तु अब वह पहले की अपेक्षा अधिक बलिदान देने को तैयार थी तथा वह सरलता से गमन भी कर सकती थी। सैनिकों की उन्नति के अवसर पर उनकी योग्यता पर ध्यान दिया जाता

था, न कि उनके वंशानुगत सम्बन्ध अथवा किसी कुलीन की सिफ़ारिश पर। अतएव एक योग्य व्यक्ति कुछ ही वर्षों में उच्च पद पर पहुंच जाता था। सैनिकों का बलिदान स्वतन्त्रता से किया जाता था। शासन की दृष्टि में सेना बादशाह की निधि के रूप में न थी जिसके बचाने की चिन्ता किसी को होती, वरन् वह राष्ट्रीय आय के समान थी जिसका मुख्य अर्थ ही यह था कि वह खर्च कर दी जाय। फ्रांस के सैनिक युवक क्रांति के ऊँचे आदर्शों से पूर्णतया परिचित थे। जिस देश में भी वे प्रवेश करते थे वहां वे उनको महत्व देते थे। राष्ट्रीय प्रफुल्लता का भी सैनिकों पर प्रकट प्रभाव पड़ा था। फ्रांसीसी गण-राज्य के सैनिक प्रत्येक स्थान को जाने तथा कठिन से कठिन कार्य करने को तैयार रहते थे। इस प्रकार के सैनिकों को जब नैपोलियन जैसे योग्य अफ़सर के अधीन कार्य करने का सुयोग प्राप्त हुआ तो उन्होंने इतिहास के पृष्ठों को स्वर्ण अक्षरों से रंग दिया।

युद्ध की प्रसिद्ध घटनायें

अब हम इटैली के युद्ध का संक्षिप्त वर्णन करते हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है, कि नैपोलियन बोनापार्ट अथवा यूरोप के निवासियों के लिये उसका महत्व बहुत कम है। यदि सच पूछिये तो उन युद्धों का हाल जाने बिना, जो यूरोपीय महाद्वीप पर हुये थे, उसके निवासियों की राजनैतिक तथा सांस्कृतिक उन्नति को हम ठीक प्रकार से नहीं समझ सकते। विशेषत: नैपोलियन के जीवन पर तो इटैली के युद्ध का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। उसने उसे उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं और गुणों से अवगत कराया तथा उसके लिये उन्नति तथा अभ्युत्थान का मार्ग सरल कर दिया। नीस नगर में पहुंचकर उसके सम्मुख प्रथम समस्या यह उपस्थित हुई कि पीडमोंट के राज्य में किस प्रकार प्रवेश किया जाय। इस समस्या के हल करने में उसे देरी नहीं हुई। एक माह के अन्दर वह उस स्थान से प्रविष्ट हो गया जहां ऐल्प्स तथा ऐपीनाइन की पर्वत श्रेणियां एक दूसरे के सन्निकट आ जाती हैं। उसने आस्ट्रिया की सेना को, जो एक मार्ग पर अधिकार किये हुई थी, परास्त करके 'पो' नदी के दूसरी ओर भेज दिया। सार्डिनिया की सेना को, जो

सार्डिनिया के बादशाह की पराजय

द्वितीय मार्ग को रोके हुये थी, उसने कई संघर्षों में परास्त करके छिन्न भिन्न कर दिया तथा वहां के बादशाह को सन्धि करने के लिये बाध्य किया। यह सन्धि २८ अप्रैल को केरास्को (Cherasco) के स्थान पर हुई थी। इसके द्वारा उपरोक्त बादशाह ने सेवाय और नीस पर फ्रांस का अधिकार स्वीकार किया, उसे तीन दुर्ग प्रदान किये तथा पीडमोंट की सड़कों से आने जाने की पूर्ण

स्वतन्त्रता दे दी। बोनापार्ट ने यह सब चौबीस छोटी तोपों, मुट्ठी भर अश्वारोहियों तथा अस्तव्यस्त दशा के पैदल सैनिकों की सहायता से, जिनकी संख्या शत्रु से कम थी, प्राप्त किया था। इस संक्षिप्त सेना से उसने ऐसी बुद्धिमत्ता तथा विद्युतगति से काम लिया था कि प्रत्येक बड़े संघर्ष में उसके सैनिकों की संख्या अत्यन्त अधिक रही। यदि नैपोलियन चाहता तो युद्ध के बीच में राजधानी तूरिन (Turin) की ओर बढ़कर उसे अपने अधिकार में कर सकता था तथा वहां शत्रु से अधिक सुन्दर शर्तें लिखवा सकता था परन्तु उसने ऐसा करने में समय नहीं खोया। इसके स्थान पर वह शीघ्र ही पीडमोंट से सन्धि करके आस्ट्रिया निवासियों की ओर दत्तचित्त हुआ। यह उसकी विशेषता थी कि साधारण और अनावश्यक सफलताओं की ओर ध्यान न देकर वह सदैव युद्ध के मुख्य उद्देश्य को दृष्टि में रखता था। उपरोक्त सन्धि की शर्तें निश्चित करते समय उसने प्रथम बार इस बात का प्रमाण दिया कि वह एक बुद्धिमान राजनीतिज्ञ भी है। जब विरोधी दल ने सौदा पटाने का प्रयत्न किया तो उसने अपनी घड़ी निकाल ली और बताया कि किस समय उसने पुनः आक्रमण करने का निर्णय किया है और कहा कि आप लोग शीघ्र किसी निष्कर्ष पर पहुंच जांय। "मैं युद्धों को खो सकता हूं, परन्तु कोई व्यक्ति मुझे अन्तिम कोटि के आत्मविश्वास अथवा आलस्य के कारण मिनटों को खोता हुआ नहीं देख सकता।"

अब आस्ट्रिया को परास्त करना शेष था। उस से मोर्चा लेने में नैपोलियन ने तनिक भी समय को व्यर्थ न खोया। वह तुरन्त मीलन की ओर बढ़ा। ऐसा करने में उसने दो लाभ दृष्टि में रक्खे थे। प्रथम, वह लोम्बार्डी के इस प्रसिद्ध नगर को, जो विद्या और कला का प्राचीन केन्द्र भी था, अपने अधिकार में रखना चाहता था।

मीलन पर अधिकार

द्वितीय, उसकी इच्छा थी कि आस्ट्रिया और पीडमोंट की सेनायें एक दूसरे से पृथक रहें। इस सम्बन्ध में प्रथम बड़ा युद्ध १० मई को लोदी के स्थान पर हुआ। यह स्थान आदा (Adda) के तट पर बसा हुआ है तथा यहां से मीलन तक पहुंचना बिल्कुल सरल है। उपरोक्त युद्ध का विशेष महत्व है। इसके पश्चात् आस्ट्रिया की सेनायें तुरन्त मीलन से पूर्व की दिशा में बहुत दूर हट गईं। १५ मई को नैपोलियन ने इस नगर में इस प्रकार प्रवेश किया मानो वह कोई रोमन सेनापति हो। वहां के निवासियों ने उसका स्वागत पुष्प वर्षा करके किया। उसने उन्हें आस्ट्रिया की पराधीनता से उन्मुक्त कर दिया। इसके अतिरिक्त उसने वहां गणतन्त्रीय सिद्धान्त के अनुसार सभायें तथा राष्ट्रीय रक्षा दल निर्मित किये और विद्या और कला का संरक्षण किया। यह देखकर मीलन के निवासी अत्यन्त प्रसन्न हुये। परन्तु जब

इटैली के निवासियों को यह ज्ञात हुआ कि वह उनसे युद्ध का हर्जाना वसूल करना चाहता है और उन पर कठिन कर नियत करना चाहता है तो उनका ढंग बदल गया। इटैली के इतिहासकारों ने संसार के इस महान पुरुष के विषय में विभिन्न मत प्रकट किये हैं। परन्तु इस विषय में वे सब एकमत हैं कि उनके देश में लगभग साठ वर्ष पश्चात् जो महान आन्दोलन एकीकरण और व्यवस्था निर्माण के उद्देश्य से किया गया था उसकी आधारशिला नैपोलियन बोनापार्ट के समय में रख दी गई थी।

मान्टोवा का घेरा

आस्ट्रिया निवासियों की सुरक्षा का सबसे उत्तम प्रबन्ध मान्टोवा (Mantua) नगर में था, जो मिन्चो (Mincio) नदी के दाहिने तट पर स्थित है। वहां तेरह हज़ार सेना थी तथा खाद्य सामग्री भी चार मास के लिये एकत्रित थी। जब तक यह नगर काले वर्ण की चील* की छत्रछाया में था तब तक फ्रांसीसी न उत्तर में तिरोल (Tyrol) की ओर बढ़ सकते थे और न पूर्व दिशा में ट्रीयेस्ट (Triest) की ओर। इसके अतिरिक्त वे इटैली के उन शासनों पर भी भरोसा न कर सकते थे जो उनको बुरी दृष्टि से देखते थे और विचार करते थे कि फ्रांस की प्रजातन्त्रीय सेना के हाथों उनकी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का अन्त अवश्य कर दिया जायेगा। मान्टोवा के दुर्ग की सहायता के लिए आस्ट्रिया से चार बार सेना भेजी गई, परन्तु चारों बार नैपोलियन ने उन्हें परास्त करके पीछे हटा दिया। इस स्थान में भी उसके पास कम सेना थी, किन्तु उसने ठीक समय पर तथा ठीक स्थान पर इस प्रकार सेनायें पहुंचाईं कि प्रत्येक स्थान में उसकी सैन्य शक्ति आस्ट्रियन सेना से अधिक हो गई और रणभेरी ने उसी की विजय सुनाई।

सर्वप्रथम अनुभवी सेनापति वूर्मज़ेर (Wurmser) पचास हज़ार सेना के साथ मान्टोवा की सहायता के लिए आया, परन्तु उसने एक बहुत बड़ी भूल यह की कि उसने अपनी सेना को दो दलों में बांट दिया। फ्रांसीसियों ने अगस्त सन् १७९६ ई० में दोनों दलों को बुरी प्रकार परास्त किया। दूसरा दल स्वयं वूर्मज़ेर की कमान में था। उसकी कास्टीलयोन (Castiglione) के स्थान पर पराजय हुई। अतएव वह साठ तोपें तथा दस हज़ार सैनिक रणक्षेत्र में खोकर आस्ट्रिया लौट गया। सितम्बर में वह लौट आया, परन्तु अब की बार उसने पहले से भी कम दूरदर्शिता से काम लिया। अब की बार भी उसने अपनी सेना को दो दलों में विभाजित किया, किन्तु नैपोलियन ने पहले की भांति दोनों को नीचा दिखलाया। मासेना, ओज़रो तथा वाबायस (Vaubois) ने ४ सितम्बर को

* आस्ट्रियन झंडे का चिह्न

परास्त किया। चार दिन के पश्चात् वूर्मज़ेर को बासानो (Bassano) के स्थान पर पराजित होना पड़ा। अबकी बार वह अस्ट्रिया न जाकर मान्टोवा के दुर्ग में प्रविष्ट हो गया, पर नैपोलियन को इसकी चिन्ता न थी। नगर में महामारी फैल रही थी और ज्वर का प्रकोप भी बढ़ने वाला था। इसके अतिरिक्त उसके चारों ओर भयंकर दलदल तथा तालाब भी थे। अतएव नैपोलियन घेरे पर अधिक ज़ोर न देकर संचालकों पर तोपें और कुमक भेजने के लिये अधिक ज़ोर दे रहा था। नवम्बर के मास में अस्ट्रिया के शासन ने मान्टोवा के बचाने का तृतीय बार प्रयत्न किया, परन्तु इस बार भी उसकी सेना ने एक साथ शक्तिशाली आक्रमण नहीं किया वरन् एल्विन्ट्सी (Alvintzi) ने ट्रीयेस्ट की ओर से तथा डेवीडोविच ने तिरोल की ओर से आक्रमण किया। फ्रांसीसियों ने उनके रोकने का प्रत्येक प्रयत्न किया, किन्तु वे सफल न हुये। कई पराजयों के पश्चात् फ्रांसीसी सेना ने शत्रु को आरकोला (Arcola) के विख्यात युद्ध में पराजित किया। इस युद्ध में विजय कठिनता से फ्रांसीसियों के हाथ आई थी, और नैपोलियन बोनापार्ट भी गोला लगने से बाल बाल बचा था। यदि उसका अधीन अफ़सर मूरों (Muiron) उसकी आड़ करके अपना प्राणोत्सर्ग न कर देता तो अवश्य ही बोनापार्ट का अन्त हो जाता। इस ग्राम के निकट नैपोलियन ने हाथ में झंडा लेकर आडीजे (Addige) नदी के पुल पर अधिकार करने का किस दृढ़ता, वीरता तथा निर्भीकता के साथ प्रयत्न किया था, यह इतिहास के पृष्ठों में सर्वदा स्वर्ण अक्षरों में लिखा रहेगा। जब किसी प्रकार बस न चला तो उसने तीसरे दिन एक हब्शी के अधीन पचास अश्वारोहियों को बिगुल बजाते हुये शत्रु सेना के पीछे भेजा। अत: उसमें कुव्यवस्था फैल गई। ओज़रो ने बायीं ओर से उस पर आक्रमण करके उसकी कुव्यवस्था को और भी बढ़ा दिया। फल यह हुआ कि संध्या के पांच बजे, अस्ट्रिया की सेना, जिसने आरकोला के गांव की सुरक्षा में कोई उपाय उठा न रक्खा था, धीरे धीरे पीछे हट गई।

जनवरी सन् १७९७ ई० में अस्ट्रिया की सेना ने मान्टोवा के बचाने का अन्तिम बार प्रयत्न किया। किन्तु रीवोली (Rivoli) के युद्ध में उसकी पराजय हुई। इस वर्ष २ फ़र्वरी को उपरोक्त नगर पर फ्रांसीसियों का अधिकार हो गया। यहां से पूर्व और उत्तर की ओर बढ़कर नैपोलियन ने अस्ट्रिया की राजधानी वियेना की ओर अग्रसर होने का प्रयत्न किया। परन्तु इसी बीच में उसकी कठिनाइयों में अधिक वृद्धि हो गई थी। मीलन के आस पास कृषकों के विद्रोह प्रारम्भ हो गये थे। फ्रांस से आवश्यकतानुसार कुमक भी न पहुंच रही थी। उधर

जर्मनी में फ्रांसीसी सेनायें अधिक आगे बढ़ गई थीं। इन बातों को ध्यान में रखकर उसने आस्ट्रिया के आर्चड्यूक चार्ल्ज़ को सन्धि के लिये लिखा।

७ अप्रैल को नैपोलियन की सेना का अग्रभाग लियोबन नगर में पहुंचा, जो अस्ट्रिया की राजधानी से १०० मील से भी कम दूरी पर था। यहां दोनों पक्षों के बीच अल्पकालीन सन्धि (Armistice) हुई और १७ अक्टूबर सन् १७९७ ई० को दोनों के बीच कैम्पोफ़ोर्मियो (Campo Formio) के स्थान पर स्थायी सन्धि की गई। उसकी कुछ शर्तें प्रकट थीं एवं कुछ गुप्त थीं। प्रकट शर्तों से बेल्जियम का देश फ्रांस को दे दिया गया। उत्तरी इटैली में एक गण-राज्य स्थापित किया गया, जिसका नाम सिस एल्पिन गण-राज्य (Cisalpine Republic)* रक्खा गया। फ्रांस को यह अधिकार दिया गया कि आयोनियन द्वीपों (Ionian Isles) पर अधिकार कर ले। अस्ट्रिया को यह अधिकार प्राप्त हुआ कि वेनिस के लगभग सम्पूर्ण राज्य तथा उसके अधीन देशों पर अधिकार करे। सन्धि की एक प्रकट शर्त यह भी थी कि एक कांग्रेस रास्तात (Rastadt) में बुलाई जायेगी जिसमें फ्रांस और होली रोमन सम्राट के प्रतिनिधि जर्मनी से सम्बन्धित सभी मामले तय करेंगे। इन शर्तों के अतिरिक्त जो प्रकट थीं कुछ गुप्त शर्तें भी थीं, जैसे होली रोमन सम्राट फ्रांस को राइन नदी के पश्चिम में विस्तृत देश प्रदान करेगा। फ्रांस ने यह स्वीकार कर लिया कि अस्ट्रिया ज़ाल्ट्सबुर्ग (Salzburg) के प्रसिद्ध राज्य तथा बवेरिया के कुछ भाग पर अधिकार कर सकता है। उसने इस बात का वचन भी दिया कि जर्मनी के सम्बन्ध में भिन्न विषयों का निर्णय करते समय अस्ट्रिया के प्रतिद्वन्दी प्रशा को किसी प्रकार का हर्जाना न दिया जायेगा। उपरोक्त शर्तों पर विचार करके हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि जिस प्रकार नैपोलियन बुद्धिमानी और दूरदर्शिता से रणक्षेत्र में अपना काम बना लेता था उसी प्रकार वह अपने शत्रु से सन्धि की शर्तें निश्चित करते समय भी युक्ति तथा बुद्धिमत्ता से काम लेता था। यह एक ऐसी विशेषता थी जिसका उसने अत्यन्त सुन्दरता से उपयोग किया था। उपरोक्त संधि से उसकी नीतिपटुता के इस अंग पर भी प्रकाश पड़ता है कि बहुधा वह बड़े राज्यों को प्रसन्न करने के लिये छोटे राज्यों का बलिदान कर दिया करता था, जैसा कि उसने वेनिस के साथ किया था। हमें इस बात का भी एक प्रकट

लियोबन और कैम्पोफ़ोर्मियो, सन् १७९७ ई०

---

*इसका शब्दार्थ है वह गण-राज्य जो एल्प्स पर्वत के इस पार अर्थात् रोम की ओर स्थित था। यह नाम रोम के प्राचीन इतिहास से लिया गया था। फ्राँसीसी राष्ट्र के लिए रोम का इतिहास विशेष रूप से आकर्षण का विषय था।

उदाहरण मिलता है कि इस काल में होली रोमन सम्राट बहुधा व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये जर्मनी की सुरक्षा की ओर से निश्चिन्त हो जाता था।

अब हमको उस राजनैतिक व्यवस्था पर दृष्टि डालनी चाहिये जो नैपोलियन ने इटैली में की थी तथा जिस पर उपरोक्त देश का भविष्य निर्भर था। उसने जो व्यवस्था केरास्को की सन्धि के पश्चात् सार्डिनिया के बादशाह से मिलकर की थी उसका संक्षिप्त वर्णन हम कर चुके हैं। हम सिस-एल्पिन गण-राज्य का उल्लेख भी कर चुके हैं। इसकी स्थापना बासानो के युद्ध के पश्चात् आधुनिक प्रणाली के अनुसार की गई थी और कैम्पोफोर्मियो की सन्धि से अस्ट्रिया के सम्राट ने भी उसे स्वीकार कर लिया था। इसके नामकारण पर भी हम प्रकाश डाल चुके हैं। प्रारम्भ में इस गण-राज्य में केवल मीलन का राज्य सम्मिलित था, परन्तु इसके पश्चात् बोलोंया (Bologna), फेर्रारा (Ferrara), रवेना (Ravenna) और रेडजो (Reggio) के भाग भी, जो किसी सीमा तक पोप का प्रभुत्व स्वीकार करते थे, वहां के निवासियों की स्वीकृति से उसमें सम्मिलित होगये। उपरोक्त गण-राज्य की स्थापना करके नैपोलियन ने इस बात का प्रमाण दिया कि वह वास्तव में फ्रांस की राज्यक्रांति का वर प्रसाद था तथा उसके सिद्धान्तों के प्रकाशन को अपना कर्तव्य समझता है। सिस-एल्पिन गण-राज्य पर फ्रांसीसी क्रांति के राजनैतिक तथा सामाजिक सिद्धान्तों का गहरा प्रभाव पड़ा। परन्तु वह वाटरलू के युद्ध के पश्चात् स्थापित न रह सका। जब तक वह स्थापित रहा तब तक इटैली के निवासियों के लिये आकर्षण तथा राजनैतिक शिक्षा का कारण रहा। उसने उनके सामने राजनैतिक व सामाजिक एकीकरण का श्रेष्ठ आदर्श भी उपस्थित किया, जिसको देखकर इटैली के निवासी 'स्वाधीन इटैली' के स्वप्न देखते रहे और अन्त में वे उसकी स्थापना में कृतकार्य हुये।

राजनैतिक व्यवस्था

जेनोआ तथा वेनिस के राज्यों की ओर भी नैपोलियन बोनापार्ट दत्तचित्त हुआ। ये दोनों प्राचीन और पुराने ढंग के गण-राज्य थे, और किसी दशा में भी फ्रांस के गण-राज्य की समता में न ठहर सकते थे। प्रथम राज्य विशेषकर अपनी कुव्यवस्था तथा भ्रष्टाचार के लिये बदनाम था। नैपोलियन ने वहां प्रजातन्त्रीय ढंग के सुधार किये तथा उसका नाम बदल कर लिगूरियन गण-राज्य (Ligurian Republic) कर दिया। यह नाम भी रोम के प्राचीन इतिहास से लिया गया था। वेनिस के गण-राज्य के साथ दूसरे प्रकार का व्यवहार किया गया। अस्ट्रिया और फ्रांस के युद्ध में उसने कोई भाग न लिया था। उसने नैपोलियन का कुछ बिगाड़ भी न था। किन्तु अस्ट्रिया से सन्धि के समय जब फ्रांसीसी सेनाध्यक्ष ने इस

बात की आवश्यकता अनुभव की कि उसे किसी भांति संतुष्ट किया जाय तो उसने उपरोक्त गण-राज्य की बलि चढ़ा दी तथा अस्ट्रिया के बादशाह को इसकी आज्ञा दे दी कि उसके उस भाग पर जो आडीजे नदी के पूर्व में था, तथा उसके दो बड़े अधीन देशों अर्थात् दलमेशिया (Dalmatia) तथा इस्ट्रिया (Istria) पर अधिकार कर ले। यह पूर्ण रूप से अन्याय था। इसका वर्णन पढ़कर हमें दीन पोलैंड के विभाजन की बात स्मरण हो आती है। इस प्रकार के उदाहरणों से हम यही परिणाम निकाल सकते हैं कि शक्तिशाली और स्वार्थी पड़ोसियों से छोटे और निरशस्त्र देशों को अवश्य कभी न कभी हानि पहुंचती है। कुछ लोगों का मत है कि यदि कोई देश निरशस्त्र है और शांति का जीवन व्यतीत करता है तो वह युद्ध कोलपेट से सुरक्षित रह सकता है। परन्तु यह बात भी असत्य है। यदि ऐसा होता तो यूरोप का इतिहास भिन्न होता और उसके पढ़ते समय दुःख न होता। नैपोलियन को वेनिस के साथ बुरा व्यवहार करने के लिये कुछ बहाने भी मिल गये थे। जैसे वैरोना नगर के निवासियों ने कुछ फ्रांसीसी सैनिकों को वध कर दिया था यह कि वेनिस के निवासियों ने एक फ्रांसीसी जहाज़ पर बन्दरगाह में प्रवेश करते समय गोली चला दी थी इत्यादि। उपरोक्त गण-राज्य आने वाली विपत्ति से अवगत था। अतः उसने प्रजातंत्र के आधार पर सुधार कर लिये थे और कुछ फ्रांसीसी सैनिक भी रख लिये थे, परन्तु इससे कुछ लाभ न हुआ। वेनिस के निवासियों ने फ्रांस के संचालकों को घूस देने का भी प्रयत्न किया, परन्तु इसमें वे सफल न हो सके। कैम्पोफोर्मियो की सन्धि द्वारा वह अस्ट्रिया के अधीन कर दिया गया। अस्ट्रिया के बादशाह ने सन् १७९८ ई० के प्रारम्भ में उस पर पूर्ण अधिकार स्थापित कर लिया।

नैपोलियन ने पोप से भी मेल कर लिया था। उससे शर्तें तय करने में उसने अत्यन्त दूरदर्शिता तथा बुद्धिमानी से काम लिया था। मान्टोवा से अस्ट्रिया की ओर बढ़ने के पूर्व उसे इसका अवसर मिल गया था कि वह कैथोलिक धर्म के सबसे बड़े धर्माचार्य से सन्धि की शर्तें निश्चित करे। पोप का शासन क्रांतिकारी फ्रांस के विरुद्ध था, क्योंकि फ्रांस में धर्मविहीन गण-राज्य स्थापित कर दिया गया था। अतएव नैपोलियन पर इस बात का ज़ोर डाला गया कि वह पोप के शासन का अन्त कर दे। उत्तरी इटैली के विजेता के लिये ऐसा करना पूर्णतया सरल था, परन्तु उसने ऐसा करना औचित्य के विरुद्ध समझा। कोई भी बुद्धिमान राजनीतिज्ञ इस प्रकार की भूल न कर सकता था। यदि नैपोलियन पोप के शासन का, जो वास्तव में सबसे निर्बल था, अन्त कर देता तो न केवल इटैली के निवासी, वरन् उसके अन्य अनुयायी भी उसके विरुद्ध हो जाते। यह एक ऐसा मत था जिसे वह अस्ट्रिया से सन्धि करने के पूर्व स्वीकार न कर सकता था। अतएव उसने टोलेन-

टीनो (Tolentino) के स्थान पर पोप से बातचीत करके उससे हर्जाना वसूल किया तथा कुछ बहुमूल्य चित्रों, हस्तलेखों और प्रदेशों को भी अपने अधिकार में कर लिया। इस प्रकार दक्षिणी फ्रांस में आवीनयों (Avignon) पर फ्रांसीसियों का अधिकार होगया और इटैली में बोलोंया, फेर्रारा, रवेना तथा रेडजो के ज़िले सिस-एल्पिन गण-राज्य में सम्मिलित कर लिये गये। जब पोप ने उपरोक्त शर्तों को स्वीकार करने में देर की तो नैपोलियन कड़क कर बोला, "महाशय, हम किसी सन्धि की शर्तें निश्चित नहीं कर रहे हैं। युद्ध केवल थोड़े समय के लिये बन्द किया गया।"

नैपोलियन जैसे स्वाधीन सेनाध्यक्ष के लिये, जो संचालकों की बहुत कम पर्वाह करता था, आवश्यक था कि वह अपनी प्रतिष्ठा व शान में वृद्धि करे।

नैपोलियन का गौरव

सन् १७९७ ई० की शरद ऋतु में, जब अस्ट्रिया से सन्धि की वार्तालाप चल रही थी और जब इटैली के उदार विचार के निवासी नवीन गण-राज्य की ओर आकर्षित किये जा रहा थे, नेपोलियन मीलन से बारह मील की दूरी पर मोंबैलो (Mombello) की गढ़ी में शान के साथ जीवन व्यतीत कर रहा था। उसने सम्राट का नाम ग्रहण नहीं किया था परन्तु उसका प्रभाव तथा गौरव सम्राट से किसी भी दशा में कम न था। वह दरबार में बैठकर विदेशी राजदूतों से भेंट करता था, सबों के साथ बैठकर भोजन करता था, उसकी गाड़ी के साथ पोलिश जाति के रक्षक चलते थे तथा उसके दरबार में एक विशेष प्रकार के शिष्टाचार के अनुसार व्यवहार किया जाता था। जहां कहीं भी वह जाता था लोग उसका अभिनन्दन इटैलियन भाषा के गान तथा कविता द्वारा करते थे और उसे शांति के देवता के रूप में देखते थे। वे उसे अपने समय का हैनिबल (Hannibal) तथा निरंकुश शासनों तथा कुलीनों से मुक्ति दिलाने वाला रक्षक कहकर पुकारते थे। उसके साथ नवयुवक अफ़सरों का एक समूह रहता था, जो महान् सफलतायें उपलब्ध कर चुके थे तथा जो अपने सरदार के साथ नवीन देशों को विजय करने के स्वप्न देख रहे थे। नैपोलियन के साथ जोज़ेफाइन भी थी, जो सदा यही प्रयत्न करती थी कि किसी प्रकार उसका पति उस पर सन्देह करना त्याग दे। उसके साथ उसकी माता तथा उसकी तीन बहिनें भी राजसी जीवन व्यतीत करती थीं। इन सब बातों के होते हुये भी यह प्रशंसा का विषय है कि संसार की इस महान् आत्मा ने अपने कर्तव्यों को कभी विस्मृत नहीं किया और न कभी स्वार्थ के लिये सम्पत्ति ही एकत्रित की। हां, वह फ्रांस के लिये गाड़ियों में भरकर मुद्रा, स्वर्ण, बहुमूल्य चित्र तथा अन्य भेंटें अवश्य भेजता रहता था। इस प्रकार का वह प्रथम सेनाध्यक्ष था जो स्वदेश से निरन्तर

धनराशि मंगाने के स्थान में वहां मुद्रा भेजा करता था। कभी कभी वह प्रधान संचालकों के लिये भी बहुमूल्य वस्तुयें भेजता था। एक बार उसने अच्छी नस्ल के घोड़े इस शब्दावली के साथ भेजे थे,—"मैं एक सौ सबसे उत्तम घोड़े जो मैं प्राप्त कर सका भेज रहा हूं जिससे आप ऐसे घोड़ों को हटा दें जो वास्तव में आपकी गाड़ियों को खींचने के योग्य नहीं हैं।"

नैपोलियन की आश्चर्यकारी सफलताओं का वास्तविक रहस्य क्या था ? यह क विचारणीय प्रश्न है, जिस पर ध्यान दिये बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते।

सकी सफलताओं का वास्तविक रहस्य

सर्वप्रथम और सर्वाधिक उसकी मित्रमंडली तथा उसकी व्यक्तिगत विशेषतायें उसकी सफलताओं की उत्तरदायी हैं। वह थकावट अनुभव किये बिना कई दिन तक घोड़े की सवारी कर सकता था तथा किसी भी समय सो और जाग सकता था। वह समय के मूल्य से पूर्ण रीति से परिचित था। 'समय ही सब कुछ है' यह उसके जीवन का एक महान् सिद्धान्त था। वह सदा अपने पदाधिकारियों का उत्साहवर्धन करता रहता था। हार जाने की अवस्था में भी यह आवश्यक नहीं था कि वह उनकी भर्त्सना करे। एक बार पराजित होने की अवस्था में उसने मासेना से कहा था, "प्रिय मासेना, युद्ध का निर्णय सदा बदलता रहता है। कल या इसके पश्चात् उसको हम लौटा लेंगे जो हमारे हाथ से आज निकल गया है।" ये तथा कुछ अन्य विशेषतायें नैपोलियन को अपने प्रतिद्वन्दी सेनाध्यक्षों तथा सम्राटों से पृथक करती थीं। नैपोलियन की सफलताओं का दूसरा भेद यह था कि वह इटैली में जिस सेना को लाया था वह जनता की सेना थी। जिस प्रकार वह स्वयं फ्रांसीसी क्रांति का बहुमूल्य वरप्रसाद था, उसी प्रकार उसकी सेना भी क्रांति की अमूल्य देन थी। इसके अतिरिक्त जिन आदर्शों के लिये वह युद्ध कर रही थी वे भी बहुत उच्च कोटि के तथा क्रांति की अमूल्य देन थे। जैसे फ्रांसीसी गण-राज्य की सुरक्षा व स्वतन्त्रता, संसार के कोने कोने में क्रांतिकारी सिद्धान्तों का प्रकाशन, निरंकुश शासनों तथा सम्राटों का पतन, इत्यादि। ऐसी दशा में फ्रांस की सेना को न केवल स्वदेश की सीमाओं की सुरक्षा की चिन्ता थी, वरन् दूसरे देशों को विजय करने की भी चिन्ता थी। यदि ऐसा न होता तो नैपोलियन इस बात पर क्यों ज़ोर देता कि वह स्वतन्त्रता के लिये युद्ध कर रहा है। फ्रांसीसी सैनिकों को अपने देश की स्वतन्त्रता के साथ साथ अन्य राष्ट्रों की स्वतन्त्रता भी मान्य थी। नैपोलियन की सफलता का तीसरा कारण यह था कि इटैली में बहुत से लोग ऐसे थे जो उससे तथा उसके ऊँचे आदर्शों से पूर्ण सहानुभूति रखते थे। जैसे अगणित विद्वान, विद्यार्थी, पत्रों के सम्पादक तथा नगरों के निवासी ऐसे

थे जो पूर्व ही से फ्रांस के क्रांतिकारी आदर्शों से अवगत थे और जो 'एक राष्ट्र तथा एक शासन' का स्वप्न देख रहे थे। उन्होंने नैपोलियन के उन वादों पर सरलता से विश्वास कर लिया जो उसने अपनी घोषणाओं द्वारा किये थे। अत: वे उसे दीर्घ-कालीन अत्याचारियों तथा प्राचीन शासकों से स्वतन्त्रता दिलाने वाला देवता समझने लगे। विशेषकर ऐसी दशा में जब उसकी धमनियों में इटैली का रक्त प्रवाहित था, उसका नाम इटैलियन था तथा वह इटैली की भाषा बोलता था। नैपोलियन के हृदय में भी उनके लिये काफ़ी जगह थी। अतएव उसने अपनी सेना को यथाशक्ति लूट मार करने से रोका। इटैली में प्रविष्ट होने के पश्चात् ही उसने डाइरेक्टरों को लिखा था, "लूट मार अब कम हो गई है। एक ऐसी सेना की प्यास, जिसके पास प्रत्येक वस्तु का अभाव था बुझ गई है। इन बेचारे सैनिकों के लिये एक बहाना भी है। ऐल्प्स की घाटी में पड़े पड़े उन्हें तीन वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। अब मैं उनको स्वर्ग में ले आया हूं।" दूसरे स्थान पर वह अपने सैनिकों को सम्मान और प्रतिष्ठा की शपथ दिलाता है। "मेरे सम्मुख इस बात की शपथ लो कि जिन राष्ट्रों को तुम स्वतन्त्र कर रहे हो उन्हें क्षति न पहुँचाओगे अन्यथा तुम्हें लोग दैवी प्रकोप समझेंगे। तुम्हारी विजय, तुम्हारी वीरता तथा हमारे बलि चढ़े हुये लोगों का रक्त, यह सब व्यर्थ सिद्ध होंगे। इसके साथ साथ प्रतिष्ठा और सम्मान भी। मेरे सेनापतियों को एक अनु-शासनहीन सेना का नेतृत्व करते लज्जा आवेगी।" नैपोलियन इटैली के निवासियों के स्वभाव तथा उनकी आदतों से पूर्ण रूप से परिचित था। उसे यह भी ज्ञात था कि वे प्राचीन इतिहास की स्मृति दिलाने से अधिक प्रसन्न होते हैं। यह उसकी सफलताओं का चौथा कारण था। "इटैली के निवासियों, फ्रांस की सेना तुम्हारी श्रृङ्खलाओं को तोड़ने के लिए आई है। वह समस्त राष्ट्रों की मित्र है। विश्वास रखो कि तुम्हारी सम्पत्ति, तुम्हारे रीति रिवाज, तुम्हारा धर्म ये सब अक्षुण्ण रहेंगे।" इसके पश्चात् उसने अपने भाषण में ऐथेन्स, स्पार्टा तथा प्राचीन रोम का ज़िक्र किया। वह इतिहास का अध्ययन ध्यानपूर्वक कर चुका था। अब उसने अपने ऐतिहासिक ज्ञान का सुन्दरतम उपयोग किया।

फ्रूक्टीदोर का आकस्मिक बल प्रयोग (सितम्बर १७९७ ई०)

नैपोलियन बोनापार्ट की इटैलियन विजयों के कारण उसके गौरव तथा प्रतिष्ठा में अधिक वृद्धि हो गई थी। फ्रांस के निवासियों की दृष्टि में भी उसका महत्त्व बढ़ गया था। वे सोचते थे कि किसी न किसी दिन उसे फ्रांस के शासन को अपने हाथ में लेना है। अतएव उसने एक दिन उद्यान में घूमते समय अपने मित्रों से कहा था, "क्या तुम समझते हो कि मैं इटैली में सफलतायें इसलिये प्राप्त कर रहा हूं कि संचालक

मंडल के विधान ज्ञाताओं के लिए प्रतिष्ठा प्राप्त करूं ?" परन्तु उसी के शब्दों में "अभी नाशपाती पकी नहीं थी।" यद्यपि वह संचालकों को प्रत्येक रूप से घृणा की दृष्टि से देखता था तथापि वह शक्ति का प्रयोग करके उन्हें पदच्युत करना उचित न समझता था। अपनी धारणा के अनुसार सितम्बर सन् १७६७ ई० में उसने उन्हें बनाये रखने के उद्देश्य से उनकी बड़ी सहायता की। इसका एक विशेष कारण यह था कि वह बूरबन वंश का लौटना किसी दशा में भी सहन न कर सकता था। सन् १७६५ ई० के संविधान के अनुसार प्रति तीसरे वर्ष विधान-मंडल के एक तिहाई सदस्यों का पृथक होना आवश्यक था। मार्च सन् १७६७ ई० में जब नवीन सदस्यों का निर्वाचन किया गया तो ज्ञात हुआ कि उनमें से अधिकतर उदार दल के हैं। इसके विपरीत संचालकों में कम से कम तीन अवश्य ही जेकोबिन थे। ऐसी दशा में वर्तमान प्रणाली के अनुसार संचालकों को त्यागपत्र दे देना चाहिये था, परन्तु ऐसा न करके उन्होंने नैपोलियन को लिखा। नैपोलियन ने ओज़रो (Augereau) को पेरिस भेज दिया। उसके आते ही सब काम ठीक हो गया। कारनो, जो उदार दल का पक्ष कर रहा था, अपने पद से वंचित कर दिया गया। विधान-मंडल के कुछ सदस्य बन्दी कर लिये गये तथा १५४ सदस्यों का निर्वाचन रद्द कर दिया गया। राष्ट्रीय चर्च के न मानने वालों तथा भागे हुए लोगों के साथ अत्यन्त बुरा व्यवहार किया गया। इतिहास में यह सैनिक सफलता क्रांतिकारी कलैंडर के अनुसार फ्रूकतीदोर का आकस्मिक बल प्रयोग (Coup d' Etat of Fructidor) कहलाता है। यह ४ सितम्बर (फ्रूकतीदोर १८) को किया गया था। नैपोलियन के, संचालकों को सहायता देने का एक विशेष कारण यह था कि आस्ट्रिया के बादशाह की दृष्टि पेरिस की ओर थी। अतएव वह लियोबन की अस्थायी सन्धि के पश्चात् स्थायी आधार पर सन्धि करने में आनाकानी कर रहा था। जब फ्रांस में उदार दल का शासन स्थापित न हो सका तो उसने तुरन्त कैम्पोफ़ोर्मियो की सन्धि कर ली।

फ्रूकतीदोर की सफलता के कारण फ्रांस के संचालक बहुत प्रसन्न थे। कम से कम दिखलाने के लिये वे नैपोलियन बोनापार्ट का अधिक सम्मान करने लगे थे।

नैपोलियन का लौटना

अतएव जब आरकोला का विजेता तथा कैम्पोफ़ोर्मियो की सन्धि का कर्ता रास्तात होता हुआ पेरिस लौटा तो उन्होंने उसका अभिनन्दन बड़ी शान के साथ लूकसों-बूर (Luxembourg) के राजप्रासाद में किया, और उसे इंग्लैंड की सेना का अध्यक्ष नियत किया। सर्वसाधारण ने भी उसका स्वागत एक राष्ट्रीय वीर की

भांति किया। बारास ने उसे सब के सम्मुख गले लगाया और कहा, "जाओ, उस बड़े डाकू को बन्दी बनाओ जिसका काम समुद्र पर लूट मार करना है।" परन्तु इंग्लैंड पर सीधे आक्रमण करने का प्रयत्न करने से पूर्व नैपोलियन को एक बार पराजय और असफलता का सामना करना पड़ा।

बाईसवां अध्याय

मिस्र और सिरिया

फ्रांस के शत्रुओं में अब केवल इंग्लैंड ही अवशेष था। वह उस समय तक पराजित न हुआ था और कैम्पोफोर्मियो की सन्धि के पश्चात् भी नैपोलियन बोनापार्ट को अंगूठा दिखाता रहा था। वह पर्याप्त रूप से एक धनसम्पन्न देश था। उसका जहाज़ी बेड़ा अत्यन्त सुदृढ़ था। उसके अधिकार में अनेक उपनिवेश तथा अधीन देश भी थे। सब से मुख्य बात यह थी कि इंग्लैंड के कारण बहुधा फ्रांस में कुव्यवस्था फैल चुकी थी। इसका प्रकट उदाहरण तूलों के बन्दरगाह का विद्रोह था, जिसे नैपोलियन की सहायता से समाप्त करने में सफलता प्राप्त हुई थी। इन कारणों से फ्रांस के निवासी इंग्लैंड को अपना सब से बड़ा तथा शक्तिशाली शत्रु समझते थे। वास्तविकता भी यही थी। फ्रांसीसी क्रांति के समय में इंग्लैंड ने अगणित भागे हुये फ्रांसीसियों को शरण दी थी। उसके ज़ोर देने पर ही यूरोप का प्रथम संघ निर्मित किया गया था। नैपोलियन इन सब बातों से खूब परिचित था और इस बात पर ज़ोर देता था कि इंग्लैंड को पराजित किये बिना फ्रांस में जो क्रांति के युग में व्यवस्था की गई थी, वह सब व्यर्थ प्रमाणित होगी। १६ अक्तूबर सन् १७६७ ई० को उसने इटैली से यह शब्द लिखे थे,—"हमारी सरकार का यह कर्तव्य है कि इंग्लैंड की राजसत्ता को समाप्त कर दे अन्यथा उसे इस बात की आशा करनी चाहिये कि ये पराक्रमी, टापू के निवासी उसको नष्ट कर देंगे। हमको चाहिये कि अपनी सम्पूर्ण शक्ति समुद्री बेड़े को सुदृढ़ बनाने में व्यय करें तथा इंग्लैंड का चिह्न तक न रहने दें। इसके पश्चात् यूरोप हमारे चरणों पर आ गिरेगा।"

परन्तु इंग्लैंड को नीचा दिखाना कोई बालकों का खेल न था। यदि अंगरेज़ी बेड़ा अत्यन्त दृढ़ था तथा इंग्लैंड के पास अन्य देशों से युद्ध करने के लिए काफ़ी धन था तो फ्रांस के बेड़े में अधिक निर्बलता आ चुकी थी तथा उसका शासन क़ाग़ज़ी नोटों को प्रकाशित करके काम चला रहा था। उनका मूल्य इस समय केवल एक प्रति शत था। अतएव शासन को ⅔ राष्ट्रीय ऋण स्थगित कर देना पड़ा था। क्रांति का फ्रांस की जल सेना पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा था। इसकी सफलता का सारा भार अनुभवी तथा प्राविधिक-योग्यता रखने वाले पदाधिकारियों और नाविकों पर होता है। किन्तु इन पर फ्रांसीसी क्रांति के सिद्धान्तों का, जो समानता और स्वतंत्रता पर अधिक ज़ोर देते थे, सब से बुरा प्रभाव पड़ा था। कई बार बन्दरगाहों में भयंकर विद्रोह हो चुके थे। अनुभवी बन्दूकची निकाल दिये गये थे। अधिकतर योग्य अफ़सर जो उच्च वंशीय लोग थे नौकरी त्यागने को वाध्य किये गये थे। सारांश यह कि फ्रांस का जहाज़ी बेड़ा, जो अमेरिका के स्वाधीनता संग्राम के समय अत्यन्त शक्तिशाली तथा पटु समझा जाता था, अब निर्बल तथा अव्यवस्थित था। उसके ये दोष नैपोलियन के समय में दूर न किये जा सके।

फ़र्वरी सन् १७६८ ई० में नैपोलियन ने इंगलिश चैनल के समुद्री तट का संक्षिप्त निरीक्षण किया। इससे उसे इस बात का तुरन्त पता चल गया कि इंग्लैंड के आक्रमण को सफल बनाने के लिये आवश्यक कुशलता के साथ लम्बे समय तक तैयारी करना आवश्यक है। उसे इसके लिए अवकाश न था और न शासन के पास उसके लिये यथेष्ट धन ही था। अतएव उसने इंग्लैंड को दूसरे उपायों से नीचा दिखलाने का निश्चय किया। एक उपाय यह था कि उसके व्यापार और उद्योग धंधों को क्षति पहुंचाई जाय। दूसरा उपाय यह था कि उसके अधीन देशों पर अधिकार कर लिया जाय। विशेषकर भारत एक ऐसा धनवान देश था कि यदि उस पर अधिकार कर लिया जाता तो अवश्य ही इंग्लैंड की शक्ति क्षीण हो जाती। यदि चैनल को विजय करना कठिन था तो कम से कम फ्रांसीसी सैनिक मिस्र में तो अवश्य ही पहुंच सकते थे। वहां से भारत की ओर बढ़ जाना कठिन न था। यदि इसमें सफलता न मिली तो उत्तर की ओर बढ़कर फ्रांसीसी सैनिक तुर्की के साम्राज्य पर आक्रमण कर सकते थे। मिस्र की ओर बढ़ने से एक विशेष लाभ यह था कि अंगरेज़ी शासन के लिये भूमध्य सागर में कुछ सुदृढ़ जहाज़ों का रखना आवश्यक हो जाता। इस प्रकार इंग्लैंड की रक्षा में निर्बलता आ सकती थी और फ्रांसीसी सीधे मार्ग से उस पर आक्रमण कर सकते थे। कुछ अन्य बातें भी ऐसी

पूर्वीय देशों का आकर्षण

थीं जिनके कारण नैपोलियन मिस्र के आक्रमण पर ज़ोर देता था। बाल्यकाल में वह बहुधा पूर्वीय देशों में भ्रमण करने के स्वप्न देखा करता था। एक दो बार उसने अंगरेज़ी सेना में भर्ती होकर भारतवर्ष जाने का विचार भी किया था। जब वह इटैली में विजय प्राप्त कर रहा था तो वह कहा करता था कि मेरे भाग्य में पूर्वीय देशों की विजय अवश्य लिखी है। इटैली को अधीन बनाना उसके जीवन का अन्तिम उद्देश्य न था। वह तो केवल तुर्की तथा अन्य पूर्वीय देशों की ओर बढ़ने की भूमिका मात्र थी। वह बहुधा कल्पना की दृष्टि से देखा करता था कि उसके आदमियों ने यूनानियों को क्रांति के लिए तत्पर कर लिया है और उसकी सेनाओं ने कुछ आक्रमण करके तुर्की साम्राज्य को विनाश के पथ पर ढकेल दिया है।

नैपोलियन के लिये फ्रांस में अधिक समय तक ठहरे रहना उचित भी न था। उसकी आयु ४० वर्ष न होने के कारण वह संचालक के पद पर आसीन होने का प्रयत्न न कर सकता था। वह संचालकों को पदच्युत करना भी उचित न समझता था। उसका यह भी विचार था कि यदि मैं अधिक समय तक यूरोप में ठहरा रहूंगा तो जो कीर्ति मैंने उपलब्ध की है वह अवश्य ही नष्ट हो जायेगी। २९ जनवरी सन् १७९८ ई० को उसने अपने मन्त्री बूरीन (Bourriene) से कहा था, "मैं यहां नहीं ठहरना चाहता। यहां कोई काम नहीं है। वे मेरी कोई बात नहीं सुनेंगे। यहाँ प्रत्येक वस्तु धीरे धीरे समाप्त होजाती है। मेरी प्रतिष्ठा नष्ट हो चुकी है। यह संक्षिप्त यूरोप एक छोटे क्षेत्र के तुल्य है। केवल पूर्व में महान् कीर्ति उपलब्ध हो सकती है।" नैपोलिय के सम्मुख सिकन्दर का उदाहरण था। उसके लिये भी पूर्वीय देशों में एक विशेष आकर्षण था, जिसकी उपेक्षा वह किसी अवस्था में भी न कर सकता था।

संचालकों ने नैपोलियन के प्रस्ताव को तुरन्त स्वीकार कर लिया। धर्मयुद्धों (Crusades) के समय से फ्रांस का शासन मिस्र की ओर लालच भरी दृष्टि से देख रहा था। सुविख्यात जर्मन दार्शनिक लायबनिट्स ने भी इसकी सिफ़ारिश की थी कि फ्रांस को चाहिए कि मिस्र को विजय कर ले। पन्द्रहवें लूई के प्रसिद्ध मन्त्री श्वाज़ल (Choiseul) ने इस कार्य की पूर्ति करने के लिए एक योजना भी तैयार की थी। संचालक वर्ग सचेत थे कि इसमें संदेह नहीं कि मिस्र पर आक्रमण किये जाने की दशा में अंगरेज़ अवश्य अप्रसन्न होंगे परन्तु इस प्रकार कम से कम एक भयप्रद व्यक्ति तो पेरिस से दूर किया जा सकता था। जब नैपोलियन इटैली में था उस समय संचालकों ने उस पर प्रभुत्व स्थापित रखने का प्रत्येक प्रकार से प्रयत्न

किया था, परन्तु वे इस नवजात पक्षी के पर काटने में सफल न हुये थे। अब उन्हें उसको दूर भेजने का स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ। अतएव उन्होंने नैपोलियन की बात तुरन्त स्वीकार कर ली। जोज़ेफाइन भी अत्यन्त प्रसन्न थी। वह सोचती थी कि पति के चले जाने के पश्चात् उसे स्वतन्त्रतापूर्वक अपने मित्रों से भेंट करने का अवसर प्राप्त होगा। शासन के सम्मुख धन का प्रश्न था। इसको उसने सरलता से हल कर लिया। एक सेना स्विटज़रलैंड पर और दूसरी रोम पर आक्रमण करने के लिए भेजी गई। इस प्रकार शासन को काफ़ी धन प्राप्त हो गया। संचालकों ने पूर्व ही से स्पेन और हालैंड के बेड़ों को अपनी सहायता के लिये बुला लिया था। किन्तु सन् १७९७ ई० में अंगरेज़ अफ़सर जर्विस (Jervis) ने प्रथम को सेन्ट विन्सेन्ट की अन्तरीप (Cape St. Vincent) के निकट और द्वितीय को डंकन (Duncan) ने कैम्परडाउन (Camperdown) के समीप परास्त करके नष्ट कर दिया था। फ्रांस के शासन ने आयरलैंड में विद्रोह की अग्नि भड़काने का भी प्रयत्न किया था, परन्तु इसमें भी उसे सफलता नहीं मिली थी।

नैपोलियन का मिस्र को प्रस्थान

१९ मई सन् १७९८ ई० को नैपोलियन ने तूलों के बन्दरगाह से कूच किया। इस समय उसके साथ ३८ सहस्र अनुभवी सैनिक थे। इसके अतिरिक्त कुछ चुने हुये सेनापति, कलाकार, इंजीनियर और विद्वज्जन भी उसके साथ थे। सैनिक पदाधिकारियों में बर्तिये (Berthier) मारमौं (Marmont), लान (Lannes) मूरा (Murat), देसे (Desaix), और क्लेबेयर (Kleber) मुख्य थे। विद्वज्जनों में कई प्रसिद्ध गणितज्ञ, भूतत्ववेत्ता, रसायन शास्त्री तथा पुरातत्व-विशेषज्ञ थे। इसके अतिरिक्त कुछ विख्यात चित्रकार तथा कवि भी उसके साथ गये थे। इन सबकी संख्या मिलाकर १७५ थी। वह अपने साथ एक पुस्तकालय भी लेगया था, जिसमें विभिन्न विषयों की चुनी हुई पुस्तकें थीं। जब कभी कोई पदाधिकारी विद्या व कला के विशेषज्ञों की प्रतिष्ठा के विरुद्ध कोई बात कहता तो नैपोलियन उससे अप्रसन्न हो जाता था। वह फ्रांस के विद्वानों और विज्ञानवेत्ताओं की सबसे बड़ी संस्था का सदस्य था। वह अपने विद्वानों और विज्ञान मित्रों को भी इसी दृष्टिकोण से देखता था और प्रत्येक दिन दोपहर को भोजन करने के पश्चात् उनके साथ वादविवाद करता था। इससे प्रकट होता है कि नैपोलियन को विद्या और कला से विशेष प्रेम था और वह विज्ञान की सहायता से मिस्र के प्राचीन सम्राटों की जन्मभूमि पर पूरा प्रकाश डालना चाहता था। उसका विचार था कि वह पूर्वीय देशों की कलाकौशल, कृषि, विज्ञान तथा सामाजिक प्रथाओं का ज्ञान प्राप्त करके उनसे पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न करेगा। फ्रांस के

लिये वह मिस्र में एक उपनिवेश स्थापित करना चाहता था, परन्तु अपने लिये वह केवल चिरस्थायी कीर्ति उपलब्ध करना चाहता था। इस सम्बन्ध में वह सबसे अधिक महत्त्व धर्म को देता था। कारण कि पूर्वीय देशों के जीवन का ताना बाना ही धर्म के चारों ओर बुना गया है। उसका विचार था कि इस प्रकार वह उनको अपने पक्ष में करने और उन्हें अपनी सेना में भरती करने में सफल मनोरथ हो सकेगा। पूर्वीय देशों के निवासियों से पूर्वीय भाषाओं में वार्तालाप की जाय और उन्हीं के सिद्धान्तों की सहायता से उन पर प्रभुत्व स्थापित किया जाय, इससे बढ़कर और क्या बात हो सकती थी?

चार सौ जहाज़ों का फ्रांसीसी बेड़ा धीरे धीरे पूर्व की दिशा में बढ़ा। मार्ग में उसे तूफ़ान तथा अन्य कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। भूमध्य सागर में अंगरेज़ जल सेनानायक नेलसन घूम रहा था, किन्तु उसकी भेंट

माल्टा

नैपोलियन से नहीं हुई। इसका कारण यह था कि एक बड़े तूफ़ान ने, जिसके कारण नैपोलियन के तूलो से प्रस्थान करने में २४ दिन की देर हो गयी थी, नेलसन के बेड़े को तितर बितर कर दिया था। अतएव फ्रांसीसी बेड़ा सुरक्षित माल्टा द्वीप, और माल्टा से सिकन्दरिया के बन्दरगाह में पहुँच गया। नेलसन नैपोलियन की खोज में तीन दिन पूर्व वहाँ पहुँचा था। जब उसने उसे वहाँ न पाया तो उसने सिरिया के तट की ओर बढ़ने का प्रयत्न किया। फिर वह माल्टा की दिशा में लौट पड़ा था। वह सिसली तक आ गया, परन्तु फ्रांसीसी बेड़े का पता न चला। वह अप्रसन्न होकर कहने लगा, "शैतान का भाग्य भी शैतान ही के तुल्य है!" सिसली से नेलसन को फिर मिस्र की ओर लौट जाना पड़ा। उधर नैपोलियन ने माल्टा पर अधिकार कर लिया था। इस समय उक्त द्वीप में नाइट्स आफ़ सेंट जोन (Knights of St. John) निवास करते थे। उसका प्रमुख नगर वेलेटा (Veletta) है। इस नगर के निवासियों ने उसके दुर्ग को १३ जून को फ्रांसीसियों के हस्तगत कर दिया। अंगरेज़ लेखकों का यह कथन कि दुर्ग के अधिकारियों की कृतघ्नता एवं कुव्यवस्था के कारण उस पर अधिकार कर लिया गया था, कोई अर्थ नहीं रखता। नैपोलियन के लिये उसको विजय करना कोई दुष्कर कार्य न था, यद्यपि इसमें देर होने की सम्भावना अवश्य थी। अंगरेज़ लेखकों को इस बात का दुःख भी है कि भूमध्य सागर में विरोधी बेड़ों की मुठभेड़ न हुई। उदाहरण के लिये एक लेखक ने लिखा है—"इस प्रकार अर्वाचीन युग के सब से महान् सेनापति तथा सब से बड़े जल सेनानायक की मुठभेड़ न हो सकी। इसके पश्चात् के इतिहास को इसका अवश्य ही शोक करना चाहिये।" मुठभेड़ हो भी कैसे सकती थी? जिस समय नेलसन शीघ्रता से मिस्र की ओर बढ़

रहा था नैपोलियन ने बड़ी सावधानी से अपने जहाज़ों को क्रीट द्वीप के दक्षिणी तट के बराबर बराबर दूर तक खड़ा कर लिया था। अतएव नेलसन की दृष्टि उस पर न पड़ी।

१ जौलाई सन् १७९८ ई० को फ्रांसीसी बेड़ा सिकन्दरिया के बन्दरगाह में पहुँचा। किसी प्रकार के विरोध के न होने के कारण जहाज़ों का सामान सरलता से उतार लिया गया। इस समय मिस्र तुर्की साम्राज्य का एक प्रान्त था और सुल्तान की ओर से मेम्लूक (Memluke) जाति का बादशाह वहाँ शासन कर रहा था। मिस्र पर सफलता के साथ आक्रमण करने के लिये इस बात की आवश्यकता होती है कि समुद्र तट से नील नदी की बिल्कुल पूर्वी अथवा उसकी बिल्कुल पश्चिमी शाखा से उसकी ओर बढ़ा जाय। इनके बीच में दलदली भूमि का एक डेल्टा है जिसमें नहरों का जाल बिछा हुआ है। किसी भी आक्रमणकारी को उससे दूर रहना आवश्यक है। बुद्धिमान बोनापार्ट ने इस बात को तुरन्त समझ लिया। अतएव वह सिकन्दरिया नगर पर अधिकार कर के पश्चिमी शाखा से भीतर की ओर बढ़ा, और पिरामिडों के युद्ध में मेम्लूक जाति के बादशाह को परास्त करके क़ाहिरा नगर तथा उत्तरी मिस्र पर अधिकार कर लिया। फ्रांसीसियों ने यह विजय मिस्र में पदार्पण करने के केवल २३ दिन पश्चात् प्राप्त की थी। इसमें उनको बहुत कम क्षति सहन करनी पड़ी थी, परन्तु उन्हें पूर्ण सफलता मिली थी। यही वह युद्ध है जिसमें नैपोलियन ने अपने सैनिकों को सम्बोधित करके कहा था, "सैनिको, चालीस शताब्दियाँ तुम्हारी ओर दृष्टि लगाये हैं।" इसका अर्थ स्पष्ट था। इस संकेत के अनुसार उन्होंने अपने प्राणों पर खेल कर युद्ध किया और न केवल अपनी और अपने नायक की वरन् सम्पूर्ण फ्रांस की कीर्ति तथा प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण बनाये रक्खा। मेम्लूक सैनिकों ने भी पूरी कोशिश से युद्ध किया। अन्ततः वे नील नदी को पार करके दूसरी ओर भागने लगे। फ्रांसीसी इसके बाद भी कई घंटों तक युद्ध करते रहे यहाँ तक कि उनके अधिकार में उस स्वर्ण राशि का कुछ भाग आगया जिसे शत्रु के सैनिक लिये हुये थे*। उपरोक्त युद्ध २१ जौलाई को हुआ था।

पिरामिडों का युद्ध

दूसरे दिन बोनापार्ट ने क़ाहिरा नगर में प्रवेश किया। वहाँ पहुँच कर

---

* मेम्लूक जाति के मनुष्यों के विषय में प्रसिद्ध है कि वे सर्वदा अपने पास सोने की एक मात्रा रखते थे।

सर्वप्रथम उसको यह चिन्ता हुई कि मेम्लूक जाति से किस प्रकार फ्रांसवासियों की रक्षा की जाय। जो लोग धार्मिक जोश से अंधे होते हैं उनका गोला बारूद भी कुछ नहीं बिगाड़ सकती। नैपोलियन ने कपट से कार्य किया और वह इस प्रकार का व्यवहार करने लगा मानो वह इस्लाम धर्म का अनुयायी हो। उसे यह बात भली भांति स्मरण थी कि जब दो सहस्र वर्ष पूर्व सिकन्दर महान् मिस्र में आया था तो उसने वहाँ के विख्यात सेंट ऐमों (Ammon) के देवालय में आराधना की थी, और स्वयं को बृहस्पति (Jupiter) का पुत्र प्रसिद्ध किया था। "सिकन्दर के इस एक कार्य के करने से उसकी विजयों के विषय में इतनी अधिक सहायता मिली जितनी सहायता उसकी एक लाख बीस सहस्र सेना से भी न मिल सकती थी।" अतएव नैपोलियन भी इस्लाम के लिये प्रगाढ़ प्रेम प्रकट करने लगा। क़ाहिरा के धार्मिक नेता उसकी प्रशंसा करने लगे। वह क़ुरान से उद्धरण प्रेषित करने लगा और यह तर्क उपस्थित करने लगा कि फ्रांसीसी ईसाई धर्म में पीछे होने के कारण इस्लाम पर श्रद्धा रखने में बहुत आगे हैं। उसने फ्रांसीसी सेना के लिये एक मस्जिद निर्माण कराने के लिये नक़शा भी तैयार कराया था। वह कहता था कि केवल दो बातें फ्रांसीसियों को इस्लाम स्वीकार करने से दूर रखती हैं। प्रथम, मद्यसेवन जिसे वे त्याग नहीं सकते। द्वितीय, खतना जिसे वे किसी भी दशा में स्वीकार नहीं कर सकते। क़ाहिरा में पहुँचने के पश्चात् नैपोलियन ने इस बात का भी प्रयत्न किया था कि उसका कोई भी सैनिक मिस्र वासियों को हानि न पहुँचाये। सेना के लिये उसका प्रथम आदेश यह था,—"जिन जातियों से अब हमको काम पड़ा है वे अपनी स्त्रियों के साथ उस प्रकार का व्यवहार नहीं करतीं जिस प्रकार हम करते हैं। इसके होते हुये भी कोई भी व्यक्ति जो स्त्रियों को हानि पहुँचायेगा यूरोप की भाँति इस देश में भी दानव समझा जायेगा। लूट करने से बहुत कम व्यक्ति धन सम्पन्न होते हैं परन्तु इससे सब लोगों का अपमान होता है, सहायता के सभी साधन नष्ट हो जाते हैं और वे लोग हमसे घृणा करने लगते हैं जिनसे मित्रता कर के हम अपना लाभ कर सकते हैं।" खुशामद करके तथा धमका कर, सदव्यवहार करके तथा षड्यन्त्र करके, आज्ञा व तलवार की सहायता से अर्थात् किसी न किसी प्रयत्न से नैपोलियन बोनापार्ट ने मिस्र निवासियों के हृदयों में स्थान पाने तथा उनको प्रसन्न करने का प्रयत्न किया।

मिस्रवासियों को प्रसन्न करने का प्रयत्न

किन्तु इस प्रकार की बातों से बोनापार्ट का काम न चल सकता था। उसका वास्तविक शत्रु मिस्र देश के आन्तरिक भाग में न था, वरन् बाहर था। उसे अपने भाग्य का निर्णय मिस्रवासियों के हाथों न करना था। वरन् इंग्लैंड के

सैनिकों तथा नाविकों से करना था। इस समय दो महत्वपूर्ण घटनायें ऐसी हुईं जिनसे नैपोलियन के उद्देश्यपूर्ति में विघ्न पड़ा।

नील नदी का युद्ध, १ अगस्त सन् १७९८ ई० अंगरेज़ों को समुद्र पर एक अपूर्व सफलता प्राप्त हुई तथा फ्रांस और तुर्की की मित्रता का बिल्कुल अन्त कर दिया गया। १ अगस्त सन् १७९८ ई० को इंग्लैंड के जलसेना-नायक नेल्सन ने फ्रांसीसी बेड़े को अबूकर खाड़ी में पूर्णतया नष्ट कर दिया और चार जहाज़ों को छोड़ कर शेष जलमग्न हो गये अथवा बन्दी बना लिये गये। इतनी बड़ी क्षति फ्रांसीसी सेनाध्यक्ष ने इससे पूर्व कभी भी सहन नहीं की थी। उपरोक्त युद्ध से, जो इतिहास में नील नदी का युद्ध (Battle of the Nile) कहलाता है, फ्रांस से नैपोलियन का सम्पर्क बिल्कुल छिन्न भिन्न हो गया तथा फ्रांसीसी सैनिकों की आशाओं पर पानी फिर गया। परन्तु नैपोलियन की शारीरिक व मानसिक शक्ति अनुपम थी। पराजय का समाचार सुन कर उसने उफ़ तक न की। उसमें एक विशेष गुण यह था कि वह परिस्थिति के अनुसार अपनी योजना को बदल सकता था। उसे ऐसा भासित होता था कि घटनाओं के प्रतिकूल हो जाने से उसमें नवीन शक्ति उत्पन्न हो गई है। सारांश यह कि अत्यन्त शान्ति और गंभीरता के साथ उसने अपने अफ़सरों को बुलाया और वक्तृता के द्वारा उनके साहस और आशाओं को ऊँचा करने का प्रयत्न किया। सब से अधिक उसने इस बात पर ज़ोर दिया कि सैनिकों का साहस किसी प्रकार भी कम न होना चाहिये। उसने बतलाया कि यही अवसर है जब कि मनुष्य के धैर्य व अन्य गुणों की परीक्षा होती है। "हमको अपने सिरों को तूफ़ानी बाढ़ से ऊपर रखना चाहिये और हम बाढ़ पर क़ाबू पा जायेंगे। ऐसा ज्ञात होता है कि हमारे भाग्य में यह लिखा है कि हम पूर्वीय देशों के रूप को ही परिवर्तित कर देंगे और अपने नामों को उन लोगों के नामों के समकक्ष रक्खें जिनका स्मरण प्राचीन और मध्यकालीन इतिहास बड़ी प्रतिष्ठा और गौरव के साथ कराता है।" इसमें सन्देह नहीं कि उपरोक्त युद्ध में नैपोलियन जल सेना का अध्यक्ष न था और न वह उसमें सम्मिलित ही था। तथापि उसकी कीर्ति को बहुत बड़ा धक्का लगा। यूरोप के निवासियों को प्रथम बार यह भासित हुआ कि कम से कम जल युद्ध में नैपोलियन को परास्त करना असंभव नहीं है।

नील नदी के युद्ध के पश्चात् नैपोलियन फ्रांस से समाचार पाने की प्रतीक्षा करने लगा। इस प्रकार चार सप्ताह व्यतीत हो गये। इस समय का उसने बड़ा ही सुन्दर उपयोग किया। उसने उन विद्वानों और विशेषज्ञों की सहायता से जिन्हें वह साथ लाया था मिस्र के भग्नावशेषों की खोज की और कई प्रकार के नवीन प्रयोगों द्वारा ख्याति प्राप्ति की। उसके चिकित्सकों ने पूर्वीय देशों के

रोग निदान ज्ञात करने का प्रयत्न किया। उसके ज्योतिषियों और भूविद्या विशारदों ने उपयोगी जानकारी प्राप्त की तथा भूगर्भ शास्त्रियों ने मेम्फ़स नगर के देवालयों तथा मूसा के कुंओं को ज्ञात किया। नैपोलियन स्वयं स्वेज़ के स्थल डमरूमध्य की ओर गया और प्राचीन नहर का मार्ग ज्ञात किया। इसके अतिरिक्त उसने उस नये मार्ग का भी प्रस्ताव किया जिस पर पचास वर्ष पश्चात् फ्रांस के प्रसिद्ध इंजिनियर लैसैप्स (Lesseps) ने वर्तमान नहर को खुदवाया था।

एक मास के पश्चात् फ्रांस से समाचार आया कि तुर्की ने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी है। इसके कारण नैपोलियन को मिस्र में नवीन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वहाँ के प्रमुख व्यक्ति जिनको प्रसन्न करने का वह प्रयत्न कर रहा था अकस्मात उसके विरुद्ध हो गये। मस्जिदों से सुल्तान के आदेश पढ़े जाने लगे जिनमें कहा गया था कि फ्रांसीसियों को देश से निर्वासित कर दिया जाय। उनके विरुद्ध एक दो विद्रोह भी हुये, जिनको नैपोलियन ने अत्यन्त कठोरता से समाप्त किया। गर्मी और रोगों की अधिकता के कारण धीरे धीरे नैपोलियन के सैनिक भी विद्रोह करने को उद्यत हो रहे थे। जनवरी सन् १७६६ ई० में जब नैपोलियन स्वेज़ नगर में था उसे सूचना मिली कि सुल्तान के प्रधान मंत्री ने जो सिरिया का अफ़सर भी था मिस्र पर आक्रमण करने के उद्देश्य से एक सेना एकत्रित कर ली है तथा एक दो दुर्गों को भी विजय कर लिया है। यह समाचार उसके लिये अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ। उसे सिरिया पर आक्रमण करने का बहाना मिल गया। उसने अनुभव किया कि नवीन विजय प्राप्त करके सैनिकों के उत्साह व स्फूर्ति को बढ़ाने का सुन्दर अवसर आ गया है। अपनी प्रथम योजना के अनुसार वह फ्रांस को तो लौट नहीं सकता था और न अनुपम तैयारी के बिना भारतवर्ष की दिशा में बढ़ने का विचार ही कर सकता था। परन्तु सिरिया को विजय कर लेने से कई लाभ अवश्य हो सकते थे। इस विधि से वह मिस्र की पूर्वीय सीमा को सुरक्षित कर सकता था। इंग्लैंड के एक उपयोगी समुद्री आधार पर अधिकार कर सकता था। वह पूर्वीय देशों में ख्याति उपलब्ध कर सकता था और उसके अधिकार में एक ऐसा देश आ सकता था जहाँ से वह ऐशियाई कोचक तथा यूरोपीय तुर्की पर सरलता से आक्रमण कर सकता था। यदि भाग्य ने अधिक साथ दिया तो वह फ़ारस के मार्ग से भारतवर्ष भी पहुँच सकता था।

सिरिया पर आक्रमण

उपरोक्त लाभों को ध्यान में रख कर नैपोलियन ने फर्वरी सन् १७६६ ई० में सिरिया पर आक्रमण कर दिया, परन्तु इसका परिणाम बहुत ही बुरा हुआ। भूख, प्यास और महामारी के बीच सिरिया के युद्ध का अन्त एक ऐसे नगर की प्राचीरों

के सामने हुआ जिसका महत्त्व बहुत ही कम था। प्रारम्भ में तो सफलता ने बोनापार्ट का साथ दिया। उसने दो साधारण नगरों को विजय कर के जाफ़ा पर अधिकार कर लिया। फिर वह एकर नगर का घेरा डाल कर बैठ गया किन्तु वह उसके लेने में कृतकार्य न हुआ। अंगरेज़ी जल सेनानायक सिडनी स्मिथ (Sydney Smith) तथा फ्रांस के इंजीनियर पिकार्द दी फेलीपो (Picard de Phelippeaux) ने जो राजतन्त्र का पक्षपाती था उक्त नगर की सुरक्षा का इतना सुन्दर प्रबन्ध कर दिया कि दो मास से भी अधिक समय तक यह साधारण दुर्ग नैपोलियन की तोपों और आक्रमणों का सामना करता रहा। अन्तत: २० मई को घेरा उठा लिया गया। फ्रांसीसी सैनिकों में महामारी का ज़ोर बढ़ गया था और उसका गोला बारूद भी समाप्त हो चला था। सबसे महत्व की बात यह थी कि एक तुर्की जल बेड़ा नील नदी के डेल्टा की ओर बढ़ रहा था। १४ जून को तीन सौ मील की यात्रा करके सिरिया के हताश सैनिक क़ाहिरा में लौट आये। परन्तु इस सम्बन्ध में हम इस बात का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकते कि लौटते समय २६ दिनों की यात्रा में नेपोलियन के सुदृढ़ विचार और जीवित आदर्श को देख कर उसकी सेना ने बड़ी से बड़ी कठिनाई को हँसते हँसते सहन किया था तथा वीरता और बलिदान के ऐसे ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित किये थे कि उनकी प्रशंसा करना प्रत्येक लेखक का कर्तव्य बन जाता है। इस सम्बन्ध में नैपोलियन पर एक विशेष कलंक यह है कि उसने जाफ़ा के विजय हो जाने के पश्चात् तीन सौ युद्ध बन्दियों को सागर तट पर ले जाकर वध करा दिया था। बाद को सैनिक आलोचकों ने, जिनमें जर्मन भी सम्मिलित थे, इस बात को स्वीकार किया कि जिस दशा में नैपोलियन बोनापार्ट उस समय था, उसके पास कोई दूसरा उपाय ही न था। उसके पास जहाज़ न थे। खाद्य सामग्री की कमी थी। बन्दियों की रक्षा के लिये सहस्रों फ्रांसीसियों की आवश्यकता थी। यदि वह उनको स्वतन्त्र कर देता तो वे अवश्य ही एकर पहुँच कर शत्रु की शक्ति में वृद्धि के साधन हो जाते। अतएव हम कह सकते हैं कि नैपोलियन ने वहाँ जो कुछ भी किया था उचित था।

नैपोलियन बोनापार्ट अत्यन्त जीर्ण अवस्था में मिस्र को लौटा था। तथापि वह किसी भी साधारण शत्रु का सामना करने के लिये यथेष्ट शक्ति रखता था।

तुर्की सेना का नाश

एक तुर्की सेना, जिसकी संख्या लगभग १५ सहस्र बतलायी जाती है, उसे मिस्र से निर्वासित करने के ध्येय से अबूकर खाड़ी में उतरी, परन्तु २५ जौलाई को नैपोलियन ने उसे पूर्ण रूप से परास्त करके नष्ट कर दिया। फ्रांसीसी सेना यद्यपि संख्या में केवल

आयी थी, परन्तु नैपोलियन ने इतनी वेग, दृढ़ संकल्प तथा बिल्कुल ठीक व्यवस्था से काम लिया कि रणभेरी ने उसी की विजय सुनाई। जो धब्बा नैपोलियन के नाम पर सिरिया के युद्ध से लग गया था वह अबूकर खाड़ी की विजय से धुल गया। युद्ध के बाद मूरा नाम के अफ़सर ने अपने सेनाध्यक्ष को इन शब्दों में बधाई दी, "सेनाध्यक्ष, आप संसार के तुल्य महान हैं, किन्तु संसार आप से बहुत छोटा है।"

उपरोक्त युद्ध के दो मास पूर्व ही नैपोलियन ने मिस्र से लौटने का निश्चय कर लिया था। मार्च के महीने में जब वह एकर का घेरा डाले हुए था, उसे इस बात की सूचना मिल गई थी कि महाद्वीप पर पुनः युद्ध प्रारम्भ हो गया है और रूस, आस्ट्रिया, सार्डिनिया और नेपिल्ज़ ने फ्रांस के गण-राज्य के विरुद्ध संगठन कर लिया है। जब वह मिस्र लौटा तो उसे इससे भी अधिक बुरा समाचार मिला। सर सिडनी स्मिथ ने, जो सिकन्दरिया के सामने घूम रहा था, उसके पास कुछ समाचारपत्र पहुंचा दिये जिनको पढ़कर उसने यह ज्ञात कर लिया कि फ्रांस के निवासी इटैली से निकाल दिये गये हैं और उनके स्वदेश पर आक्रमण की अधिक सम्भावना है। ऐसी परिस्थिति में योग्य से योग्य सेनापति अथवा जल सेनानायक भी इस निर्णय पर पहुंचता कि उसका कार्य घर पर है, न कि मिस्र जैसे सुदूर देश में। बस उसने फ्रांस लौटने का निर्णय कर लिया। इसके पूर्व ही उसने अपने भाई को लिखा था, "यदि फ्रांस को मेरी आवश्यकता होगी तो मैं चला आऊँगा।" अतएव २१ अगस्त को वह गुप्त रीति से सिकन्दरिया के बन्दरगाह से चुने हुए अफ़सरों के साथ फ्रांस लौट आया। इसकी सूचना मिस्र के फ्रांसीसी सैनिकों को नाम मात्र को भी न दी गई थी। यहां तक कि सेनापति क्लेबेयर (Kleber) को भी, जिसकी अधीनता में समस्त सेना छोड़ी गई थी, नैपोलियन के चले जाने का हाल बाद को उसके पत्र द्वारा ज्ञात हुआ था। जिस सेना को उसने मिस्र में छोड़ दिया था वह दो वर्ष तक वहां से न निकल सकी। इसके पश्चात् अंगरेज़ों ने उसे परास्त करके उसके शेष भाग को फ्रांस पहुंचा दिया। नैपोलियन स्वयं अक्टूबर के मास में रात्रि के समय नीस नगर से ३२ मील दक्षिण-पश्चिम की दिशा में फ्रेजूस के बन्दरगाह में उतरा। नगर के निवासियों ने उसका अभिनन्दन नारे लगाकर किया। यह देखकर नैपोलियन बहुत हर्षित हुआ, और कहने लगा, "ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक व्यक्ति मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। यदि मैं तनिक भी पहले आता तो यह ठीक न होता और यदि मैं कल आता तो बहुत देर हो जाती। मैं ठीक समय पर आया हूं।" नाशपाती अब पक चुकी थी और इस योग्य थी कि उसे तोड़ लिया जाय।

नैपोलियन का लौटना

इस प्रकार मिस्र के उस युद्ध का अन्त हुआ जिस पर नेपोलियन बोनापार्ट की समस्त आशायें निर्भर थीं। "जहाज़ों पर हम सागर पार कर सकते हैं। ऊँटों पर हम मरुस्थल को पार कर सकते हैं।" इस प्रकार नेपोलियन को पूर्ण आशा थी कि मिस्र पहुंच कर वह भारतवर्ष की ओर अग्रसर होने का मार्ग बना लेगा। असफलता की दशा में उसका दृढ़ संकल्प, उत्तर की दिशा में बढ़कर तुर्कों के यूरोपीय साम्राज्य को समाप्त करने का था। जो व्यक्ति इस प्रकार की महत्वाकांक्षायें रखता था उसकी असफलता और पराजय भी एक विशेषता लिये हुये थी। नेपोलियन ने मिस्र में विद्या और विज्ञान की उन्नति करने में कोई उपाय छोड़ न रक्खा था। अतएव उसके प्रयत्नों के सुन्दर परिणामों तथा उसकी प्रतिष्ठा और शान में किसी प्रकार की कमी न हुई थी। उसने मिस्रवासियों को नई प्रणाली की शासन पद्धति के लाभों से अवगत कराया तथा यूरोप निवासियों का ध्यान विशेष रीति से नील घाटी के भग्नावशेषों और वहां की भाषा इत्यादि की ओर आकर्षित किया। "रोमन साम्राज्य के समय के पश्चात् एक सभ्यता और संस्कृतिपूर्ण राष्ट्र को जो कला और विज्ञान से अवगत हो चुकी है प्रथम बार इस बात का सुअवसर प्राप्त हुआ है कि वह उन भग्नावशेषों का अवलोकन करे, उनकी नापजोख करे एवं उनके सम्बन्ध में खोजबीन करे जो कई शताब्दियों से विद्वज्जनों की उत्सुकता का कारण रहे हैं।" मिस्र के प्रसिद्ध नगर रोज़ेटा (Rosetta) में, जो सिकन्दरिया से ३५ मील उत्तर-पूर्व की दिशा में बसा हुआ है, नेपोलियन के एक पदाधिकारी ने तीन भाषाओं में लिखित एक लेख को ज्ञात किया था जिसकी सहायता से उक्त देश की लेखन प्रणाली को समझने में अधिक सहायता मिली थी। नेपोलियन के साथ जो विद्या और कला के विद्वान मिस्र गये थे उनके प्राप्त ज्ञान और सफलताओं पर एक बहुमूल्य पुस्तक रची गई जिसका नाम 'मिस्र दर्शन' (The Description of Egypt) है। यह अपने कोटि की एकमात्र पुस्तक है। इससे ऐसे देश के विषय में बहुत कुछ ज्ञान उपलब्ध होता है जिसने ईसा से ४०० वर्ष पूर्व यूनान के प्रसिद्ध लेखक हेरोडोटस (Herodotus) को अपने इतिहास का सर्वोत्कृष्ट भाग लिखने को बाध्य किया था।

मिस्र के युद्ध का महत्व

मिस्र और सिरिया के युद्धों से नेपोलियन बोनापार्ट की प्रतिष्ठा और ख्याति में किसी प्रकार की कमी न हुई। एक योग्य और चतुर व्यक्ति के लिये इससे अधिक ख्याति प्राप्त करने का और कौनसा साधन हो सकता था कि उसने दो ऐसे प्राचीन देशों की जानकारी प्राप्त की थी जो ईसाई धर्म और उसके अनुयायियों से विशेष रूप से सम्बन्धित रह चुके थे। सिकन्दरिया, पिरामिड

ाफ़ा और नज़ेरेथ (Nazareth) ये वे नाम हैं जो प्राचीन इतिहास में विख्यात हो चुके थे और अर्वाचीन युग के इतिहास में जिनकी स्मृति को नैपोलियन ' पुनर्जीवित किया था। नैपोलियन ने अपनी पराजय की सूचना को कठिनता से फ्रांस पहुंचने दिया था। अतएव फ्रांस के निवासी उससे अत्यन्त प्रसन्न थे तथा उनके दयों में उसका सम्मान और गौरव बढ़ा हुआ था।

तेईसवां अध्याय

सन् १७९९ ई० का संविधान

तथा

द्वितीय यूरोपीय संघ का युद्ध

नैपोलियन बोनापार्ट के फ्रेजूस के बन्दरगाह में उतरने के बहुत पूर्व फ्रांसीसी राष्ट्र ने अपने हृदय में उसे शासक बनाने का निर्णय कर लिया था। जब उसके मिस्र से लौटने का समाचार प्रकाशित हुआ तो समस्त देश में हर्ष मनाया गया। ऐसा प्रतीत होता था मानो दीर्घकाल के बाद किसी भयंकर रोग की औषधि उपलब्ध होगई हो। वकीलों का शासन बड़ी अपकीर्ति कमा चुका था। साधारण रूप से लोग युद्ध तथा क्रांति से विकल हो चुके थे। उनका विचार था कि जिस मनुष्य ने इटैली में आश्चर्यकारी विजय प्राप्त की हैं, जिसने मिस्र को लाभकारी सुधारों की अधिकता से सम्पन्न कर दिया है, जो व्यक्ति कि पेरिस के राजनैतिक दलों और उनके अश्लील झगड़ों से दूर रहा है तथा जिसके हृदय में सबसे अधिक सम्मान गण-राज्य के लिये है, ऐसा व्यक्ति अवश्य ही फ्रांस को उसकी विषमताओं से उन्मुक्त कर सकेगा। उनकी दृष्टि में बोनापार्ट ही एक ऐसा व्यक्ति था जो अस्ट्रिया, रूस और इंग्लैंड को परास्त करके उन्हें उचित शर्तों पर सन्धि करने को विवश कर सकता था, जो वैंदे में शांति स्थापित कर सकता था, जो फ्रांस में सुन्दरतम शासन पद्धति स्थापित कर सकता था और जो सुप्रबन्ध तथा सुधारों द्वारा देश का कल्याण कर सकता था। सारांश यह कि जब शत्रुओं की दृष्टि को बचाता हुआ नैपोलियन छः सप्ताहों की यात्रा के पश्चात् फ्रांस के तट पर उतरा तो जनता ने उसे 'मसीह' के रूप में हृदयङ्गम किया, जो तत्क्षण सभी प्रकार के रोगों की औषधि उपलब्ध कर सकता था अथवा

उसे एक जादूगर के रूप में पाया जो अपने डण्डे को हिलाकर आश्चर्यकारी चमत्कार दिखला सकता है।

शासन पर अधिकार करने की आकांक्षा

नेपोलियन को फ्रांस और उसके गण-राज्य के अतिरिक्त अपना भी ध्यान था। उसके हृदय में शासन पर अधिकार करने की प्रबल आकांक्षा थी। ऐसा ज्ञात होता है कि इटैली में पदार्पण करने से बहुत पहले उसे अपने महत्व का आभास हो चुका था। जब उसने प्रथम बार खड्ग बांधी थी तो उसने सोचा था कि "केवल पेटी फ्रांस की है और उसकी धार पर मेरा पूर्ण अधिकार है।" जब संचालकों ने केरास्को की सन्धि की शर्तें उसके पास भेजी थीं तो उसने उत्तर में यह लिखा था,—"आपने साडिनिया से सन्धि करने के लिये जो शर्तें भेजी हैं वे मुझे मिल गई हैं। सेना ने उनको स्वीकार कर लिया है।" इस उत्तर को पढ़कर संचालक थर्रा उठे थे। इससे पूर्व युद्धक्षेत्र से किसी भी सेनाध्यक्ष ने अपनी सरकार को इस प्रकार की भाषा में पत्र नहीं लिखा था। जैसे जैसे नेपोलियन उन्नति करता था वैसे वैसे उसे अपने महत्व का अधिक आभास होता जाता था। जब उसे मिस्र में सर सिडनी स्मिथ का भेजा हुआ समाचारपत्रों का बंडल मिला था तो वह उनको पढ़कर समझ गया था, कि अब वह समय आगया है जिसकी उसे प्रतीक्षा थी। फ्रांस के निवासियों ने उसका अभिनन्दन हृदय खोलकर किया था। इससे ज्ञात होता है कि वे उसके शासक बनाये जाने के पक्ष में थे। इसके पश्चात् जब उन्होंने सार्वजनिक मतदान द्वारा इसका समर्थन किया तो बोनापार्ट की स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ होगई। यह एक ऐसी विशेषता है जो यूरोप के बादशाहों को भी उपलब्ध न हो सकी थी। बर्लिन, वीयेना तथा पीटर्सबर्ग के शासकों के प्रतिकूल नेपोलियन यह दावा कर सकता था कि उसे फ्रांस का शासन वंशानुगत अधिकार द्वारा प्राप्त नहीं हुआ था वरन् इसलिए कि फ्रांस के निवासी उसको चाहते थे और वे इस बात के आकांक्षी थे कि वह शासन सूत्र अपने हाथ में ले। वह कहा करता था कि मैं क्रांति का सर्वोत्कृष्ट वर प्रसाद हूं तथा फ्रांस के लाखों निवासी मेरी उन्नति तथा साम्राज्य वृद्धि को देखकर प्रसन्न होते हैं। जो शासन उसने लौटकर स्थापित किया वह नवीन प्रणाली का था। न वह गणतन्त्रवादी पद्धति का था और न राजतन्त्र की पद्धति का। उसमें दोनों की विशेषतायें उग्र रूप में विद्यमान थीं। अर्थात् जनता ने उसे शासक बनाया था, किन्तु उसके अधिकार निरंकुश प्रणाली के थे। ऐसे व्यक्ति की तुलना में जिसको शासन का अधिकार जनता की ओर से प्राप्त हुआ हो वंशानुगत अधिकारों से सम्पन्न सम्राट अथवा विदेशों की सहायता द्वारा स्थापित शासन मूल्यहीन थे। लोकतन्त्र का सिद्धान्त बोनापार्ट के पक्ष में दृढ़ था। यही कारण है कि जब बूरबन वंश

के सम्राट अंगरेज़ी सैनिकों की सहायता से फ्रांस में दोबारा शासन करने लगे तो नैपोलियन ने सार्वजनिक रूप में इस बात पर ज़ोर दिया कि विदेशी राष्ट्र फ्रांस के वैधानिक शासन को न बना सकते हैं और न बिगाड़ सकते हैं तथा केवल फ्रांस का राष्ट्र ही उन अधिकारों को लौटा सकता है जो उसने प्रदान किये हैं।

जिस ढंग से बोनापार्ट ने स्वयं को फ्रांस का स्वामी बनाया था वह उस जैसे व्यक्ति को तथा उस युग प्रवाह को शोभा देता था। उसने कपट और तलवार के बल से उस संविधान को हटा दिया जो उस समय प्रचलित था। "यह मेरे जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना है जिसके सम्बन्ध में मैंने अत्यन्त योग्यता से काम लिया था।" जब वह अबूकर खाड़ी का युद्ध विजय करके लौटा था तो जनता ने उसका स्वागत योद्धा कह कर किया था। परन्तु वह सेनापति के जीवन से विरक्त हो गया और वह एक साधारण तथा प्रतिष्ठाहीन व्यक्ति की भांति जीवन व्यतीत करने लगा। कभी वह विद्वानों की सभा में लेख पढ़ता और कभी किसी साधारण व्यक्ति के साथ सड़कों पर टहलता दिखाई देता। वह कई सप्ताहों तक गुप्त रीति से पेरिस के राजनैतिक दलों का निरीक्षण करता रहा तथा इस बात को ज्ञात करने का प्रयत्न करता रहा कि किस व्यक्ति तथा किस दल की सहायता से वह अपना कार्य सिद्ध कर सकता है। अन्ततः वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि संचालक वर्ग में केवल एक ही व्यक्ति ऐसा है जो उसे निर्दिष्ट स्थान तक पहुंचा सकता है। यह ऐबे सीएयेज़ था। उसका उल्लेख पहले भी हो चुका है। उसके पथप्रदर्शन से नैपोलियन ने ब्रूमेयर के शासन परिवर्तन में सफलता प्राप्त की। उसके दो अन्य हितकारी भी थे। प्रथम, बारास जो उसका प्राचीन मित्र और सहायक था। द्वितीय, तैलिरैंद जो बिशप रह चुका था परन्तु अब वाह्य मन्त्री था। नैपोलियन को अपने भाई लूसीन (Lucien) से भी यथेष्ट सहायता मिली। वह उस मास के लिये पाँच सौ की सभा (Council of Five Hundreds) का अध्यक्ष था। किन्तु इस प्रसंग में एक स्मरण रखने वाली बात यह है कि बोनापार्ट ने युद्ध शक्ति अथवा अवैधानिक उपायों का आश्रय विवश होकर लिया था। ब्रूमेयर के आकस्मिक शासन परिवर्तन (Coup d' etat) से पहले उसने एक बार यह कहा था,—"लोग यह कह सकते हैं कि मैं सेनापतियों का सामना करने से डरता हूं, किन्तु किसी व्यक्ति को इसका अधिकार न होगा कि वह अवैधानिक कार्यों के करने का कलंक मुझ पर आरोपित करे। मुझे न (राजनैतिक) दलों की आवश्यकता है और न युद्ध शक्ति की। यह अत्यन्त आवश्यक है कि समस्त राष्ट्र अपने प्रतिनिधियों के मतदान द्वारा इस निर्णय का समर्थन करे। गृह-युद्ध की

आवश्यकता नहीं है। जो कार्य नगर निवासियों के रक्तपात से प्रारम्भ किया जाता है उसका परिणाम लज्जाप्रद होता है।"

सन् १७९५ ई० का संविधान, जो उस समय फ्रांस में प्रचलित था, चाहे कितना ही दोषपूर्ण क्यों न हो, फिर भी उसका हटाना बहुत ही कठिन था।

ब्रूमेयर का आकस्मिक शासन परिवर्तन

अत: नेपोलियन और सीएयेस ने अत्यन्त सावधानी से कार्य किया। उनके मार्ग में एक बहुत बड़ी कठिनाई यह थी कि फ्रांस में उस समय भी गणतन्त्रवाद का अधिक ज़ोर था तथा ज्रूरदाँ (Jourdon) और मूरा के तुल्य कई सेनाध्यक्ष, दो संचालक और पांच सौ की सभा के अधिकतर सदस्य उसके पक्षपाती थे। जिस सिद्धान्त के लिये सम्राट की बलि दी गई थी उसी सिद्धान्त का बलिदान लोग कैसे सहन कर सकते थे? बोनापार्ट की आयु इस योग्य न थी कि वह संचालक मण्डल में सम्मिलित कर लिया जाता। अतएव यह योजना बनाई गई कि सबसे प्रथम संचालक अपना त्यागपत्र देंगे। इसका समाचार पाते ही दोनों धारा सभाओं के सदस्यगण संविधान निर्माण का कार्य षड़यन्त्र कारियो के अधीन कर देंगे। यह योजना देखने में सरल और साहसपूर्ण थी, किन्तु उसको निर्दिष्ट स्थान तक पहुंचाने के लिये इस बात की आवश्यकता थी कि पहले गुप्त रूप से षड़यन्त्र द्वारा कार्य किया जाय, फिर तलवार के बल से विरोधियों को शान्त कर दिया जाय। छानबीन करने पर ज्ञात हुआ कि संचालकों में तीन व्यक्तियों पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। पांच सौ सदस्यों की सभा के सदस्य पूर्णतया विरुद्ध थे। वृद्धजनों की सभा में कम से कम साठ सदस्य ऐसे थे जिनके विषय में संदेह था। इसके विरुद्ध पेरिस सदा से जेकोबिन दल का केन्द्र रहा था। वहां नैपोलियन तथा उसके साथियों को सफलता किस प्रकार मिल सकती थी? यह एक बहुत बड़ी कठिनाई थी। इसके दूर करने के लिये यह निश्चित किया गया कि द्वितीय सभा अपने वैधानिक अधिकार से काम लेकर यह निर्णय करेगी कि पेरिस में षड़यन्त्र की आशंका होने से विधान मण्डल के अधिवेशन सैं क्लू (St. Cloud) में हुआ करेंगे। वहां नैपोलियन अपने अनुभवी और वफ़ादार सैनिकों की सहायता से दोनों सभाओं को अपने ही हाथ से अपना अन्त करने को विवश कर सकता था।

अब यह देखना है कि इस कार्यक्रम में किस सीमा तक सफलता मिली। सीएयेस और डूको ने, जो षड़यन्त्र में सम्मिलित थे, तुरन्त त्यागपत्र दे दिया। बारास ने इसमें देर की, किन्तु बाद को उसने भी त्यागपत्र दे दिया। शेष संचालक जिन्होंने ऐसा करना स्वीकार न किया बन्दी बना लिये गये। ९ नवम्बर (क्रांतिकारी पत्रा के अनुसार १८ ब्रूमेयर) को वृद्ध जनों की सभा में यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया

गया कि दोनों सभाओं के अधिवेशन सैं क्लू में हुआ करेंगे और नैपोलियन को उसने पेरिस की सेनाओं का सेनाध्यक्ष नियुक्त कर दिया। दूसरे दिन अर्थात् १० नवम्बर (१६ ब्रूमेयर) को विशेष कठिनाई का सामना था। अतएव इस दिन जब नैपोलियन और सीएयेस गाड़ी में बैठकर सैं क्लू की ओर जा रहे थे तो प्रथम ने गैओतीं के स्थान की ओर संकेत करके कहा, "हमारे जीवन का अन्त इस स्थान पर होगा अथवा हमें लूकसेंबूर का राजप्रासाद प्राप्त होगा।" सैं क्लू पहुंचकर नैपोलियन ने दोनों सभाओं के समक्ष भाषण दिये, किन्तु वे इसके लिये तत्पर न हुईं कि उसकी ख्याति के कारण अपना तथा संविधान का अंत कर दें। वृद्ध जनों की ओर से यह आवाज़ उठी कि "हम क्रॉम्वेल के आकांक्षी नहीं हैं।" द्वितीय सभा ने उसका स्वागत इससे भी बुरी तरह किया। वहां से जो आवाज़ें उठीं वे इससे भी अधिक भयावह थीं। "अत्याचारी का अन्त कर दो।" "उसके प्राणांत की आज्ञा प्रकाशित करो। हमको एकशास्ता शासन की आवश्यकता नहीं है। यह क्रॉम्वेल हमको शृङ्खलाओं में जकड़ना चाहता है।" अब तो बोनापार्ट बहुत घबराया। विवश हो उसे अपने निर्णय के विरुद्ध सैनिक शक्ति का प्रयोग करना पड़ा। इस अवसर पर उसके भाई लूसीन ने उसकी बड़ी सहायता की। पहले उसने सदस्यों को शांत करने का प्रयत्न किया और कहा, "ईश्वर के लिये अपनी आवाज़ें बन्द करो।" किन्तु जब उसने देखा कि वे नियंत्रण के बाहर हो रहे हैं तो वह तुरन्त बाहर आया और सैनिकों के सम्मुख खड़े होकर आग्रह किया कि सभा को साहसी लुटेरों से जो पिट से धन प्राप्त करते हैं मुक्ति दिलायें। जब उसने देखा कि सैनिकों पर उसके आदेश का कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ तो उसने एक पदाधिकारी की तलवार छीन ली और उसकी नोंक बोनापार्ट के सीने की ओर करके बोला, "मैं शपथ लेकर कहता हूं कि इसे अपने भाई के शरीर में भोंक दूंगा यदि वह कभी भी फ्रांस की स्वाधीनता में बाधक होने का प्रयत्न करेगा।" लूसीन का जादू चल गया। सैनिक तुरन्त अन्दर आये। उनको देखकर सदस्यगण खिड़कियों और द्वार मार्गों से भागते हुये दिखाई दिये और क्षण भर में वृक्षों और झाड़ियों के पीछे अदृश्य हो गये। अब मैदान साफ़ था। दोनों सभाओं के चुने हुए सदस्यों की समिति ने' जिसमें केवल नैपोलियन के पक्षपाती बिठलाये गये थे, यह निर्णय किया कि शासन का सूत्र बोनापार्ट, सीएयेस तथा दूको को सौंप दिया जाय तथा फ्रांस के संविधान को बदल दिया जाय। दूसरे दिन प्रातःकाल नैपोलियन पेरिस में लौट आया और ब्रूमेयर का आकस्मिक शासन परिवर्तन भी समाप्त हो गया। रक्त की एक बूंद भी बहाये बिना जेकोबिन दल का शासन, जो दीर्घकाल से स्थापित था, समाप्त कर दिया गया। यह देखकर न केवल पेरिस वरन् समस्त फ्रांस के

निवासी शांत रहे। संचालकों अथवा कौंसलों के प्रति किसी के हृदय में सहानुभूति न थी। देश केवल एक नवीन अनुभव का इच्छुक था।

ब्रूमेयर के आकस्मिक शासन परिवर्तन से केवल यह बात निश्चित की गई थी कि फ्रांस के लिये एक नवीन संविधान बनाया जाय, परन्तु यह बात निश्चित न की जा सकी थी कि उसका रूप क्या होगा। इस नाटक के सबसे बड़े अभिनेताओं, सीएयेस और नैपोलियन बोनापार्ट में इस सम्बन्ध में बड़ा मतभेद था। प्रथम मौन्तस्क्यू का समर्थक था।

नवीन संविधान

अतएव वह शासन के तीनों विभागों को एक दूसरे से बिल्कुल पृथक रखना चाहता था। उसका दूसरा सिद्धान्त यह था कि संविधान इस प्रकार का हो कि उससे जनता का पूर्ण विश्वास तो प्रकट हो, परन्तु वास्तविक अधिकार उच्च अधिकारियों के हाथों में रहें।* नैपोलियन इस प्रकार के सिद्धान्तों को महत्व न देता था। विशेषकर वह सीएयेस के रोकथाम वाले सिद्धान्त (Principle of checks and balances) के बिल्कुल विरुद्ध था। वह एक सैनिक था और युद्धक्षेत्र में कई बार अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं का प्रमाण दे चुका था। वह इस बात पर ज़ोर देता था कि फ्रांस को एक सुदृढ़ शासन की आवश्यकता है। उसकी आकांक्षा थी, कि जो सेना का सर्वोच्च अधिकारी हो, वही शासन का अध्यक्ष बनाया जाय। वह निर्वाचित सभाओं तथा परिषदों के भी विरुद्ध था। वह यह भी न चाहता था कि विधान-मण्डल वादविवाद में ही व्यर्थ समय बरबाद करे। सारांश यह कि वह पुरातन प्रणाली के निरंकुश शासन का पक्षपाती था, परन्तु वह उसके अधिकार को वंशानुगत सम्बन्धों तथा कुलीन वर्ग के विशेष अधिकारों पर आश्रित न करके जनता की स्वीकृति व सहायता तथा योग्यता के सिद्धान्त पर खड़ा करना चाहता था। ऐसी परिस्थिति में आवश्यक था कि सीएयेस और नैपोलियन में से कोई भी दूसरे के समक्ष नत मस्तक हो। इसका निर्णय करने के लिए पचास सदस्यों की एक समिति बनाई गई, परन्तु उसने नैपोलियन के पक्ष में निर्णय दिया।

नवीन संविधान की एक विशेषता यह थी कि उसके द्वारा दिखलाने के लिए सर्वसाधारण को काफ़ी स्वतन्त्रता दे दी गई थी, परन्तु वास्तव में शासन के समस्त आवश्यक अधिकार नैपोलियन के हाथ में थे। यह बात बिल्कुल नैपोलियन के सिद्धान्त के अनुसार थी। वह कहा करता था कि फ्रांस के निवासियों को स्वतन्त्रता प्रिय नहीं है, परन्तु वे समानता के सिद्धान्त के समर्थक हैं। कार्यपालिका के सबसे बड़े अधिकारी कौंसल (Consuls) कहलाते थे। सर्वोच्च कौंसल (First Consul) का पद नैपोलियन को प्रदान किया गया। उसके अधीन दो अन्य

---

*Confidence from below; power from above.

कौंसल थे। प्रथम, कॉम्बासेरेस (Cambaceres) जो एक योग्य विधान विशेषज्ञ था और सम्राट की हत्या करने वाले जेकोबिन दल से लिया गया था। परन्तु उसको नेपोलियन के कार्य में हस्तक्षेप करने की किञ्चित चिन्ता न थी। न उसके पास इतना अवकाश ही था कि वह इस ओर ध्यान देता। द्वितीय, लबरू (Lebrun) जो बूरबन वंश के समय का एक अत्यन्त योग्य विद्वान था। वह केवल यह प्रकट करने के लिये लिया गया था कि नवीन शासन के युग में इस प्रकार के लोगों के लिये किसी प्रकार की रुकावट नहीं होगी। प्रथम कौंसल की तुलना में इन दोनों के अधिकार नगण्य थे। नैपोलियन ने शीघ्र ही स्वयं को समस्त आवश्यक अधिकारों से सज्जित करके एकशास्ता बना लिया। वह इन अधिकारों के साथ अपने पद पर दस वर्ष तक रह सकता था। वह शेष दोनों कौंसलों, मन्त्रियों तथा शासन के पदाधिकारियों व अधिकतर न्यायाधीशों को नियुक्त करता था। वह सेना का प्रधान अध्यक्ष था और स्थानीय शासन की देख रेख करता था। इसके अतिरिक्त उसका प्रभाव वाह्यनीति और अन्ताराज्यनीति विभागों पर भी था। वह कौंसिल आफ स्टेट (Council of State) का अध्यक्ष भी था और उसके सदस्यों को नियुक्त करता था। सारांश यह कि उसके अधिकार अत्यन्त विशाल थे। यदि वह चाहता तो स्वयं को एकशास्ता घोषित कर सकता था, परन्तु उसने ऐसा करना उचित न समझा। कारण यह था कि देश में उस समय भी गणतन्त्रवाद का बोलबाला था तथा वह ऐसे संविधान के द्वारा, जो गणतन्त्रवाद और निरंकुश शासन के बीच का था, धीरे धीरे सम्राटशाही की ओर बढ़ना चाहता था।

कौंसलों की सहायता के लिये कई सभायें थीं। जैसे (१) कौंसिल आफ स्टेट (Council of State) जिसके सदस्यों की नियुक्ति की जाती थी। उसका कार्य विधान सम्बन्धी हस्तलेखों को तैयार करना तथा उनको पेश करना था। (२) साठ सदस्यों का एक सिनेट (Senate), जिसका काम पदाधिकारियों तथा (३) ट्रिबुनेट (Tribunate) और (४) विधान-सभा (Legislative Assembly) के सदस्यों को नियुक्त करना था। ट्रिबुनेट में सौ सदस्य बैठते थे। इसका कर्तव्य क़ानूनी प्रस्तावों पर वादविवाद करना था। विधान-सभा के सदस्यों की संख्या तीन सौ थी। इसका कार्य दोनों पक्षों के भाषणों को सुनकर ट्रिबुनेट से आये हुये प्रस्तावों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करना था। इस प्रकार एक सभा क़ानून के मसविदे (हस्तलेख) प्रेषित करती थी। दूसरी सभा उन पर वादविवाद करती थी और तीसरी उनको स्वीकार अथवा अस्वीकार करती थी। यह विशेषता सीएयेस के सिद्धान्त के अनुसार थी। सिनेट इस बात को भी देखता था कि संविधान के अनुसार ठीक प्रकार से कार्य किया जाता है अथवा नहीं। 'कौंसल' 'ट्रिबुनेट' और

'सिनेट' आदि नाम रोम के इतिहास से लिये गये थे। कारण कि नैपोलियन तथा उसके साथियों के लिये वह आकर्षण का विषय था। परन्तु उपरोक्त सभाओं का कोई विशेष महत्व न था। फ्रांसीसी सेना के विजयी सेनाध्यक्ष को उनकी तनिक भी चिन्ता न थी। उसने शीघ्र ही उनमें से कुछ को हटा दिया तथा अपनी शक्ति तथा अधिकारों में चरम सीमा तक वृद्धि कर ली। परन्तु फ्रांस के निवासियों को इसकी चिन्ता न थी। उन्होंने बहुत बड़े बहुमत से सन् १७९९ ई० के संविधान को स्वीकार कर दिया। "नागरिको, क्रांति उन सिद्धान्तों की ओर लौट आई है जिनसे उसका श्रीगणेश हुआ था। वह समाप्त हो गई है।" इन शब्दों में बोनापार्ट ने नये संविधान को जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया था। जो कुछ नैपोलियन ने कहा था अक्षरस: सत्य था। दस वर्ष पूर्व राज्यक्रांति आरम्भ हुई थी। इस बीच में फ्रांस के निवासियों को अशान्ति, रक्त प्रवाह, युद्ध तथा अन्य संकटों का सामना करना पड़ा था। और मनोरंजन की बात यह थी कि दस वर्ष पूर्व बूरबन वंश का निरंकुश शासन स्थापित था और अब नैपोलियन का एकशास्ता शासन।

विदेशी घटनायें

प्रथम कौंसल के पद पर सुशोभित होकर नैपोलियन बोनापार्ट ने कुछ समय फ्रांस में व्यवस्था स्थापित करने में व्यतीत किया। उसने वौंदे और ब्रिटेनी के विद्रोहों को शान्त किया तथा उत्तम प्रकार की आर्थिक व्यवस्था स्थापित की। उसने विभिन्न राजनैतिक दलों से सरकारी पदों पर लोगों को नियुक्त किया। इससे प्रकट होता है कि वह किसी विशेष दल को शासन से पृथक नहीं रखना चाहता था। परन्तु जो लोग किसी भी रूप में उसका साथ देने को तैयार न थे उनको उसने शासन में सम्मिलित नहीं किया। दीर्घकालीन युग (Ancien Regime) का सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ तथा पादरी तैलिरैंद नैपोलियन का वाह्यमन्त्री बनाया गया तथा फूशे जो किसी समय जेकोबिन दल का नेता रह चुका था, पुलिस मन्त्री के पद पर सुशोभित हुआ। नैपोलियन ने भागे हुये लोगों को लौट आने की आज्ञा दे दी, परन्तु उसने पादरियों से सत्यभक्ति का वचन ले लिया।

इसके पश्चात् नैपोलियन विदेशी समस्याओं की ओर दत्तचित्त हुआ। जिस वर्ष वह प्रथम कौंसल बनाया गया था उसी वर्ष यूरोप में कई बड़े राष्ट्रों ने इंग्लैंड के नेतृत्व में दूसरा यूरोपीय संघ बनाया था। इसमें उक्त देश के अतिरिक्त रूस, अस्ट्रिया, नेपिल्ज़, पुर्तगाल और तुर्की सम्मिलित हुये। इंग्लैंड का सुविख्यात प्रधान मन्त्री छोटा पिट (Younger Pitt) संघ का प्राण था। इंग्लैंड तथा रूस की सेनाओं ने ड्यूक आफ़ यार्क की अध्यक्षता में हालैंड पर आक्रमण कर दिया था, और इटैली में रूस और अस्ट्रिया की सेनाओं ने लोम्बार्डी के मैदान में मांटोवा

पर और पीडमोंट में सिकन्दरिया पर अधिकार कर लिया था। इसके अतिरिक्त एक रूसी सेना ने सूवारोफ़ (Suvaroff) के सेनापतित्व में फ्रांसीसियों को नोवी (Novi) के युद्ध में पराजित करके जेनोआ में शरण लेने को विवश कर दिया था। इटैली में फ्रांस के अधिकार में नैपोलियन के जीते हुये देशों में उपरोक्त नगर के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रहा था। परन्तु उसके मिस्र से लौटने के पूर्व ही मित्रराष्ट्रों की विजयों को रोक दिया गया था। सितम्बर में मासीना ने रूस वासियों को ज़ूरिच (Zurich) में पराजित किया और सूवारोफ़ को स्विटज़रलैंड से निकाल दिया। अक्टूबर में ब्रून ने ड्यूक आफ़ यार्क को शस्त्र डालने और अपनी सेनाओं को लौटा ले जाने पर राज़ी कर लिया था। ज़ार पॉल (Tsar Paul) ने निश्चय कर लिया था कि वह स्थल पर युद्ध न करके केवल भूमध्य सागर में अपने प्रयत्नों को सीमित रक्खेगा। जिस कार्य को फ्रांसीसियों ने अपने हथियारों के बल पर प्रारम्भ किया था उसमें उन्हें मित्र राष्ट्रों की पारस्परिक ईर्ष्या के कारण सफलता उपलब्ध हुई थी। दिसम्बर सन् १७९९ ई० में नैपोलियन ने *इंग्लैंड के सम्राट जार्ज तृतीय और होली रोमन सम्राट फ्रांसिस के नाम पत्र भेजे थे।* इनके द्वारा उसने दोनों से युद्ध बन्द करने की प्रार्थना की थी। किन्तु यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि इसमें सत्य भाव का अंश किस सीमा तक था। सम्भव है कि ये पत्र इस उद्देश्य से लिखे गये हों कि युद्ध सम्बन्धी तैयारियों के लिये अधिक समय मिल जाये। वास्तविकता चाहे कुछ भी हो पर इतनी बात दृढ़ता के साथ कही जा सकती है कि पिट ने फ्रांस के प्रथम कौंसल के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

इटैली का दूसरा आक्रमण सन् १८०० ई०

सन् १८०० ई० की वसंत ऋतु में नैपोलियन ने इटैली की ओर प्रस्थान किया। पहले उसका विचार दक्षिणी जर्मनी में युद्ध करने और वहाँ से वीयेना की दिशा में बढ़ने का था। परन्तु उसके लिये मोरो के साथ कार्य करना कठिन था। अबकी बार वह पहले की भाँति ऐल्प्स पर्वत की परिक्रमा करके इटैली में प्रविष्ट नहीं हुआ, बल्कि उसने सीधे सेंट बरनर्ड (St. Bernard) तथा अन्य दर्रों के मार्ग से ऐसा किया। यह कार्य अत्यन्त कठिन था। इसमें न केवल पर्वत की ऊँचाई तथा बर्फ ही बाधक थे वरन् सब से दुष्कर कार्य तोपों और गोला बारूद को आगे बढ़ाना था। फ्रांसीसियों ने कैसे धैर्य, परिश्रम तथा दृढ़ता से इस कार्य को सम्पन्न किया इसको देखकर सेंट बरनर्ड के मौंक चकित थे। थोड़ी दूरी ऐसी भी थी जहाँ से गाड़ियों का निकालना असंभव था, परन्तु नैपोलियन की तत्काल बुद्धि ने इस कठिनाई को तुरन्त हल कर लिया।

उसने वृक्षों के तनों को खोखला करके उनमें तोपों को लदवाया। इसके बाद सैनिकों तथा स्थानीय कृषकों ने उन्हें खींच कर एक ओर से दूसरी ओर पहुँचा दिया। जब तक इतिहास का क्रम चलेगा लोग इस सम्बन्ध में सदा नैपोलियन की प्रशंसा करते रहेंगे। दो हज़ार वर्ष पूर्व कार्थेज (Carthage) के विख्यात सेनापति हैनिबेल (Hannibal) ने भी इसी मार्ग से इटैली में प्रवेश करके रोमन साम्राज्य पर आक्रमण किया था। परन्तु उसकी तुलना में नैपोलियन का कार्य अधिक दुष्कर था।

जिस आक्रमण के प्रारम्भ में नैपोलियन बोनापार्ट ने इतनी वीरता और परिश्रम से कार्य किया था उसे उसने तीव्र गति तथा व्यवस्था से पूरा किया। अस्ट्रिया के सैनिक उसकी ओर से बिल्कुल निशंक थे। अतएव उसके सेनाध्यक्ष ने एक परिचित को, जो पाविया नगर का निवासी था, लिख दिया था कि वह उस स्थान में बिल्कुल सुरक्षित है और उसके किसी अन्य स्थान में जाने की किंचित भी आवश्यकता नहीं है। इसके केवल बारह घंटों के पश्चात् नैपोलियन ने उपरोक्त नगर में प्रवेश किया। सबसे प्रसिद्ध युद्ध मोरेंगो (Marengo) में किया गया। परन्तु ब्रूमेयर के शासन परिवर्तन की भाँति उसमें भी बोनापार्ट बिल्कुल अन्त में दूसरों की सहायता से सफल हुआ। पाँच बजे शाम को उसे पराजय मिल चुकी थी, परन्तु सात बजे दैसे (Desaix) के पैदलों तथा केलरमान के अश्वारोहियों की सहायता से वह विजयी हो गया। इस सम्बन्ध में हम उस खेदजनक दृश्य को विस्मरण नहीं कर सकते जब नैपोलियन मार्ग के किनारे खड़े होकर अपनी चाबुक से भूमि करोद रहा था और पराजित सेना से कह रहा था, "दृढ़ता से खड़े रहो। थोड़ी प्रतीक्षा करो। सहायता आ रही है। केवल एक घण्टे की देरी है।" इसके प्रतिकूल उसके सैनिकों ने पीठ दिखा कर भागना प्रारम्भ कर दिया था। नैपोलियन को इसका भी बड़ा खेद था कि उसका सर्वोत्तम सेनापति दैसे युद्ध में काम आ गया था।

मारेंगो का युद्ध, जून १८०० ई०

मारेंगो के युद्ध के पश्चात् कुछ समय तक नैपोलियन मीलन में पड़ा रहा। इसके पश्चात् वह पेरिस लौट आया। वह केवल दो मास के लिये अनुपस्थित रहा था। इस बीच में उसने लगभग उन समस्त देशों को अपने अधीन कर लिया था जो फ्रांसीसियों के हाथ से निकल गये थे। उधर जर्मनी में मोरो ने महत्वपूर्ण सफलतायें प्राप्त कीं। उसने दिसम्बर में शत्रु को होयेनलिंडेन (Hohenlinden) के प्रसिद्ध युद्ध में परास्त किया। इसके पश्चात् वह वियेना के ७१ मील तक पहुँच गया। इसी माह में सेनापति माकडोनाल (Macdonald) ने, जो गत

मई में स्प्लूजन (Splugen) के दुर्गम दर्रे से इटैली में पहुँच गया था, मिंचो (Mincho) नदी के दुर्गों को घेर लिया था। उधर ज़ार पॉल ने मित्र राष्ट्रों का साथ छोड़ दिया था। अतएव आस्ट्रिया के सम्राट ने विवश होकर संधि करना स्वीकार कर लिया।

लूनेवील की संधि, १८०१ ई०

लूनेवील की सन्धि से आस्ट्रिया के सम्राट ने कैम्पोफोर्मियो की शर्तों को दोबारा स्वीकार किया। उनमें थोड़ा बहुत परिवर्तन आस्ट्रिया के विरुद्ध अवश्य किया गया। राइन नदी के पश्चिमी दिशा का समस्त देश फ्रांस को दोबारा प्रदान किया गया। इस प्रकार होली रोमन साम्राज्य की जनसंख्या का सातवाँ भाग तथा कई प्रसिद्ध जर्मन नगर जैसे माइंट्ज़ (Mainz), कोलोन (Cologne), आचेन (Aachen) और त्रीर (Trier) उसके हाथ से निकल गये। इस तरह जिन शासकों की हानि हुई थी उनकी अन्य स्थानों में क्षतिपूर्ति की व्यवस्था कर दी गई थी। इसका यह अर्थ था कि यह क्षति जर्मनी के छोटे राज्यों को हानि पहुँचा कर पूरी की जायेगी। यह भी निश्चित कर दिया गया कि जर्मनी का सम्राट रास्तात की कांग्रेस के निर्णय को स्वीकार कर लेगा। इटैली के सम्बन्ध में भी कैम्पोफोर्मियो की सन्धि की शर्तों को फिर से स्वीकार किया गया। टस्कनी के ड्यूक का शासनक्षेत्र (Duchy of Tuscany) तथा एल्बा (Elba) द्वीप सिस-ऐल्पिन के गण-राज्य (Cisalpine Republic) में सम्मिलित कर दिये गये और यह तय कर दिया गया कि उक्त ड्यूक की जर्मनी में क्षतिपूर्ति की जायेगी। जिन गण-राज्यों को नैपोलियन ने यूरोप के विभिन्न भागों में स्थापित किया था उनकी स्वतन्त्रता आस्ट्रिया की ओर से स्वीकार कर ली गई। इन में से दो अर्थात् सिस-ऐल्पिन गण-राज्य तथा लिगूरियन गण-राज्य का उल्लेख इसके पूर्व किया जा चुका है। शेष दो गण-राज्य हालैंड तथा स्विटज़रलैंड में स्थापित किये गये थे। इनके नाम बटेवियन गण-राज्य (Batavian Republic) और हल्वेटिक गण-राज्य (Halvetic Republic) थे।

इंग्लैंड से संधि, मार्च सन् १८०२ ई०

नैपोलियन ने इंग्लैंड से सन्धि करने में भी शीघ्र ही सफलता प्राप्त की। सन् १८०० ई० में ज़ार पॉल ने दूसरे यूरोपीय संघ से पृथक होकर इंग्लैंड के विरुद्ध द्वितीय सशस्त्र निर्हस्तक्षेपी संघ (Second Armed Neutrality)* बना लिया था। इसमें रूस, डेनमार्क, स्वीडन एवं प्रशा सम्मिलित हुये थे। इसका विशेष कारण यह था कि कुछ समय से अंगरेज़ों की

* प्रथम सशस्त्र निर्हस्तक्षेपी संघ अमेरिका के स्वाधीनता संग्राम के पश्चात् बनाया गया था।

ओर से युद्ध में सम्मिलित न होने वाले देशों के जहाज़ों की इंगलिश चैनल से जाते समय तलाशी ली जाती थी। यदि उनमें कोई सामग्री आपत्तिजनक मिलती थी तो उसे ज़ब्त कर लिया जाता था। परन्तु उपरोक्त संघ शीघ्र ही समाप्त हो गया। मार्च सन् १८०१ ई० में ज़ार की हत्या कर दी गई तथा नेल्सन ने कोपनहैगन (Copenhagen) में डेन्मार्क के बेड़े को ऐसी बुरी तरह परास्त किया कि वह बिल्कुल नष्ट हो गया। इन घटनाओं के अतिरिक्त भी इंग्लैंड संधि के लिये तैयार हो गया। वह दीर्घ काल से युद्ध में संलग्न होने के कारण थका हुआ था। इसके अतिरिक्त पिट ने जार्ज तृतीय से आयरलैंड के सम्बन्ध में मतभेद होने के कारण त्यागपत्र दे दिया था, और उसके उत्तराधिकारी मन्त्री ऐडिंगटन (Addington) में इतनी योग्यता तथा संकल्प की दृढ़ता न थी, कि वह फ्रांस से युद्ध जारी रखता। उधर नैपोलियन बोनापार्ट भी गृह सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाने में ऐसा व्यस्त था कि वह युद्ध से कम से कम कुछ समय के लिये अवकाश प्राप्त करना चाहता था। इन कारणों से मार्च सन् १८०२ ई० में विरोधी दलों में सन्धि हो गई। यह सन्धि फ्रांस के आमीएँ (Amiens) नगर में की गई थी। यह एक ऐसी सन्धि थी जिससे इंग्लैंड में "प्रत्येक व्यक्ति सन्तुष्ट था। परन्तु कोई भी व्यक्ति उसके सम्बन्ध में अभिमान न कर सकता था।" इंग्लैंड ने लंका और ट्रेनीदाद (Trinidad) के अतिरिक्त अपनी समस्त औपनिवेशिक विजयों को लौटा दिया। माल्टा का द्वीप सेंट जोन के नाइटों को, और माइनरका (Minorca) स्पेन को लौटा दिये गये। इंग्लैंड ने यह भी स्वीकार कर लिया कि भविष्य में उसके सम्राट के नाम के आगे 'फ्रांस का सम्राट' यह वाक्यांश न जोड़ा जायेगा। यह प्रथा जो एडवर्ड तृतीय के समय से चली आरही थी पूर्णतया व्यर्थ थी। नैपोलियन ने मिस्र की सेना को, जिसे हाल ही में ऐबरक्रम्बि (Abercromby) ने परास्त किया था, लौटा लेना स्वीकार कर लिया। इसके अतिरिक्त वह नेपिल्ज़ और पुर्तगाल से भी अपनी सेना को हटाने के लिये तैयार हो गया।

बहुत से मनुष्यों ने आमीएँ की सन्धि के विषय में प्रसन्नता प्रकट की। कुछ मनुष्य ऐसे भी थे जो नैपोलियन की प्रशंसा के पुल बांधने लगे। अंगरेज़ इसलिये प्रसन्न थे कि उन्हें यूरोप के परिभ्रमण का अवसर फिर प्राप्त हुआ। इसके प्रतिकूल उनके लिये उपरोक्त सन्धि बड़ी हानिकारक प्रमाणित हुई। हालैंड और बेल्जियम दोनों नैपोलियन के अधिकार में थे। अतएव वहां के व्यापार से वे वंचित रहे। उनकी दृष्टि में उपरोक्त देश "एक पिस्तौल के तुल्य थे जो लंदन की ओर तान लिया गया था।" फ्रांस से भी इंग्लैंड के व्यापारिक सम्बन्ध स्थगित रहे। नैपोलियन

को अवश्य कुछ वर्षों के लिये युद्ध से लाभकारी अवकाश मिल गया था। इस बीच में वह अपनी जल शक्ति को सुदृढ़ बना सकता था एवं राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक सुधारों के द्वारा देश को सुदृढ़ तथा समृद्धिशाली बना सकता था।

चौबीसवां अध्याय

फ्रांस का पुनर्निर्माण*

नैपोलियन बहुधा कहा करता था कि मैं फ्रांसीसी क्रांति का वर प्रसाद हूं। वह उसके "स्वतन्त्रता, समानता एवं बान्धुत्व" के सिद्धान्तों का सबसे बड़ा समर्थक था। उसका अभ्युदय उक्त क्रांति के कारण हुआ था तथा जो लाभदायक सुधार उसने फ्रांस में किये थे उनके कारण वह दावा कर सकता था कि मैंने क्रांति के सुन्दर परिणामों को स्थापित रखने तथा उनको सुदृढ़ बनाने में सफलता प्राप्त की है। वास्तव में प्रथम कौंसल ने दो प्रकार से उसके सिद्धान्तों को बदल दिया था। उसने स्वतन्त्रता की तुलना में समानता के सिद्धान्त को अधिक महत्व दिया था। दूसरे, उसने बान्धुत्व का अर्थ अन्तर्राष्ट्रीय रूप में न लेकर राष्ट्रीय रूप में लिया था। उसने इस बात पर निरन्तर ज़ोर दिया था कि फ्रांस के निवासी समानता के सिद्धान्त को महत्व देते हैं, न कि स्वतन्त्रता के सिद्धान्त को। अतः नैपोलियन बोनापार्ट ने सामाजिक सुधार करते समय सर्वदा सुरक्षित अधिकारों को समाप्त करने का प्रयत्न किया। वह केवल एक ही सुरक्षित संस्था का पोषण करता था जो 'प्रतिष्ठा मण्डल' (Legion of Honour) कहलाता था। इसकी संस्थापना उसने स्वयं की थी। इसमें कोई भी व्यक्ति जिसने राष्ट्रीय सेवा में किसी विशेष योग्यता का प्रदर्शन किया था, सम्मिलित हो सकता था। जन्म, श्रेणी तथा धर्म आदि के अवरोध वहां कोई अर्थ न रखते थे। यह सैनिकों के लिए भी आकर्षण तथा प्रतिष्ठा का विषय था।

---

* नैपोलियन के जिन उपयोगी कार्यों का उल्लेख इस अध्याय में किया गया है, उन में से कुछ ऐसे थे जिनका सृजन उसके राज्याभिषेक के पश्चात् किया गया था। सुविधा के विचार से इन सब का वर्णन एक स्थान पर किया जा रहा है।

नैपोलियन बोनापार्ट के शासन के तीन सूत्र वाक्य (Mottoes) थे,—प्रतिभा (Splendour), व्यापकता (Comprehensiveness) तथा कार्यक्षमता (Efficiency)। प्रजातन्त्र राज्यों में ऐसे नीतिज्ञ बहुधा हुए हैं जो कुछ शब्दों द्वारा सर्वसाधारण के हृदयों को प्रभावित कर दिया करते थे। परन्तु सर्वसाधारण के लिये शासन के भवन को विभिन्न रीतियों से सुसज्जित करने में नैपोलियन सबसे आगे तथा विख्यात है। उसकी आंखों के सम्मुख प्राचीन रोम का प्रतिभाशाली दृश्य सर्वदा उपस्थित रहता था। वह सोचा करता था कि जो गौरवपूर्ण पद रोम ने प्राचीन काल में प्राप्त किया था, क्या वही पद फ्रांस की राजधानी पेरिस को प्राप्त नहीं हो सकता? संचालकों के हृदयों में भी यही विचार था, कि पेरिस को यूरोपियन देशों की विद्या तथा कला का केन्द्र बनाया जाय। नैपोलियन ने उनके लिये इटैली से विद्या और कला के बहुमूल्य रत्न भेजकर उनका उत्साह बढ़ाया था। अब जब कि वह फ्रांस का शासक बन गया था, उसने इस सिद्धान्त पर अधिक ज़ोर दिया और इस बात का प्रयत्न किया कि जिन यूरोपियन देशों को वह विजय करे, उनकी असाधारण वस्तुयें फ्रांस में पहुंचती रहें। नैपोलियन ने इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण भी उपस्थित किया कि कोई भी शासन जो प्रतिष्ठा व गौरव को पसन्द करता है एवं जो दृढ़ता से कार्य करता है अपने देश में सर्व हितकारी कार्यों और उद्योग धन्धों की उन्नति कर सकता है।

नवीन शासन के सूत्र वाक्य

नैपोलियन की शासन प्रणाली का दूसरा महान् सिद्धान्त यह था कि शासन की नीव विस्तृत भूमि पर जमानी चाहिये। वह शासन के सेवकों को सब श्रेणियों तथा सम्प्रदायों से नियुक्त करता था। इस सम्बन्ध में हम उसकी समता क्रॉम्वेल से कर सकते हैं। क्रॉम्वेल भी अपने सैनिकों को नियत करते समय स्वतन्त्रता से कार्य करता था। नैपोलियन के शासन में जेकोबिन, जिरोंदिन और राजतंत्र के समर्थक सब क़ानून की दृष्टि में समान थे तथा सबको इस बात का अवसर दिया जाता था कि शासन की सेवा में आ जाने पर पारस्परिक विद्वेष को विस्मृत कर दें। भागे हुये लोगों के विरुद्ध जो क़ानून बनाये गये थे, वे अब सरल कर दिये गये थे। कैथोलिक धर्म के अनुयायी भी अति शीघ्र यह अनुभव करने लगे कि धार्मिक अत्याचार तथा पक्षपात का समय बीत चुका है तथा शासन की दृष्टि में समस्त धर्म तथा सम्प्रदाय समान हैं।

जहां तक शासन की योग्यता का प्रश्न है, बहुत कम व्यक्ति नैपोलियन की समता कर सकते हैं। इसका सम्बन्ध न केवल परिश्रम व दृढ़ता, कार्य करने के सुन्दर ढंग अथवा उसकी बारीकियों की ओर ध्यान देने से है, वरन् इसके लिये

इस बात की आवश्यकता भी है कि पदाधिकारी इस योग्य हो कि वह अपना उदाहरण उपस्थित करके दूसरों पर प्रभाव डाल सके और उनसे अपनी आज्ञाओं का पालन करा सके। नैपोलियन २४ घण्टों में १८ घण्टों तक अथक परिश्रम कर सकता था। शाप्लात (Chaplat) नामक गृह-मन्त्री ने उसके विषय में लिखा है,—"बहुधा वह अपनी कौंसिल को ८ अथवा १० घण्टों तक जारी रखता था एवं सदा वह विवाद का भार स्वयं उठाता था।" उसे शराब अथवा किसी विशेष प्रकार के भोजन की इच्छा न होती थी तथा भोजन करते समय वह दस बारह मिनट से अधिक व्यय न करता था। उसे अपने ऊपर अधिक विश्वास था। जब कभी उसके परामर्श देने वाले उससे सहमत न होते थे तो वह अपने सिर को थपथपाता था और कहता था, "यह सुन्दर शस्त्र मुझे उन लोगों के उपदेशों से अधिक उपयोगी सिद्ध होगा जो यथेष्ट शिक्षित तथा अनुभवी समझे जाते हैं।" आर्थिक प्रश्नों तथा हिसाब रखने के सम्बन्ध में वह सबसे कठोर था तथा अपने अधीन लोगों से कठिन परिश्रम से काम लेता था। प्रत्येक लेखक, जो सरकारी दफ्तर में कार्य करता था, इस बात को अनुभव करता था, कि युग परिवर्तित हो गया है और नैपोलियन की कड़ी दृष्टि उस पर है। राजनीति सम्बन्धी तथा सैनिक आदेशों के देने में वह स्वयं अपना उदाहरण था। उसके आदेश सर्वदा स्पष्ट और अधिकारपूर्ण होते थे। यदि वह असावधान भी होता तब भी उनकी विशेषताओं में कोई अन्तर न आता था। यदि कोई व्यक्ति आज भी किसी पुस्तक में उनका अध्ययन करे तो उसे यही अनुभव होगा कि प्रत्येक आदेश पर इस विलक्षण बौद्धिक शक्ति रखने वाले व्यक्ति की छाप लगी हुई है।

पेरिस को सुन्दर बनाने का प्रयत्न

नैपोलियन ने अपने प्रथम सिद्धान्त के अनुसार पेरिस को सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया। इस से एक बड़ा लाभ यह हुआ कि सहस्रों बेकार लोगों को काम मिल गया। उनको काम दिलाने के लिये वह अन्य उपायों को भी अपनाता था। "बहुत से जूते बनाने वाले, टोप बनाने वाले, दर्ज़ी तथा ज़ीनसाज़ बेकार हैं। ऐसी व्यवस्था करो कि जूतों के पांच सौ जोड़े प्रति दिन बनते रहें।" द्वितीय आदेश इस प्रकार प्रकाशित किया गया,—"एक आज्ञा प्रकाशित करो कि सैंतां त्वान (St. Antoine) के दो सहस्र कारीगर कुर्सियां एवं दराज़दार सन्दूक आदि भेजते रहें।" नैपोलियन ने पेरिस की दशा सुधारने के अभिप्राय से कई योजनाओं से काम लिया। ऐसा करते समय उसने उक्त नगर की दशा में सुधार करने के अतिरिक्त बेरोज़गारों की स्थिति पर भी ध्यान दिया था। पेरिस को यूरोप के विद्या व कलाकौशल का केन्द्र बनाने के विचार से ही उसने इटैली के सर्वश्रेष्ठ नमूनों को

वहां पहुंचा दिया था। इनकी उन्नति के लिये उसने कोई उपाय उठा नहीं रक्खा था। इसके अतिरिक्त उसने साहित्य की उन्नति के लिये भी प्रयत्न किया, परन्तु इसमें उसे अधिक सफलता न मिली। उसने दस सब से श्रेष्ठ चित्रकारों, भास्कर शिल्प के विज्ञों, कवियों, भवन निर्माण कला के विशारदों तथा अन्य ऐसे गुणज्ञों की सूचियां तैयार करने की आज्ञा दी जो अपनी श्रेष्ठतम योग्यता के कारण सरकारी संरक्षण पाने के अधिकारी थे। "लोग शिकायत करते हैं कि हम साहित्य विहीन हैं। यह गृह-मन्त्री का दोष है।" इस काल के दो प्रसिद्ध लेखक शातोब्रीआं (Chateaubriand) और नैकर की पुत्री मैडम द स्तायेल (Mme. de Stael) थे। किन्तु ये भी अपने गुणों द्वारा नैपोलियों को प्रसन्न करने में कृतकार्य न हुये। इस क्रम में हम इस बात को विस्मृत नहीं कर सकते कि नैपोलियन का प्रधान उद्देश्य यह था कि विद्या तथा कला की उन्नति द्वारा वह अपने राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता ले सके।

स्थानीय शासन का केन्द्रीय स्वरूप

इस काल की आवश्यकताओं को देखते हुये सम्भवतः यह बात आवश्यक थी कि स्थानीय शासन का सुधार केन्द्रीय ढंग से किया जाय तथा नैपोलियन के हाथों में उसका सूत्र हो। उसको सफल बनाने के लिये आवश्यक है कि समाज में किसी न किसी प्रकार की उच्च श्रेणी (Aristocracy) स्थापित हो अथवा कम से कम लोग एक दूसरे पर थोड़ा बहुत विश्वास करते हों। इन दोनों बातों में से कोई भी सन् १७९९ ई० में उपस्थित न थी। फ्रांसीसी क्रांति ने प्राचीन कुलीनों को समाप्त कर दिया था एवं प्रत्येक दिशा में घृणा तथा वैमनस्य के बीज बो दिये थे। अतएव नैपोलियन को बाध्य होकर केन्द्रीय शासन को स्थापित करके प्रांतों (Departments) और ज़िलों (Arrondissements) में शांति और व्यवस्था क़ायम रखनी पड़ी। उपरोक्त वर्ष के संविधान से फ्रांस के केन्द्रीय शासन (Central Government) के समस्त आवश्यक अधिकार नैपोलियन के हाथ में आ गये थे। इसके पश्चात् जो क़ानून निर्मित किये गये थे, उनसे न्यायपालिका पर भी उसका प्रभुत्व स्थापित हो गया था। सन् १८०० ई० में समस्त देश के स्थानीय शासनों पर भी उसका प्रभुत्व स्थापित हो गया। प्रथम कौंसल ने प्रत्येक प्रांत में एक प्रीफ़ेक्ट (Prefect) और प्रत्येक ज़िले में एक उप-प्रीफ़ेक्ट (Sub-prefect) नियुक्त किया तथा उनको वे समस्त अधिकार प्रदान किये जो संविधान सभा द्वारा वहां की निर्वाचन समितियों (Elective Councils) को दिये गये थे। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि उक्त समितियां बिल्कुल समाप्त कर दी गई थीं वरन् उनके अधिवेशन वर्ष में केवल दो सप्ताहों के लिये होते थे तथा उनका

कर्तव्य केवल करों का लगाना रह गया था। प्रीफेक्ट तथा उप-प्रीफेक्ट उनसे अन्य बातों के विषय में भी परामर्श कर सकते थे, किन्तु उनके लिये ऐसा करना आवश्यक न था। प्रत्येक छोटे कम्यून (Commune) का अध्यक्ष (Mayor) प्रीफेक्ट की ओर से पसन्द किया जाता था। जिन क़स्बों की जनसंख्या पांच सहस्र से अधिक थी उनके मेयर की नियुक्ति नेपोलियन स्वयं करता था। एक लाख से अधिक जनसंख्या रखने वाले नगरों की पुलिस भी केन्द्रीय शासन के अधीन थी।

स्थानीय शासन का अत्यन्त केन्द्रीय स्वरूप, जिसका उल्लेख यहाँ किया गया है, वास्तव में वही था जिसे तेरहवें लूई के विख्यात मंत्री कार्डिनल रीशलू (Cardinal Richelieu) ने स्थापित किया था तथा जिसका लाभ चौदहवें लूई को विशेष रूप से हुआ था। कुछ लेखक ऐसे भी हैं जिन्होंने स्थानीय शासन के तत्कालीन स्वरूप को 'अत्याचार' कहकर पुकारा है। सम्भव है कि उनका मत ठीक हो, किन्तु कम से कम उनको इस बात पर तो ध्यान देना चाहिये था कि उस काल में फ्रांस को इसकी अत्यन्त आवश्यकता थी। यदि नैपोलियन बोनापार्ट को ग़लत क़दम ही उठाना था तो वह कुलीनों के मुख्य सामाजिक अधिकारों को लौटा सकता था अथवा इस प्रकार का कोई अन्य असंगत कार्य कर सकता था, परन्तु उसने ऐसा कदापि नहीं किया। यद्यपि उसने आवश्यकतानुसार 'प्रतिष्ठा मण्डल' को स्थापित किया था, किन्तु उसकी व्यवस्था कौटुम्बिक अथवा वंशानुगत आधार पर नहीं की गई थी वरन् केवल इसलिए कि योग्य व्यक्तियों का आदर सम्मान होता रहे तथा महत्वाकांक्षियों को उन्नति करने का प्रलोभन रहे।

उत्तराधिकार के नियमों में भी कोई विशेष अन्तर न हुआ था। सिविल कोड (Civil Code) में यह बात स्पष्ट कर दी गई थी कि किसी व्यक्ति की मृत्यु के अनन्तर उसकी भूमि उसके पुत्रों में बराबर बराबर विभाजित कर दी जायेगी। इसके अतिरिक्त अधिक से अधिक केवल यह हो सकता है कि वह अपनी भूमि का एक साधारण भाग किसी धार्मिक कार्य में लगा दे। बूरबन वंश के सम्राटों के शासनकाल में व्यापार तथा हस्तकलाओं के मार्ग में कई कठिनाइयाँ उपस्थित थीं, जिनके कारण उनकी समुचित उन्नति न हो सकती थी। उदाहरण के लिये, गिल्डों के कानून, आन्तरिक कर एवं ऐसी आर्थिक व्यवस्था जिसका भार उन लोगों को उठाना पड़ता था जो देने की हैसियत न रखते थे। इस प्रकार की अनेक विशेषतायें क्रांति के तूफ़ानी प्रवाह में हटा दी गई थीं, किन्तु उनको पुनर्जीवित करने का विचार नेपोलियन के मस्तिष्क में कभी नहीं आया। वह जानता था कि फ्रांस के निवासी चाहे राजनैतिक स्वतन्त्रता की प्रतिष्ठा करें अथवा न करें,

किन्तु वे यह कभी नहीं सहन कर सकते कि प्राचीन काल के सामाजिक अधिकार फिर से स्थापित कर दिये जायें। उसके सुप्रबन्ध की यह विशेषता थी कि कृषकों को इस बात का पूरा विश्वास हो गया था कि उनके जीवन में आखेट के नियम, जागीरदारों के न्यायालय तथा कुलीनों के कर उन्हें कभी पीड़ित न करेंगे।

यदि नैपोलियन की बुद्धिमानी तथा दूरदर्शिता के किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता है तो वह उसके भूमि के बन्दोबस्त (Land Settlement) से प्राप्त हो सकता है। जब राज्यक्रांति का तूफ़ान उठ रहा था उस समय अमीर उमरा तथा पादरियों की जागीरें ज़ब्त कर ली गई थीं तथा बहुत कम मूल्य पर कृषकों में विभाजित कर दी गयीं थीं। कभी कभी ऐसा भी हुआ था कि वे उनमें बिना मूल्य ही वितरित कर दी गयीं थीं। नैपोलियन ने इन जागीरों को वापिस लेने अथवा उनके बन्दोबस्त में किसी प्रकार का परिवर्तन करने का प्रयत्न नहीं किया, वरन् इस बात का प्रयत्न किया कि उक्त व्यवस्था के लिए चर्च की स्वीकृति प्राप्त हो जाये। कृषकों की सहायता तथा कृतज्ञता के प्राप्त करने का इससे अधिक उपयुक्त उपाय और क्या हो सकता था? इसके कारण प्रत्येक कृषक नैपोलियन को अपना संरक्षक समझता था। जिस प्रकार इंग्लैंड में चर्च की भूमि को कुलीनों में वितरित करने से धर्मसुधार (Reformation) के कार्य में दृढ़ता आ गई थी उसी प्रकार प्रथम कौंसल ने क्रांति के समय की भूमि व्यवस्था को स्वीकृति प्रदान करके अपने शासन के आधार को सुदृढ़ बनाने में सफलता पाई।

भूमि का बन्दोबस्त

बोनापार्ट ने आर्थिक सुधारों की ओर भी ध्यान दिया। बूरबन वंश के शासकों तथा संचालकों के पतन का एक विशेष कारण यह था कि उनके समय में ऐसी आर्थिक समस्यायें उपस्थित हुई थीं जिनका हल उन्हें ज्ञात न था अथवा जिनसे छुटकारा पाने में वे सफल मनोरथ न हुये थे। नैपोलियन प्रारम्भ ही से इस विषय में सावधान था। उसने करों को ठीक प्रकार से वसूल किये जाने पर ज़ोर दिया। अतएव शासन की आय में वृद्धि हो गई। उसने मितव्ययता को भी महत्व दिया और पथभ्रष्ट पदाधिकारियों को कठोर दण्ड दिया। इसके अतिरिक्त उसने इस बात का भी प्रयत्न किया कि जिन देशों पर वह आक्रमण करे, उनके निवासी उसकी सेनाओं के भरण पोषण का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लें। इन उपायों से शासन का बहुत सा धन बचने लगा। नैपोलियन का सबसे बड़ा आर्थिक सुधार

आर्थिक सुधार

यह था कि उसने सन् १८०० ई० में बैंक आफ़ फ्रांस (Bank of France) की नींव डाली। उस समय से अब तक उसकी गणना संसार की सब से श्रेष्ठ आर्थिक संस्थाओं में होती है।

नेपोलियन ने धार्मिक समस्या को भी सफलता के साथ हल किया। यह एक ऐसी समस्या थी जो दीर्घ काल तक कठिनाई का कारण रह चुकी थी। सन् १७९० ई० में राष्ट्रीय संविधान-सभा ने चर्च के विषय में एक विधान निर्मित किया था जो पादरियों को पसन्द न था। हमने इसका विशद वर्णन दसवें अध्याय में किया था। इसके द्वारा फ्रांस में एक संवैधानिक कैथोलिक चर्च (Constitutional Catholic Church) स्थापित हो गया था जो पोप के प्रभाव के बाहर था। किन्तु क्रांतिकारियों का यह प्रयोग अधिक सफल न हुआ था। संवैधानिक पादरियों के अनुयायियों की संख्या अत्यन्त कम थी। बहुधा ऐसा भी हुआ था कि उन्होंने विवाह कर लिया था तथा वे धर्म विरुद्ध जीवन व्यतीत करने लगे थे। फ्रांस के अगणित निवासी ऐसे भी थे जिनके हृदय में रोम और उसके धार्मिक पथप्रदर्शक पोप के प्रति सत्कार समाप्त न हुआ था। ऐसी दशा में आवश्यक था कि नेपोलियन सावधानी से काम ले तथा धार्मिक समस्या को बड़ी बुद्धिमानी तथा गम्भीरता से हल करे।

धार्मिक प्रबन्ध

नेपोलियन किसी विशेष धर्म का अनुयायी न था, परन्तु वह धर्म के महत्व से पूर्ण रूप से परिचित था। "मनुष्यों का कोई न कोई धर्म अवश्य होना चाहिये एवं वह धर्म शासन के हाथ में होना चाहिये। लोग कहेंगे कि मैं पोप का अनुयायी हूं। मैं कुछ भी नहीं हूं। मिस्र में मैं मुसलमान था। यहाँ (फ्रांस में) सर्वसाधारण के प्रसन्न करने के लिए मैं कैथोलिक बनकर रहूंगा। मैं धर्म में विश्वास नहीं करता...किन्तु मैं ईश्वर की सत्ता को मानता हूं।" नेपोलियन इस बात को भी पूर्णतया समझता था कि पोप जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति से, जिसके अनुयायी न केवल इटैली तथा फ्रांस वरन् यूरोप के समस्त देशों में विद्यमान थे, बिगाड़ करने से काम न चलेगा। इसके साथ साथ वह इस बात के महत्व से भी पूर्ण रूप से परिचित था कि किसी भी शासन को सफल बनाने के लिए एक सुव्यवस्थित चर्च की आवश्यकता होती है। उसका कहना था कि धर्म के बिना कोई भी राज्य एक जहाज़ के तुल्य है जो समयदर्शक यंत्र से रहित हो। जब वह इटैली में था तो उसने पोप के साथ समुचित व्यवहार किया था। उसने उसके साथ इतनी अधिक सहानुभूति प्रदर्शित की थी कि वह संचालकों की अप्रसन्नता का कारण बन गया था। फ्रांस के शासन ने बहुत समय तक सातवें पायस नाम के पोप से धार्मिक

समस्या पर पत्रव्यवहार किया था, यद्यपि फ्रांस के उग्रवादी इस नीति के विरोधी थे। अन्त में दोनों के बीच १५ जौलाई सन् १८०१ ई० को समझौता (Concordat) हो गया और ८ अप्रैल सन् १८०२ से उस पर व्यवहार आरम्भ कर दिया गया। इसके द्वारा दोनों पुनः मित्र हो गये। पोप ने जागीरों की ज़ब्ती तथा मठों की बरबादी स्वीकार कर ली एवं गण-राज्य ने पादरियों को धन देना स्वीकार कर लिया। प्रथम कौंसल को बिशपों को नामज़द करने का अधिकार दिया गया एवं यह निश्चित कर दिया गया कि यदि उनके विरुद्ध दुश्चरित्रता अथवा नास्तिकता का अभियोग नहीं है तो पोप उनकी नियुक्ति को अस्वीकार नहीं करेगा। छोटे पादरियों की नियुक्ति बिशपों के हाथ में छोड़ दी गई। इस प्रकार फ्रांस के चर्च पर शासन का प्रभुत्व स्थापित हो गया। किन्तु पोप के मतानुसार उपरोक्त समझौते की यह सब से दोषयुक्त विशेषता न थी। उसके विचार से एक विशेषता इससे भी अधिक दोषयुक्त थी। समझौते की एक शर्त यह भी थी कि शासन समष्टिगत उपासना के लिए कुछ विधान बनायेगा जिस से शान्ति व व्यवस्था में किसी प्रकार का विघ्न न पड़ने पाये। यह शर्त शीघ्र ही पोप के लिये चिन्ता का कारण प्रमाणित हुई। शासन ने इस विषय में ऐसे विधान निर्मित किये जिनसे चर्च की स्वतन्त्रता विशेष रूप से कम हो गई। उदाहरण के लिए, पोप की विशेष आज्ञायें (Bulls) फ्रांस में लागू न होंगी, प्रथम कौंसल की आज्ञा के बिना पादरियों की सभा (Synod) का अधिवेशन न होगा, कोई बिशप अपने क्षेत्र को छोड़कर न जायेगा चाहे पोप ही ने उसको क्यों न बुलाया हो। इन शर्तों को देखकर पोप अवाक था, किन्तु वह कुछ न कर सकता था। इस प्रकार फ्रांस में कैथोलिक चर्च पुनः स्थापित हो गया परन्तु वह वहाँ के राष्ट्रीय शासन के प्रति चौदहवें लूई के शासनकाल से भी अधिक आज्ञापालक तथा लाभप्रद बना दिया गया था। उक्त प्रबन्ध इतना उपयोगी प्रमाणित हुआ कि वह सन् १९०५ ई० तक शासन और चर्च के पारस्परिक व्यवहार को प्रभावित करता रहा।

नैपोलियन के क़ानूनी ग्रन्थ

नैपोलियन बोनापार्ट ने जो समझौता पोप से किया था वह उसके स्मृति-चिह्नों में उच्च स्थान रखता है। इससे भी अधिक उच्च स्थान उसके क़ानूनी ग्रन्थों का है, जो सब मिल कर 'कोड नैपोलियन' (Code Nepoleon) कहलाते हैं। इससे पूर्व भी इस बात का प्रयत्न कई बार किया जा चुका था कि एक बड़ा क़ानूनी ग्रन्थ बनाया जाये, जिसके द्वारा देश के क़ानून स्पष्ट, सुन्दर तथा सरल भाषा में नियमित रूप से प्रकाशित किये जायें। परन्तु नैपोलियन के समय के पूर्व इस गुरुतर कार्य में सफलता

प्राप्त न हो सकी थी। इस सम्बन्ध में कुछ काम चौदहवें लूई के समय में भी किया गया था। इसके पश्चात् फ्रांसीसी क्रान्ति के समय में कम से कम पाँच बार इसके हस्त-लेख तैयार किये गये, किन्तु सफलता उपलब्ध न हो सकी। कारण यह था कि क्रान्तिकारियों का ध्यान दूसरे आवश्यक कर्तव्यों की ओर था। इसके अतिरिक्त क़ानून के जिन विद्वानों को यह कार्य सौंपा गया था उन्होंने स्वाभाविक ढंग पर बहुत धीरे धीरे कार्य किया था। वास्तव में इस कार्य की अधिक उन्नति उस समय हुई जब नैपोलियन ने उसमें रुचि दिखाई। वह उसके महत्व से भली भाँति अवगत था। अतः जब वह हेलेना के टापू को भेज दिया गया तो उसने कहा था कि "उसकी कीर्ति का वास्तविक कारण उसका सिविल कोड (Civil Code) था, न कि उसकी युद्ध सम्बन्धी विजय।" उसने अपने कोड को तैयार कराने के लिए कई प्रसिद्ध विधानवेत्ता नियुक्त किये। इन विद्वानों में विशेष स्थान कैंबासेरेस (Cambaceres) का था, जो द्वितीय कौंसल भी था। उनके प्रयत्न से सन् १८०४ ई० में एक बृहद् सिविल कोड (Civil Code) प्रकाशित किया गया। इसके पश्चात् सन् १८१० ई० तक चार अन्य क़ानूनी ग्रन्थ प्रकाशित किये गये, परन्तु उनका महत्व सिविल कोड की तुलना में अत्यन्त कम है। इनके नाम कोड आफ़ सिविल प्रोसीडियोर (Code of Civil Procedure), कोड आफ़ क्रिमिनल प्रोसीडियोर (Code of Criminal Procedure), पैनल कोड (Penal Code) तथा कमर्शियल कोड (Commercial Code) हैं। ये ग्रन्थ अपनी सरलता तथा उपयोगिता के कारण इतने अधिक लोकप्रिय प्रमाणित हुये कि उनका चलन न केवल फ्रांस वरन् यूरोप के कई अन्य देशों में भी हुआ। एक विशेष बात यह थी कि इनके द्वारा क्रान्ति की सामाजिक सफलता बराबर क़ायम रही, (जैसे सामाजिक समता, धार्मिक स्वतन्त्रता, उत्तराधिकार का समान अधिकार, दास किसानों की स्वाधीनता, जागीरदारी प्रथा तथा उच्च श्रेणियों के सुरक्षित अधिकारों का अन्त इत्यादि। इसमें संदेह नहीं कि कतिपय कठोर दण्ड स्थापित रहे एवं स्त्रियों का पद भी पुरुषों की तुलना में नीचा कर दिया गया था। लेकिन जब हम सब बातों पर दृष्टिपात करते हैं तो हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि कोड नैपोलियन का महत्व न केवल फ्रांस वरन् समस्त यूरोप के लिये अत्यन्त अधिक था। विशेषतः इटैली और जर्मनी के निवासियों के लिये "वह नवीन जाग्रति का प्रथम सन्देश तथा उसका सबसे सुदृढ़ स्वरूप था।")

कोई भी व्यक्ति कोड नैपोलियन की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। इसके साथ साथ उसका निर्माता स्वयं भी प्रशंसा का अधिकारी है। यदि उसकी समता जस्टीनियन (Justinian)* से की भी जाय तो उसकी प्रतिष्ठा अधिक नहीं होगी।

* पूर्वीय रोमन साम्राज्य का सम्राट् जिसे विधान निर्माण के बारे में विशेष अभिरुचि थी।

ज़िन विद्वानों ने सिविल कोड का निर्माण किया था उनके साथ बैठ कर नैपोलियन ने भी इस महत्वपूर्ण कार्य में अधिक योग दिया था। अतएव आवश्यक था कि गृह तथा राज्य से सम्बन्धित नियमों के निर्माण में उसका प्रभाव शासन की ओर से डाला जाये। घर में पिता का पूर्ण नियन्त्रण बालकों तथा उनकी माता पर स्थापित रक्खा गया था। विशेष रूप से बोनापार्ट स्त्रियों की पूर्ण अधीनता का समर्थक था। उसका कहना था कि फ़रिश्ते ने हव्वा से कहा था कि अपने पति की सेवा से कदापि मुंह न मोड़ना। नैपोलियन तलाक की प्रथा का भी समर्थक था। ये बातें ऐसी हैं जिनको वर्तमान काल के समाजवादी तथा स्त्रियों के पक्षपाती कदापि पसन्द न करेंगे। परन्तु नैपोलियन का कोड उनके समय से बहुत पूर्व बन चुका था। इसके प्रतिकूल उन्हें नैपोलियन बोनापार्ट की प्रशंसा करनी चाहिये; क्योंकि उसने नियमित रूप से क़ानून की शिक्षा ग्रहण न की थी। जो कुछ क़ानून में विज्ञता उसने प्राप्त की थी, वह इधर-उधर से प्राप्त की थी। जैसा कि एक लेखक ने लिखा है, उसने क़ानून से विज्ञता उसी प्रकार प्राप्त की थी जिस प्रकार कोई बाज़ उड़ान के बीच में भोजन प्राप्त करने के लिए अवकाश निकाल लेता है।

शिक्षा सम्बन्धी सुधार

क़ानूनी सुधारों के विषय में भी नैपोलियन बोनापार्ट प्रशंसा के योग्य है। किन्तु इस सम्बन्ध में भी उसका सिद्धान्त यह था कि स्कूलों तथा कालेजों पर भी शासन का पूर्ण प्रभाव होना चाहिये। इससे पूर्व राष्ट्रीय प्रसभा ने भी कुछ शिक्षा सम्बन्धी सुधार किये थे तथा किसी सीमा तक उसे सफलता भी प्राप्त हुई थी। इस छोटे से आधार पर नैपोलियन ने राष्ट्रीय शिक्षा का एक विशाल भवन खड़ा कर दिया। उसने फ्रांस में कई प्रकार के राष्ट्रीय स्कूल स्थापित किये जिनकी व्याख्या इस प्रकार है,—(१) *प्राथमिक स्कूल*, जिनका व्यय कम्यूनों की ओर से किया जाता था, किन्तु जिनका निरीक्षण प्रीफेक्टों तथा उप-प्रीफेक्टों के अधीन था। (२) *माध्यमिक अथवा ग्रामर स्कूल*, जिनमें प्रारम्भिक विज्ञान के अतिरिक्त फ्रैंच तथा लेटिन की शिक्षा दी जाती थी। इन पर भी शासन का प्रभुत्व था, किन्तु उनके व्यय का उत्तरदायित्व सर्व-साधारण तथा प्रमुख संस्थाओं पर था। (३) *हाई स्कूल* जो बड़े नगरों में स्थापित किये गये थे तथा जहाँ विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा दी जाती थी। इनके शिक्षकों की नियुक्ति शासन की ओर से की जाती थी। (४) *विशेष स्कूल* जैसे शिल्प स्कूल, सिविल सर्विस स्कूल तथा सैनिक स्कूल इत्यादि। इन से शासन ने अपना नियंत्रण हटा लिया था। (५ [illegible] जो सन् १८०८ ई० में स्थापित किया गया था। इसके [illegible] तविक उद्देश्य यह था कि समस्त देश में शिक्षा पद्धति में समानता रहे। इसके बड़े पदाधिकारियों की नियुक्ति स्वयं नैपोलियन

की ओर से की जाती थी। विश्वविद्यालय की आज्ञा के बिना न किसी स्कूल की स्थापना सम्भव न थी और न कोई व्यक्ति सार्वजनिक ढंग पर शिक्षा प्रदान कर सकता था। (६) *नार्मल स्कूल*—शिक्षकों को शिक्षा प्रणाली सिखलाने के लिये पेरिस में एक नार्मल स्कूल भी खोला गया। नेपोलियन के प्रयत्नों के प्रतिकूल भी उक्त स्कूलों में धन व योग्य शिक्षकों की कमी रहती थी। अतएव जिस समय नेपोलियन का शासन समाप्त हुआ फ्रांस के अधिकतर बालक प्राइवेट स्कूलों में, और विशेषकर रोमन कैथोलिक स्कूलों में, शिक्षा पाते थे।

सार्वजनिक हित के कार्य

नेपोलियन को सार्वजनिक हित के कार्यों के करने का भी शौक था। इनके निर्माण में वह बहुधा युद्ध के बंदियों से काम लेता था। अतएव सरकार का बहुत सा धन बच जाता था। उसने व्यापारिक उन्नति तथा लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने का प्रयत्न भी किया। वर्तमान काल में फ्रांस की जो सर्वश्रेष्ठ सड़कें हैं, उनको निर्मित करने का श्रेय नेपोलियन बोनापार्ट ही को प्राप्त था। सन् १८११ ई० में उसके द्वारा निर्मित बड़ी सैनिक सड़कों की संख्या २२९ तक पहुँच गई थी। इनमें से ३० ऐसी थीं जो पेरिस से प्रारम्भ होकर समुद्र की ओर बढ़ जाती थीं। नेपोलियन ने अगणित पुलों का भी निर्माण किया था। नहरों का जो जाल देश में बिछा हुआ था, उसको उसने मरम्मत कराके ठीक किया था। उसके आदेश से दलदली मैदानों से पानी हटाया गया, बांध बनाये गये और समुद्री रेत को किनारे की ओर बढ़ने से रोका गया। बड़े बन्दरगाहों के आकार में वृद्धि की गई तथा उनकी सुरक्षा का प्रबन्ध किया गया। इसके दो ज्वलन्त उदाहरण तूलों और इंग्लिश चैनल के तट पर शार्बर्ग (Cherbourg) के बन्दरगाहों के हैं।

कला की उन्नति

इन हितकारी कार्यों के साथ साथ बोनापार्ट कला की उन्नति की ओर भी दत्तचित्त था। इसका उल्लेख कई बार पहले भी किया जा चुका है। इटेली से उसने इसके सर्वश्रेष्ठ नमूने भेजे थे। जब वह मिस्र गया था तब वह अपने साथ विद्या व कला के विशारदों को ले गया था एवं उनकी सेवाओं से बड़ा लाभ उठाया था। उसने पेरिस को सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया था। इसके अतिरिक्त उसने कई अन्य आवश्यक कार्य भी किये थे जिनसे प्रकट होता है कि वह कला का आदर करता था। उदाहरण के लिये, उसने राजकीय प्रासादों को प्राचीन महत्व दिलाने का प्रयत्न किया तथा उनकी संख्या में वृद्धि भी की। अतएव सैंक्लू (St. Cloud), फांतेनब्लो (Fontainebleau) और रैंबूये (Rambouillet) के राजप्रासादों की शान और प्रतिष्ठा लौट आई। पेरिस [illegible] का विशेष ध्यान था।

वहां उसने सुन्दरतम मार्गों का निर्माण किया तथा लूव्र (Louvre) के राजकी भवनों को प्राचीन सुन्दरता और गौरव प्रदान किया। कौंसलों के शासनकाल में पेरिस की शान तथा सुन्दरता इस सीमा तक बढ़ गई थी कि उसने यूरोप के वर्तमान भूपाचार का केन्द्र बनने के लिये प्रथम क़दम उठा लिया था। नेपोलियन के समय में उसकी जनसंख्या भी दोगुनी हो गई थी।

औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने का प्रयत्न

प्रथम कौंसल ने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने का भी प्रयत्न किया। सन् १८०० ई० में उसके ज़ोर देने पर स्पेन के शासन ने लूज़ियाना (Louisiana) का देश, जो उत्तरी अमेरिका में मिसिसिपी नदी के पश्चिम में स्थित था, फ्रांस को लौटा दिया।* इसके पश्चात् शीघ्र ही नेपोलियन ने अपने बहनोई सेनापति लकलेयर (Lecrec) को २५ सहस्र सैनिकों के साथ हेति (Haiti) के द्वीप पर अधिकार करने को भेजा। परन्तु उसको अपने प्रयत्नों में अधिक सफलता प्राप्त न हुई। हेति अथवा साँ दोमिंगो (San Domingo) द्वीप के निवासियों ने सेनापति लकलेयर का सामना बड़ी दृढ़ता से किया। इनका प्रसिद्ध सेनापति तूसांलूवरतूर (Toussaint Louverture) था। उसने फ्रांसीसी सैनिकों के छक्के छुड़ा दिये। अस्तु लेकलेयर को उस से सन्धि करनी पड़ी, किन्तु उसने उसे धोखे से बन्दी बनाकर फ्रांस भेज दिया। वहां उसके साथ बड़ा दुर्व्यवहार किया गया। वह कारावास में डाल दिया गया। वहां सन् १८०३ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। यह देखकर हेति निवासियों ने पुनः युद्ध प्रारम्भ कर दिया। जैसे ही उनकी सहायता के लिये एक अंगरेज़ी जलसेना वहां पहुंची वैसे ही फ्रांसीसियों को वहां से लौट आना पड़ा (नवम्बर सन् १८०३ ई०)।

प्रथम कौंसल के विरुद्ध षड्यन्त्र

नेपोलियन की विजय फ्रांस निवासियों के लिये गौरव का विषय था। जो सफलतायें उसने शांति के युग प्रवाह में प्राप्त की थीं वह उसकी युद्ध सम्बन्धी सफलताओं से भी अधिक गौरवपूर्ण थीं। इस सब के होते हुये भी कुछ मनुष्य ऐसे थे जो उसके विरुद्ध थे। उदाहरण के लिये, जेकोबिन दल के शेष व्यक्ति, जो इस बात को मानने के लिये तैयार न थे कि फ्रांसीसी क्रांति समाप्त हो गई है। दूसरे, राजतन्त्र के पक्षपाती, जिनकी अभिलाषा थी कि किसी प्रकार सन् १७८६ ई० के पश्चात् के परिवर्तनों से छुटकारा मिल जाये। दोनों ही ने प्रथम कौंसल को हानि पहुंचाने का प्रयत्न किया। प्रकट रूप से तो वे कुछ कर न सकते थे, परन्तु गुप्त रूप से उन्होंने अपना काम जारी रक्खा। कई बार उसके प्राण लेने का प्रयत्न किया गया, परन्तु

---

* पेरिस की सन्धि (सन् १७६३ ई०) से यह देश फ्राँस ने स्पेन के अधीन कर दिया था।

वे कृतकार्य न हुये। सन् १८०४ ई० में बोनापार्ट को राजतन्त्र के पक्षपातियों के एक षड्यन्त्र का पता चला। अतएव उसने उनको कठोर दण्ड दिया। सेनापति पीशग्रुरू (Pichegru) जो षड्यन्त्र में सम्मिलित था बन्दी कर लिया गया और जेकोबिन दल का कट्टर समर्थक मोरो जो नैपोलियन के पश्चात् फ्रांस का सबसे योग्य सेनापति था, अमेरिका को निर्वासित कर दिया गया। इस प्रकार उसके प्राण बचे। बोनापार्ट ने राजतन्त्र के पक्षपातियों के हृदयों में अधिक डर बिठलाने के लिये बूरबन वंश के एक नवयुवक राजकुमार को बलपूर्वक बन्दी बनाकर बध करा दिया। यह ड्यूक दी ऑंगिएँ (Duc d' Enghien) था जो जर्मनी में गिरफ्तार किया गया था। यदि सच पूछिये तो नैपोलियन जेकोबिन दल की ओर से अधिक भयभीत रहता था। "मैं ऐसे षड्यन्त्रकारियों से नहीं डरता जो नौ बजे सोकर उठें और साफ़ कमीज़ पहिनें।" अतएव प्राय: ऐसा होता था कि जब कभी किसी षड्यन्त्र का पता चलता था तो जेकोबिन दल के व्यक्ति ही उसके क्रोध का निशाना बनते थे।

सन् १८०२ ई० में फ्रांस की जनता ने सर्वसम्मति से इस बात का निर्णय कर दिया था कि नैपोलियन जीवन पर्यन्त कौंसल रहेगा। अब केवल यह शेष रह गया था कि यह पद वंशानुगत कर दिया जाय और उसका नाम परिवर्तित कर दिया जाय। सन् १८०४ ई० में सिनेट ने जिस पर पूर्व ही से प्रथम कौंसल का पूर्ण प्रभाव था यह परिवर्तन करने का निर्णय किया और

नैपोलियन का राज्याभिषेक
२ दिसम्बर, १८०४ ई०

सर्वसाधारण ने उसे तुरन्त ही स्वीकार कर लिता। २ दिसम्बर सन् १८०४ ई० को नोत्रदाम के गिर्जाघर में बड़ी प्रतिष्ठा और सम्मान के साथ नैपोलियन बोनापार्ट का राज्याभिषेक किया गया।। पोप पायस सप्तम उसे राजमुकुट पहनाने के लिये रोम से बुलाया गया, किन्तु प्रथम कौंसल ने उसके हाथ से राजमुकुट धारण न करके उसे स्वयं अपने शीश पर धारण कर लिया। इस प्रकार वह फ्रांस का सम्राट हो गया तथा इतिहास में नैपोलियन प्रथम के नाम से विख्यात हुआ। इस समय उसकी आयु केवल ३४ वर्ष की थी। फ्रांस के निवासियों ने इस अद्भुत परिवर्तन को उसी प्रकार स्वीकार कर लिया जिस प्रकार उन्होंने कुछ काल पूर्व ब्रूमेयर के आकस्मिक शासन परिवर्तन को स्वीकार किया था। "तुम फ्रांसीसी सम्राट-शाही पसन्द करते हो।" ये वे शब्द हैं जिनसे नैपोलियन ने फ्रांस के निवासियों को सम्बोधित किया था। राज्यक्रांति के सेनापतियों में केवल कार्नो ही ऐसा था जो नैपोलियन के सम्राट बनने से सहमत न था। अत: वह देश छोड़कर चला गया।

पच्चीसवां अध्याय

नैपोलियन की शक्ति का शिरोबिन्दु

जो सफलतायें शांतिकाल में प्राप्त की जाती हैं वे युद्धकाल में उपलब्ध सफलताओं से किसी दशा में भी कम नहीं होतीं। इसी विचार को इंग्लैंड के प्रसिद्ध कवि मिल्टन ने सत्रहवीं शताब्दी में किसी अन्य प्रसंग में प्रकट किया था। उपरोक्त विचार में वास्तविकता का अंश अधिक है। यह बात नैपोलियन बोनापार्ट के उदाहरण से विशेष रूप से प्रकट होती है। यदि मारेंगो और अस्टरलिट्स के युद्धों ने उसकी कीर्ति को चिरस्थायी बना दिया है और यदि प्रथम से उत्तरी इटैली में फ्रांस का प्रभुत्व पुनः स्थापित हो गया था और द्वितीय ने इंग्लैंड के मन्त्री छोटे पिट को यह कहने को बाध्य कर दिया था कि "सामने जो यूरोप का नक़शा टंगा हुआ है, उसे लपेट कर रख दो। हमें उसकी आवश्यकता आगामी दस वर्ष तक नहीं पड़ेगी" तो नैपोलियन का सिविल कोड और उसका धार्मिक प्रबन्ध भी महत्व में कम नहीं हैं। प्रथम का प्रभाव यूरोप के राष्ट्रों पर आज दिन भी बाक़ी है और द्वितीय के द्वारा शासन और चर्च के बीच इतना सुन्दर सम्बन्ध स्थापित हो गया था कि दीर्घकाल तक वह फ्रांस के लिये गौरव का कारण रहा। जिन चार वर्षों में बोनापार्ट ने वेंदे के विद्रोह को शांत किया था, उसने सिविल कोड तैयार किया था तथा पोप के साथ अपनी शर्तों पर समझौता करने में सफलता पाई थी, सारांश यह कि जिन चार वर्षों में उसने कई प्रकार से फ्रांस की आन्तरिक कुव्यवस्था को दूर करके वहां सुप्रबन्ध तथा व्यवस्था स्थापित की थी, वही चार वर्ष इस बात के लिये भी प्रसिद्ध हैं कि उसने आगामी युद्ध के लिये तैयारियां कीं और अन्ताराज्य नीति (Diplomacy) के द्वारा यूरोपीय देशों में अपना प्रभाव उत्पन्न करने का प्रयत्न किया। इस काल में उसने "कर्मठ द्वीप निवासियों" को पराजित करने की योजनायें भी सोचीं और उन्हें सफल बनाने के लिये पहला क़दम उठाया।

यदि सच पूछिये तो नैपोलियन ने युद्ध के महत्व को कभी भी विस्मरण नहीं किया था। इसका कारण केवल यह न था कि वह एक सैनिक था और युद्ध के कारण ही उसका उत्कर्ष हुआ था। वरन् यह भी था कि वह अपने शासन को स्थापित रखने के लिये युद्ध सम्बन्धी राजनीति को आवश्यक समझता था। अतएव उसने एक बार कहा भी था कि "देश के अन्दर और बाहर मेरे साम्राज्य का आधार आतंक पर स्थित है।" उसकी असाधारण विजयों के कारण यूरोप का शक्ति सन्तुलन अव्यवस्थित हो गया था और आवश्यक था कि कभी न कभी उसके विरुद्ध स्वाधीन देशों की ओर से शस्त्र उठाया जाये। लूनेवील (Luneville) की संधि से फ्रांस ने छ: अन्य गण-राज्य यूरोप में स्थापित किये थे, किन्तु वास्तव में उन पर फ्रांस के शासन का पूरा अधिकार था। उनमें से सिस-ऐल्पिन के राज्य का नैपोलियन शीघ्र ही अध्यक्ष बन गया, और उसने उसका नाम बदल कर "इटैली का गण-राज्य" (Italian Republic) कर दिया। सन् १८०२ ई० में पीडमोंट पूर्ण रूप से फ्रांस में सम्मिलित कर लिया गया, परन्तु सार्डिनिया को इसके बदले में कुछ भी न दिया गया। फ्रांस ने स्विटज़रलैंड के मामलों में हस्तक्षेप करना भी बन्द न किया था। ये सब बातें ऐसी थीं जो न केवल इंग्लैंड वरन् अन्य देशों के निवासियों के लिए भी चिन्ता का कारण थीं। इनके अतिरिक्त फ्रांस की ओर से कुछ बातें ऐसी भी की गईं जिनका सम्बन्ध प्रधान रूप से इंग्लैंड से था। विशेषकर नैपोलियन के वे कार्य जो उसने फ्रांस के व्यापार तथा उपनिवेशों के उत्कर्ष के लिये किये थे उसे असहनीय थे। इनका एक प्रकट उदाहरण हेति अथवा साँ दोमिंगो का है। उसने उपरोक्त द्वीप को अपने अधिकार में लाने का किस प्रकार प्रयत्न किया तथा किस प्रकार उसको इस कार्य में असफलता प्राप्त हुई, इसका स्पष्ट वर्णन गत अध्याय में किया जा चुका है। इस मामले का विशेष महत्व यह है कि उसके द्वारा इंग्लैंड के मन्त्रियों को इस बात का प्रमाण मिल गया कि नैपोलियन दूरस्थ देशों में उपनिवेश स्थापित करने के महत्व को समझता है और उसमें इतनी शक्ति है कि वह किसी भी दिन पश्चिमी द्वीपसमूह को अँगरेज़ी अधिकार से निकालने का प्रयत्न कर सकता है।

फ्राँस और इंग्लैंड के बीच वैमनस्य के कारण

अन्य दिशाओं से भी चिन्ताजनक समाचार आ रहे थे। नैपोलियन के लिये भारत और मिस्र का आकर्षण उस समय भी कम न हुआ था। विशेषकर प्रथम देश में फ्रांस के प्रभाव को बढ़ाने के स्वप्न वह अब भी देख रहा था। इसके अतिरिक्त उसने अपने एक प्रतिनिधि को, जिसका नाम सेबास्तीआनी (Sebastiani) था, ऐल्जीरिया तथा भूमध्य सागर के पूर्वी देशों के सम्बन्ध में जानकारी

प्राप्त करने को भेजा था। संयोग से, और यह भी सम्भव है कि संकल्प से, उसकी रिपोर्ट सरकारी समाचारपत्र मोनीतर (Moniteur) में प्रकाशित कर दी गई। इस रिपोर्ट के बीच यह लेख भी था कि मिस्र की विजय के लिये छ: सहस्र सेना काफ़ी है। इससे अंगरेज़ों ने यही नतीजा निकाला कि बहुत सम्भव है कि नैपोलियन किसी दिन मिस्र को विजय करने का पुन: प्रयत्न करे। इंग्लैंड से संधि हो जाने के बाद भी वहाँ के व्यापारी फ्रांस के साम्राज्य में स्वतन्त्रतापूर्वक व्यापार न कर सकते थे। इन सब बातों से अँगरेज़ नैपोलियन के विरुद्ध थे। उधर नैपोलियन को भी इंग्लैंड के विरुद्ध शिकायत थी। अँगरेज़ी पत्र भागे हुये फ्रांसीसियों (Emigres) में भड़काने से उसके विरुद्ध ज़हर उगल रहे थे तथा उसे बदनाम करने का प्रयत्न कर रहे थे। इसके अतिरिक्त इंग्लैंड में बूरबन वंश के प्रतिनिधि भी विद्यमान थे, जो अभी तक फ्रांस के सिंहासन पर बैठने का स्वप्न देख रहे थे। नैपोलियन ने इस बात का प्रयत्न किया कि इस प्रकार के लोग हटा दिये जायें, किन्तु अँगरेज़ी शासन ने उसकी पर्वाह न की।

एक महत्वपूर्ण प्रश्न माल्टा का भी था, जो इंग्लैंड और फ्रांस के बीच वैमनस्य का कारण बना हुआ था। उपरोक्त द्वीप की स्थिति तथा उसकी प्राकृतिक मज़बूती ने उसे अधिक महत्व प्रदान किया था। आमीएं की संधि से अँगरेज़ों ने यह वचन दिया था कि वे उसे सेंट जोन के नाइटों को वापस कर देंगे, किन्तु उन्होंने ऐसा न किया था। नैपोलियन को यह बात भी स्पष्ट हो गई थी कि अँगरेज़ किसी भी दशा में उसे छोड़ने को तैयार नहीं हैं। वह इस बात पर ज़ोर दे रहा था कि उपरोक्त संधि के अनुसार अवश्य व्यवहार होना चाहिये। वह कहा करता था, "आमिएं की संधि और आमिएं की संधि के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।" इंग्लैंड के राजदूत लार्ड ह्विटवथ (Whitworth) ने नैपोलियन के बड़े भाई जोज़ेफ की सहायता से इसका प्रत्येक रूप से प्रयत्न किया कि फ्रांस से सम्बन्ध विच्छेद न किये जायें, परन्तु उसे सफलता प्राप्त न हुई। अन्तत: मार्च सन् १८०३ ई० में इंग्लैंड और फ्रांस एक दूसरे के शत्रु हो गये और नैपोलियन ने उन समस्त अँगरेज़ों को बन्दी बना लिया जो देशाटन के उद्देश्य से फ्रांस गये हुये थे।

नैपोलियन बोनापार्ट के लिये प्रत्येक क्षण बहुमूल्य था। ज्यों ही इंग्लैंड के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की गयी, उसने उस पर आक्रमण करने की तैयारियां कर दीं। वह कहने लगा, "चैनल एक खाई के समान है जिसको पार करने के लिए केवल एक चुटकी भर साहस की आवश्यकता है।" उसका दृढ़ विचार था कि यदि वह उसमें सफल हो गया तो वह इंग्लैंड पर सरलता से अधिकार

इंग्लैंड पर आक्रमण करने की तैयारियाँ

कर सकेगा और यदि इंग्लैंड उसके पैरों पर आ गिरा तो वह समस्त संसार का स्वामी बन जायेगा। "यदि मैं इंगलिश चैनल पर छः घंटों के लिये प्रभुत्व पा जाऊँ तो मैं संसार का स्वामी बन सकता हूं।" जो कुछ नैपोलियन सोच रहा था वह सत्य था किन्तु उसके लिये अपने विचारों को व्यावहारिक रूप देना अत्यन्त कठिन था; क्योंकि उसका सामना करने के लिये चैनल की दूसरी ओर काफ़ी प्रबन्ध था। अँगरेज़ों का उत्साह व साहस तथा उनके देशभक्ति के उद्‌गार उसी प्रकार बढ़े हुये थे जिस प्रकार आर्मेडा के आक्रमण के समय बढ़े हुये थे। सहस्रों की संख्या में स्वयं-सेवक भर्ती कर लिये गये थे। समुद्र तट तथा द्वीपों पर गोल छोटे दुर्ग (Martello Towers)* निर्मित कर लिये गये थे। अँगरेज़ी बेड़ा ब्रेस्त (Brest) और तूलों (Toulon) के बन्दरगाहों के सामने नियत था जिससे शत्रु के जहाज़ों को बाहर निकलने का अवसर प्राप्त न हो। कुछ जहाज़ फ्रांस के तिजारती जहाज़ों को लूटने के लिये नियत कर दिये गये थे। कुछ जहाज़ स्पेन के सोना चाँदी से लदे जहाज़ों को लूटने में व्यस्त थे। कारण कि स्पेन फ्रांस का सहायक था।

इंग्लैंड के आक्रमण को सफल बनाने के लिए तीन बातों की अत्यन्त आवश्यकता थी,—शक्तिशाली सेना, सेना तथा युद्ध सामग्री लादने के लिए उपयुक्त व्यवस्था तथा शक्तिशाली जहाज़ी बेड़ा, जिसकी संरक्षा में सेना और सामग्री चैनल को पार कर सकते थे। इन तीनों की व्यवस्था करना कठिन था। नैपोलियन ने प्रथम दो आवश्यकताओं को तो किसी प्रकार पूरा कर लिया था, किन्तु वह तृतीय आवश्यकता को पूरा करने में सफल न हुआ। सन् १८०३ ई० तथा सन् १८०५ ई० के बीच उसने दो लाख दस हज़ार पुरुषों को सेना में भर्ती किया। उनका पाचवां भाग राष्ट्र की सबसे निम्न श्रेणी से किया गया था, परन्तु उसके उच्च पदाधिकारियों ने उन्हें क़वायद आदि सिखलाकर शीघ्र ही होशियार बना लिया था। सेना और युद्ध सामग्री को अंगरेज़ी तट पर उतारने के लिये नैपोलियन ने दो सहस्र चपटी तलों वाली नावों के बनाये जाने की आज्ञा दी, परन्तु अंगरेज़ी बेड़े के सावधान रहने के कारण एक कठिन प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि उनको तैयार करने वाले बन्दरगाहों से उस बन्दरगाह तक किस प्रकार पहुंचाया जाय, जहाँ से उनको अंगरेजी तट की ओर रवाना होना था। अतएव प्रत्येक प्रकार का प्रयत्न करने के पश्चात् भी पन्द्रह सौ नावों से अधिक बूलों (Boulogne) बन्दर के समीप न पहुंच सकीं। उपरोक्त बन्दरगाह के आकार में भी वृद्धि कर ली गई थी। तथापि वहां से नावों की इतनी बड़ी संख्या पांच अथवा छः बार से कम में

* मार्तेल (Martell) नाम के घंटाघर इटैली में समुद्री डाकुओं के विषय में सूचना देने को बनाये जाते थे।

रवाना न हो सकती थी। तृतीय आवश्यकता ऐसी थी जिसको नैपोलियन किसी भी दशा में पूरा न कर सकता था। फ्रांसीसी बेड़ा संख्या और योग्यता दोनों में अंगरेज़ी बेड़े से कम था। इसके अतिरिक्त वह फ्रांस के विभिन्न बन्दरगाहों में फैला हुआ था। उसका सबसे बड़ा भाग ब्रेस्त के बन्दरगाह में रुका पड़ा था और जल सेनानायक कार्नवालिस उसे बाहर न निकलने देता था। उसका दूसरा बड़ा भाग तूलौं के बन्दरगाह में था, परन्तु वह नेल्सन के कारण बाहर न आ सकता था। ऐसी दशा में नैपोलियन के सम्मुख एक बहुत बड़ी कठिनाई उपस्थित थी। वह जानता था कि जब तक तूलौं और ब्रेस्त के बेड़े सम्मिलित होकर उसकी रक्षा के लिए चेनल में न आयेंगे तब तक वह अपनी सेना के साथ अंगरेज़ी तट पर नहीं पहुंच सकेगा। परन्तु वह विलक्षण योजनायें बना सकता था और अपने जहाज़ों का अच्छे से अच्छा उपयोग कर सकता था। यदि कुछ जहाज़ अंगरेजों को धोखा देने के लिए आयरलैंड अथवा मिस्र पर आक्रमण करने को भेज दिये जायें अथवा यदि तूलौं के जल सेनानायक वीलनव (Villeneuve) को आज्ञा दी जाये कि नेल्सन की दृष्टि बचाकर पश्चिमी द्वीपसमूह चला जाये तथा वहां से लौटकर ब्रेस्त के बेड़े से सम्मिलित होने का प्रयत्न करे तो क्या अंगरेज़ उसकी चाल को समझ सकेंगे? इस प्रकार के प्रश्न केवल नैपोलियन जैसे योधन-नीतिज्ञ (Strategist) के मस्तिष्क में आ सकते थे। किन्तु इस प्रकार की योजनाओं को सफल बनाने के लिए सुदृढ़ बेड़े के अतिरिक्त चतुर तथा अनुभवी पदाधिकारियों की आवश्यकता थी। जैसा कि पहले बता चुके हैं, फ्रांस की जलसेना में उनका अभाव था। नैपोलियन को इस बात का ध्यान भी नहीं रहा था कि ज्वार-भाटा तथा हवाओं पर किसी का आदेश नहीं चलता।

कुछ लेखक ऐसे भी हैं जिनका यह मत है कि नैपोलियन वास्तव में इंग्लैंड पर आक्रमण न करना चाहता था एवं जो तैयारियाँ उसने इंगलिश चैनल और उत्तरी समुद्र तट पर की थीं, वे वास्तव में यूरोप के राजनीतिवेत्ताओं को धोखा देने के लिये की थीं। परन्तु हम पूछ सकते हैं कि यदि उसका वास्तविक उद्देश्य आस्ट्रिया पर आक्रमण करना था तो वह इतना अधिक धन सामुद्रिक तैयारियों पर क्यों व्यय करता? इसके अतिरिक्त वह मार्टनीक के द्वीप में फ्रांसीसी जहाज़ों के एकत्रित किये जाने की आज्ञा क्यों देता? इंग्लैंड को नीचा दिखाने की चिन्ता नैपोलियन को दीर्घकाल से अधीर बना रही थी। एक बार उसने मिस्र के मार्ग से भारतवर्ष पहुंचने तथा वहाँ अंगरेज़ों की शक्ति को समाप्त करने का प्रयत्न किया था। इसके पश्चात् उसने इंग्लैंड पर सीधे आक्रमण करने का प्रयत्न किया। जब इसमें भी उसे सफलता नहीं मिली तो उसने उसके व्यापार

और उद्योग को विशाल स्तर पर हानि पहुंचाने का प्रयत्न किया। इसकी सब से श्रेष्ठ उक्ति यह थी कि इंग्लैंड का तिजारती सामान यूरोप के महाद्वीप तक पहुंचने से वंचित रखा जाय। परन्तु यह कठिन कार्य यूरोपीय देशों के शासकों की सहायता के बिना कैसे पूर्ण हो सकता था ? जब नैपोलियन बोनापार्ट ने सुना कि वीलनव ने पश्चिमी द्वीपसमूह से लौटकर केडिज़ के बन्दरगाह में शरण ली है तो उसे बड़ा दुःख हुआ और उसने बाध्य होकर बूलौं की सेना को अस्ट्रिया की ओर अग्रसर होने की आज्ञा दी। जो अभी तक 'इंग्लैंड की सेना' (Army of England) थी, वह अब 'महती सेना' (Grand Army) में परिवर्तित हो गई और वह अस्ट्रिया की दिशा में बढ़ती हुई दिखाई पड़ी।

इसी बीच में इंग्लैंड के प्रधान मंत्री छोटे पिट (दूसरी बार १८०४-१८०६) ने फ्रांस के विरुद्ध यूरोपीय राष्ट्रों के तृतीय संघ के स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर ली थी (सन् १८०५)। इसमें इंग्लैंड के अतिरिक्त अस्ट्रिया, रूस और स्वीडन सम्मिलित हुये। अस्ट्रिया का सम्मिलित होना बिल्कुल स्वाभाविक था। इटैली में उसकी शक्ति का पूर्ण ह्रास हो चुका था। कैम्पोफ़ार्मियो और लूनेवील की संधियों की शर्तें इतनी कठोर थीं कि वे उसके लिए असह्यनीय थीं। उनके कारण उसका मान कम हो गया था। इसके अतिरिक्त अस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस द्वितीय ने हाल ही में 'होली रोमन सम्राट' की प्राचीन उपाधि के आगे 'अस्ट्रिया का कौटुम्बिक सम्राट' की उपाधि जोड़ ली थी। अतएव वह इस बात को सहन नहीं कर सकता था कि नैपोलियन जैसा छोटी बुनियाद रखने वाला व्यक्ति सम्राट कहलाये। रूस में बोनापार्ट के प्रशंसक ज़ार पॉल के वध के पश्चात् अलेक्ज़ेंडर प्रथम सिंहासनारूढ़ हो गया था। वह अठारहवीं शताब्दी के दर्शन का अध्ययन कर चुका था और उसके विचार भी किसी सीमा तक उदार थे। उसकी बड़ी अभिलाषा थी कि वह किसी प्रकार प्रसिद्धि प्राप्त करे। रूस की आर्थिक अवस्था इस योग्य न थी कि वह यूरोपीय संघ के लिये सेनायें भेजता। परन्तु जब छोटे पिट ने उसे कई बार पर्याप्त आर्थिक सहायता दी तो वह उसमें सम्मिलित हो गया और उसने अपनी सेना अस्ट्रिया के सहायतार्थ भेज दी। मित्र राष्ट्रों ने यह योजना बनाई थी कि दोनों देशों की सम्मिलित सेनायें फ्रांस की पूर्वीय सीमा पर आक्रमण करेंगी, परन्तु इसमें उन्हें नाम मात्र को भी सफलता नहीं मिली। छोटे पिट ने महाद्वीप पर युद्ध करने को सेनायें तो कम भेजीं परन्तु वह मित्र राष्ट्रों की

तृतीय यूरोपीय संघ

आर्थिक सहायता बराबर करता रहा। यह वही राजनीति थी जिसको उसका पिता सप्तवर्षीय युद्ध के समय प्रयोग कर चुका था।

छोटे पिट ने इस बात का प्रयत्न किया कि प्रशा भी संधि में सम्मिलित हो जाये, परन्तु वह कृतकार्य न हुआ। प्रशा का सम्राट फ्रेडरिक विलियम तृतीय (१७६७-१८४०) कमज़ोर दिल तथा अस्थिर चित्त का था। जब नैपोलियन ने उसे हनोवर दिलाने का वचन दिया तो उसने युद्ध में सम्मिलित न होने की घोषणा कर दी। प्रशा के निवासी इस नीति पद्धति के विरुद्ध थे, परन्त फ्रेडरिक विलियम ने इसकी चिन्ता न की। बवेरिया (Bavaria) और वूरटम्बर्ग (Wurttemberg) आस्ट्रिया के प्रतिद्वन्दी थे। अतएव उन्होंने फ्रांस की ओर से युद्ध करने का वादा किया और वास्तव में नैपोलियन को बहुमूल्य सहायता भी प्रदान की।

इसके पूर्व कि मित्र राष्ट्रों के तीसरे संघ की सेनायें फ्रांस की पूर्वीय सीमा तक पहुंचें नैपोलियन ने इंग्लैंड पर आक्रमण करने का विचार छोड़ दिया था और जो अपरिमित गोला बारूद और युद्ध सामग्री उसने इंगलिश चैनल और उत्तरी सागर के तट पर एकत्रित की थी, उसके विषय में उसने यह आदेश दे दिया था कि वह सब सामान पूर्व की ओर भेज दिया जाय। वह अपनी विद्युतगति के लिए विख्यात था। अतएव शीघ्र ही उसकी महती सेना सभी प्रकार की आवश्यक सामग्री के सहित आस्ट्रिया पर आक्रमण करने के विचार से वूरटम्बर्ग पहुंच गई। फ्रांसिस द्वितीय ने अपनी सेना का बहुत बड़ा भाग इटैली भेज दिया था और दक्षिणी जर्मनी की रक्षा के लिए केवल ५० हज़ार सैनिक रक्खे थे। यह उसकी बहुत बड़ी भूल थी, जिस से प्रकट होता है कि वह योग्य तथा दूरदर्शी न था। दूसरी बड़ी भूल उसके सेनापति मैक (Mack) से हुई। उसने रूसी सेना के आने के पूर्व ही फ्रांस पर आक्रमण करने का निर्णय कर लिया। नैपोलियन उसकी गति विधि से पूर्णतया परिचित था। उसने इतनी तीव्रगति तथा होशियारी से काम किया कि आस्ट्रियन सेना चारों ओर से घिर गई, किन्तु मैक को इसका पता न था। परिणाम यह हुआ कि उसने तथा उसकी पचास हज़ार सेना ने २० अक्टूबर सन् १८०५ ई० को ऊल्म (Ulm) के क़स्बे के निकट शस्त्र डाल दिये। इस सफलता के विषय में नैपोलियन ने लिखा था,—"मैंने जो योजना तैयार की थी उस पर पूर्ण रूप से उसी प्रकार व्यवहार किया गया जैसा कि मैंने कहा था।" इस सम्बन्ध में संभवतः प्रशा का विख्यात फ़ील्ड मार्शल मोल्ट्क (Moltke) भी, जो बाद को हुआ था, उसकी समता नहीं कर सकता था। नैपोलियन के विरोधी लेखकों ने भी इस सम्बन्ध में उसकी प्रशंसा की है।

युद्ध का प्रारम्भ

उपरोक्त युद्ध के दूसरे ही दिवस नेपोलियन की सेना को समुद्र पर एक बहुत बड़ी पराजय हुई, जिसका महत्व भी किसी प्रकार से कम नहीं है। उसका प्रभाव दीर्घकाल तक रहा। पश्चिमी द्वीपसमूह से लौटकर वीलनव ने ब्रेस्त के बन्दरगाह में न पहुंच कर स्पेन के प्रसिद्ध बन्दरगाह केडिज (Cadiz) में शरण ली थी। २१ अक्टूबर को जब दोनों देशों की जल-सेनाओं ने बाहर आने का प्रयत्न किया तो लार्ड नेल्सन ने उन्हें ट्रैफ़लगार (Trafalgar) की अन्तरीप के सन्निकट पूर्ण रूप से परास्त किया। परन्तु इंग्लैंड में इसका अधिक हर्ष न मनाया गया, क्योंकि युद्ध में नेल्सन खेत रहा था। इसके बाद कम से कम सन् १८१५ ई० तक किसी देश में भी इतना साहस न रहा था कि इंग्लैंड को समुद्र पर ललकारता।

ट्रैफ़लगार का युद्ध, २१ अक्टूबर, १८०५ ई०
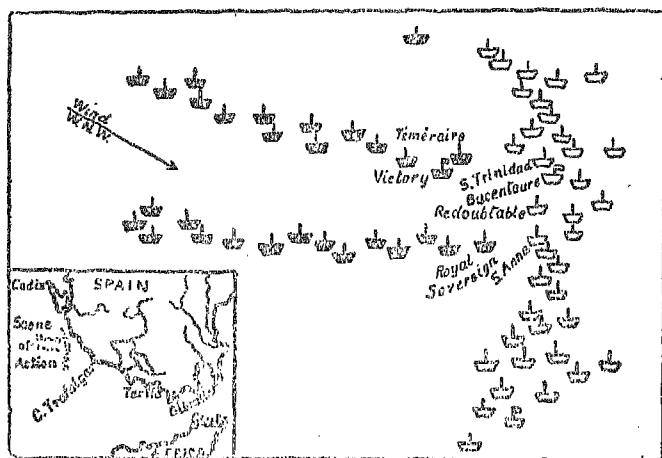
(काले जहाज इंग्लैंड के हैं तथा सफ़ेद जहाज फ्रांस व स्पेन के हैं)

ट्रैफ़लगार की पराजय पर आंसू न बहाकर नैपोलियन ने अपनी गत सफलताओं से अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न किया। उसने तुरन्त वियेना पर अधिकार कर लिया तथा उत्तर की ओर बढ़कर आस्टरलिट्ज़ (Austerlitz) के गांव के समीप फ्रांसिस द्वितीय तथा सिकन्दर प्रथम का सामना किया। इस दिन दिसम्बर सन् १८०५ ई० की दूसरी तारीख और फ्रांस के सम्राट के राज्याभिषेक की वर्षगांठ थी। नैपोलियन की ओर मित्र राष्ट्रों से दस सहस्र सेना कम थी। परन्तु उसने युद्ध

आस्टरलिट्ज़

के लिये इतनी अच्छी योजना बनाई थी और उस पर ऐसी योग्यता से व्यवहार किया था, कि सब लोग अवाक थे। मुख्यत: समय का अनुशासन घड़ी की सुई को देखकर किया गया था। "तुमको प्रेटज़न की पहाड़ियां तक पहुंचने में कितना समय लगेगा?" नैपोलियन ने सोल्त (Soult) से पूछा। मार्शल ने उत्तर दिया, "बीस मिनट से कम।" सम्राट ने कहा, "ऐसी दशा में हम चौथाई घंटे तक प्रतीक्षा कर सकते हैं।" यह वह वार्ता है जो नैपोलियन और उसके अफ़सर के बीच उपरोक्त युद्ध के प्रारम्भ होने से पूर्व हुई थी। दोनों ने समय का पूर्ण अनुशासन किया और दोनों अपने उद्देश्यों में कृतकार्य हुये। इससे प्रकट होता है कि प्रत्येक सैकेण्ड और मिनट पर नैपोलियन का अधिकार था। सन्ध्या होते होते रणभेरी ने फ्रांसीसियों की विजय सुनाई। मित्रराष्ट्रों की इतनी अधिक क्षति हुई थी कि वह वर्णन के बाहर है। इतना बड़ा युद्ध कदाचित् मार्लबुरो (Marlborough) के पश्चात् यूरोप में नहीं किया गया था। "तीन सम्राटों के युद्ध" के पश्चात्, जैसा कि उपरोक्त युद्ध कहलाता है, नैपोलियन के लिये प्रशा और रूस की ओर बढ़ना सरल हो गया। इंग्लैंड के विख्यात प्रधान मन्त्री छोटे पिट को इतना हार्दिक दु:ख हुआ कि छ: सप्ताह के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई।

प्रेसबर्ग की सन्धि, २६ दिसम्बर, १८०५ ई०

युद्ध के पश्चात् ज़ार अपनी सेना सहित पूर्व की ओर भाग गया तथा सम्राट फ्रांसिस ने नैपोलियन से प्रेसबर्ग (Pressburg) के स्थान पर सन्धि कर ली। वह तीसरे संघ से पृथक हो गया। इसके अतिरिक्त उसे कई बहुमूल्य देश नैपोलियन को दे देने पड़े। ऐसा होना इसलिये आवश्यक था कि आस्ट्रिया को तृतीय बार नैपोलियन के सम्मुख घुटने टेकने पड़े थे। इसके अतिरिक्त नैपोलियन की नीति का एक विशेष उद्देश्य यह भी था कि उसके मुक़ाबले में दक्षिणी जर्मनी के राज्यों को शक्तिशाली बनाया जाय। इटैली में उसे वेनीशिया (Venetia) और दलमेशिया (Dalmatia) से, और जर्मनी में तिरोल (Tyrol) और स्वेबिया (Swabia) के कुछ भाग से वंचित होना पड़ा। अन्तिम दो देश फ्रांस के सच्चे मित्र बवेरिया को दे दिये गये। बवेरिया और वूरटम्बर्ग दोनों, राज्यों में परिवर्तित कर दिये गये और बादन (Baden) को ग्रांड डची (Grand Duchy) का पद दे दिया गया। फ्रांस से इन तीनों देशों का सम्बन्ध विवाहों के द्वारा सुदृढ़ बना दिया गया। नैपोलियन के सौतेले लड़के यूजीन बोआरने (Eugene Beauharnais) का विवाह बवेरियन वंश की लड़की से कर दिया गया। उसके सबसे छोटे भाई जेरोम बोनापार्ट (Jerome Bonaparte) का विवाह वूरटम्बर्ग की एक

राजकुमारी से कर दिया गया, और बादन के एक राजकुमार के हाथ में जोज़ेफ़ाइन की पुत्री की ननद का हाथ दे दिया गया। प्रेसबर्ग की लज्जाजनक सन्धि से आस्ट्रिया की जनसंख्या और वार्षिक आय बहुत कम हो गई। इटेली, स्विटज़रलैंड और राइन नदी से उसका सम्बन्ध बिल्कुल टूट गया तथा वह यूरोपियन देशों में द्वितीय श्रेणी का राज्य बन गया।

आस्ट्रिया की प्रतिष्ठा तथा शक्ति को एक दूसरे प्रकार से भी भारी क्षति पहुंचाई गई। जून सन् १८०६ ई० में नेपोलियन ने होली रोमन साम्राज्य को समाप्त कर दिया, जो वास्तव में "न होली (पावन) था, न रोमन और न साम्राज्य।" उसका महत्व भी अब शेष न था, परन्तु इतिहास में उसकी प्रसिद्धि सदा से अधिक थी। लगभग चार सौ वर्ष से हैप्सबर्ग वंश के सम्राटों को होली रोमन सम्राट होने का श्रेय प्राप्त था। नैपोलियन ने होली रोमन साम्राज्य को समाप्त करके आस्ट्रिया के सम्राटों की प्राचीन प्रतिष्ठा और शक्ति को विशेष रूप से कम कर दिया। जो राज्य उक्त साम्राज्य में सम्मिलित थे उनमें से कुछ की स्वाधीनता समाप्त कर दी गई तथा दक्षिण व पश्चिम के सोलह राज्यों को सम्मिलित करके "राइन का संघ" (Confederation of the Rhine) बना दिया गया। संघ के सभी राज्य फ्रांस के अधीन थे। उसका निर्माण जर्मन राष्ट्र की बेबसी और निर्बलता का प्रकट प्रमाण है। नैपोलियन स्वयं न जर्मन भाषा बोल सकता था और न उसका एक भी अक्षर पढ़ सकता था। परन्तु वह जर्मन राष्ट्र के स्वभाव तथा उसकी आकांक्षाओं से पूर्णतया अवगत हो गया था। उसको जर्मनी के धन और मनुष्यों की भी आवश्यकता थी। इनको प्राप्त करने का सबसे सुन्दर उपाय यह था कि द्वितीय को किसी प्रकार के संघ में सम्मिलित करके उनके उत्साह की वृद्धि कर दी जाय।

होली रोमन साम्राज्य का अंत, १८०६ ई०

इस समय तक नैपोलियन बोनापार्ट की प्रतिष्ठा और शक्ति बहुत बढ़ गई थी। वह स्वयं को दूसरा चार्लमेन अथवा सीज़र समझने लगा था। कमी केवल इस बात की थी कि उसका साम्राज्य उक्त बड़े सम्राटों की तुलना में बहुत छोटा था। परन्तु वह कुछ समय से एक पश्चिमी साम्राज्य स्थापित करने के स्वप्न देख रहा था। उसके विचार में रूस एक एशियायी देश था। अतएव वह पश्चिमी यूरोप को सम्मिलित करके अपने अधीन एक बहुत बड़ा संघ बनाना चाहता था। उसका कथन था कि "जब तक समस्त महाद्वीप एक सम्राट् के अधीन न हो जायेगा तब तक यूरोप में शान्ति स्थापित न हो सकेगी।" अस्टरलिट्ज़ के युद्ध और

चार्लमेन अथवा सीज़र होने के स्वप्न

प्रेसवर्ग की संधि से नैपोलियन को सफलता की बड़ी आशा हो गई थी। इसके पश्चात् जब उसने अपने सम्बन्धियों और मित्रों में राज्य और साम्राज्य वितरण किये तो ऐसा मालूम होने लगा कि वह अपने उद्देश्य के अत्यन्त निकट पहुँच गया है। सन् १८०६ ई० के पूर्व से यूजीन बोआरने नैपोलियन की ओर से इटैली के राज्य में वायसराय का काम कर रहा था तथा सेनापति मारमों उसकी ओर से इलीरिया (Illyria) के नये प्रान्तों में नियत था। इसके पश्चात् उसने अपने बड़े भाई जोज़ेफ़ को नेपिल्ज़ का बादशाह नियुक्त किया तथा दूसरे भाई लूई को हालैंड का राज्य दिया। उसकी बहिन ऐलिस (Elise) टस्कैनी की ग्रांड डचेज़ (Grand Duchess) बना दी गई और कैरोलिन का पति मूरा (Murat) क्लीव्ज़ (Cleves) के ड्यूक के पद पर सुशोभित किया गया। तैलिरेंद (Talleyrand), बर्तिये एवं बर्नेदोत (Bernadotte) के भाग्य भी जागे। उनको किसी न किसी राज्य का शासक बनाया गया। केवल लूसीन ही एक ऐसा भाई था जो शासन से वंचित रक्खा
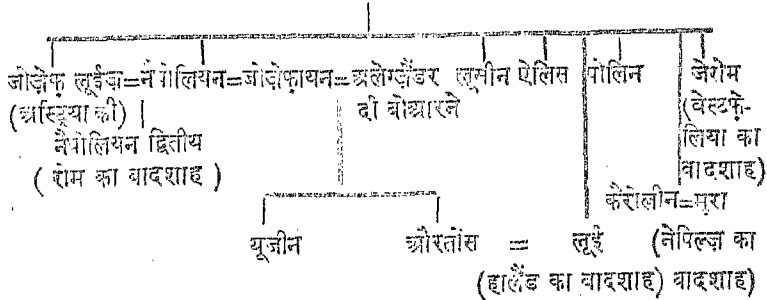
गया था, यद्यपि १६ ब्रूमेयर को वह नैपोलियन की सबसे अधिक सहायता कर चुका था। "जो लोग मेरे साथ उड़ना नहीं चाहते वे मेरे परिवार में सम्मिलित नहीं रह सकते। मैं ऐसे सम्राटों का एक परिवार बना रहा हूँ जो मेरी संघ संबन्धी व्यवस्था से सम्बन्धित रहेंगे।"

इस बीच में 'लन्दन के कायर कुलीनों' को नीचा दिखलाने का विचार नैपोलियन के मस्तिष्क से कभी नहीं हटा था। इंग्लैंड पर सीधे मार्ग से आक्रमण करने का प्रश्न तो अब पैदा न हो सकता था। गत अगस्त में वह

प्रशा के विरुद्ध युद्ध

छोड़ दिया गया था और ट्रैफ़लगार को युद्ध ने उसे पूर्ण रूप से असम्भव बना दिया था। अतएव उसने उस नीति पर चलने का निर्णय किया जिस पर वह और संचालक काफ़ी विचार कर चुके थे। उसने इस बात का दृढ़ संकल्प किया कि वह महाद्वीप के बन्दरगाहों में इंग्लैंड और

अँगरेज़ी उपनिवेशों की बनी हुई वस्तुओं को न पहुँचने देगा। यह एक विशाल योजना थी जिसके उदाहरण के लिए हमें एशियाई इतिहास के पन्नों को लौटना पड़ेगा। कई देशों में वह अपने सम्बन्धियों और पदाधिकारियों को नियत कर चुका था। फिर भी महाद्वीप की तटीय चुंगी व्यवस्था में तीन स्थान रिक्त थे,—जर्मनी, रूस और पुर्तगाल। इन पर प्रभुत्व स्थापित करना भी आवश्यक था। इनमें सबसे विस्तृत और आवश्यक जर्मनी का तट था, जो प्रशा को अधीन अथवा राज़ी किये बिना उसकी योजना में सम्मिलित न हो सकता था। उसको युद्धक्षेत्र में लाने के लिये फ्रांस के सम्राट् ने सरल युक्ति से काम लिया। प्रेसबर्ग की संधि से हनोवर का देश, जो वास्तव में

मध्य यूरोप, सन् १८०६ ई०

इंग्लैंड के बादशाह की जागीर में सम्मिलित था और बर्लिन के राजनीतिज्ञ जिसको प्राप्त करने के दीर्घकाल से अभिलाषी थे, प्रशा को दिला दिया गया था। इसके पश्चात् नैपोलियन ने इंग्लैंड के प्रधान मंत्री चार्ल्स जेम्स फ़ाक्स (Charles James Fox) को यह आश्वासन दिया कि वह उसे प्रशा से वापस दिला देगा। यह ज्ञात करके प्रशा के सम्राट फ्रैड्रिक विलियम तृतीय से सहन न हो सका और उसने युद्ध का निर्णय कर लिया। वास्तव में सन् १७६५ ई० की संधि के पश्चात् प्रशा ने नैपोलियन के विरुद्ध युद्ध में नाम मात्र को भी भाग न लिया था। वह मित्र राष्ट्रों के दूसरे और तीसरे संघों से भी बिल्कुल पृथक रहा था। आस्ट्रिया की ओर जाते समय फ्रांसीसियों ने हनोवर पर अधिकार कर लिया था और उनकी सेनाओं को प्रशा से भी जाना पड़ा

था (सन् १८०५ ई०)। परन्तु इन बातों का शान्तिप्रिय फ्रैड्रिक विलियम पर कोई प्रभाव न पड़ा था। हाँ, हनोवर के मामले ने अवश्य उसको सावधान बना दिया और उसने अपनी सेनाओं को युद्ध के लिये कूच करने की आज्ञा दे दी।

ऐना (Jena) तथा औरर्स्टैट (Auerstadt) के स्थानों पर फ्रैड्रिक विलियम और नैपोलियन की सेनाओं का सामना हुआ। दोनों युद्ध एक ही दिन अर्थात् १४ अक्टूबर सन् १८०६ ई० को किये गये थे और दोनों का परिणाम भी प्रशा के लिये विनाशकारी हुआ। ऐना में फ्रांस के सम्राट् ने स्वयं प्रिंस होहैनलोये (Hohenlohe) की सेना को परास्त किया। औरर्स्टैट में फ्रांस के विख्यात सेनापति, मार्शल दावू (Davout) ने प्रशा के प्राचीन तथा बूढ़े सेनाध्यक्ष ब्रंज़विक (Brunswick) को बुरी तरह परास्त किया। ब्रंज़विक रणक्षेत्र में मारा गया। इसके अतिरिक्त प्रशा की आर्थिक क्षति भी बहुत हुई। इस प्रकार फ्रांसीसियों ने रोज़बाक (Rossbach) के युद्ध का बदला ले लिया, जो सप्तवर्षीय युद्ध के समय लड़ा गया था। प्रशा के अनेक दुर्ग नैपोलियन के अधिकार में आ गये। इसके पश्चात् उसने बड़ी शान से प्रशा की राजधानी बर्लिन में प्रवेश किया, और उक्त देश के निवासियों पर, जो करों के भार से दबे हुये थे, असह्य युद्ध कर नियत किया। बर्लिन से उसने २१ नवम्बर, सन् १८०६ ई० को एक विशेष घोषणा भी प्रकाशित की, जो 'बर्लिन डिक्री' (Berlin Decree) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके द्वारा ब्रिटिश द्वीपसमूह के विरुद्ध व्यापारिक प्रतिबन्ध लागू कर दिये गये तथा इस बात पर भी ज़ोर दिया गया कि उनका व्यापारिक माल ज़ब्त कर लिया जाय और विदेशों के जहाज़, जो उनके किसी बन्दरगाह में प्रवेश करें, ज़ब्त कर लिये जायँ।

ऐना तथा औरर्स्टैट
१४ अक्टूबर, सन् १८०६ ई०

इन आश्चर्यकारी विजयों से पूरा लाभ उठाने के पूर्व बोनापार्ट को रूस से मोर्चा लेना पड़ा। उसे इस बात का भय था कि प्रशा की जो थोड़ी सेना बच गई है, यदि वह रूसी सेना से जो पोलैंड के मार्ग से आ रही थी, मिल जायेगी तो सम्भव था कि फ्रांसीसियों से ऐना तथा औरर्स्टैट का बदला ले लिया जाय। अतएव समय को व्यर्थ न खो कर वह वारसा (Warsaw) गया और इस बात का प्रयत्न किया कि दिसम्बर में बड़े विशाल आधार पर युद्ध किया जाय। परन्तु शत्रु उस जाल में न फँसा जो उसके लिये बिछाया गया था। जनवरी का मास यों ही समाप्त हो गया और नैपोलियन एक पोलिश लड़की के साथ दिल बहलाव करता रहा। फ़र्वरी सन् १८०७ ई० में आइलो (Eylau) का घोर संग्राम हुआ, जिसमें

रूस के विरुद्ध युद्ध : आइलो तथा फ्रीडलाँट

३५ सहस्र अनुभवी फ्रांसीसी सैनिक काम आये। इस प्रकार टाल्स्टाय के इस कथन का प्रमाण मिला कि युद्धक्षेत्र में सेनापति का कोई भी महत्व नहीं होता और युद्ध का निर्णय उन अगणित बातों पर निर्भर होता है जिन्हें हम समझ नहीं सकते। नैपोलियन युद्धक्षेत्र में मौजूद था। इसलिये उसे इस बात का दावा था कि विजय उसके कारण हुई है। वास्तव में उसके लिये इस सफलता का महत्व अधिक नहीं था, क्योंकि 'महती सेना' का आधे भाग से भी अधिक युद्धक्षेत्र में नष्ट हो गया था। इसके अतिरिक्त फ्रांस के सम्राट को अन्य संकटों को भी सहन करना पड़ा था। रसद की कमी थी। सड़कों का अभाव था। उसके सैनिकों को पेट भर भोजन भी न मिलता था। अतएव वे आलू के गोदामों से बलपूर्वक आलू प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगे और घोड़े छप्परों का फूस नोच कर खाने लगे। दो चार मामले आत्महत्या के भी सुनाई पड़े। इस प्रकार की बातों से जो प्रथम रूसी युद्ध के समय उपस्थित हुईं, नैपोलियन को सावधान हो जाना चाहिये था, किन्तु उसने इनसे कोई शिक्षा ग्रहण न की। केवल इतना कह कर वह शांत हो गया, "मैं अपने फ्रांसीसियों को खूब समझता हूं। उनको दूर देशों में युद्ध के लिये ले जाना कठिन है। फ्रांस का जीवन पर्याप्त रूप से आनन्दप्रद है।"

इन कठिनाइयों के अतिरिक्त जिनका उल्लेख यहाँ किया गया है बोनापार्ट के सामने अन्य कठिनाइयां भी आईं। उसके पीछे स्विडन के निवासी उसके विरुद्ध युद्ध की बातचीत कर रहे थे। दूसरी ओर आस्ट्रिया भी युद्ध की तैयारियां कर रहा था। किन्तु इस प्रकार की बातों से नैपोलियन साहसहीन नहीं हो सकता था। उसने उस विद्युत गति से, जिसके लिये वह प्रसिद्ध था, स्विडन से सन्धि कर ली और आस्ट्रिया के सम्राट के पास लिखकर भेज दिया कि मैं संधि के लिये तैयार हूं। ज़ार को असमंजस में डालने के विचार से उसने फ़ारस के बादशाह से भी संधि कर ली और तुर्की के सुल्तान को इस बात के लिये तैयार कर लिया कि होने वाले शत्रु के विरुद्ध क़दम उठाये। उसे इस बात से भी प्रकट सहायता मिली कि रूसी सेनापति बेनिगसेन (Bennigsen) ने शीघ्रता के कारण अपने पैरों में स्वयं कुल्हाड़ी मार ली। उसने आइलों के उत्तर-पूर्व में फ्रीडलैंड (Friedland) के गांव में रूसी सैनिकों को ऐसी परिस्थिति में रख दिया जब उसके पीछे एल (Alle) नदी थी और उसकी सेना का अनुपात फ्रांसीसी सेना से ४ और ७ का था। नैपोलियन ने इससे लाभ उठाकर शत्रु को जून के महीने में इतनी भीषण क्षति पहुंचाई कि रूस जैसे विशाल देश के शासक को संधि के लिये तैयार हो जाना पड़ा।

ज़ार सिकन्दर प्रथम और नैपोलियन बोनापार्ट ने संधि के लिये शीघ्र ही

वार्तालाप किया। एक दिन वे दोनों टिलसिट (Tilsit) में नीमेन (Niemen) नदी के बीच नाव पर मिले और संधि के सम्बन्ध में आवश्यक बातें कीं। इसके पश्चात् फ्रांस, रूस, और प्रशा के प्रतिनिधियों ने कई अधिवेशनों के पश्चात् उसको सुनिश्चित रूप दिया। कैम्पोफ़ॉर्मियो की संधि के समान टिलसिट की संधि की कुछ शर्तें प्रकट थीं और कुछ गुप्त। सबसे अधिक क्षति प्रशा को सहन करनी पड़ी। पश्चिम तथा पूर्व दोनों ही ओर उसके ऊपर कुठाराघात किया गया। पश्चिम में उसके जो प्रांत राइन नदी के किनारे स्थित थे उनको मिलाकर एक नवीन राज्य का निर्माण किया गया, जो वेस्टफ़ेलिया (Westphalia) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस पर नैपोलियन के भाई जेरोम (Jerome) का शासन स्थापित कर दिया गया। प्रशा के पूर्वीय भाग को, जिसमें अधिकतर पोलिश प्रांत सम्मिलित थे, पृथक करके एक नवीन राज्य की रचना की गई, जो 'ग्रांड डची ऑफ़ वारसा' (Grand Duchy of Warsaw) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका शासन नैपोलियन के मित्र सक्सनी के ड्यूक (Duke of Saxony) के अधीन कर दिया गया। इस प्रकार प्रशा के हाथ से लगभग आधा राज्य निकल गया और उसकी जनसंख्या एक करोड़ के स्थान पर केवल पचास लाख रह गई। यदि ज़ार उसके लिये प्रयत्न न करता तो संभवतः प्रशा को और भी अधिक हानि सहन करनी पड़ती। इसके अतिरिक्त भी उसकी सेना घटाकर केवल ४२ सहस्र कर दी गई, और उसे असह्य युद्ध का हर्जाना देना पड़ा। उसके न देने के समय तक वहां एक फ्रांसीसी सेना नियत कर दी गई, जिसका सारा व्यय उसी को देना पड़ा। इस प्रकार प्रशा तीसरी श्रेणी की शक्ति बन गई।

टिलसिट की सन्धि, जौलाई १८०७ ई०

रूस को इस प्रकार की क्षति सहन न करनी पड़ी। कारण यह था कि नैपोलियन और ज़ार सिकन्दर प्रथम दोनों एक दूसरे की प्रशंसा किया करते थे। फ्रांस का सम्राट इस बात को अनुभव करता था कि पश्चिम की ओर उसके साम्राज्य के लिये रूस की मित्रता आवश्यक है। उसने एक बार कहा था, "वह एक अत्यन्त सुन्दर और अच्छी प्रकृति का युवक है। जितना लोग समझते हैं, उससे अधिक बुद्धि उसमें है।" रूसी साम्राज्य से एक इंच भूमि भी पृथक न की गई वरन् फिनलैंड और तुर्की की ओर साम्राज्य में वृद्धि करने के लिये ज़ार का उत्साह वर्धन कर दिया गया। अतएव ज़ार प्रसन्न होकर कहने लगा, "यूरोप है क्या? यदि वह मेरे और आपके अन्तर्गत नहीं है, तो वह है कहां?" किन्तु नैपोलियन ज़ार को अधिक बढ़ावा न देना चाहता था। अतएव जब ज़ार ने कुस्तुन्तुनिया के विजय में अपना दावा उपस्थित किया तो उसने उसको अस्वीकार करके स्पष्ट

कह दिया, "इसका अर्थ है कि आप समस्त संसार का स्वामी बनना चाहते हैं।" संधि की गुप्त शर्तों के द्वारा नैपोलियन और ज़ार ने यह निश्चित किया कि इंग्लैंड को इस बात के लिये बाध्य किया जाय कि वह जो समुद्री प्रभुत्व का दावा करता है, उसे त्याग दे तथा उनसे सन्धि की शर्तें निश्चित करे। यदि वह अस्वीकार करे, तो दोनों को मिलकर उसके विरुद्ध युद्ध घोषित कर देना चाहिये एवं डेनमार्क, स्वीडन और पुर्तगाल को भी इसके लिये बाध्य करना चाहिये कि वे भी युद्ध की घोषणा करें और व्यापारिक प्रतिबन्धों को स्वीकार करके अंगरेज़ी वस्तुओं को अपने बन्दरगाहों में न उतरने दें। न मालूम किस प्रकार इस गुप्त सन्धि की शर्तें इंग्लैंड के मन्त्री कनिंग को ज्ञात हो गईं। अतः उसकी ओर से डेनमार्क से कहा गया कि अपने समुद्री बेड़े को इंग्लैंड के अधीन कर दे। जब उसने ऐसा करना स्वीकार न किया तो इंग्लैंड ने कोपेनहेगेन के बन्दरगाह पर आक्रमण कर दिया और डेनिश बेड़े पर बलपूर्वक अधिकार कर लिया।

नैपोलियन का गौरव

नैपोलियन का साम्राज्य अपने उत्कर्ष की चरम सीमा पर सन् १८११ ई० में पहुंचा था, परन्तु हम सन् १८०७ ई० को उसकी शक्ति के शिरोबिन्दु का वर्ष मान सकते हैं। यदि वह इसी वर्ष मर जाता तो उसके समान सफल सेनाध्यक्ष का उदाहरण न केवल यूरोप वरन् समस्त संसार के इतिहास में न मिलता। टिलसिट की सन्धि के पश्चात् यूरोपीय राष्ट्रों के तृतीय संघ का अन्त हो गया। उसके सदस्यों में से केवल स्वीडन और इंग्लैंड शेष थे। नैपोलियन के षड्यंत्र से रूस ने सन् १८०८ ई० में प्रथम देश पर आक्रमण करके फ़िनलैंड ले लिया। इंग्लैंड को नीचा दिखाने के अभिप्राय से नैपोलियन ने तिजारती घेरे अथवा नियंत्रण वाली नीति पर सख़्ती से अमल किया। सारांश यह कि सन् १८०७ ई० तक इंग्लैंड के अतिरिक्त नैपोलियन के सभी शत्रुओं ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली थी और उससे किसी प्रकार की कृपा प्राप्त करने में वे अपना महत्व तथा गौरव अनुभव करते थे। यूरोप के सब से बड़े सम्राट तथा नीतिवेत्ता उसकी बौद्धिक तथा शारीरिक शक्तियों का लोहा मान गये थे और इस बात को स्वीकार करते थे कि फ्रांस के इस देवता को, जो अपनी इच्छानुसार किसी को भी बना और बिगाड़ सकता था, नीचा दिखाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। नैपोलियन ने फ्रांसीसी क्रांति को बहुत पीछे छोड़ दिया था। समस्त यूरोप की बागडोर उसके हाथ में थी, न कि फ्रांस के हाथ में। नैपोलियन ने अपनी उन्नति के साथ साथ अपने कुटुम्ब वालों तथा सम्बन्धियों को भी उन्नति के शिखर पर पहुंचा दिया था। इसका संक्षिप्त वर्णन पहले किया जा चुका है। जोज़ेफ़, एलिस, मूरा, तैलिरैंद

तथा बर्नेदोत इसके ज्वलन्त उदाहरण थे। नैपोलियन स्वयं एक ऐसे साम्राज्य का शासक था जिसकी सीमायें पो नदी से उत्तरी सागर तक तथा पिरीनीज़ पर्वत और पोप के राज्य से राइन नदी तक फैली हुई थीं। यह एक ऐसा साम्राज्य था जहाँ एकता तथा देशभक्ति का ज़ोर था तथा जिसके निवासी फ्रांसीसी क्रांति के सुन्दर परिणामों से वेष्ठित हो रहे थे। कोर्सिका का यह असाधारण व्यक्ति इटैली का सम्राट भी था। वहाँ उसके साम्राज्य में पो नदी की उर्वरा घाटी तथा वेनिस का प्राचीन देश सम्मिलित थे। वहाँ उसकी ओर से उसका सौतेला लड़का और उत्तराधिकारी यूजीन वोआरने शासन कर रहा था। पोप सातवाँ पायस उसका मित्र था। होली रोमन सम्राट के पद तथा उसके साम्राज्य को वह पहले ही समाप्त कर चुका था। स्पेन और डेन्मार्क के शासक उसके प्रशंसक थे तथा रूस का ज़ार स्वयं को उसका मित्र तथा भाई कह कर पुकारता था। पोलैंड के राज्य में जिसे उसने जीवित कर दिया था, वह स्वेच्छापूर्वक सैनिक भर्ती कर रहा था। प्रशा तथा ऑस्ट्रिया दूसरी अथवा तीसरी श्रेणी के राज्य बना दिये गये थे तथा जर्मनी में फ्रांस का प्रभाव पुनः स्थापित हो गया था।

विदेशों में क्रांतिकारी आदर्शों की प्रतिष्ठा

नैपोलियन के प्रभुत्व तथा गौरव का विशेष महत्व यह है कि उसके कारण विदेशों के निवासियों को भी फ्रांस के क्रांतिकारी आदर्शों से लाभ उठाने का अवसर प्राप्त हुआ था। जहाँ कहीं भी उसका शासन स्थापित था वहाँ जागीरदारी तथा दास कृषिकों (Serfs) की प्रथायें हटा दी गई थीं। क़ानून के सामने सब व्यक्तियों की स्थिति समान कर दी गई थी तथा कोड नैपोलियन की प्रतिष्ठा कर दी गई थी। सारांश यह कि उसने इस बात का प्रयत्न किया था कि उक्त देशों के निवासी फ्रांस के क्रांतिकारी सिद्धान्तों से पूरा लाभ उठायें। उसके विषय में वर्तमान तथा प्राचीन लेखकों का मत चाहे पक्ष में हो अथवा विपक्ष में, पर इतना तो हमें अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा कि सन् १७९९ ई० और सन् १८०८ ई० के बीच के नौ वर्षों में फ्रांस तथा शेष यूरोप के लिए उसकी स्थिति वही थी जिसका कि वह दावा करता था अर्थात् 'क्रांति की भेंट'। उसने उन सिद्धान्तों को अधिक महत्व दिया था जिनको स्थापित करने का प्रयत्न मीराबो से कारनो तक के देशभक्त और नीतिवेत्ता करते रहे थे। उसने क्रांतिकारी आदर्शों का अवलम्बन करते हुये निरंकुश सत्ताधारियों के हृदय में डर बिठा दिया था एवं 'स्वतंत्रता, समानता और बान्धुत्व' की झंकार से मध्य तथा पश्चिमी यूरोप में प्राचीन काल की बहुत सी राजनैतिक और सामाजिक संस्थाओं को धूल में मिला दिया था। उसने क्रांतिकारी सुधारों को इतना सुदृढ़ बना दिया था तथा
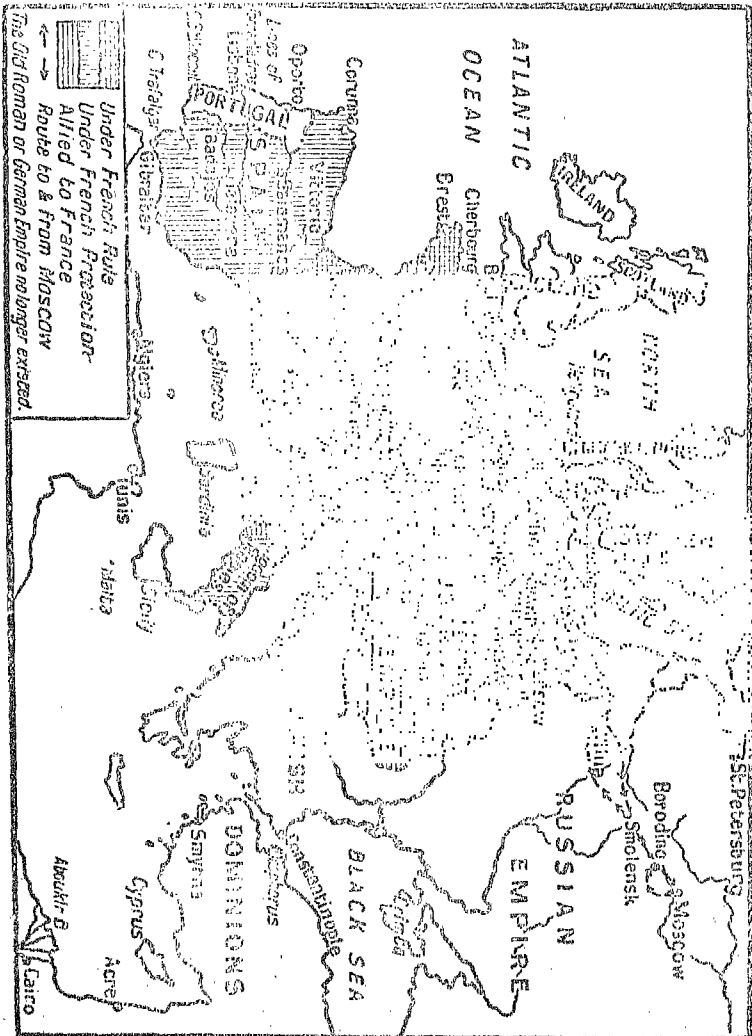
नेपोलियन की शक्ति का शिरोबिन्दु

उनका इतना सार्वजनिक व्यवहार कर दिया था कि यूरोप के निरंकुश सम्राट उनको पूर्णतया नष्ट नहीं कर सकते थे। यदि सन् १७९१ ई० में किसी ल्योपोल्ड अथवा फ्रैड्रिक विलियम ने इस बात का स्वप्न देखा था कि वह फ्रांस में सन् १७८९ ई० की दशा को लौटाने में सफल हो जायेगा तो अब यह एक असम्भव बात बना दी गई थी। निस्सन्देह एक दिन ऐसा आने वाला था जब निरंकुश सत्ताधारियों ने अपने नाश करने वाले का नाश कर दिया तथा स्वेच्छा-पूर्वक उससे बदला लिया।

छब्बीसवाँ अध्याय

नैपोलियन का पतन

दस साल तक नैपोलियन बोनापार्ट का प्रभाव यूरोप के निवासियों, उनके आचार विचार तथा जीवन पर स्थापित रहा। अर्वाचीन युग में कभी किसी अन्य महापुरुष ने उन पर इतना प्रभाव नहीं डाला। यदि हमें इसका कोई अन्य उदाहरण ढूंढ़ना है तो हमें यूरोप के प्राचीन अथवा मध्यकालीन इतिहास के पन्नों को पलटना होगा। दो ज्वलन्त उदाहरण जूलियस सीज़र (Julius Caesar) और चार्लमेन (Charlemagne) के हैं। वास्तव में प्रेसबर्ग की संधि के पश्चात् नैपोलियन स्वयं को इन ऐतिहासिक महापुरुषों के तुल्य समझने लगा था। किन्तु इनकी समता में उसका गौरव तथा प्रभुत्व बहुत ज्यादा था। सन् १७९५ ई० से सन् १८०७ ई० तक इटैली, जर्मनी और स्पेन आदि के घरेलू मामलों पर उस बड़े तूफान के कारण, जिसका केन्द्र फ्रांस था और जिसका निर्माता नैपोलियन था, पर्दा पड़ जाता है। सन् १८०७ ई० के पश्चात् यूरोप की दशा में परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। नैपोलियन अब भी हमारे अभिनय का प्रमुख पात्र है, और सन् १८१५ ई० तक वह इस स्थिति को निरन्तर स्थापित रखता है, किन्तु हमारा ध्यान केवल उसकी सेनाओं तथा उसकी नीति पर अवलम्बित नहीं रहता। समतल भूमि के कुछ नीचे हम कतिपय महान् शक्तियों को भी देख सकते हैं जिनके कारण नैपोलियन का बहुत बड़े पैमाने पर विरोध किया गया और जो अन्त में उसकी पराजय तथा उसके पतन का कारण प्रमाणित हुईं।

नैपोलियन ने जो व्यवस्था स्थापित की थी उसकी कुछ विशेष कमज़ोरियाँ

थीं जो टिलसिट की संधि से पूर्व अपना प्रभाव न दिखला सकीं थीं। उसकी सब से बड़ी कमज़ोरी यह थी कि जो कुछ भी नैपोलियन ने प्राप्त किया था वह अपनी व्यक्तिगत शक्ति के कारण प्राप्त किया था। तैलिरैंद ने एक बार ज़ार से कहा था, "राइन, ऐल्प्स और पिरीनीज़ ये फ्रांसीसी राष्ट्र की देन हैं। शेष को नैपोलियन ने विजय किया है।" दूसरे शब्दों में इसका यह अर्थ है कि फ्रांस ने जो विजय तथा सफलतायें प्राप्त की थीं, उनमें नैपोलियन का भाग सबसे अधिक था। यदि वह अपनी असाधारण मानसिक और शारीरिक विशेषताओं से काम न लेता तो फ्रांस इतनी अधिक उन्नति कदापि न कर सकता था। निस्सन्देह नैपोलियन एक असाधारण मनुष्य था, किन्तु था वह मनुष्य। नित्य प्रति उसकी उम्र ढलती जाती थी। वह अधिक मोटा तथा विलासप्रिय होता जाता था और उसकी परिश्रम व काम करने की शक्ति कम होती जाती थी। इसके विरुद्ध उसकी और अधिक प्रतिष्ठा तथा देश प्राप्त करने की अभिलाषा पूरी न होती थी। उसने अन्य व्यक्तियों से परामर्श लेना भी कम कर दिया था। वह तैलिरैंद और फूशे जैसे बुद्धिमान व्यक्तियों की आवश्यकता भी बहुत कम अनुभव करता था। सारांश यह कि फ्रांस के रंगमंच पर फ्रांस का सम्राट अपने सिवा किसी अन्य कलाकर को न देखना चाहता था, यद्यपि कार्य इतना अधिक बढ़ गया था कि वह एक पात्र से चाहे वह फ्रांस के सम्राट के समान ही क्यों न हो, कदापि पूरा नहीं हो सकता था।

नैपोलियन की व्यवस्था : (१) उसकी सीमित शक्तियां

नैपोलियन द्वारा स्थापित व्यवस्था की दूसरी महान् निर्बलता यह थी कि उसका आधार सैनिक शक्ति पर रक्खा गया था। राष्ट्रीय कन्वेन्शन ने क्रांति के सबसे कठिन समय में फ्रांस की सेना में सुधार करके शत्रु की सेनाओं को पीछे ढकेलने में सफलता प्राप्त की थी। इस कार्य में कारनो और उसके जेकोबिन साथियों ने विशेष अभिरुचि प्रदर्शित की थी। नैपोलियन बोनापार्ट ने उनकी सैनिक नीति को अपनाया और उसमें सुधार किया। प्रारम्भ में तो उसके आदर्श अत्यन्त उत्कृष्ट थे। उसने न केवल अपनी सेना को क़वायद सिखलाई तथा उसके उत्साह व स्फूर्ति को ऊँचे स्तर पर रक्खा वरन् उसके सुख तथा प्रभावपूर्ण होने पर भी ध्यान दिया। इसके अतिरिक्त उसने उसे यह भी सिखलाया कि उसका एक महान् आदर्श है तथा उसके लिये एक विशेष कार्य पहले ही से निश्चित कर दिया गया है। उसने सैनिकों के हृदय पटल पर यह भी अंकित करने का प्रयत्न किया कि उन्हें प्रत्येक स्थान में 'स्वतन्त्रता,

नैपोलियन की व्यवस्था (२) सेना की गुप्त निर्बलता

समानता तथा बान्धुत्व के वृक्ष लगाने हैं तथा वीरत्व और कर्तव्यनिष्ठा को महत्व देना है। जैसे जैसे समय व्यतीत होता जाता था नेपोलियन की दृष्टि में इन उच्च आदर्शों का महत्व कम होता जाता था। एक विशेष अन्तर यह भी हुआ कि वह बलात् भर्ती पर अधिक ज़ोर देने लगा तथा अपनी सेना में फ्रांसीसियों के अतिरिक्त अन्य जातियों के व्यक्तियों को भी भर्ती करने लगा। उसकी महती सेना में पोलैंड, जर्मनी, इटैली, हालैंड, स्पेन तथा डेन्मार्क आदि के सैनिक बड़ी संख्या में सम्मिलित थे। इन कारणों से उसकी सेना में एक प्रकार की विशेष निर्बलता आगई थी, जिसका प्रभाव शीघ्र ही प्रकट हुआ। इसके अतिरिक्त वह इस सिद्धांत पर भी ज़ोर देने लगा कि फ्रांस की सेना किसी मित्र अथवा शत्रु की भूमि में रक्खी जाय। इससे धन की बचत तो अवश्य हुई, परन्तु अन्य देशों की जनता के हृदय में नेपोलियन तथा फ्रांस की राज्यक्रांति के प्रति एक प्रकार की उपेक्षा उत्पन्न हो गई। इसका बहुत ही बुरा परिणाम हुआ। इसके कारण वहां राष्ट्रीय जागृति की वृद्धि हुई। जो लोग अभी तक फ्रांसीसी सेना की सहायता से अपने निरंकुश शासनों से मुक्ति पाने के लिये प्रयत्नशील थे, वही अब फ्रांसीसी सम्राट के अन्याय और निरंकुश व्यवहार से बचने का प्रयत्न करने लगे। जिन देशों में उसके विरुद्ध राष्ट्रीय आंदोलन किये गये, उनमें जर्मनी और स्पेन की गणना सबसे पहले होती है।

नेपोलियन के चरित्र परिवर्तन और उसकी महती सेना की गुप्त निर्बलता के कारण उसका पतन अवश्यम्भावी हो गया था। उसके पतन का तीसरा महान् कारण उसकी व्यापारिक व्यवस्था थी, जो इतिहास में 'महाद्वीपी व्यवस्था' अथवा 'कान्टीनेन्टल सिस्टम' (Continental System) के नाम से विख्यात है। जब उसने इस पर बहुत ज़ोर दिया तो उसके पतन का चौथा कारण उपस्थित हुआ। यह विभिन्न राष्ट्रों के राष्ट्रीय आन्दोलनों के रूप में प्रकट हुआ। इसने इतने बड़े संकट का रूप धारण किया कि बोनापार्ट जैसा व्यक्ति भी उस पर अधिकार न पा सका। अतएव उसका विस्तृत साम्राज्य छिन्न भिन्न होगया और वह स्वयं पराजय तथा अपमान के बाद पहले एल्बा द्वीप में निर्वासित किया गया तथा इसके पश्चात् हेलेना के द्वीप को सदा के लिये विदा कर दिया गया।

व्यापारिक प्रतिबन्ध

ट्रैफलगार के युद्ध से भी पूर्व नेपोलियन बोनापार्ट ने इंग्लैंड पर प्रत्यक्ष रूप से आक्रमण करने का विचार छोड़ दिया था। बूलों की सेना को उसने वियेना की दिशा में कूच करने की आज्ञा दे दी थी, किन्तु वह इंग्लैंड की ओर से निश्चिन्त न हुआ था। उसे नीचा दिखलाने के लिये उसके मस्तिष्क में अन्य योजनायें हलचल करने लगा

थीं। इंग्लैंड के पूर्वीय साम्राज्य पर अधिकार करके उसे सर्वदा के लिये निर्बल बना दिया जाय, यह एक पुरानी योजना थी जिसका महत्व कम से कम दूसरों की दृष्टि में मिस्र के युद्ध के पश्चात् समाप्त हो चुका था। परन्तु नैपोलियन की दृष्टि में उसका महत्व अब भी शेष था। अतएव टिलसिट की सन्धि के अवसर पर जब ज़ार ने कुस्तुनतुनिया की ओर बढ़ने का विचार प्रकट किया था तो वह चौंक पड़ा था और उनके मुंह से ये शब्द निकले थे,—"इसका यह अर्थ है कि आप संसार का स्वामी बनना चाहते हैं।" नैपोलियन की विचार धारा विद्युत गति से पूर्व की ओर दौड़ रही थी। "जब तक मैं कुस्तुनतुनिया की सन्धि पर हस्ताक्षर न कर लूंगा तब तक मैं (विश्व का) स्वामी न बन सकूंगा।" उसके मस्तिष्क में इंग्लैंड के व्यापार को नष्ट करने का विचार भी शक्ति ग्रहण कर रहा था। इस योजना पर वह तथा फ्रांस का शासन इसके पूर्व भी विचार कर चुके थे। प्रशा से युद्ध किये जाने का एक उद्देश्य यह भी था कि फ्रांस का सम्राट उसके विस्तृत समुद्र तट पर अधिकार प्राप्त करना चाहता था। इसके बिना इंग्लैंड का तिजारती सामान सदैव की भांति जर्मनी और जर्मनी से मध्य यूरोप के अन्य देशों में पहुंच सकता था। स्पेन फ्रांस का मित्र था; ज़ार से भी सन्धि हो चुकी थी। महाद्वीप की विभिन्न दिशाओं में उसके सम्बन्धी तथा मित्र शासक थे। पुर्तगाल का बादशाह और पोप अवश्य अब तक स्वतन्त्र थे। उनको पराजित करना कोई कठिन काम न था। टिलसिट की सन्धि के पश्चात् नैपोलियन को इस बात की पूर्ण आशा हो गई थी कि वह इंग्लैंड के व्यापार तथा कलाकौशल को नष्ट करने में अवश्य सफलता प्राप्त करेगा। 'दूकानदारों की क़ौम' का जब व्यापार ही नष्ट कर दिया जायेगा तो उसे अवश्य सीज़र और चार्लमैन के उत्तराधिकारी के सम्मुख घुटने टेक देने पड़ेंगे!

जैसा कि हम बतला चुके हैं, नैपोलियन की नवीन योजना, जिसके द्वारा इंग्लैंड के तिजारती सामान के विरुद्ध प्रतिबन्ध लागू किये गये थे, इतिहास में 'महाद्वीपी व्यवस्था' (Continental System) के नाम से विख्यात है, इसके सम्बन्ध में प्रथम घोषणा नवम्बर सन् १८०६ ई० में फ्रेडरिक महान् की राजधानी बर्लिन से की गई थी। इसके पश्चात् वारसा नगर से जनवरी सन् १८०७ ई० में, मीलन नगर से नवम्बर व दिसम्बर सन् १८०७ ई० में, और फौंतेनब्लो नगर से अक्टूबर सन् १८१० ई० में घोषणायें प्रकाशित की गईं। सभी घोषणाओं में इंग्लैंड के विरुद्ध व्यापारिक प्रतिबन्ध लागू किये गये थे, परन्तु एक के पश्चात् दूसरे की कठोरता बढ़ती जाती थी। बर्लिन की घोषणा के द्वारा ब्रिटिश द्वीपसमूह के चारों ओर व्यापारिक घेरा डाल दिया गया और उन देशों पर जो नैपोलियन के शासन में थे अथवा जो उसके हितैषी तथा मित्र थे, इसके लिये ज़ोर दिया गया

कि वे ब्रिटिश द्वीपसमूह से किसी प्रकार का व्यापारिक सम्बन्ध न रक्खें। इस घोषणा के अनुसार फ्रांस तथा उसके मित्र देशों के किसी भी बन्दरगाह में ब्रिटिश जहाज़ न पहुंच सकते थे। इस नीति के विरुद्ध काम करने वाले जहाज़ गिरफ्तार किये जा सकते थे। मीलन से यह घोषणा प्रकाशित की गई थी कि अन्य देशों के जहाज़ भी, जो किसी ब्रिटिश बन्दरगाह अथवा किसी ऐसे देश के बन्दरगाह से बाहर आयेंगे जिसे ब्रिटिश सेना ने अपने अधिकार में कर लिया है, बन्दी कर लिये जायेंगे। फ़ौंतेनब्लो (Fontainebleau) की घोषणा इससे भी अधिक कठोर थी। इसके द्वारा यह आज्ञा दी गई थी कि नैपोलियन और उसके मित्रों के साम्राज्य में जहां कहीं भी ब्रिटिश द्वीपसमूह का तैयार किया हुआ माल मिले उसे ज़ब्त कर लिया जाय और सार्वजनिक रूप से उसकी होली जलाई जाय। ब्रिटिश द्वीपसमूह की ओर से इन घोषणाओं का प्रत्युत्तर विशेष आदेशों (Orders in Council) के द्वारा दिया गया (जनवरी-नवम्बर, १८०७ ई०)। इनके द्वारा ब्रिटिश शासन ने भी यह घोषित किया कि फ्रांस और उसके सहायक देशों से व्यापार करने वाले जहाज़ बन्दी किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ परिस्थितियों में विदेशों के जहाज़ों के लिये किसी न किसी ब्रिटिश बन्दरगाह में प्रवेश करना आवश्यक कर दिया गया। इस प्रकार दोनों ही ओर से एक दूसरे के व्यापार को नष्ट करने का प्रयत्न किया गया किन्तु दोनों की वस्तुयें किसी न किसी परिमाण में एक दूसरे के देशों में पहुंचती रहीं। यदि ऐसा न होता तो अनाज के बिना ब्रिटिश द्वीपसमूह के निवासी भूखों मर जाते और नैपोलियन के लिये अपने महान् युद्ध को जारी रखना दुष्कर हो जाता।

नैपोलियन बोनापार्ट तथा उसके सबसे बड़े शत्रु ने जो व्यापारिक प्रतिबन्ध एक दूसरे के प्रति लागू किये थे उन्होंने कई प्रकार से ब्रिटिश द्वीपसमूह, फ्रांस तथा अन्य देशों को प्रभावित किया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि नैपोलियन के प्रतिबन्धों के कारण ब्रिटिश द्वीपसमूह के निवासियों को अधिक हानि उठानी पड़ी। वहां अगणित व्यक्ति बेकार हो गये, बहुत से कारखाने और व्यापारी दिवालिया हो गये और जनता को भी असीम कष्ट हुआ। इस काल में वहां व्यावसायिक क्रांति का प्रभाव बढ़ रहा था। इसलिये वहां औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हो गई थी, परन्तु उसकी बिक्री के लिये महाद्वीप का बाज़ार बन्द था। ब्रिटिश द्वीपसमूह का बहुत सा सामान उपनिवेशों में बिक जाता था, किन्तु उसकी निकासी के लिये सबसे बड़ा बाज़ार महाद्वीप ही था। ब्रिटिश द्वीपसमूह के टोरी शासन ने फ्रांस तथा उसके मित्रों के विरुद्ध

उनका प्रभाव

प्रतिबन्ध लागू करने में बड़ी सख्ती से काम लिया। इस सम्बन्ध में उसे बाध्य होकर सन् १८०७ ई० में कोपेनहेगेन के बन्दरगाह पर गोलाबारी करनी पड़ी और बचे हुये डेनिश बेड़े को नष्ट भ्रष्ट कर देना पड़ा। सन् १८१२ ई० में उसे संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से युद्ध करना पड़ा। इसका मुख्य कारण यह था कि वह नैपोलियन की महाद्वीपी व्यवस्था से अनुचित लाभ उठा रहा था।

फ्रांस के निवासियों को भी अधिक कष्ट उठाना पड़ा। परन्तु कई प्रकार से उस समय उनके व्यापार तथा कलाकौशल की दशा अच्छी थी। नैपोलियन की असाधारण विजयों के कारण उनके लिये अगणित नवीन बाज़ार खुल गये थे। क्रांति-काल के सामाजिक विधान के कारण कृषकों की दशा अधिक सुधर गई थी। जब अंगरेज़ों के कारण उपनिवेशों की शकर का महाद्वीप तक पहुंचना दुष्कर हो गया तो फ्रांस के विज्ञानवेत्ताओं की सहायता से वहां एक नये प्रकार की शकर बनाई जाने लगी। इसी प्रकार नील की कमी को भी पूरा किया गया। इस सम्बन्ध में हमें यह विस्मृत न करना चाहिये कि ब्रिटिश द्वीपसमूह की व्यापारिक वस्तुयें किसी न किसी मार्ग से तथा किसी न किसी मात्रा में फ्रांस में पहुंचती रहीं। नैपोलियन इस बात को खूब जानता था। आईलो के युद्ध के बीच जब फ्रांस की सेना के लिये ओवरकोटों की आवश्यकता पड़ी तो पचास सहस्र ओवरकोट हालैंड द्वारा इंग्लैंड से मंगाये गये थे।

व्यापारिक प्रतिबन्धों का सबसे बुरा प्रभाव विदेशों पर पड़ा। इस सम्बन्ध में हम डेन्मार्क तथा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का उल्लेख कर चुके हैं। हालैंड में नैपोलियन का भाई लूई शासन कर रहा था। उसने अपनी प्रजा के साथ सहृदयता प्रदर्शित की और नैपोलियन के आदेशों को मानने से इन्कार कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि उसे सिंहासन से वंचित कर दिया गया और हालैंड का देश फ्रांस में सम्मिलित कर लिया गया (सन् १८१० ई०)। इसी वर्ष के दिसम्बर मास में नैपोलियन ने जर्मनी के उत्तरी-पश्चिमी समुद्र तट पर अधिकार कर लिया। अपनी व्यापारिक व्यवस्था को सफल बनाने के लिये नैपोलियन को पोप और उसके अनुयायियों से भी शत्रुता मोल लेनी पड़ी। अप्रैल सन् १८०८ ई० में पोप के राज्य पर अधिकार कर लिया गया और रोम पर फ्रांस के सैनिकों का अधिकार हो गया। मई सन् १८०९ ई० में पोप का राज्य नियमित रूप से फ्रांस में सम्मिलित कर लिया गया और जौलाई में पोप सातवें पायस को बन्दी करके दूसरे स्थान में भेज दिया गया। जब पोप ने विरोध किया तो सम्राट ने कड़क कर कहा, "क्या वह समझता है कि मेरे सैनिकों के हथियार उनके हाथों से छूट कर गिर पड़ेंगे ?"

अन्य देशों के निवासी भी नैपोलियन की कार्य प्रणाली के विरुद्ध थे। वे शकर,

चाय और अन्य नित्य प्रति के उपयोग की वस्तुओं की कमी सबसे अधिक अनुभव कर रहे थे। जब उनसे किसी प्रकार सहन न हो सका तो कई देशों में उसके विरुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन किये गये, और जब उसका भाग्य नक्षत्र गिरता दृष्टिगोचर हुआ तो वहाँ उसका भयंकर रूप से विरोध किया गया। इस प्रकार उसके पतन का मार्ग खुल गया। नैपोलियन जैसे कुशल और दूरदर्शी व्यक्ति के लिये इस बात का पूर्व से ही आभास कर लेना कुछ कठिन न था कि उसके व्यापारिक प्रतिबन्धों के अनुसार कभी भी पूर्ण रूप से व्यवहार न हो सकेगा। यदि मान भी लिया जाय कि वह महाद्वीप के समस्त शासनों को अपनी ओर करके ब्रिटिश द्वीपसमूह के विरुद्ध अपनी व्यवस्था को लागू करने में सफल हो जाता तो भी उनका तैयार किया हुआ माल पर्याप्त मात्रा में गुप्त रीति से अथवा चुंगी विभाग के पदाधिकारियों को रिश्वत देकर विभिन्न देशों में पहुँच सकता था। इस बात पर विचार न करके नैपोलियन एक निराश जुआरी की भांति अपने दाँव पर दृढ़ता से डटा रहा तथा उसने इसकी ओर ध्यान न दिया कि चारों दिशाओं में उसके विरुद्ध एक भयंकर तूफ़ान के उठाये जाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं।

पुर्तगाल और स्पेन

यूरोप के महाद्वीप पर केवल एक ही महत्वपूर्ण देश ऐसा था जो नैपोलियन की व्यवस्था में सम्मिलित नहीं हुआ था। इसका नाम था पुर्तगाल। इसको छोड़ कर नैपोलियन और उसके मित्र सिकन्दर के प्रयत्नों से सेंट पीटर्सबर्ग से लिस्बन तक और नेपिल्ज़ से ऐण्ट्वर्प और हैम्बर्ग तक समस्त महाद्वीप ब्रिटिश द्वीपसमूह के तिजारती सामान के लिये बन्द कर दिया गया था। पुर्तगाल दीर्घकाल से व्यापारिक वस्तुओं के लिये इंग्लैंड पर निर्भर था। अतएव उसने साहस करके नैपोलियन की व्यापारिक व्यवस्था को स्वीकार करने से साफ़ इन्कार कर दिया। नैपोलियन इस बात को कैसे सहन कर सकता था कि उसकी व्यापारिक व्यवस्था में पुर्तगाल जैसा देश बाधक हो, जो दक्षिण-पश्चिम की ओर अटलांटिक महासागर के किनारे पर स्थित था, और जिसकी सहायता के लिये इंग्लैंड जैसी महान् शक्ति सदैव तैयार रहती थी। बस उसने स्पेन के मार्ग से एक फ्रांसीसी सेना पुर्तगाल भेज दी। उसने राजवंश को इस बात के लिये विवश किया कि स्वदेश को छोड़ कर ब्राज़ील के उपनिवेश में शरण ले। पुर्तगाल पर नैपोलियन का अधिकार हो गया (नवम्बर १८०७ ई०)।

स्पेन का मामला दूसरे प्रकार था। वह नैपोलियन के गहरे मित्रों में से था। वह उसके लिए ट्रैफ़लगार के युद्ध में अपने समुद्री बेड़े का सर्वनाश देख चुका था। इस समय वहाँ बूरबन वंश के विलासप्रिय तथा निर्बुद्धि सम्राट चार्ल्स चतुर्थ (१७८८-१८०८) का शासन था, परन्तु वास्तव में उसका शासन सूत्र

स्वार्थी सम्मतिदाता गोडोय (Godoy) के हाथ में था। गोडोय सम्राज्ञी का गहरा मित्र था। राष्ट्र का उत्तराधिकारी फ़र्डिनेंड उसे अपना प्रतिद्वन्दी समझता था। बाल (Basel) की संधि के बाद से, जो प्रथम यूरोपीय संघ के युद्ध के पश्चात् सन् १७९५ ई० में की गई थी, स्पेन के भाग्य का निर्णय फ्रांस के भाग्य से सम्बद्ध था। वह नैपोलियन के युद्धों के लिए अधिक धन, सैनिक और जहाज़ व्यय कर चुका था। वहाँ के शासन से एक बड़ी त्रुटि यह हुई थी कि सन् १८०६ ई० में जब नैपोलियन प्रशा से युद्ध प्रारम्भ करने वाला था गोडोय ने सम्भवतः पारस्परिक मतभेद के कारण स्पेन की सेना को तैयार होने की आज्ञा दे दी थी। नैपोलियन को बहाना मिल गया। उसने इस बात का संकल्प कर लिया कि जिस प्रकार उसने फ्रांस, नेपिल्ज और पारमा के बूरबन वंश के शासकों को राजसिंहासन से वंचित कर दिया था, उसी प्रकार वह स्पेन के बूरबन वंश के शासकों को भी सिंहासनच्युत करके ही दम लेगा। पहले उसने स्पेन से पन्द्रह सहस्र सैनिक डेन्मार्क के मोर्चे पर युद्ध करने को मंगाये। फिर धीरे धीरे फ्रांसीसी सैनिकों को किसी न किसी बहाने स्पेन में एकत्रित किया। यहां तक कि इस प्रायद्वीप में एक लाख सेना एकत्रित हो गई। इसके पश्चात् स्पेन के चार सुदृढ़ दुर्गों तथा मैड्रिड पर अधिकार कर लिया गया और मई सन् १८०८ में चार्ल्स चतुर्थ और उसका पुत्र फ्रांसीसी सीमा के निकट बेयोन (Bayonne) नगर में बुला लिये गये और इस बात के लिए बाध्य किये गये कि सिंहासन का विचार त्याग दें। प्रथम पेंशन स्वीकार करके रोम चला गया और द्वितीय को छः वर्ष तक बन्दी रक्खा गया। इस प्रकार स्पेन में बूरबन वंश का शासन समाप्त हो गया तथा उसके स्थान पर जोजेफ़ बोनापार्ट वहां शासन करने लगा। नेपिल्ज़ में जोजेफ़ का स्थान मूरा (Murat) ने ले लिया। इस प्रकार आइबेरियन प्रायद्वीप में नैपोलियन का पूर्ण शासन स्थापित हो गया। यदि सच पूछिये तो हम यह स्वीकार कर सकते हैं कि उसकी व्यापारिक व्यवस्था को सफल बनाने के लिए पुर्तगाल पर अधिकार करना आवश्यक था, परन्तु यह कहना कि पुर्तगाल के लिए स्पेन पर अधिकार करना भी आवश्यक था कोई अर्थ नहीं रखता। यदि नैपोलियन तनिक दूरदर्शिता से काम लेता तो द्वितीय देश को अपने लिए राजरोग न बना लेता और ऐसी अवस्था में यह भी सम्भव था कि उसका पतन कुछ काल के लिए टल जाता।

स्पेन का राष्ट्रीय आन्दोलन

जैसे ही जोजेफ़ ने अपनी नई राजधानी मैड्रिड में क़दम रक्खा वैसे ही उसके तथा फ्रांसीसी सेना के विरुद्ध बड़े आधार पर राष्ट्रीय आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। नैपोलियन ने स्पेन के निवासियों के साथ ऐसा व्यवहार किया था मानो वह एक मुर्दा राष्ट्र हो। अब उसे एक नवीन शक्ति का सामना पड़ा।

स्पेन के राष्ट्रीय युद्ध को देखकर उसे अत्यन्त आश्चर्य हुआ। इसके साथ साथ उसके क्रोध की सीमा भी न रही। उसने एक महती सेना स्पेन भेजी, और राष्ट्रीय शूरवीरों को तलवार के बल से अधीन करने का प्रयत्न किया। उसका सामना लुका छिपी की युद्ध प्रणाली (Guerilla Warfare) से किया गया। स्पेन निवासी देश के प्रत्येक भाग से पूर्णतया परिचित थे। अतएव वे सुअवसर देखकर फ्रांसीसी सेना पर आक्रमण करते और देखते देखते पर्वत श्रेणियों में अदृश्य हो जाते। यह युद्ध सन् १८१४ ई० तक चलता रहा। सेना के साथ साथ नैपोलियन के सब से अच्छे सेनापति भी वहां काम आये। उसे अंगरेज़ी शक्ति का सामना

SPAIN AND PORTUGAL.
To illustrate the Peninsular War (1808-1814)
——— Moore's march.
- - - - - March of Wellington in 1813-1814.

भी करना पड़ा। अगस्त सन् १८०८ ई० में प्रसिद्ध सैनिक अधिकारी आर्थर वेलेज़ली इंग्लैंड से आया और जूनो (Junot) को विमीरो (Vimeiro) के युद्ध में परास्त करके फ्रांसीसियों को पुर्तगाल से निकालने में सफलता प्राप्त की। स्पेन में बायलन (Baylen) के स्थान पर जोजेफ़ की पूर्ण पराजय हुई। अतएव उसे मैड्रिड छोड़कर उत्तर की दिशा में चला जाना पड़ा। अंगरेजी शासन ने स्पेन के राष्ट्रीय वीरों की सहायता धन तथा शस्त्रों से भी की। जब राष्ट्रीय आन्दोलन ने अधिक ज़ोर पकड़ा तो नैपोलियन स्वयं १८०८-१८०६ की शीत ऋतु में स्पेन

आया और जोजेफ को पुनः राजसिंहासन पर बिठलाने में सफलता प्राप्त की। तत्पश्चात् उसने युद्ध करके स्पेन के सैनिकों को पर्वतश्रेणियों में शरण लेने के लिए बाध्य किया। मैड्रिड से वह दक्षिण की ओर बढ़ना चाहता था कि इसी बीच में उसे समाचार मिला कि आस्ट्रिया निवासी भी उसके विरुद्ध युद्ध करने के लिए तत्पर हैं। इस समाचार को पाकर वह उत्तर की ओर लौट गया। मार्ग में एक अंगरेजी सेना से भेंट हुई जो सर जोन मूर (Sir John Moore) के अधीन थी। मूर युद्ध का साहस न कर सका। अतः वह भाग खड़ा हुआ। नैपोलियन ने आस्टोर्गा (Astorgo) नगर तक उसका पीछा किया। इसके पश्चात् वह उत्तर की ओर चला गया। मूर की सेना भाग कर कोरुन्ना (Corunna) के बन्दरगाह में पहुंची। यहां उसने मार्शल सूल्ट (Soult) को पूर्ण रूप से परास्त किया, परन्तु वह स्वयं युद्ध में खेत रहा। इस प्रकार स्पेन का राष्ट्रीय युद्ध कई साल तक चलता रहा।

सन् १८०९ ई० में सेनापति वेलेजली आयबेरियन प्रायद्वीप की सेनाओं का सेनाध्यक्ष बनाकर भेजा गया। पुर्तगाल से चलकर वह सावधानी के साथ मैड्रिड की ओर बढ़ा। नैपोलियन की पराजयों का समाचार सुनकर उत्तरी यूरोप के राष्ट्र भी उसकी अधीनता से मुक्त होने का स्वप्न देखने लगे थे। इसका सबसे अधिक प्रभाव जर्मनी के निवासियों पर पड़ा। उनमें हाल ही राष्ट्रीय जागृति हुई थी। स्पेन के निवासियों की सफलता को देखकर उनके हृदयों में भी यह विचार दृढ़ हो गया कि यदि वे भी नैपोलियन के विरुद्ध दृढ़ता से युद्ध करें तो उसके निरंकुश शासन तथा असह्यनीय करों से मुक्त हो सकते हैं।

जर्मन जाति के राष्ट्रीय उद्गारों को देखकर अस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस प्रथम* ने भी समय से पूर्व नैपोलियन के विरुद्ध युद्ध का संकल्प किया। सन् १७९२ ई० से महाद्वीपी युद्धों का भार सब से अधिक उसी को उठाना पड़ा था। इसके प्रतिकूल उसे सन् १७९७ ई०, सन् १८०१ ई० और सन् १८०५-१८०६ ई० में असह्यनीय हानियाँ तथा लज्जा सहन करनी पड़ी थी। अब की बार उसने अधिक बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता से काम लिया। उसने स्वाधीनता युद्ध की तैयारी, आर्चड्यूक चार्ल्ज़ तथा एक सुयोग विद्वान व राजनीतिज्ञ काऊंट स्टाडीओ (Count Stadion) को सुपुर्द की। नैपोलियन को स्पेनीय युद्ध में व्यस्त देखकर अप्रैल सन् १८०९ ई० में अस्ट्रिया ने उसके विरुद्ध युद्धघोषणा की। किन्तु वह उसकी

समय से पूर्व अस्ट्रिया का स्वाधीनता युद्ध

*सन् १८०६ ई० तक वह होली रोमन सम्राट फ्रांसिस द्वितीय (१७९२-१८०६) रहा। इस वर्ष से वह केवल अस्ट्रिया का खानदानी सम्राट फ्रांसिस प्रथम (१८०४-१८३५) हो गया।

अनुपस्थिति से पूरा लाभ न उठा सका। आर्चड्यूक चार्ल्ज़ एक महान् सेना के साथ बवेरिया की ओर बढ़ा, किन्तु इसके पूर्व कि वह उसे कोई विशेष क्षति पहुंचाये, नैपोलियन स्पेन से चलकर विद्युत गति से वहाँ पहुंच गया तथा एक सप्ताह के भीतर आर्चड्यूक चार्ल्ज़ को वीयेना में शरण लेने को बाध्य किया। मई के मध्य से पूर्व फ्रांस का सम्राट अत्यन्त प्रतिष्ठा और शान से अस्ट्रिया की राजधानी में पहुंच गया, किन्तु आर्चड्यूक ने अपना विचार न बदला और २१-२२ मई को राजधानी के सन्निकट आस्पर्न (Aspern) के युद्ध में इस प्रकार परास्त किया कि उसके छक्के छूट गये। यदि इस अवसर पर अन्य सैनिक पदाधिकारी द्रुतगति से काम करते तो संभव था कि नैपोलियन की शक्ति का अन्त हो जाता और यूरोप निवासियों को वे विपत्तियाँ सहन करनी पड़तीं जो उसके कारण बाद को उनके सिर पर आईं। सौभाग्य से उसे दम लेने का समय मिल गया। इससे अधिक से अधिक लाभ उठा कर उसने शत्रु को वाग्राम (Wagram) के युद्ध में पूर्णतया परास्त किया। हम वाग्राम की समता अस्टरलिट्ज से नहीं कर सकते, क्योंकि उसके परिणाम इतने विनाशकारी न थे। इसके अतिरिक्त भी वह एक महान युद्ध था। इसके पश्चात् ही अस्ट्रिया के सम्राट ने युद्ध बन्द करने की प्रार्थना की, और जब अंगरेज़ों का वालकेरेन (Walcheren) का आक्रमण सफल न हुआ तो उसने अक्टूबर सन् १८०९ ई० में शनब्रून (Schonbrunn) की संधि कर ली। इससे उसे अपने साम्राज्य के बहुत बड़े भाग से वंचित होना पड़ा। उसे गेलिशिया (Galicia) का पूर्वीय भाग रूस को तथा उसका पश्चिमी भाग ग्रांड डची आफ़ वारसा को देना पड़ा। इलीरियन प्रान्तों (Illyrian Provinces) पर फ्रांस का अधिकार हो गया। तिरोल अस्ट्रिया के कुछ भाग के साथ बवेरिया को लौटा दिया गया। अस्ट्रिया को एक बहुत बड़ी रकम युद्ध के हर्जाने के रूप में देनी पड़ी तथा इस बात का वचन देना पड़ा कि वह ब्रिटिश द्वीपसमूह से किसी प्रकार का व्यापारिक सम्बन्ध न रक्खेगा।

पेरिस लौट कर नैपोलियन ने सन् १८१० ई० के प्रारम्भ में जोज़ेफ़ाइन को त्याग दिया और अपना विवाह अस्ट्रिया की राजकुमारी मेरी लूईज़ (Marie Louise) से कर लिया। इसका मुख्य कारण यह था कि जोज़ेफ़ाइन के कोई सन्तान न थी और नैपोलियन को उत्तराधिकारी की अत्यन्त आवश्यकता थी। दूसरे वर्ष मेरी से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसे 'रोम के सम्राट' की प्रतिष्ठित उपाधि प्रदान की गयी। नैपोलियन अत्यन्त हर्षित था, क्योंकि उसका विवाह यूरोप के सबसे बड़े और

जोज़ेफ़ाइन का परित्याग

प्रतिष्ठित वंश में हो गया था। तथापि आस्ट्रिया की शत्रुता पूर्ववत् बनी रही। कई अन्य प्रकार से भी यह विवाह अशुभ सिद्ध हुआ।

प्रशा में स्वाधीनता युद्ध की तैयारियाँ

इसी बीच में प्रशा में भी स्वाधीनता युद्ध की असाधारण तैयारियाँ पूर्ण हो चुकी थीं। इस प्रसंग में उपरोक्त देश स्पेन और आस्ट्रिया से भी आगे बढ़ा हुआ था। कुछ काल पूर्व फ्रैड्रिक महान् (१७४०–१७८६) के शासनकाल में प्रशा ने असाधारण प्रसिद्धि तथा प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। परन्तु नैपोलियन के समय में ऐना और आर्स्टेड के युद्धों के पश्चात् उसकी प्रतिष्ठा और शान समाप्त हो गई थी। प्रशा में कुछ राजनीतिज्ञ ऐसे भी थे जिनका विचार था कि जब तक वहाँ के निवासी दीर्घ-कालीन राजनैतिक तथा सामाजिक व्यवस्था से मुक्ति प्राप्त न करेंगे तब तक वहाँ किसी प्रकार का स्थायी सुधार अथवा अन्य संतोषजनक परिवर्तन सम्भव न हो सकेगा। वहाँ के सम्राट फ्रैड्रिक विलियम तृतीय (१७९७–१८४०) ने उनके परामर्श से सुधार के काम को अपने हाथों में लिया, और सन् १८०७ ई० और सन् १८१३ ई० के बीच इस सीमा तक सफलता प्राप्त की कि दूसरे देशों के लोग चकित रह गये। वास्तव में उक्त सुधार फ्रांस के सुधारों से, जो सन् १७८९–१७९१ ई० में किये गये थे, किसी भी दशा में कम नहीं थे।

प्रशा में राष्ट्रीय जागृति तथा समृद्धि प्रवाह को लाने का श्रेय सबसे अधिक वहाँ के विख्यात मंत्री बैरन वाम स्टाईन (Baron Vom Stein, 1757–1831) और चांसलर हार्डिनबर्ग (Hardenburg, 1750–1822) को प्राप्त है। ये दोनों राष्ट्र के सच्चे सेवक थे तथा अट्ठारहवीं शताब्दी की जागृति से प्रभावित हो चुके थे। उनके प्रयत्नों से सबसे पूर्व सन् १८०७ ई० में दास कृषकों की प्रथा (Serf-dom) का अन्त किया गया तथा कृषिकों एवं मध्यम श्रेणी के लोगों को कुलीनों की भांति भूमि का स्वामी होने का अधिकार दिया गया। इस प्रकार प्रशा के कृषक स्वाधीन हो गये और अन्य देशों की भाँति ज़मींदार को नियत लगान देने लगे। विभिन्न पेशे भी तीनों श्रेणियों के लोगों के लिये खोल दिये गये। स्टाईन ने शासन में भी सुधार किया तथा मन्त्रिमंडल को अधिक शक्तिशाली बनाया। परन्तु वह इंग्लैंड के ढंग पर संवैधानिक शासन की स्थापना न कर सका। इसका विशेष कारण यह था कि फ्रैड्रिक विलियम अपने अधिकारों में कमी करने के लिये तैयार न था। सन् १८११ ई० में कृषकों को उस भूमि का जिसे वे जोतते थे एक भाग सदा के लिए दे दिया गया तथा इसके बदले में शेष भाग ज़मींदार अथवा जागीरदार के अधिकार में छोड़ दिया गया।

प्रशा की सैनिक व्यवस्था में भी सुधार किया गया। इसका श्रेय दो नेताओं

शार्नहोर्स्ट (Scharnhorst) तथा नाईज़ीनाउ (Gneisenau) को प्राप्त है। इस सम्बन्ध में सबसे प्रमुख सुधार यह किया गया कि प्रशा के निवासियों के लिये सैनिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गई। इस प्रकार का सुधार फ्रांस में क्रांति के युग में किया जा चुका था। नैपोलियन ने प्रशा के लिये ४२ सहस्र सैनिकों का प्रतिबन्ध रक्खा था। परन्तु फ्रेड्रिक विलियम के शासन ने कई बार, क्रम से इतने मनुष्यों को सैनिक शिक्षा दी। इस प्रकार प्रशा स्वाधीनता युद्ध के लिये तैयार हो गया।

उसके निवासियों की असाधारण राष्ट्रीय जागृति

जो कुछ प्रशा में घटित हो रहा था उसका ज्ञान नैपोलियन को था। उसने कई बार नवीन सुधारों का भीषण विरोध किया और दण्ड की धमकी भी दी, परन्तु सब व्यर्थ सिद्ध हुआ। अन्तत: उसने सन् १८०८ ई० में स्ताईन को पदच्युत करा दिया। किन्तु इस महा साहसी और बुद्धिमान मन्त्री ने इसकी चिन्ता न की। वह अस्ट्रिया चला गया और तीन वर्ष तक वहाँ के निवासियों में राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न करता रहा। इसके पश्चात् उसने रूस की दिशा में यात्रा की और ज़ार के सामने नैपोलियन के विरुद्ध ज़हर उगलता रहा। इस समय नैपोलियन दूसरी दिशा में व्यस्त था। अतएव उसने इन बातों पर ध्यान नहीं दिया। उसने प्रशा की राष्ट्रीय जागृत के महत्व को समझने में भी भूल की। वहाँ के निवासियों का उत्साह व स्फूर्ति कई प्रकार से चरम सीमा तक पहुँच चुके थे। जो उपयोगी सुधार वहाँ किये गये थे उनका वर्णन हम कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त कई अन्य प्रकार से भी उन्हें स्वाधीनता युद्ध के लिये तैयार किया गया। टूजेंटबूंट (Tugenbund) और 'योग्य मनुष्यों के समाज' (League of Virtue) की भाँति समाजों और फ़िकते (Fichte) तथा आर्न्ट (Arndt) के समान लेखकों ने उनमें उग्र रूप में राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न की। विलहेल्म वोन हमबोल्ट (Wilhelm Von Humboldt, 1767–1835) ने आवश्यक शिक्षा सुधार करके उन्हें इस योग्य बनाया कि वे नैपोलियन के अन्यायपूर्ण व्यवहार को ठीक प्रकार से समझ सकें। प्रशा निवासियों ने भी फ्रांस की भांति 'स्वतन्त्रता, समानता और बान्धुत्व' के आदर्शों को महत्ता प्रदान की तथा अपने घरबार तथा स्वदेश के हित में बलिदान होने का पाठ ग्रहण किया। नैपोलियन ने प्रशा को निर्बल और दिवालिया बना दिया था। उसकी व्यापारिक व्यवस्था ने प्रशा के व्यापार तथा कलाकौशल को कुचल दिया था और देश में एक ओर से दूसरी ओर तक निराशा और निर्धनता का वातावरण फैला दिया था। अब इन सब बातों का प्रतिकार करने का समय आ गया था। इस अनुपम राष्ट्रीय चेतना का प्रमाण सन् १८१२ ई० के पश्चात् युद्ध के मैदान में उपस्थित किया गया।

यूरोपीय राष्ट्रों की राष्ट्रीय जागृति तथा चेतना जो हाल में स्पेन, आस्ट्रिया और जर्मनी में उत्पन्न हुई थी, शीघ्र ही फ्रांस के सम्राट नैपोलियन के पतन का अग्रगामी दूत प्रमाणित हुई। यह एक ऐसी शक्ति थी जिसने महान् से महान् सम्राटों को भी पतन की ओर ढकेल दिया है। जैसा कि इसके पूर्व बतला चुके हैं, नैपोलियन की व्यवस्था में भी दो विशेष दोष थे,—नैपोलियन की सीमित शक्तियां तथा सेना की आन्तरिक निर्बलता। टिलसिट की संधि के पूर्व इनका प्रभाव प्रकट न हो सका था। परन्तु इसके पश्चात् वे अपना प्रभाव दिखलाने लगीं। इसके पश्चात् उसके पतन के दो अन्य महान् कारण उपस्थित हुये,—(१) सम्राट की व्यापारिक व्यवस्था तथा उसको सफल बनाने के लिये ज़बरदस्ती व्यवहार तथा (२) राष्ट्रीयता के सिद्धान्त का अद्वितीय उत्थान। इसके बाद नैपोलियन के जीवन नाटक में दो अत्यन्त भयपूर्ण अङ्क उपस्थित हुये,— रूस का युद्ध (Russian Campaign) और राष्ट्रों का युद्ध (Battle of the Nations)। इससे दस वर्षों के भीतर नैपोलियन बोनापार्ट के जीवन नाटक का अन्त होगया, किन्तु इससे पूर्व वह यूरोप से निर्वासित कर दिया गया था तथा सेंट हेलेना के दूरस्थ द्वीप में जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य कर दिया गया था।

फ्रांस का सम्राट पतन के पथ पर

कुछ काल से रूस का ज़ार नैपोलियन की ओर से अप्रसन्न था। जो व्यवहार उसने प्रशा के विरुद्ध किया था उससे ज़ार असन्तुष्ट था। वारसा की ग्रांड डची की स्थापना उसकी आंखों में खटकती थी। वह इस बात को भी सहन न कर सकता था कि पोलैंड के राष्ट्रीय उद्‌गारों को स्फूर्ति दी जाय। सन् १८०६ ई० के युद्ध में रूस ने आस्ट्रिया के विरुद्ध फ्रांस को सहायता प्रदान की थी। किन्तु संधि के समय गैलिशिया का सबसे बड़ा भाग उसके शत्रु पोलों को दे दिया गया था। ज़ार इसके भी विरुद्ध था। अन्तत: उसने नैपोलियन से इस बात का वचन लेने का प्रयत्न किया कि वह पोलैंड के स्वाधीन राज्य को फिर से स्थापित न करेगा, परन्तु उसने ऐसा करने से साफ़ इन्कार कर दिया। कारण यह था कि वह जानता था कि रूस से युद्ध होने की स्थिति में पोलिश घुड़सवारों से पर्याप्त सहायता मिल सकेगी। यदि महाद्वीप पर उसका कोई मित्र न होता तो वह ज़ार के साथ व्यवहार करने में अधिक सावधानी से काम लेता। परन्तु मेरी लुईज़ के पति को उसकी आवश्यकता न थी। इन समस्त कारणों से ज़ार नैपोलियन की ओर से अप्रसन्न था। परन्तु ये युद्ध के कारण नहीं बन सकते थे। युद्ध का प्रधान कारण यह था कि रूस की आर्थिक अवस्था संतोषजनक न होने से वह नैपोलियन की महाद्वीपी

रूसी संघर्ष जून—दिसम्बर, १८१२ ई०

व्यवस्था में अधिक काल तक सम्मिलित न रह सकता था। दिसम्बर सन् १८१० ई० में ज़ार ने निष्पक्षी जहाज़ों को रूसी बन्दरगाहों में आने के लिये कुछ सुविधायें दे दीं, और शराब तथा रेशमी कपड़े पर जो फ्रांस के मुख्य निर्यात थे, कर बढ़ा दिया। इससे नेपोलियन ने यह निष्कर्ष निकाला कि वह युद्ध करने के लिये तत्पर है।

कुछ लेखक ऐसे भी हैं जिन्होंने रूसी युद्ध का उत्तरदायित्व नैपोलियन के कन्धों पर डाला है। उनका कथन है कि यदि वह चाहता तो युद्ध घटित न होता। उनका मत बिल्कुल ठीक है। परन्तु उन्होंने इस बात पर विचार नहीं किया कि फ्रांस का सम्राट यह कैसे सहन कर सकता था कि रूस फ्रांस की व्यापारिक वस्तुओं पर तो कठोर कर लागू करे परन्तु निष्पक्ष देशों के जहाज़ों को महाद्वीपी व्यवस्था के विरुद्ध रूसी बन्दरगाहों में प्रवेश करने के लिये आमंत्रित करे? जब कभी उसकी व्यापारिक व्यवस्था में इस प्रकार का कोई अवरोध उपस्थित होता था तो वह यही कहता था कि यह वार न केवल फ्रांस पर वरन् उसके साम्राज्य पर किया गया है।

स्पेन की भांति रूस के सम्बन्ध में भी यह कहा गया है कि वहां छोटी सेनायें पराजित होती हैं और बड़ी सेनायें भूखों मरती हैं। इस सत्य से नैपोलियन पूर्ण परिचित था। अतएव उसने रूसी आक्रमण के लिये आवश्यक वस्तुओं को प्राप्त करने में कोई उपाय उठा न रक्खा था। उसने एक नवीन महती सेना तैयार की जिसमें कुल मिलाकर ६ लाख सैनिक थे। इसमें आधे फ्रांसीसी थे और आधे अन्य राष्ट्रों के व्यक्ति थे। आस्ट्रिया और प्रशा ने भी उसकी सहायता के लिये सेनायें भेजीं थीं। ६० हज़ार सैनिक पोलैंड से सम्मिलित हुये। आक्रमण आरम्भ होने से पूर्व एक अपूर्व समारोह का आयोजन ड्रेस्डन नगर में किया गया। इसमें जर्मनी के प्रधान शासकों के अतिरिक्त आस्ट्रिया और प्रशा के सम्राट भी सम्मिलित हुए थे। नैपोलियन अत्यन्त प्रसन्न था। उसका विचार था कि रूस की पराजय के पश्चात् वह सरलता से भारतवर्ष की ओर बढ़ सकेगा। "मास्को एक भवन के समान है जो भारत के मार्ग में आधी दूर पर बना हुआ है।"

मई सन् १८१२ ई० तक समस्त तैयारियां पूर्ण हो चुकी थीं। २४ जून को नैपोलियन की महती सेना ने नीमन (Niemen) नदी को पार किया, और फ्रांस के सम्राट का रूसी आक्रमण प्रारम्भ हुआ। उसकी तुलना में रूस की सेनाओं का कोई महत्व न था। सैनिकों की संख्या, व्यवस्था और साज़ सामान सभी में वे बहुत पीछे थीं। परन्तु देश की भौगोलिक अवस्था उनके पक्ष में थी। यदि वे फ्रांस की महती सेना का सामना मैदान में आकर नियमपूर्वक करतीं तो वे तुरन्त ही काट डाली जातीं। ऐसा न करके वे बराबर इधर उधर अदृश्य रहीं और

नित्य प्रति नैपोलियन को देश के आन्तरिक भाग में बढ़ने को बाध्य करती रहीं। एक समय रूसी सेनापतियों ने कहा था कि जनवरी और फर्वरी हमारे सर्वश्रेष्ठ सेनाध्यक्ष हैं। यह बात बहुत बाद को है। फ्रांसीसियों को इन सेनाध्यक्षों का सामना तो न करना पड़ा, क्योंकि नैपोलियन दिसम्बर के मध्य में रूस से लौट आया था। परन्तु मार्ग में उसे अन्य विपत्तियों का सामना निरन्तर करना पड़ा, जैसे ऊसर मैदान, तूफ़ान की काटती हवायें, भूख तथा महामारी, और सबसे अधिक, रूसियों की धार्मिक कट्टरता तथा उनका देशप्रेम। कुछ लेखकों का मत है कि उसे आंख बन्द करके मास्को तक न बढ़ जाना चाहिये था। परन्तु उसे पूर्ण विश्वास था कि स्पेन निवासियों के समान रूस के निवासी भी गम्भीरता और संकल्प की दृढ़ता से उसका सामना न कर सकेंगे। अत: नीमन नदी को पार करके नैपोलियन की महती सेना विलना (Vilna) नगर पहुंची, और वहां से स्मोलंस्क (Smolensk) की दिशा में बढ़ी। जैसे जैसे वह आगे बढ़ता था वैसे वैसे रूसी सैनिक खेतों और कस्बों को जलाते हुये पीछे की ओर हटते जाते थे। स्मोलैंस्क पहुंचकर उसको चेत हुआ। परन्तु इसके होते हुये भी कि फ्रांसीसी सैनिक पेचिश से तथा उनके घोड़े चारे के न मिलने से बड़ी संख्या में मर रहे थे, नैपोलियन ने मास्को की ओर बढ़ने का निर्णय किया। बोरोडीनो (Borodino) नगर में रूसी सेनापति कुटूज़ोफ़ (Kutusoff) ने उसका मार्ग रोकने का प्रयत्न किया, किन्तु उसे पूर्ण पराजय प्राप्त हुई। इस भयानक युद्ध में कम से कम दोनों ओर के एक लाख सैनिक काम आये। परन्तु इस भीषण रक्तपात ने भी नैपोलियन के निश्चय को न बदला। वह दृढ़ता से मास्को की ओर बढ़ा और उस पर अधिकार करके उसने क्रेमलिन के राजसी महल में विश्राम किया। परन्तु उसे अधिक समय तक विश्राम प्राप्त न हो सका।

१४ सितम्बर को उसने मास्को में प्रवेश किया था। २२ अक्टूबर को उसने वहां से लौटने का निर्णय कर लिया। इस प्रकार वह वहां केवल ५ सप्ताह तक ठहरा। मास्को नगर क्या था एक निर्जन स्थान था। उसके निवासी कारबार छोड़कर चले गये थे "जिससे भेड़िया जाल में फँस जाय।" जिस दिन फ्रांस के सम्राट ने बड़ी शान से नगर में प्रवेश किया था उसी दिन संध्या के समय उसमें आग लगा दी गई थी। आग किसने लगाई और किस उद्देश्य से लगाई गई, यह बतलाना कठिन है। कम से कम इतना दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि उसके कारण अगणित भवन नष्ट हो गये और नगर की दशा अत्यन्त भयावह होगई। सैनिकों के निवास स्थान और अनाज के गोदाम पहले ही नष्ट कर दिये गये थे। रसद और सामान की कमी नैपोलियन के लिये चिन्ता का कारण बनी। उधर उसे

शीत ऋतु का भी भय था। एक दिन उस दुर्ग में भी आग लगाने का प्रयत्न किया गया जिसमें वह ठहरा हुआ था। यह देखकर उसे चिन्ता हुई और उसने लौटने का निर्णय कर लिया। उसकी महती सेना जिसका बहुत सा भाग नष्ट हो चुका था धीरे धीरे नीमन नदी की ओर बढ़ी। पीछे से रूसी सेनाओं ने उस पर विशेष तबाही लाने का प्रयत्न किया। वे उसके सम्मुख तो नहीं आईं, परन्तु दायें बायें से उसको बराबर क्षति पहुंचाती रहीं तथा उन लोगों को भी यमपुरी पहुंचाती रहीं जो किसी कारण से पीछे छूट जाते थे।

जो विपत्तियां फ्रांसीसी सेना को रूस से लौटते समय सहन करनी पड़ीं वे कदाचित् ही किसी अन्य सेना को सहन करनी पड़ी हों। शत्रु के संक्षिप्त परन्तु तीव्र गति के आक्रमणों के अतिरिक्त जो बराबर हो रहे थे, फ्रांसीसियों को शीत की भीषणता और रसद की कमी का सामना भी करना पड़ा। शीत का ऐसा प्रकोप था कि समस्त देश बर्फ से ढका हुआ था। वर्षा और तूफ़ानी हवाओं के कारण आगे बढ़ना कठिन था। रसद की इतनी कमी थी कि कभी कभी सैनिकों को घोड़ों को मार कर पेट भरना पड़ा। कुछ लेखकों ने तो यह भी लिखा है कि कुछ अवसर ऐसे भी आये जब उन्हें मानव का मांस भी खाना पड़ा। हो सकता है कि यह मत झूठ हो, परन्तु कम से कम इससे इस बात का आभास अवश्य मिलता है कि रूस से लौटते समय फ्रांसीसी सैनिकों को असीम विपत्तियाँ सहन करनी पड़ी थीं। कपड़ों की इतनी कमी थी कि बहुधा सैनिक रात को सोते थे और प्रात: मरे पाये जाते थे। सहस्रों सैनिक केवल थकान के कारण गिर पड़े और बर्फ़ से आच्छादित हो गये। महामारी तथा रोग ने भी उनको स्वेच्छापूर्वक शिकार बनाया। अनुशासन बिल्कुल भंग हो गया और सैनिक परस्पर लूट करने लगे। शत्रु के आक्रमणों तथा बाढ़ के कारण बेरेज़ीना (Beresina) नदी के पार करने में महान् विपत्ति का सामना करना पड़ा। जब नैपोलियन ने बारह सहस्र मनुष्यों को बलिदान कर दिया तब उसे वहां से पश्चिम की ओर बढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अन्तत: सहस्रों विपत्तियों का सामना करने के पश्चात् दिसम्बर मास के मध्य भाग में महती सेना के छ: लाख मनुष्यों में से केवल बीस सहस्र नीमन नदी को पार करके जर्मनी में प्रविष्ट हुये। "महती सेना नष्ट हो गई है। सम्राट का स्वास्थ्य इस समय से अधिक सन्तोषजनक कभी नहीं रहा।" इन शब्दों में नैपोलियन के दुर्भाग्य की कहानी फ्रांस के निवासियों को सुनाई गई। इसके पश्चात् नैपोलियन कुछ साथियों के साथ निराशा तथा असफलता की

निराशा और वापिसी

दिशा में वहां पहुंचा और नवीन सेना को संगठित करने में संलग्न हुआ। महती सेना का शेष भाग जर्मनी में छूट गया था।

नैपोलियन की नष्टप्राय तथा दुरावस्था पर सब को आश्चर्य था। जब तक यह रूस में था तब तक बहुत से लोग इसका विश्वास न करते थे कि वास्तव में महती सेना के सहस्रों सैनिक नष्ट हो रहे हैं और ऐना तथा अस्टरलिटज़ के विजेता से कुछ करते नहीं बनता। परन्तु जब यह बात स्पष्ट हो गई कि वास्तव में नैपोलियन को असह्यनीय कष्ट झेलने पड़े हैं और उसके लिए खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त करना यदि असम्भव नहीं, तो बहुत ही दुष्कर है तो प्रशा, अस्ट्रिया और अन्य विजित देशों में हर्ष मनाया गया। सब लोग सोचते थे कि विजित देशों के लिये फ्रांस और नैपोलियन की अधीनता से स्वाधीन होने का समय आ गया है। सबसे पूर्व स्वाधीनता युद्ध का प्रारम्भ प्रशा में हुआ। फिर अस्ट्रिया और अन्य देश उसकी सहायता को आये। प्रशा की अवस्था अब वह नहीं थी जो ऐना तथा अस्टरलिटज़ के युद्धों के समय थी। जैसा कि हम पहले उल्लेख कर चुके हैं, वहाँ जागृति और राष्ट्रीय चेतना अन्तिम सीमा तक पहुंच चुकी थी तथा राष्ट्रीय उत्साह उग्र रूप धारण कर चुका था। स्कूल और कालेजों के छात्र, शिक्षक वर्ग, कृषक, कारीगर सारांश यह कि सभी प्रकार के व्यक्ति सेना में भर्ती हो रहे थे। प्रत्येक व्यक्ति बड़े से बड़े बलिदान के लिए तत्पर था। तिस पर भी फ्रेड्रिक विलियम तृतीय युद्ध करने के लिए तत्पर न था। उसे गत समय का स्मरण था। वह इस बात से परिचित था कि नैपोलियन पहले की भाँति पुनः गहरी चोट कर सकता है। परन्तु जब स्टायन (Stein) ने जो ज़ार के साथ प्रशा में आ गया था बहुत प्रभाव डाला और राष्ट्रीय उत्साह दिन प्रति दिन बढ़ता ही गया तो उसने नैपोलियन के विरुद्ध ज़ार सिकन्दर की सहायता करना स्वीकार कर लिया।

स्वाधीनता युद्ध का प्रारम्भ

उधर नैपोलियन भी आने वाले संकट से अनभिज्ञ न था। उसके सेनाध्यक्ष स्पेन के राष्ट्रीय आन्दोलन के सम्मुख नीचा देख चुके थे। ऐसी दशा में वह उस तूफ़ान के महत्व को, जो जर्मनी में उठ रहा था, कैसे कम मान सकता था? उसने रूस से लौटकर अपना समय सेनाओं के तैयार करने और अत्यधिक धन एकत्रित करने में व्यय किया था। परन्तु फ्रांस के निवासी अब पहले की भांति उसकी सहायता करने को तत्पर न थे। वोंदे तथा अन्य प्रान्तों में विद्रोह की ज्वाला भड़क रही थी। यह भी कहा जाता है कि कुछ व्यक्तियों ने सेना की भर्ती से बचने के विचार से अपने दाँत तोड़ लिये थे अथवा अंगूठे काट लिये थे। इन सब बातों

के होते हुये भी नैपोलियन ने शीघ्र ही पांच लाख सेना तैयार कर ली। यदि वह प्रयत्न करता तो ऑस्ट्रिया के सम्राट को जो उसका श्वसुर था, कुछ विशेष सुविधायें प्रदान करने का वचन देकर युद्ध से पृथक कर सकता था, परन्तु उसने इसकी आवश्यकता नहीं समझी। उसने सोचा कि वह उस समय भी इतना शक्तिशाली था कि वह पूर्वीय देशों के सम्राटों को परास्त करके उन्हें स्वेच्छापूर्वक संधि करने पर बाध्य कर सकता था। परन्तु वास्तविकता इसके विरुद्ध थी। वह अधिक मोटा हो गया था। अब वह और उसके मार्शल दोनों थकान अनुभव करने लगे थे। उनमें अब वह स्फूर्ति और दृढ़ता शेष न थी जो दीर्घकाल तक उसके गौरव का कारण रह चुकी थी।

स्वाधीनता युद्ध का प्रथम महान् कार्य फ्रेड्रिक विलियम की स्वीकृति के पूर्व हो चुका था। उसके एक कर्नल ने, जिसका नाम यार्क (Colonel Yorck) था और जो नैपोलियन की ओर से रीगा (Riga) नगर का घेरा डाले हुये था, उसको समाप्त करके ज़ार से सन्धि की बातचीत प्रारम्भ कर दी थी। प्रशा के सम्राट ने इसका समर्थन किया और जनवरी सन् १८१३ ई० में ज़ार से कालिश (Kalisch) की संधि कर ली। मित्र राष्ट्रों की सेनायें सैक्सनी की ओर बढ़ीं, परन्तु नैपोलियन ने उन्हें लूटसेन (Lutzen) तथा बाउटसेन (Bautzen) के युद्धों में बुरी तरह परास्त किया। यह कोई साधारण युद्ध न थे, परन्तु उनका महत्व इस कारण अधिक नहीं है कि उनके पश्चात् नैपोलियन ने शत्रु की बुरी स्थिति से उस प्रकार लाभ न उठाया जिस प्रकार उसने अस्टरलिट्ज़ अथवा ऐना के युद्धों के पश्चात् उठाया था। परिणाम यह हुआ कि पराजित मित्र राष्ट्रों ने पूर्व की ओर जाकर शीघ्र ही अपनी सेनाओं को पुनः संगठित किया तथा वे युद्ध के लिए कटिबद्ध हुये।

इस अवसर पर ऑस्ट्रिया के बादशाह ने भी नैपोलियन के विरुद्ध युद्ध करने का निर्णय किया। इस प्रकार यूरोपीय राष्ट्रों का चतुर्थ संघ (Fourth Coalition) तैयार हुआ। इसमें रूस, प्रशा, स्वीडन, इंग्लैंड तथा ऑस्ट्रिया सम्मिलित थे। प्रशा के अतिरिक्त जर्मनी के अन्य अगणित राज्य भी उनके पक्ष में थे। सब मिलाकर मित्र राष्ट्रों की ओर लगभग दस लाख सेना थी। उनका विचार था कि वे कई छोटे युद्ध करके नैपोलियन को शस्त्र डालने को विवश कर सकेंगे, परन्तु ऐसा न हुआ। अपनी धारणा के विरुद्ध उन्हें दो बड़े युद्ध करने पड़े। प्रथम युद्ध में उनकी पराजय व द्वितीय में गौरवपूर्ण विजय हुई; इससे नैपोलियन के भाग्य का निर्णय हो गया।

यूरोपीय राष्ट्रों का चतुर्थ संघ

नैपोलियन अपनी सेना के साथ सेक्सनी की राजधानी ड्रेस्डन में मित्र राष्ट्रों की प्रतीक्षा कर रहा था। यदि उसमें पहले की विद्युत गति से आक्रमण करने की क्षमता होती तो वह बाहर आकर मित्र राष्ट्रों पर टूट पड़ता और उनको नष्ट कर देता। परन्तु जैसा कि वर्णन कर चुके हैं, उसमें पहले से बड़ा अन्तर हो गया था। उसके साथ उसके सैनिक पदाधिकारी भी बदल गये थे। ड्रेस्डन के युद्ध में जो अगस्त सन् १८१३ ई० में किया गया था, उसकी विजय हुई परन्तु इसके पश्चात् पांच मध्यम श्रेणी के संघर्षों में उसके अफ़सरों की हार हुई। अतएव ड्रेस्डन के युद्ध से उसे कोई विशेष लाभ न हुआ। अक्टूबर सन् १८१३ ई० में लीपज़िग (Leipzig) का प्रसिद्ध युद्ध हुआ, जो राष्ट्रों का युद्ध (Battle of the Nation) भी कहलाता है। यह युद्ध तीन दिवस तक चलता रहा। प्रशा की सेना मार्शल ब्लूचर (Blucher) के अधीन थी तथा आस्ट्रिया का सेनाध्यक्ष श्वार्ट्सनबर्ग (Schwarzenberg) था। युद्ध में नैपोलियन की पूर्ण पराजय हुई, परन्तु दोनों पक्षों को भयंकर क्षति सहन करनी पड़ी। एक लाख तीस सहस्र सैनिक रणक्षेत्र में खेत रहे। इनमें ५० सहस्र फ्रांसीसी थे। शेष सेना को लेकर नैपोलियन राइन नदी की ओर भागा। बवेरिया की एक सेना ने उसका मार्ग रोकने का प्रयत्न किया, किन्तु वह कृतकार्य न हुई। दिसम्बर के प्रारम्भ में फ्रांसीसी सेना राइन नदी के तट पर पहुंची। नैपोलियन की १ लाख ६० हज़ार सेना जर्मनी के विभिन्न दुर्गों और नगरों में छूट गई थी। इसने शीघ्र ही शस्त्र डाल दिये। इस प्रकार राइन के पूर्व में नैपोलियन की शक्ति का अन्त हो गया।

लीपज़िग का युद्ध
अक्टूबर, १८१३ ई०

'राष्ट्रों का युद्ध' नैपोलियन की रूसी पराजय के केवल एक वर्ष के भीतर हुआ था। इन दोनों ने मिल कर उसके भाग्य का निर्णय कर दिया। उसने जो विस्तृत साम्राज्य फ्रांस के बाहर निर्माण किया था वह बालू के घरोंदे की भाँति विध्वंस हो गया। उसके जो साथी देश थे वे सब एक दो को छोड़ कर मित्र राष्ट्रों से जा मिले। राइन के संघ (Confederation of the Rhine) का अन्त हो गया और उसमें सम्मिलित शासकों ने मित्रदल से सन्धि कर ली। केवल सैक्सनी एक ऐसा देश था जो पूर्ववत् नैपोलियन के पक्ष में रहा। बादशाह जेरोम बोनापार्ट वेस्टफेलिया से निर्वासित कर दिया गया। हॉलैंड स्वतन्त्र हो गया तथा वहाँ विलियम आफ़ आरेंज शासन करने लगा। डेनमार्क भी मित्र राष्ट्रों के पक्ष में आ गया। वह कुछ धनराशि तथा स्वीडिश पोमेरेनिया (Swedish Pomerania) के बदले नार्वे के देश को स्वीडन के अधीन

उसके परिणाम

करने को राज़ी हो गया। अस्ट्रिया के सम्राट ने तिरोल और इलेरिया के (Illyrian Provinces) ले लिये। इसके अतिरिक्त उसने वेनीशिय स्विटज़रलैंड पर भी अधिकार कर लिया। नेपोलियन के बहनोई मूरा नेपिल्ज़ पर अधिकार बनाये रखने के विचार से अस्ट्रिया से सन्धि कर ली। के अतिरिक्त केवल पोलिस वारसा ही एक ऐसा देश था जिसने नैपोलियन का स छोड़ा था। नेपोलियन के सम्बन्धियों में जोज़ेफ़ाइन का पुत्र यूजीन जिसका इटैली में था अब भी उसका भक्त था। विभिन्न राज्यों ने अपने बन्दरगाह द्वीपसमूह की व्यापारिक वस्तुओं के लिये खोल दिये। इस प्रकार नेपोलिय तिजारती व्यवस्था का अन्त हो गया।

नैपोलियन का भाग्य-नक्षत्र अब डूब रहा था, परन्तु उसके साहस बीरता में किसी प्रकार का अन्तर न आया था। अपनी अवशेष सेना तथा कुछ सैनिकों की सहायता से जिसे उसने भर्ती कर लिया था, फ्रांस को अपना केन्द्र बना कर मित्र राष्ट्रों का सामना बीरता और कर्मण्यता से किया। कुछ समय से अस्ि का योग्य राजनीतिज्ञ मैटर्निक (Metternich) नैपोलि से सन्धि की शर्तें तय कर रहा था। सन् १८१३ ई० के अन्त में उसने मित्र र को राज़ी करके उसके लिये उचित शर्तें प्रस्तावित कीं। फ्रांस के लिये प्राकृ सीमायें, जो राइन, एल्प्स, पीरीनीज़ से बनती हैं, निश्चित कर दी गईं। इसका अर्थ था कि नैपोलियन के लिये एक ऐसा राज्य छोड़ दिया गया जिसे प्राप्त क रीशलू तथा चौदहवाँ लूई भी अत्यन्त प्रसन्न होते। परन्तु नैपोलियन का ध्यान सैि विजयों की ओर था, न कि सन्धि और शान्ति की ओर। वह अब भी प्रशा त अस्ट्रिया को परास्त करने का स्वप्न देख रहा था। जो विस्तृत साम्राज्य उसने अ लिये प्राप्त किया था उससे वह एक इंच भूमि भी पृथक करने को तैयार न था। उ मैटर्निक से गत अगस्त में कहा था, "मैं मर जाऊँगा परन्तु एक हाथ भूमि भी दे पसन्द न करूंगा। आपके पैदायशी बादशाह बीस बार पराजित हो सकते हैं अं फिर भी वे अपने स्थानों में वापस आ सकते हैं। परन्तु मैं तो समय की देन हूं मेरे लिये ऐसा सम्भव नहीं है। जिस दिन मेरी भुजाओं का बल समाप्त हो जायेग तथा लोग मुझसे भयभीत होना छोड़ देंगे उस दिन से अधिक मेरा प्रभाव स्थापि न रह सकेगा।"

मित्र राष्ट्र फ्रांस पर आक्रमण करते हैं

सन् १८१४ ई० के प्रारम्भिक मासों में तीन महान् सेनाओं ने जिनकी संयुक्त शक्ति ४ लाख थी, फ्रांस पर आक्रमण किया। रूस और अस्ट्रिया के सम्राट तथा प्रशा का बादशाह उनके साथ थे। बूलो (Bulow) बेल्जियम से बढ़ा। ब्लूचर रूसी

व जर्मन सैनिकों के साथ नेन्सि (Nancy) नगर की ओर बढ़ा। श्वार्टसनबर्ग ने आस्ट्रिया की सेना के साथ बाल (Basel) नगर के दक्षिण में राइन नदी को पार किया। इसी बीच में वेलिंगटन ने फ्रांसीसियों को स्पेन में विटोरिया (Vittoria) के युद्ध में बुरी तरह परास्त कर दिया था (२१ जून १८१३ ई०)। सम्राट जोज़ेफ अन्तिम बार मैड्रिड छोड़ कर भाग गया था और लगभग समस्त आइबेरियन प्रायद्वीप नैपोलियन की सेनाओं से खाली कर दिया गया था। विटोरिया से अँगरेज़ी सेनाध्यक्ष उत्तर-पूर्व की ओर बढ़ा और पिरीनीज़ पर्वत को पार करके फ्रांस के तूलोज़ (Toulouse) नगर तक पहुँच गया। यह मित्र राष्ट्रों की चौथी सेना थी जो पेरिस की दिशा में बढ़ रही थी। एक आस्ट्रियन सेना, जो वेनीशिया तथा लाम्बार्डी में युद्ध कर रही थी, पांचवीं ओर से पेरिस की ओर बढ़ रही थी। नैपोलियन बोनापार्ट कभी एक सेना पर आक्रमण करता और कभी दूसरी पर। उसने उनका सामना करने में ऐसी विद्युत गति तथा दृढ़ संकल्प से काम लिया कि मित्र राष्ट्र अवाक् थे। अन्तत: १ मार्च सन् १८१४ ई० को ब्रिटिश द्वीपसमूह, रूस, आस्ट्रिया तथा प्रशा की महान् शक्तियों ने नैपोलियन के विरुद्ध शोमों (Chaumont) का प्रतिज्ञापत्र लिखा, जिसके अनुसार प्रत्येक शक्ति ने डेढ़ लाख सेना तैयार करने का वचन दिया, और ब्रिटिश द्वीपसमूह के शासन ने अपने मित्रों को आर्थिक सहायता देने का वचन दिया।

सन् १८१४ ई० के युद्ध पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालना अनावश्यक है। इतना कहना काफ़ी होगा कि नैपोलियन पर्याप्त समय तक शत्रुओं से मोर्चा लेता रहा, परन्तु अन्त में उसकी शक्ति केवल नाम मात्र को रह गई। ३१ मार्च को राजधानी पेरिस ने ज़ार के सम्मुख शस्त्र डाल दिये। जैसे जैसे नैपोलियन की शक्ति क्षीण होती जाती थी वैसे वैसे उसके सहायक तथा मित्र उसका साथ छोड़ते जाते थे। यहां तक कि उसके मार्शल मारमों,

नैपोलियन का प्रथम निर्वासन, अप्रैल, १८१४ ई०

ओज़रो, 'ने' तथा बर्तिये सब उसका साथ छोड़ कर चले गये और उन्होंने पेरिस के नये शासन के आगे सर झुका दिया। ११ अप्रैल को सम्राट नैपोलियन ने फ़ौंतेनब्लो (Fontainebleau) की सन्धि द्वारा अपने तथा अपने पुत्र की ओर से राज-सिंहासन से पृथक होना स्वीकार कर लिया। २० तारीख को उसने अपने रक्षकों से बिदा लेकर राजकीय उपकरणों को चुम्बन किया तथा अपने रोते हुये सैनिकों को छोड़ कर वह ऐल्बा द्वीप की ओर बिदा हुआ। यूरोप के विशाल साम्राज्य के स्थान पर अब वह भूमध्य सागर के एक छोटे से द्वीप का सम्राट था। उसके स्थान पर सोलहवें लूई का भाई काउंट आफ़ प्रोवेंस फ्रांस के राजसिंहासन पर सुशोभित हुआ तथा अट्ठारहवें लूई के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

प्रथम मार्च सन् १८१५ ई० को नेपोलियन बोनापार्ट ऐल्बा द्वीप से स्वाधीन होकर फ्रांस में आ गया। यह एक अत्यन्त आश्चर्यजनक विषय है। इस से भी अधिक आश्चर्यजनक विषय यह है कि कान (Cannes) से जहाँ वह उतरा था वह सीधा पेरिस की दिशा में बढ़ा और बिना किसी संघर्ष तथा युद्ध के उसने फ्रांस के राजसिंहासन पर अधिकार कर लिया। किसी पक्ष से एक भी गोली नहीं चलाई गई और न एक बूंद रक्त ही गिराया गया। तिस पर भी वह पुन: फ्रांस का शासक बन गया! उसने ऐल्बा के द्वीप में १० मास तक शासन किया था। इसके पश्चात् वह १२०० साथियों के साथ उस अँगरेज़ी जहाज़ की दृष्टि बचा कर, जो उसकी रक्षा के लिये नियत था, फ्रांस में आ गया और शासन के कार्य में संलग्न हुआ। जो सेना उसको रोकने के लिये भेजी गई थी वह उसके आकर्षण से उसकी ओर खिंच गई तथा कुछ ही क्षण में उसके पक्ष में आ गई। जब पाँचवें सैन्यदल के सैनिक लाफ्रे (Laffray) के संकुचित मार्ग को रोक कर बैठ गये तो नेपोलियन उनके बीच में आ गया और भूरे रंग के कोट को खोल कर बोला, 'सैनिको, तुम गोली चला सकते हो। क्या तुम नहीं पहिचानते कि मैं तुम्हारा सम्राट हूं? क्या मैं तुम्हारा पुराना सेनाध्यक्ष नहीं हूं? मैं अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिये नहीं आया हूं। पेरिस के शासन के जो सबसे योग्य ४५ व्यक्ति हैं उन्होंने मुझे ऐल्बा से बुलाया है और यूरोप की जो तीन सबसे बड़ी शक्तियाँ हैं वे मेरे लौटने के पक्ष में हैं।" बोनापार्ट का मार्मिक भाषण काम कर गया। सैनिक उसका मार्ग छोड़ कर 'सम्राट की जय' तथा 'नेपोलियन की जय' पुकारने लगे। जैसे जैसे वह पेरिस की ओर बढ़ता था वैसे वैसे उसके सैनिकों तथा कृषक साथियों की संख्या बढ़ती जाती थी यहाँ तक कि वहाँ पहुँचते पहुँचते एक सेना एकत्रित हो गई। मार्शल 'ने' जो "वीरों में सबसे वीर था" और जिसने अट्ठारहवें लूई की अधीनता स्वीकार करके यह वचन दिया था कि वह नेपोलियन को एक लोहे के पिंजड़े में बन्द करके ऐल्बा से पेरिस लायेगा, छ: सहस्र सैनिकों के साथ उसके पक्ष में आ गया! दूसरे मार्शल और पदाधिकारी भी उसकी जय पुकारने लगे। अट्ठारहवां लूई, जिसने विधान-मण्डल को यह वचन दिया था कि वह अपने सिंहासन की सुरक्षा में प्राणों की बाज़ी लगा देगा, बेल्जियम की दिशा में भागता नज़र आया।

ऐल्बा द्वीप से लौटना

नेपोलियन के जादू और उसके व्यक्तिगत आकर्षण के अतिरिक्त उसके सफल होने के कुछ और भी महत्वपूर्ण कारण थे। इसमें सन्देह नहीं कि अट्ठारहवें लूई ने राजसिंहासन प्राप्त करने के बाद एक घोषणापत्र प्रकाशित किया था जिसमें उसने क्रान्ति के समय में मिली हुई विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रताओं का समर्थन किया था

तथा इस बात का वचन भी दिया था कि वह फ्रांस में संवैधानिक ढंग पर सीमित राजसत्ता स्थापित करेगा, परन्तु जो कुछ वह कह रहा था उस पर बहुत कम व्यक्तियों को विश्वास था। मित्र राष्ट्रों का भी यह उद्देश्य कदापि न था कि क्रान्ति के उत्तम परिणामों को एक साथ हटा दिया जाय तथा घड़ी की सुई को ठीक उसी स्थान पर कर दिया जाय जहाँ वह चौदहवें तथा पंद्रहवें लूई के शासनकालों में थी। इसके प्रतिकूल कुछ बातें ऐसी थीं जिनसे नैपोलियन के लौटने तथा उसके पुन: राजसिंहासन पर बैठने में अधिक सहायता मिली। उदाहरण के लिये, मित्र राष्ट्रों में पारस्परिक द्वेष था। अतएव वे नैपोलियन के साम्राज्य को विभाजित करने तथा अन्य विषयों में एक मत न हो सके थे। उन्होंने उस धन को भी ठीक प्रकार से न दिया था जो नैपोलियन के व्यय करने के लिये स्वीकृत किया गया था। भागे हुये कुलीन तथा पादरी लौट आये थे और फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था (Ancion regime) को पुन: स्थापित करने में प्रयत्नशील थे। नैपोलियन की सेना में प्रकट रूप से कमी कर दी गई थी तथा उसका अपमान भी किया गया था। कृषकों को भय था कि उनकी भूमि पर पुन: दीर्घकालीन ज़मींदारों तथा जागीरदारों को अधिकार दे दिया जायेगा। अट्ठारहवाँ लूई स्वयं वृद्ध था और उसे गठिया का रोग भी था। फ्रांस के बहुत कम निवासी ऐसे थे जो उसे हृदय से चाहते हों अथवा जिन्होंने कभी भी यह विचार किया हो कि वह पुन: राजसिंहासन प्राप्त कर सकेगा। इस प्रकार की बातों से नैपोलियन को दूसरी बार सिंहासन प्राप्त करने में पर्याप्त सहायता मिली।

सौ दिन का संघर्ष
मार्च-जून, १८१५ ई०

नैपोलियन जैसे बुद्धिमान तथा दूरदर्शी व्यक्ति ने यह तुरंत निश्चित कर लिया कि उसे क्या करना है। सबसे प्रथम उसे फ्रांसीसियों के हृदयों में संवैधानिक शासक की स्थिति से स्थान प्राप्त करना था। इसके बिना उसका काम नहीं चल सकता था। क्रांति के सबसे श्रेष्ठ उपहार को यह सिद्ध करना था कि वह निरंकुश शासन स्थापित न करके क़ानून के बंधन में आबद्ध रहेगा और वह उन विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रताओं को अक्षुण्ण रक्खेगा जो फ्रांस ने बलिदानों के पश्चात् प्राप्त की थीं। इसके पश्चात् उसे मित्र राष्ट्रों से मोर्चा लेना था। पेरिस लौटकर उसने तुरन्त यह घोषणा प्रकाशित की कि "वह इसलिये आया है कि लौट आने वाले कुलीनों के अत्याचारों से फ्रांस की रक्षा कर सके, कृषकों के अधिकार में उनकी भूमि बनाये रख सके, सन् १७८९ ई० में प्राप्त किये गये अधिकारों को उन अल्पसंख्यक लोगों के विरुद्ध क़ायम रख सके जो इस बात के प्रयत्नशील हैं कि जातिगत विशेष अधिकारों तथा जागीरदारी का भार पुन: स्थापित कर दिया जाय।" उसने यह भी बतलाया कि केवल वही कुटुम्ब जिसको क्रान्ति के द्वारा राजसिंहासन प्राप्त

हुआ है क्रांति के सामाजिक सुधारों को सुरक्षित रख सकता है। नैपोलियन बोनापार्ट ने उक्त घोषणा के द्वारा इस बात का भी वचन दिया कि वह युद्ध और साम्राज्य विस्तार से दूर रहेगा, संवैधानिक शासक की स्थिति में शासन करेगा तथा अपने पुत्र के लिए संवैधानिक शासन ही छोड़ जायेगा। इस घोषणा के अनुसार नैपोलियन ने एक संविधान तैयार कराया और उसके लिये बहुमत से सार्वजनिक स्वीकृति उपलब्ध कर ली। परन्तु सब लोग जानते थे कि फ्रांस के भाग का निर्णय युद्ध पर निर्भर है। यदि बोनापार्ट वाटरलू के युद्ध में सफल होकर लौटता तो अधिक सम्भव था कि वह उपरोक्त संविधान को परिवर्तित कर देता।

इसके पश्चात् नैपोलियन ने अपना ध्यान बेल्जियम की ओर आकर्षित किया, जहां मित्र राष्ट्रों ने सेनायें एकत्रित कर ली थीं। वास्तव में वह युद्ध की आवश्यकताओं की ओर से कभी भी निश्चिन्त नहीं हुआ था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि भावी युद्ध में कोई उसका साथी न था। परन्तु फ्रांस के जो बन्दी रूस तथा अन्य देशों से लौटे थे उन पर वह पूरा भरोसा कर सकता था। इसके अतिरिक्त उसका एक स्वामिभक्त मित्र मूरा था जो नेपिल्स में शासन कर रहा था। उसने नैपोलियन की सहायता के लिये एक सेना तैयार कर ली थी और इटैली के निवासियों से भी उसकी सहायता के लिये प्रार्थना की थी। मित्र राष्ट्रों ने सर्वप्रथम नैपोलियन के विरुद्ध एक आदेश प्रकाशित किया। उनकी दृष्टि में वह "संसार की शांति और व्यवस्था का शत्रु और अपहरण करने वाला था।" इसके पश्चात् उन्होंने इस बात का संकल्प किया कि वे अपनी सेनाओं को उस समय तक युद्धक्षेत्र में बनाये रक्खेंगे जब तक "बोनापार्ट अधिक संकट उपस्थित करने के लिये पूर्ण रूप से असमर्थ न बना दिया जाय।" इस प्रकार के संकल्पों तथा घोषणाओं की चिन्ता न करके बोनापार्ट ने १२ जून को अपनी सेना के साथ, जिसकी संख्या एक लाख बीस सहस्र थी, युद्धक्षेत्र के लिये कूच किया। उसे दो सेनाओं का सामना करना था। एक सेना वेलिंगटन की कमान में थी। इसमें अंगरेजों के अतिरिक्त हालैंड, बेल्जियम एवं जर्मनी के सैनिक भी सम्मिलित थे। दूसरी सेना प्रशा के सैनिकों की थी। उसका सेनापति ब्लूचर था। कुल मिलाकर मित्र राष्ट्रों की सेना ८८ लाख थी। नैपोलियन का यह प्रयत्न था कि उपरोक्त सेनाओं के एक स्थान पर एकत्रित होने के पूर्व ही उन पर टूट पड़े। परन्तु उसने बहुत सा बहुमूल्य समय नष्ट कर दिया। सम्भव है कि इसका कारण यह रहा हो कि उसका स्वास्थ्य अब पहले की तरह संतोषजनक न था। उसने १६ जून को ब्लूचर को लेनी (Ligny) के क्षेत्र में इस प्रकार परास्त किया कि उसे भागते ही बना। उसी दिन मार्शल 'ने'

लीनी तथा कात्रब्रा

(Ney) ने कात्रब्रा (Quatre-Bras) के स्थान पर सम्पूर्ण शक्ति से वेलिंगटन का सामना किया। फल यह हुआ कि अंगरेज़ सेनापति अपने समस्त दलों को एक स्थान पर एकत्रित न कर सका। नैपोलियन ने उस दिन जिस विद्युत गति तथा बुद्धिमत्ता से शत्रु की सौ मील की पंक्ति पर आक्रमण किया था उसके सम्बन्ध में वेलिंगटन का मत था कि आक्रमण इतनी तीव्र गति तथा बुद्धिमानी से किया गया था कि उसे हम अत्यन्त उच्च श्रेणी का काम कह सकते हैं।

मित्र राष्ट्रों की युद्ध पंक्ति लगभग सौ मील की दूरी में ब्रूसेल्ज़ (Brussels) नगर से घैंट (Ghent) नगर तक फैली हुई थी। इसके पूर्वीय भाग में ब्लूचर तथा पश्चिमी भाग में वेलिंगटन था। नैपोलियन ने इस पंक्ति के मध्य भाग पर आक्रमण करके उसे दो भागों में विभाजित करने का प्रयत्न किया। उसका विचार था कि ऐसा करने के पश्चात् वह दोनों भागों को सरलता से परास्त करने में सफल हो सकेगा। परन्तु उसे सफलता न मिली। १७ जून को वह वेलिंगटन का सामना करने के विचार से उत्तर-पश्चिम की दिशा में बढ़ा। वह सोचता था कि ब्लूचर बहुत दूर चला गया है, और उसके लौटने के पूर्व वह अंगरेज़ सेनापति को परास्त करने में सफल हो जायेगा, किन्तु ऐसा न हुआ। १८ तारीख़ को रविवार के दिन वाटरलू (Waterloo) के निकट उसका सामना शत्रु से हुआ। प्रारम्भ में दोनों दलों की ओर लगभग बराबर सेना थी। परन्तु फ्रांस के सम्राट ने पहले की भांति प्रभात का समय व्यर्थ खो दिया। अतएव युद्ध दोपहर से पहले प्रारम्भ न हो सका। इस प्रकार युद्ध के निर्णय के पूर्व ब्लूचर को लौटने का अवसर प्राप्त हो गया। मित्र राष्ट्रों की सेनायें फ्रांसीसी गोलाबारी और सवारों के आक्रमण के सम्मुख अविचल खड़ी रहीं। अन्ततः नैपोलियन ने अपनी रक्षित सेना से काम लिया। परन्तु अब क्या हो सकता था? उसकी सेना के पैर उखड़ते दिखाई दिये। चार बजे के निकट ब्लूचर भी अपनी सेना के साथ आगया। उसके आने से युद्ध का रंग पूर्णतया बदल गया। नैपोलियन बुरी तरह परास्त हुआ, और वह अपनी शेष सेना के साथ भागता दिखाई दिया। उसने अपना भरसक प्रयत्न कर लिया था। संघर्ष के चार दिनों में उसने २० घंटों से भी कम विश्राम किया था और ३८ घंटों से अधिक उसे घोड़े की सवारी करनी पड़ी थी।

वाटरलू का युद्ध
१८ जून, १८१५ ई०

वाटरलू का युद्ध नैपोलियन के जीवन का साठवाँ तथा अन्तिम युद्ध था। उसका न केवल उस पर वरन् समस्त यूरोप पर गहरा प्रभाव पड़ा। उसकी गणना संसार के सबसे अधिक निर्णीत युद्धों में होती है। इससे यदि नैपोलियन का

भाग्य नक्षत्र सदा के लिये डूब गया तो ब्रिटिश द्वीपसमूह और वेलिंगटन की प्रतिष्ठा में चार चाँद लग गये। यूरोप के प्रतिक्रियावादियों को इसका अवसर मिला कि वे अपने सिद्धान्तों को सफल बनायें। इसके सम्बन्ध में नैपोलियन ने अपनी आत्म कहानी में लिखा था,—"वाटरलू का युद्ध यूरोप की भिन्न प्रकार की स्वतन्त्रता के लिये उतना ही भयानक प्रमाणित होगा जितना कि रोम की स्वतन्त्रताओं के लिये फ़िलिपो का युद्ध प्रमाणित हुआ था।" वास्तव में नैपोलियन का विचार कुछ काल के लिये ठीक सिद्ध हुआ। परन्तु प्रतिक्रियावादी शासकों के भरसक प्रयत्न करने पर भी वे राष्ट्रीयता, एकीकरण और स्वतन्त्रता के सिद्धान्तों के प्रबल प्रवाह को अधिक समय तक अवरुद्ध न कर सके।
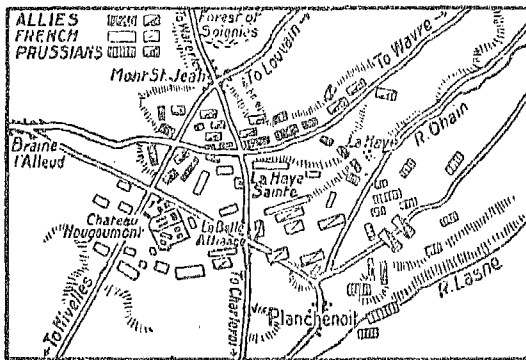
वाटरलू का रणक्षेत्र

२१ जून को नैपोलियन अस्तव्यस्त दशा में पेरिस लौटकर आया। उसी दिन विधान-मण्डल ने शासन का सारा काम अपने हाथों में ले लिया। दूसरे दिन नैपोलियन ने शासन अधिकार को अपने पुत्र के पक्ष में त्याग दिया। अमेरिका जाने के विचार से वह पश्चिमी समुद्र तट की ओर चला गया और रोशफ़ोर (Rochefort) के बन्दरगाह में स्वयं को एक अंगरेज़ी जहाज़ के कप्तान को सुपुर्द कर दिया।

नैपोलियन का द्वितीय निर्वासन

वह उसे इंग्लैंड ले गया और वहां से वह दक्षिणी अटलांटिक के सेंट हेलेना नाम के टापू में निर्वासित कर दिया गया। यह उसका द्वितीय निष्कासन था। ऐल्बा से वह लौट आया था, परन्तु सेंट हेलेना से लौटना असंभव था। उस पर दृष्टि रखने के लिये इंग्लैंड, फ्रांस, रूस और आस्ट्रिया के प्रतिनिधि वहां नियुक्त कर दिये गये थे। उपरोक्त द्वीप में ५ मई सन् १८२१ ई० को उसकी मृत्यु हुई। इस समय उसकी आयु ५१ वर्ष ६ मास थी।

गत सौ दिनों की घटनाओं ने यूरोप की शक्तियों के दृष्टिकोण को बदल दिया था। नैपोलियन के प्रथम निर्वासन के पश्चात् मित्र राष्ट्रों ने पेरिस की प्रथम संधि द्वारा फ्रांस के भाग्य का निर्णय किया था (३० मई सन् १८१४ ई०)। यह निर्णय अत्यंत उचित था। उनका मत था कि गत १५ वर्षों के युद्ध और रक्तपात तथा ध्वंसकारी कार्यों का उत्तरदायित्व स्वयं नैपोलियन पर था, न कि फ्रांस पर। अतएव उन्होंने फ्रांस के लिये कोई अनुचित प्रस्ताव न किया था। उन्होंने न कोई युद्ध का हर्जाना ही नियत किया था और न इसकी आवश्यकता ही अनुभव की थी कि मित्र राष्ट्रों की सेनायें कुछ काल के लिये फ्रांस में पड़ी रहें। इस दृष्टिकोण के लिये तॅलिरॅंद ने विशेष प्रयत्न किया था। वह फ्रांस की ओर से वायेना की कांग्रेस में सम्मिलित हुआ था। ऐसा प्रतीत होता था कि उसके नेतृत्व में फ्रांस को शीघ्र ही यूरोप के अन्य राष्ट्रों के बराबर स्थान प्राप्त हो जायेगा। किन्तु सौ दिनों की घटनाओं को देख कर मित्र राष्ट्रों का मत बदल गया था। जिस हर्ष और उत्साह से फ्रांस के निवासियों ने नैपोलियन का स्वागत किया था और बाद को भी उसका उत्साह वर्धन किया था, उसे देख कर मित्र राष्ट्र इस निर्णय पर पहुंचे कि फ्रांस के सम्राट के साथ साथ फ्रांस के निवासियों को भी दंड दिया जाय। अतएव वाटरलू के युद्ध के पश्चात् उन्होंने पेरिस की दूसरी संधि से, जो २० नवम्बर सन् १८१५ ई० को की गई, उस पर ७० करोड़ फ्रैंक युद्ध का हर्जाना नियत किया और यह निर्णय किया कि उसके वसूल न होने तक वेलिंगटन डेढ़ लाख सैना के साथ फ्रांस के उत्तरी-पूर्वी दुर्गों में पड़ा रहेगा। नैपोलियन बोनापार्ट ने विद्या और कला की सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शनीय वस्तुओं को जिन देशों से एकत्रित किया था वे सब उन्हें लौटा दी गईं। प्रथम संधि से फ्रांस के लिये सन् १७९२ ई० की सीमायें निश्चित की गई थीं, किन्तु दूसरी संधि से उसके लिये केवल सन् १७८९ ई० की सीमायें छोड़ी गईं।

फ्रांस के भाग्य का निर्णय

फ्रांस के सिंहासन पर कौन बिठलाया जाय? इस प्रश्न पर काफ़ी विचार किया गया। नैपोलियन के प्रथम निर्वासन के पश्चात् भी इस प्रश्न पर बहुत विचार किया गया था। कुछ लोगों ने नैपोलियन के पुत्र के पक्ष में और कुछ ने उसके मार्शलों के पक्ष में राय दी थी। पेरिस के सम्मेलन में नैपोलियन के पुत्र तथा ऑर्लियंज़ वंश के अधिकारों पर काफ़ी विचार किया गया और अन्ततः निर्णय अट्ठारहवें लुई के पक्ष में किया गया। फ्रांस की सीमाओं के सम्बन्ध में मित्र राष्ट्रों ने काफ़ी दिलचस्पी ली। जर्मनी के प्रतिनिधियों ने इस बात पर काफ़ी ज़ोर दिया कि उसके पूर्वी भाग में से कुछ भाग उसे दे दिया जाय, परन्तु रूस और ब्रिटिश द्वीप-समूह के प्रतिनिधि इसके विरुद्ध थे। रूस के ज़ार सिकन्दर का महत्व इस अवसर पर

अधिक बढ़ा हुआ था। उसने विशेष रूप से जर्मनी के प्रतिनिधियों का विरोध किया। उसका विचार था उसके देश के उत्कर्ष के लिये यह आवश्यक था कि पश्चिमी यूरोप में फ्रांस की सीमायें तथा शक्ति अक्षुण्ण रक्खी जांय। सारांश यह कि साधारण कमी के साथ फ्रांस की सीमायें वहीं निश्चित कर दी गईं जो क्रान्ति के प्रारम्भ होने के पूर्व थीं।

जिन राष्ट्रों ने फ्रांस का विरोध किया था उनकी इच्छा थी कि क्रांति का प्रवाह दूसरे देशों में न फैले तथा "स्वतन्त्रता, समानता व बान्धुत्व" और गणतंत्रीय सिद्धान्तों की गूंज अन्य देशों के निवासियों के कानों में न पड़े। सन् १८१४ ई० तथा सन् १८१५ ई० में यूरोप के मन्त्री तथा राजनीतिवेत्ता उस तूफ़ान से लाभ उठाने के लिये बिल्कुल तैयार न थे जो यूरोप में विगत २५ वर्षों से आच्छादित था। किन्तु उनके प्रयत्नों के अतिरिक्त भी यूरोप का पुनरुत्थान इन्हीं तिथियों से प्रारम्भ हुआ।

परिशिष्ट

परिशिष्ट

(१) विषय-प्रवेश

ऐतिहासिक निरन्तरता :

सरिता के समान इसका स्वरूप भी स्थायी है। इसका महत्व बढ़ता जाता है। टेनिसन की दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :—

"For men may come and men may go,
But I go on for ever."

ऐतिहासिक विभाजन :

परम आवश्यक तथा सुविधाजनक हैं। युग परिवर्तन इतने धीरे होता है कि उस समय रहने वालों को उसका पता नहीं चलता। इतिहास के तीन प्रधान युग हैं,—

(अ) प्राचीन युग
(ब) मध्ययुग
(स) अर्वाचीन युग

ऐतिहासिक विभाजन में विषय में दो स्मरणीय बातें,—

(अ) भिन्न युगों को विशेष तिथियों से सम्बद्ध न करना चाहिये।
(ब) किसी एक विशेषता को अधिक महत्व देकर अन्य विशेषताओं की उपेक्षा न करनी चाहिये।

यूरोपीय इतिहास के तीन बड़े युग :

(i) प्राचीन युग :

इस युग में यूनानी तथा रोमन सभ्यताओं का स्थान प्रधान है। इससे भी पहले सभ्यता की किरणें क्रीट में प्रस्फुटित हुई थीं। यूनान में सर्व-प्रथम नगर-राज्यों का उदय हुआ। इनका शासन प्रजातन्त्रीय आधार पर होता था। स्पार्टा तथा एथेन्ज सबसे प्रसिद्ध राज्य थे। प्रथम सैनिक चमत्कार के लिए और द्वितीय विद्या और कला के लिए प्रसिद्ध था।

रोमन साम्राज्य में किसी समय इंग्लैंड, फ्रांस, स्पेन, इटैली, बालकन प्रायद्वीप, एशियाई कोचक, सिरिया तथा अफ्रीका का उत्तरी भाग सम्मिलित

थे। प्रमुख उद्यम कृषि-व्यापार तथा कलाकौशल में भी प्रवीण थे। इतिहास, ज्योतिष, नाटक एवं दर्शन पर पुस्तकें—क्रीड़ा तथा व्यायाम के प्रेमी।

(ii) मध्ययुग :

जर्मन जातियों का प्रसार—होली रोमन सम्राट तथा पोप की दो महान् शक्तियां थीं।

होली रोमन साम्राज्य में उन्नति के चरम सीमा के समय जर्मनी, नैदरलैंड्ज़, बोहीमिया, आस्ट्रिया, बर्गण्डी तथा इटैली के अधिकतर देश सम्मिलित थे। होली रोमन सम्राट का निर्वाचन होता था। अधिकतर हैप्सबर्ग वंश को इसका गौरव प्राप्त हुआ। सन् १८०६ ई० में उसका अन्त नैपोलियन बोनापार्ट के हाथ से हुआ।

पोप रोम में रहता था। कैथोलिकों का धर्मगुरु। सोलहवीं शताब्दी से पूर्व सर्व शक्तिमान्। सम्राटों पर भी पूर्ण प्रभुत्व।

मध्ययुग में तुर्कों का भी उत्कर्ष हुआ। उनके विरुद्ध पोप और होली रोमन सम्राट ने धर्मयुद्ध किये।

(iii) अर्वाचीन युग :

इसका प्रारम्भ सोलहवीं शताब्दी से माना गया है। इसके लक्षण,—(अ) सांस्कृतिक पुनरुत्थान (ब) आविष्कार (स) नवीन मार्गों की खोज (द) धर्म-सुधार (र) निरंकुश शासनों का पतन।

निरंकुश शासनों के विरुद्ध आन्दोलन :

इसमें जनता ने युद्ध का सहारा लिया। सर्वप्रथम युद्ध का नारा हालैंड तथा इंग्लैंड में ऊँचा किया गया फिर अमेरिका का स्वाधीनता युद्ध तथा फ्रांस का राज्यक्रांति घटित हुये। प्रथम देश के निवासियों ने स्पेन की महाशक्ति के विरुद्ध सफलता पाकर संधानीय शासन स्थापित किया। इंग्लैंड में 'गौरवपूर्ण क्रान्ति' के उपरान्त वैधानिक राजतन्त्र की स्थापना हुई। अमेरिका के उपनिवेशों ने इंग्लैंड के विरुद्ध युद्ध करके संयुक्त राष्ट्र की नींव डाली। फ्रांस में बूरबन वंश के निरंकुश शासन का पतन हुआ तथा गण-राज्य की स्थापना की गई।

(२) सन् १७८९ ई० में यूरोप की राजनैतिक व सामाजिक अवस्था

होली रोमन साम्राज्य :

इसमें ३५० से अधिक राज्य तथा ५० स्वतन्त्र नगर सम्मिलित थे। प्रत्येक राज्य में पृथक शासक था। कहने को वे होली रोमन सम्राट के अधीन थे परन्तु वास्तव में वे स्वतन्त्र थे। होली रोमन सम्राट विश्वपति कहलाता

था। उसका निर्वाचन सात प्रतिष्ठित शासकों द्वारा होता था। अधिकतर इस पद पर हैप्सबर्ग वंश के शासक आसीन हुये।

फ्रांस :

सीमायें लगभग वही थीं जो वर्तमान काल में हैं। सम्राट सोलहवाँ लूई—उसकी स्त्री मेरी एंतोइनेत—शासन निरंकुश—निवासियों के दो वर्ग—प्रथम में पादरी तथा कुलीन सम्मिलित थे—समाज में इनका श्रेष्ठ स्थान—शासन पर अधिक प्रभाव। सेना के उच्च पद पाते थे परन्तु करों से उन्मुक्त थे। दूसरे वर्ग में मध्यम श्रेणी के लोग तथा कृषक थे। कृषक शासन व कुलीनों के अत्याचार तथा करों के बोझ से दब रहे थे—महान् आर्थिक संकट।

आस्ट्रिया :

हैप्सबर्ग वंश का शासन—साम्राज्य में आस्ट्रिया के अतिरिक्त बोहीमिया, इस्ट्रीरिया, केरिन्थिया, कारनियोला, तिरोल तथा बेल्जियम सम्मिलित थे—हंग्री तथा लोम्बार्डी भी अधीन देश थे—सम्राट जोज़ेफ़ ने संगठन तथा शक्तिशाली शासन स्थापित करने का प्रयत्न किया, पर असफलता मिली—बेल्जियम में भी असफल रहा—ल्योपोल्ड उक्त देश में अधिक सफल हुआ।

प्रशा :

राज्य में कई अन्य देश भी सम्मिलित थे—आस्ट्रिया से वैमनस्य—दीर्घ काल तक होयेनज़ोलर्न वंश का शासन—फ्रेडरिक महान् द्वारा सैनिक शक्ति में वृद्धि—आस्ट्रिया से वैमनस्य—होयेनज़ोलर्न सम्राटों का संगठन का प्रयत्न—आस्ट्रिया तथा रूस से मिल कर पोलैंड के विभाजन में भाग।

ब्रिटिश द्वीपसमूह :

आदर्श लोकतन्त्र राज्य—व्यावसायिक क्रांति—राष्ट्रीय आय में वृद्धि—१६४२ ई० व १६८८ ई० की क्रान्तियाँ—तत्पश्चात् वैधानिक शासन की स्थापना।

रूस :

सभ्यता और संस्कृति में पीछे—पीटर महान् तथा कैथरिन द्वितीय प्रसिद्ध शासक—उनके सुधार—रूस की गणना यूरोपियन राज्यों में।

पोलैंड :

बड़ा देश परन्तु शक्तिहीन—भयप्रद पड़ोसी—सम्राट का निर्वाचन—स्वार्थी तथा षड्यंत्रकारी कुलीन।

१७७२	प्रथम विभाजन	पड़ोसी देशों द्वारा
१७९३	द्वितीय विभाजन	
१७९५	तृतीय विभाजन	

स्पेन :

बड़ा देश—अट्ठारहवीं शताब्दी में पुनः प्रभावशाली—बूरबन वंश

के शासक—उक्त शताब्दी में इंग्लैंड के विरुद्ध फ्रांस का सहायक।

इटैली :

संगठन का अभाव—कई राज्यों में विभाजित।

नेपिल्ज़ तथा सिसली :

(दो सिसली) धुर दक्षिण में—बूरबन शासक।

पोप का राज्य :

मध्य भाग में।

टस्कनी :

ड्यूक का शासन—पोप के राज्य के पश्चिम में।

पारमा : }
मेडेना : } छोटे राज्य
लुक्का : }

वेनिस व जेनोआ :

प्राचीन गण-राज्य

पीडमोंट व सेवाय :

सार्डिनिया के बादशाह के अधीन।

लोम्बार्डी :

आस्ट्रिया के अधीन।

अन्य राज्य :

हालैंड, स्वीडन, स्विटज़रलैंड व तुर्की आदि।

शासन प्रणाली :

साधारणतया निरंकुश शासन—जागीरदारी की प्रथा—कुलीनवर्ग शक्तिशाली—सामान्य जनता चेतनाहीन—राष्ट्रीय संगठन की आवश्यकता—अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार का स्तर गिरा हुआ—शक्ति-सन्तुलन के सिद्धान्त से अनुचित लाभ उठाने का प्रयत्न—शक्तिहीन देशों पर आघात—मेरिया थैरिसा तथा पोलैंड के उदाहरण।

कृषि तथा व्यापार :

ग्रामों तथा छोटे कस्बों की सामान्य जनता का व्यवसाय कृषि—छोटे खेत—प्राचीन प्रणाली—फसल परिवर्तन का अभाव—पशुओं की दशा शोचनीय—कृषकों की दशा दयनीय—करों का बोझ—बेगार—जन साधारण अधिकारों से हीन।

मध्यवर्ग का व्यवसाय व्यापार—आर्थिक दशा सुन्दर—व्यापारिक समितियाँ (Guilds)—मशीनों का अभाव—व्यावसायिक क्रांति का प्रारम्भ—असह्य कर।

सामाजिक दशा :

अधिकतर मनुष्य ग्राम निवासी—समाज के दो प्रधान वर्ग—कुलीन तथा कृषक—कुलीनों का जीवन सुखमय तथा भोगविलास की सामग्री से पूर्ण—कृषकों की दशा शोचनीय—प्रथम करों से वंचित—द्वितीय पर उनका असह्य भार—कार्डिनल दी रोजाँ—मध्यम श्रेणी के मनुष्यों में व्यापारी, दस्तकार, डाक्टर तथा प्रोफेसर आदि सम्मिलित थे पर इनका कोई विशेष वर्ग न था—इनमें व्यापारी सबसे अधिक धनी—कृषक धनहीन तथा अशिक्षित—जीवन कष्टमय।

(३) फ्रांस की राज्यक्रांति के जन्मदाता—दार्शनिक तथा लेखक

सत्रहवीं शताब्दी बौद्धिक जागृति :

सत्रहवीं और अट्ठारहवीं शताब्दियों में बौद्धिक क्रान्ति (Intellectual Revolution)—प्राचीन निराधार सिद्धान्तों तथा ढकोसलों की उपेक्षा—वास्तविकता को समझने का प्रयत्न—प्रयोगशालायें—रूसो तथा वोल्तेयर आदि दार्शनिक—विद्वानों के परिषद्—विभिन्न दिशाओं में सुधार का प्रयत्न—फ्रांसीसी क्रान्ति के जन्मदाता।

वोल्तेयर :

फ्रांस का महान् दार्शनिक—चर्च उसका प्रमुख शत्रु—बन्दीगृह तथा निर्वासन—जर्मनी तथा रूस में जीवन—प्रगतिशील इतिहासकार—इतिहास के रूप में परिवर्तन—अगणित लेख—उसका आदर्श सर्वांगी सुधार—उसके क्रान्तिकारी सिद्धान्त—'बदनाम चीज' (l'Infame)।

दिदरो तथा आलेम्बियर :

'विश्व-कोष' के लेखक—इसमें भिन्न लेखकों का योग—विभिन्न विषय—समाज पर विशेष प्रभाव।

मौन्टस्क्यू :

फ्रांस का महान् विद्वान् तथा तत्ववेत्ता—उच्च कुल में जन्म—संसार का पर्याप्त अनुभव—साधारण प्रकार से शासन व चर्च की आलोचना—प्रधान सिद्धान्त शासन के विभिन्न विभागों की पृथक्ता—प्रधान पुस्तक 'दि स्प्रिट आफ् दि लाज' (The Spirit of the Laws)।

रूसो :

इस काल के दार्शनिकों में सर्वश्रेष्ठ—भ्रमण तथा यात्रा का प्रेमी—प्रकृति का अद्वितीय प्रेमी—छायावाद का अग्रगामी नेता—उसका नारा 'प्रकृति की ओर चलो'—दो प्रसिद्ध निबन्ध (i) Discourse on Arts and Sciences (ii) Original of Inequality Among Men—प्रधान पुस्तक Social Contract—उसका महत्व—क्रान्ति का जन्मदाता—

'मनुष्य स्वाधीन अवस्था में जन्म लेता है किन्तु प्रत्येक अवस्था में पराधीन जीवन व्यतीत करता है'—शिक्षा प्रणाली पर विचार—रूसो की महानता।

केने और तूर्गो :

निर्बाधावादी (Physiocrats)—देश की प्राकृतिक शक्ति का महत्व—व्यापारी वर्ग तथा दस्तकारों की हीनता—उनका नारा 'सबको इच्छानुसार कार्य करने दो' (Laissez-faire)।

अन्य लेखक :

नाटककार तथा इतिहासकार आदि—रेनाल-माबली।

(४) फ्रांस की राज्यक्रान्ति के कर्णधार

क्रान्तिकारी नाटक के भाग :

१७७४-८६	*प्रारम्भ :*	शासन व समाज सुधार का प्रयत्न।
१७८६	*प्रथम अंक :*	स्टेट्स जनरल के आगमन से राष्ट्रीय संविधान-सभा के पेरिस में आने तक—बैस्तील पर आक्रमण—सम्राट का पेरिस में लाया जाना।
१७८६-६१	*दूसरा अंक :*	राष्ट्रीय संविधान सभा के सुधार—लूई के भागने का प्रयत्न।
१७६१	*तीसरा अंक :*	२१ जून से १० अगस्त तक—गरम दल का प्रभाव—विदेशों से युद्ध—शाही महल पर आक्रमण।
१७६२-६३	*चौथा अंक :*	प्रसभा की बैठक से जेकोबिन दल के शासन पर अधिकार करने तक—युद्ध—लूई के भाग्य का निर्णय—पादरियों की समस्या।
१७६३-६४	*पाँचवा अंक :*	जेकोबिन दल के शासन सूत्र हाथ में लेने से रोबेस्पेयर के पतन तक वध व हत्यायें।
१७६४-६५	*अन्त :*	जेकोबिन दल के विरुद्ध प्रतिक्रिया—संचालक वर्ग का आगमन।

कर्णधार :

१—संविधानीय राजतन्त्र के समर्थक—

(अ) सीएयेज

(ब) मीराबो

(स) लाफ़ेयत

२—गणतन्त्र के समर्थक—

(अ) ब्रीसो

(ब) दाँतों

(स) मारा
(द) रोबेस्पेयर

सीएयेज :

मध्यम श्रेणी में जन्म—सर्वसाधारण की ओर से स्टेट्स जनरल का सदस्य—विचारशील राजनीतिज्ञ—संविधान निर्माता—शासन व समाज सुधार का महत्व—उसकी प्रसिद्ध पुस्तिका—राष्ट्रीय महासभा का सभापति—क्रांति का पक्षपाती परन्तु राजतन्त्र का समर्थक—दीनों का सहायक पर उनके मतदान के प्रतिकूल—मीराबो के बाद लूई का सम्मतिदाता—सम्राट के वैरिनीज़ से लौटने के पश्चात् सीएयेज़ की उदार नीति का अन्त—तीन वर्ष की उदासीनता। (१७९१-९४)

(१७९५) रोबस्पेयर के पतन पर राजनीति में पुनः अभिरुचि—लोकरक्षा समिति का सदस्य—१७९५ का संविधान बनाने में सहायता—संचालक—नैपोलियन का मित्र—१७९९ का संविधान=कौंसल—१८१५ ई० में देश छोड़ कर जाना—१८३० ई० में लौटना—मृत्यु।

मीराबो :

(१७८९) उच्च वंश में जन्म किन्तु तीसरी श्रेणी का स्टेट्स जनरल में प्रतिनिधित्व—उदार नीति का समर्थक—उसका ध्येय संवैधानिक राजतन्त्र—असाधारण शारीरिक व मानसिक शक्ति—योग्य वक्ता—व्यक्तिगत जीवन दूषित—लूई का सम्मतिदाता—उस से गुप्त सन्धि—उसे सद्मार्ग पर लाने (१७९०) का असफल प्रयत्न—मीराबो की आलोचनात्मक योजना—इसके कारण अपकीर्ति—राष्ट्रीय संविधान-सभा का अध्यक्ष—इसी वर्ष मृत्यु। (१७९१)

लाफेयत :

उच्च वंश में जन्म—वीर तथा प्राणों पर खेल जाने वाला सैनिक—स्वाधीनता का उपासक—अमेरिका के स्वाधीनता युद्ध में भाग—अपने परिवार की चिन्ता न करके वह वहाँ गया और सेनापति की स्थिति में निःशुल्क कार्य किया—वीरता के कार्यों से वाशिंगटन पर प्रभाव।

(१७८९) अमेरिका से लौट कर स्टेट्स जनरल का सदस्य—कुलीन वर्ग का प्रतिनिधित्व—उदार नीति की समर्थक किन्तु किसी मामले में तेज़ी से आगे बढ़ने के विरुद्ध—राष्ट्रीय रक्षादल का अध्यक्ष—उसका अत्यधिक महत्व—लूई के भागने की योजना में कदाचित् उसका योग—बाई से मिल कर पेरिस (१७९१) में सर्वसाधारण के आन्दोलन का दमन—पूर्वीय सेना का अध्यक्ष—उसका (१७९२) देशद्रोह—प्रशा तथा आस्ट्रिया का बन्दी—पाँच वर्ष बाद लौटा—नैपोलियन की सहायता करने से इन्कार (१७९९)—दूसरी बार अमेरिका जाना—जौलाई (१८२४) मास की क्रान्ति में योग—लूई फिलिप का सहायक—मृत्यु। (१८३०)

ब्रीसो :

गणतन्त्रवादी—जिरोंदिन दल का सदस्य—पूर्ण रूप से शिक्षित—विद्या से प्रेम—निःस्वार्थी नेता—प्रसिद्ध सम्पादक—पत्र 'पेट्रियट'—विधान सभा का सदस्य—युद्ध के निर्णय का उत्तरदायी—उसकी नीति कार्यपटुता से परिपूर्ण न थी—कन्वेंशन का सदस्य—जैकोबिनों से संघर्ष—२१ साथियों के साथ गिरफ्तारी—गेलोटीन द्वारा वध—उसका ध्येय संघात्मक (Federal) शासन की स्थापना।

१७९१-९२
१७९३

दाँतों :

जैकोबिन दल का शक्तिशाली स्तम्भ—मध्यम श्रेणी में जन्म—वाद-विवाद तथा भाषण देने में दक्ष—पूर्ण रूप से गणतन्त्रवादी—कार्डीलियर क्लब का प्रभावशाली सदस्य—पैरिस के कम्यून का सदस्य—१० अगस्त के मामले में उसका योग—दुमूरिये को गद्दारी—उसके विषय में दोनों की जांच—एक शास्ता बनने का सन्देह—सितम्बर के हत्याकांड में उसका योग अवश्य था—कन्वेंशन का सदस्य—जिरोंदिनों के पतन पर लोकरक्षा समिति का सदस्य—पतन—उसका शीश भी गेलोटीन द्वारा उतार लिया गया। सच्चा देशभक्त तथा महान् साहस का व्यक्ति।

१७९०
१७९१-९३
१७९४

मारा :

जैकोबिन दल का प्रमुख सदस्य—समाचारपत्र का सम्पादक—मुख्य कार्य सामान्य जनता को भड़काना तथा विरोधियों पर गालियों की बौछार करना—सड़क पर खड़े होकर भाषण देने का शौक—काउंट आव आर्त्वा का खान्दानी चिकित्सक—भौतिक विज्ञान के विषय में अन्वेषण—सितम्बर के हत्याकांड में योग—इस से मुक्ति असम्भव—कन्वेंशन का मेम्बर—जिरोंदिन दल से मुठभेड़—मारा के विरुद्ध मुकद्दमा—निर्दोष—शारलोत कोर्दे द्वारा हत्या—मारा की अन्तिम प्रतिष्ठा।

१७९२

रोबेस्पेयर :

जैकोबिन दल का प्रमुख नेता—मध्यम श्रेणी में जन्म—न्यायाधीश-पद त्याग दिया—कारण मृत्युदण्ड की उपेक्षा—उच्च आदर्श—रूसो का भक्त—सदाचारिता को महत्व देता था—स्टेट्स जनरल तथा संविधान सभा का सदस्य—उग्रवादी—जैकोबिन क्लब का प्रमुख कार्यकर्ता—सर्वसाधारण का प्रधान नेता—१० अगस्त के मामले में उसका हाथ न था—सितम्बर के हत्याकांड के विषय में किसी प्रकार की अनुकूलता न दिखाई—कन्वेंशन का सदस्य—आतंकपूर्ण शासन (Reign of Terror) का प्रधान स्तम्भ—रोबेस्पेयर का ऊंचा आदर्श था—वह भलाई तथा धर्म के आधार पर, रूसो के सिद्धान्तों के अनुसार गण-राज्य स्थापित करना चाहता था। परन्तु इसके

१७५८
१७८९
१७९२
१७९३-९४

१७५१ लिये उसने दोषपूर्ण साधनों का आश्रय लिया—लोक रक्षा समिति का सदस्य
१७६४ —मोर्चों पर शत्रुओं का बलिदान—उसका शीश भी उतार लिया गया।

(५ व ६) फ्रांस की दीर्घकालीन व्यवस्था (*Ancien Regime*)

फ्रांस की राज्यक्रान्ति के कारण :

(अ) शासन के दोष :

निरंकुश तथा पूर्ण रूप से केन्द्रीय शासन—वर्सेल्स की राजसभा के अधीन कार्यसंचालन—उसके पास कार्य की अधिकता—चर्च पर शासन का पूर्ण प्रभाव—स्टेट्स जनरल का सन् १६१४ ई० के पश्चात् कोई अधिवेशन नहीं हुआ था।

शासन की कुव्यवस्था—कई प्रकार के राजनैतिक भाग—धार्मिक भाग—नगरों में कुव्यवस्था—भिन्न प्रकार के माननन्न तथा सिक्के—चुंगी की असन्तोषजनक व्यवस्था—न्यायालयों के दोष।

गैर-कानूनी गिरफ्तारियाँ—बिना नाम के सरकारी वारंट—गैर-कानूनी प्रतिबन्ध।

(ब) सामाजिक दशा (तीन श्रेणियाँ) :

(*i*) पादरी :

दो प्रकार के पादरी—उच्च पादरी भोगविलासी परन्तु कर्तव्यों की ओर से विमुख—कार्डिनल दी रोहाँ का उदाहरण—निम्न पादरियों का कष्ट जीवन परन्तु कम आय—कृषक श्रेणी से सहानुभूति।

(*ii*) अमीर उमरा के विशेषाधिकार :

आमोद प्रमोद का जीवन—आय की अधिकता—वर्सेल्स में रहने की इच्छा—करों के भार से मुक्त—अनिवार्य सैनिक सेवा से मुक्त किन्तु सैनिक पदों पर आसीन—जागीरों के पालने में अभिरुचि—उनके प्रधान अधिकार—कर व नजराने—शिकार व मछली पकड़ने का अधिकार—न्याय करने का अधिकार—आटा चक्की, भट्ठी, शराब खींचने की मशीन आदि।

कुछ अमीर अधिक सम्पन्न न थे—कृषक वर्ग के लिये सहानुभूति—क्रान्ति में भाग।

(*iii*) कृषक तथा मध्यम वर्ग के लोग :

दास-कृषकों का बड़ी सीमा तक अभाव पर कृषकों की दयनीय दशा—करों का असहनीय भार—जुर्माने—कई प्रकार के कर—राजकर, जागीरदार के कर, चर्च के कर—अकाल के समय मौत का शिकार।

मध्यवर्ग की दशा संतोषजनक—उन्नति करने की आकांक्षा—सुधार के इच्छुक—क्रान्ति का नेतृत्व ।

(ग) सेना का असंतोष :

सैनिकों पर दर्शन तथा समाज सुधार के सिद्धान्तों का प्रभाव—कम वेतन तथा बुरा भोजन ।

(द) आर्थिक व्यवस्था :

राजदरबार तथा अठारहवीं शताब्दी के युद्धों के कारण असहनीय राष्ट्रीय ऋण—कर वसूल करने के ठेके—करों का भार कृषकों पर—भिन्न सूबों में अप्रत्यक्ष करों की भिन्नता—सूबों की सरहद पर चुंगी कर ।

(य) दर्शन का प्रभाव :

मौंतस्क्यू, रूसो, वाल्टेयर तथा विश्व-कोष के लेखक आदि—उनके प्रधान सिद्धान्त तथा उनका प्रभाव—मध्यवर्ग पर अधिक प्रभाव—स्वर्ण-युग की आकांक्षा ।

(र) अमेरिका तथा आयरलैंड के उदाहरण :

(ल) तत्कालीन कारण :

सन् १७८७ ई० तक शासन का दिवालिया हो जाना—ऋण की प्राप्ति असम्भव—आर्थिक सुधार की चेष्टा किन्तु असफलता—अमीर उमरा विशेषाधिकार छोड़ने को तैयार न थे—बादशाह ने स्टेट्स जनरल को बुलाने का निर्णय किया ।

(७) दिवालिया शासन का निरंकुश व्यवहार

बूरबन बादशाह :

(अ) चौदहवाँ लूई (१६४३-१७१५)

(ब) पन्द्रहवाँ लूई (१७१५-१७७४)

(स) सोलहवाँ लूई (१७७४-१७९३)—प्रजा के लिये सहानुभूति—दयावान्—दूरदर्शिता तथा दृढ़ संकल्प का अभाव—उस पर अमीरों तथा स्त्री का प्रभाव—मेरी एन्तोयनेत भार के समान ।

सुधार करने का प्रयत्न :

१७७४-७६ (अ) तूर्गो :

सद्भावनाओं से युक्त—निर्हस्तक्षेपी नीति का समर्थक—शान्ति का पुजारी—सुधारों का सुन्दर कार्यक्रम पर उस पर अमल न कर सका—राजतन्त्र का समर्थक—अनाज के व्यापार को बन्धनों से मुक्ति दिलाई—बेगार बन्द की—दस्तकारों की समितियों को बन्द किया ।

१७७६-८१ *(ब) नैकर :*

अर्थमन्त्री—सद्विचारों से परिपूर्ण पर दृढ़ निश्चय का अभाव—उसका सिद्धान्त व्यापार तथा कला को बन्धनों से मुक्त करना—राजकोष की बुरी दशा—ऋण लेकर कार्य चलाया—मेरी एन्तोयनेत ने पदच्युत करा दिया।

१७८३-८७ *(स) कालौन :*

जब सरकारी ऋण बढ़ते बढ़ते ६० करोड़ डालर हो गया तो प्रतिष्ठित व्यक्तियों की सभा बुलाने की राय दी।

दो महान् सभायें :

१७८७ (अ) प्रतिष्ठित व्यक्तियों की सभा (Assembly of Notables)

१७८९ (ब) स्टेट्स जनरल (राष्ट्रीय सभा)—तीन श्रेणियों का प्रतिनिधित्व—पृथक कमरों में अधिवेशन—सर्वसाधारण की पराजय—'के हे'—विभिन्न मांगें।

(८) तूफ़ान का आरम्भ

नवीन स्टेट्स जनरल :

१७८९ वर्सेल्ज में बैठक—प्रसिद्ध सदस्य मीराबो, सीएयेस, रोबेस्पेयर, बारनाव तथा बाई आदि—कार्यक्रम का अभाव—सुधार की योजना का अभाव—सामान्य जनता के प्रतिनिधियों का संघर्ष—टेनिस कोर्ट की शपथ—शाही अधिवेशन—तीनों श्रेणियों का सम्मिलित अधिवेशन—सर्वसाधारण की विजय।

(९) जनता के तूफ़ानी कार्य

सम्राट तथा अमीर उमरा के हृदयों में आतंक—पेरिस तथा वर्सेल्ज में सेना की नियुक्ति—नैकर का निर्वासन—पेरिस की प्रतिक्रिया—बादशाह के विरुद्ध आन्दोलन—ड्यूक दी ऑर्लेयाँ विरोधियों का नेता—कामील देमूलें का योग—जर्मन सैनिकों से जनता का संघर्ष—शस्त्रों की खोज।

बैस्तील पर अधिकार :

१७८९ (जौलाई) प्राचीन कारावास—निरंकुश शासन का प्रतीक—उसका विध्वंस—उसके गवर्नर दी लोने की गिरफ़्तारी—तत्पश्चात् उसका वध—बैस्तील विजय का महत्व।

कृषकों के कार्य :

१७८९ उपज असंतोषजनक—कठोर शीत—करों के देने तथा बेगार करने से इन्कार—उग्रवादी कृत्य—जागीरदारों का वध आदि—इनका परिणाम—

राष्ट्रीय महासभा में जागीरदारी प्रथा के अंत की घोषणा, परन्तु सम्राट व उसके साथियों ने अपना ढंग न बदला।

पेरिस की स्त्रियों का कूच :

१७८९ (अक्टूबर) भूख से पीड़ित—वर्सेल्स के राजप्रासाद पर आक्रमण—लाफेयत तथा राष्ट्रीय रक्षादल द्वारा रक्षा—बादशाह का परिवार सहित पेरिस में आगमन—उसकी स्वतंत्रता की समाप्ति।

(१०) सुधार के बीच व्यवस्था के कार्य

राष्ट्रीय महासभा के सुधार : (साधारण जनता के प्रभाव में)

(अ) जागीरदारी प्रथा के अन्त की घोषणा (४ अगस्त)
(ब) गिरजाघरों की जागीरों की जब्ती
(स) कागजी नोटों (Assignats) का प्रकाशन
(द) पादरियों के लिये राजनैतिक संविधान
(र) स्थानीय शासन का सुधार
(ल) नवीन संविधान—पूर्ण रूप से सीमित राजतन्त्र

उसका महत्व :

१७९१ (अ) राष्ट्रीयता के आधुनिक सिद्धान्त पर जोर देना
(ब) राष्ट्र ही समस्त अधिकारों का आदि स्रोत।

(११) सन् १७९१ ई० का संविधान

१७८९—९१ राष्ट्रीय संविधान-सभा—

संविधान की विशेषतायें :

(अ) मानव तथा नागरिक के अधिकारों की घोषणा
(ब) शासन पद्धति—पूर्णतया सीमित राजतन्त्र—राष्ट्र समस्त अधिकारों का आदि स्रोत
(स) व्यवस्थापिका सभा—केवल एक सभा—दो वर्ष की स्थिति—सम्राट के प्रभाव से मुक्त—सदस्य ७५० से अधिक—विधान-मण्डल तथा कार्यपालिका की पृथकता।
(द) सम्राट के अधिकार सीमित—मंत्री राष्ट्रीय महासभा के प्रति उत्तरदायी।

उसके दोष :

(अ) स्त्रियों को मतदान का अधिकार न मिला
(ब) उपनिवेशों के हब्शी गुलाम भी उस से वंचित रहे।
(स) राष्ट्रीय जल व स्थल सेनाओं पर नियंत्रण

(द) स्थानीय शासन का सुधार

(य) वोट देने की योग्यता—कर देने का बन्धन—निर्वाचन प्रणाली अप्रत्यक्ष।

(१२) सोलहवें लुई की गद्दारी

सम्राट के भागने की भिन्न योजनायें—मिराबो सभी नगर के पक्ष में

१७६१ (अप्रैल) —मिराबो की मृत्यु—सम्राट के मार्ग में शक्तिशाली रोक हटी—सोलहवें

१७६१ (जून) लुई का अदृश्य होना—वेरेनिज़ के स्थान पर उसकी गिरफ़्तारी—राष्ट्रीय महासभा ने उसे स्थगित कर दिया—अन्य परिणाम—सम्राट देशद्रोही—गण-राज्य की स्थापना अवश्यम्भावी—विदेशों से युद्ध अनिवार्य—१७ जौलाई का प्रदर्शन।

१७८६ (अक्टूबर)-
१७६१ (सितम्बर)

राष्ट्रीय संविधान-सभा का महत्व :

उसके सुधार श्रेष्ठ तथा चिरस्थायी—मुख्य कार्य संविधान निर्माण—'कै ऐ' द्वारा राष्ट्र की आशाओं का प्रदर्शन—टेनिस कोर्ट की शपथ द्वारा संविधान बनाने की प्रतिज्ञा—स्टेट्स जनरल राष्ट्रीय संविधान-सभा का नाम ग्रहण करता है—उसका कार्य अधिक महत्वपूर्ण क्योंकि तूफ़ान के बीच किया गया था—उसके सुधारों तथा संविधान द्वारा नवीन युग का आरम्भ।

(अ) *उसके सुधार :*

(सारांश अध्याय १० देखिये परन्तु नं० 'अ' को छोड़ दीजिये)

(ब) *नवीन संविधान का निर्माण :*

१७६१ (सारांश अध्याय ११ देखिये)

(स) *अन्य कार्य :*

सोलहवें लुई को स्थगित किया—तत्पश्चात् कड़ा नियन्त्रण।

(द) *उसके कार्यों की आलोचना :*

(i) स्त्रियाँ तथा दास मतदान के अधिकार से हीन
(ii) शिक्षा सुधार का अभाव
(iii) ध्वंस अधिक—निर्माण कम
(iv) सुधार मध्यम श्रेणी के लिये

किन्तु दो वर्ष का समय राष्ट्र निर्माण के लिये पर्याप्त न था।

(१३) क्रान्ति के शत्रु तथा सहायक

शत्रु :

(अ) भागे हुये अमीर तथा पादरी
(ब) विदेशों के बादशाह

(स) आन्तरिक शत्रु - (i) सोलहवाँ लुई तथा उसके साथी
(ii) शपथ न लेने वाले पादरी
(iii) क्रांति के विरोधी ।

मित्र :

(अ) उन्मूलनवादी (Radicals)
(ब) नगरों के निर्धन तथा निम्न श्रेणी के लोग
(स) राजनैतिक समितियाँ तथा क्लब—जेकोबिन क्लब—कार्डी-लियर क्लब
(द) विदेशों के सहायक तथा हितैषी ।

(१४) युद्ध की समस्या

कारण :

विदेशों से युद्ध का होना अनिवार्य था—(i) पादरियों के लिये धर्म विरुद्ध संविधान—शपथ का महत्व—(ii) अभिजातवर्ग तथा पादरियों का विदेशों को भागना—(iii) सोलहवें लुई की यात्रा—(iv) आस्ट्रिया के शासक मेरी एन्टोयनेट के भाई—(v) लुई का स्थगित किया जाना—(vi) पाडोवा की चेतावनी—(vii) पिलनिट्ज़ की घोषणा

१७९०
१७९१

(viii) यूरोपीय देशों की नीति :

सर्वप्रथम आस्ट्रिया तथा प्रशा युद्ध के लिये उद्यत—तत्पश्चात् इंग्लैंड तथा स्पेन आदि ।

(ix) फ्रांस में युद्ध के अभिलाषी :

(अ) राजपरिवार तथा उसके सहायक
(ब) साफ़ेयत तथा मध्यम श्रेणी के लोग
(स) उन्मूलनवादी (Radicals) जिनका ध्येय गण-राज्य स्थापित करना था (विशेषकर जिरोंदिन दल के सदस्य)

रोबेस्पियर युद्ध का विरोधी था ।

१७९१ (अक्तूबर)—१७९२ (नवम्बर) राष्ट्रीय विधान सभा—७५० सदस्य

मध्य में—२५० सदस्य दलबन्दी से अलग
दायीं ओर—२६० सदस्य क्रमशः अथवा पुराने विचार के
बायीं ओर—२३६ उन्मूलनवादी अथवा जैकोबिन ।

दलबन्दी का उदय—दल नेताओं के नाम से प्रसिद्ध—तत्पश्चात् अन्य नामों से

जिरोंदिन दल का अभ्युदय :

जिरोंदिन नाम 'जिरोंदी' से लिया गया है—प्रारम्भ में जैकोबिन क्लब के सदस्य—उनके नेता [illegible]
उन्मूलनवादी विचार रखने के [illegible]

वर्नियो, कोंदोर्से, इसनार आदि—उत्साही तथा साहसी-त्याग के लिये प्रसिद्ध—जिरोंदिन युद्ध के पक्षपाती थे।

युद्ध का प्रारम्भ :

युद्ध का निर्णय आशा तथा उसके हठ का निर्णय था। उन्होंने संकट-पूर्ण आर्थिक स्थिति के होते हुये भी युद्ध की घोषणा कर दी—तीन सेनायें बेल्जियम पर आक्रमण करने के लिये भेजी गई—६ मास तक पराजय—उसके कारण—जिरोंदिन मन्त्रिमण्डल का पतन—जनता का असन्तोष—२० जून का प्रदर्शन—ब्रन्जविक की घोषणा जिससे साबित हो गया कि लुई विदेशियों से मिला हुआ है।

१७९२ (जून)

२५ जौलाई

(१७) राजतन्त्र का अन्त

उसके कारण :

१७९२

(अ) ब्रन्जविक की घोषणा—जनता में बदला लेने की भावना।
(ब) विद्रोही कम्यून की स्थापना—क्रान्ति का नेतृत्व उसके तथा जेकोबिन दल के हाथ में।
(स) १० अगस्त का आक्रमण—प्रजा में गणतन्त्रवाद की लहर।
(द) सोलहवें लुई की अयोग्यता—क्रान्ति का नेतृत्व ग्रहण न करना—शत्रुओं से मेल—भागने का प्रयत्न।
(य) युद्ध में फ्रांस की पराजय।
(र) फ्रांस में गण-राज्य के अभिलाषी।

१७९२ सितम्बर का रोमांचकारी हत्याकाण्ड :

फ्रांस में क्रान्ति के शत्रु—वर्दुं के दुर्ग का हाथ से निकल जाना—शत्रुओं की खोज—अगणित मनुष्य कारावास में—२ सितम्बर से इनकी हत्याओं का प्रारम्भ—हत्यायें आकस्मिक न थीं—उनका उत्तरदायित्व—उनके कारण युद्ध की तीव्र गति—

१७९२ (सितम्बर २२) गण-राज्य की स्थापना।

१७९३ (जनवरी २१) सोलहवें लुई का वध।

(१८) जिरोंदिन दल का पतन

१७९२ (सितम्बर)-१७९५ (अक्टूबर) राष्ट्रीय कन्वेंशन (महासभा) :

प्रत्येक वयस्क पुरुष को मतदान का अधिकार—सदस्य अधिकतर बड़ी आयु के तथा प्रतिष्ठावान—सभी पेशों का प्रतिनिधित्व—केवल दो श्रमजीवी—एक सदस्य राजवंशीय—एक प्रमुख सदस्य टामस पेन।

दलबंदी :

(i) जिरोंदिन—अध्यक्ष की दायीं ओर

(ii) जैकोबिन (माउन्टेनिस्ट्स)—सभाभवन के बाईं ओर
(iii) 'सेन्टर' अथवा 'दक्षिण' में बैठने वाले
आधुनिक पार्टी प्रणाली का अभाव ।

उसके कार्य :

(अ) सोलहवें लुई के भाग्य का निर्णय किया ।
(ब) आन्तरिक कुव्यवस्था को दूर किया—वौंदे का विद्रोह ।
(स) विदेशों से सफलतापूर्वक युद्ध किया ।
(द) समस्त राष्ट्र को युद्ध के कार्य में लगाया—कार्नो का सिद्धान्त ।
(य) दृढ़ केन्द्रीय शासन स्थापित किया ।
(र) आवश्यक सुधार—शिक्षा व न्याय—क्रान्तिकारी तिथिपत्र—दशमलव ।
(ल) धार्मिक प्रयोग—बुद्धिवाद का प्रभाव—सर्वशक्तिमान् की उपासना ।
(व) साम्यवादी कार्य—भागे हुये लोगों की सम्पत्ति का वितरण—बड़ी जागीरों का विभाजन—दैनिक जीवन की वस्तुओं के मूल्यों की तालिका—वेशभूषा में अन्तर ।
(श) सन् १७९३ ई० व सन् १७९५ ई० के संविधान निर्मित किये ।

१७९३ (जून २) रक्तहीन क्रांति :

जेकोबिन दल के हाथ में शासन—उसकी अपकीर्ति—आन्तरिक कुव्यवस्था—दैनिक वस्तुओं के मूल्य अधिक—वौंदे का विद्रोह—दूमूरिये की कृतघ्नता तथा उसका बुरा प्रभाव—लोक रक्षा समिति तथा पेरिस के कम्यून में अन्य दलों का प्रभाव—मारा के विरुद्ध मुकदमा—मारा निर्दोष—२ जून की क्रान्ति—जिरोंदिन दल का पतन ।

१७९३ (२ जून) (१७) जैकोबिन दल का शासन
१७९४ (१ अगस्त)

शासन नीति

जिरोंदिन दल से अधिक उन्मूलनवादी—सर्वसाधारण पर अधिक प्रभाव—अतएव क्रान्ति की गति अति तीव्र—अधिक हिंसक कार्य करने को उद्यत—प्रयोग का अधिक महत्व—आवश्यकता के अनुसार नीति प्रणाली—उनका उद्देश्य देशद्रोहियों तथा बाह्य शत्रुओं का सर कुचलना—आन्तरिक विद्रोहों का दमन—युद्ध को सफल बनाना—धनी मानियों पर कर—निर्धनों के लिये खाद्य सामग्री की उचित व्यवस्था—दाँतों का सिद्धान्त 'साहस' अधिक साहस तथा सर्वदा अधिक साहस ।

साधन :

(अ) कन्वेंशन :

उद्देश्य पूर्ति के लिए अधिक वांछनीय—जिरोंदिन उससे पूर्णतया पृथक ।

(ब) जेकोबिन क्लब तथा अन्य लोकतंत्रीय समितियाँ

(स) लोक रक्षा समिति—

जेकोबिन शासन का मुख्य आधार।

(द) सुरक्षा समिति—

(र) क्राँतिकारी न्यायालय—

(ल) गेओती

विना कष्ट तथा तीव्र गति से वध करने का यन्त्र

(व) कन्वेंशन के सदस्यों को प्रांतों में भेजे जाने की प्रथा

कार्य :

(अ) महंगाई रोकने का प्रयत्न

(ब) युद्ध की उचित व्यवस्था—कारनो का सिद्धान्त

१७९३ (स) सितम्बर के कानून—Law of Suspects आदि

(द) विरोधी दल के नेताओं से व्यवहार—कन्वेंशन के ७३ सदस्य जेल भेज दिए गए

१७९३ (अक्टूबर) (र) मेरी एन्तोयनेत का वध

(ल) राजपरिवार के अन्य सदस्यों की समाप्ति

(य) जिरोंदिन नेताओं का वध—

(व) अन्य नगरों में दमनचक्र—कारिये के कृत्य—लीओं नगर में दो सहस्र व्यक्तियों का वध

कार्यों की आलोचना

(१८) नये संकट तथा नई सफलतायें

नये संकट—

जेकोबिन शासन को घर पर शीघ्र ही नए संकटों का सामना करना पड़ा—परन्तु युद्ध में विजय प्राप्त हुई

(अ) चरित्रहीन पदाधिकारी—विश्वासघात तथा रिश्वत

(ब) बुद्धिवाद का प्रचार—प्रसग्रा तथा लोक रक्षा समिति सहमत न थी—रोबेस्पेयर विरोधी—प्रधान समर्थक हैबर, शोमेत, तथा क्लोट्स आदि। उनका दमन

(स) 'असभ्यों' का उदय—हैबर का वध

(द) धन के प्रेमी अन्य व्यक्ति—उनके नेताओं का दमन कठोरता से किया गया—

(र) जैकोबिन दल में वैमनस्य—रोबेस्पेयर तीव्र गति तथा आतंक का पक्षपाती—दाँतों इनसे असहमत था—उसकी गिरफ़्तारी—वध

नई सफलतायें—

१७९३ (अ) होंड्सकूटे तथा वातीनई की विजय—वीस्सैनबूर्ग की किलेबन्दी

पर फ्रांसीसियों का पुनः अधिकार

(ब) यौर्के की सेना का परास्त होना

(स) तूलों नगर की सफलता

१७९४ (द) स्पेन की सेनायें पीछे हटा दी गईं—आस्ट्रियन नैदरलैंड्स पर शक्तिशाली आक्रमण—फ्लूरस की विजय—परन्तु १ जून के युद्ध में असफलता

युद्ध विजय के प्रधान कारण

(अ) फ्रांस का शासन अधिक शक्तिशाली तथा सुदृढ़

(ब) नवीन प्रकार के सैनिक पदाधिकारी

(स) मित्र दल में वैमनस्य

(द) युद्ध योजनाओं का राष्ट्रीय आधार

(१९) अन्धकार के अनन्तर गौरवपूर्ण प्रकाश

१७९४ अप्रैल १-अगस्त १ जैकोबिन एकशासनत्व

अत्याचार तथा आतंक की पराकाष्ठा—हैबर तथा दांतों के वध—शासन का पूर्ण प्रभाव—कन्वेंशन तथा लोक रक्षा समिति पर पूर्ण प्रभुत्व—केन्द्रीय जेकोबिन क्लब कम शक्तिशाली—समाचार पत्रों की संख्या में कमी—गुप्तचर—मूर्तियों तथा भवनों की सुन्दरता पर जोर—कम्यूनों के नामों में परिवर्तन

उसके पतन के कारण

(अ) दोषयुक्त आर्थिक प्रबन्ध—

अन्न की समस्या—रोटियों का राशन—माँस का राशन—अन्न के मूल्य का निर्धारण—मजदूरी की दर निश्चित करदी गई—अतः असंतोष—हड़तालों पर रोक—अन्य नियन्त्रण

(ब) न्यायालय का प्रबन्ध

यह भी दोषयुक्त था—सैनिक तथा अन्य प्रकार के असाधारण न्यायालय—क्रान्तिकारी न्यायालय—विशेष प्रकार के कठोर विधान जैसेः—**Law of Suspects, Law of Ventose** आदि

(स) धार्मिक नीति

१७९४ कैथोलिक धर्म की उपेक्षा—सर्वशक्तिमान की उपासना—पेरिस के मैदान का समारोह—जनता असहमत—असफलता—

(द) शासन का आतंकपूर्ण रूप

हैबर तथा दांतों के दलों का नाश

(र) पारस्परिक वैमनस्य

१७९४ (जौलाई) जैकोबिन नेताओं का वध—आतंक की समाप्ति—थर्मीडोर की सफलता।

नये युग का प्रकाश

उदार दल का प्रभाव—जैकोबिन एकशासत्व का अंत—परेरियल के विधान का अन्त—जिरोंदिन दल के ७३ सदस्य मुक्त कर दिये गये—पुनः प्रसभा में लौट आये—संदिग्ध लोगों की कारावास से मुक्ति—आर्थिक
१७९५ व्यवस्था असंतोषजनक—जनता में असंतोष—ज्हैयसीनाल का विद्रोह—जैकोबिनों की ओर से परेरियल का विद्रोह—प्रान्त में श्वेत आतंक—

नवीन संविधान

(अ) पांच संचालक—

५ वर्ष के लिये—तत्पश्चात् प्रति वर्ष एक का हटना अनिवार्य

(ब) विधान-मंडल—

दो सभायें — पाँच सौ की सभा (Council of Five Hundreds) तथा वृद्ध जनों की सभा (Council of Ancients) द्वितीय में २५० सदस्य

(स) स्थानीय शासन में परिवर्तन :

प्रत्येक डिपार्टमेंट में ५ सदस्यों का केन्द्रीय शासन—केन्टन

१७९५ (अक्टूबर) **वँदेमेयर का विद्रोह**

संविधान से असंतोष—पेरिस की जनता का प्रसभा पर आक्रमण—बोनापार्ट द्वारा उसकी सहायता—कन्वेंशन की समाप्ति—

युद्ध विजय

१७९५ गत वर्ष का विजयों का क्रम—प्रशा द्वारा बाल (Basel) की संधि—हालैंड तथा स्पेन भी संधि करते हैं—प्रथम संघ में केवल इंग्लैंड तथा आस्ट्रिया शेष—

(२०) फ्रांसीसी क्रान्ति की अमूल्य भेंट नैपोलियन बोनापार्ट

एक शास्ता का आगमन—संचालक वर्ग की दुर्बलताओं के कारण आवश्यक था।

चरित्र तथा बालपन :

अध्यवसायी, साहसी, दूरदर्शी—योग्य सेनापति तथा राजनीतिज्ञ—व्यक्तित्व आकर्षणमय—प्रारम्भिक जीवन का अनुभव—शिक्षा कोर्सिका तथा फ्रांस में प्राप्त की—ब्रीन के स्कूल का अनुभव।

१७८५ छोटे लेफ्टीनेंट के पद पर नियुक्ति—पुस्तकों के पढ़ने का शौक—विभिन्न विषयों की पुस्तकें—कोर्सिका लौट कर वहाँ के झगड़ों में संलग्नता।

ख्याति प्राप्त करने के दो अपूर्व अवसर :

१७९३ (१) तूलों की सुरक्षा

१७९५ (२) कन्वेंशन की सुरक्षा

१७९६ **जोजेफायन बोआरने से विवाह :**

(२१) इटैली के प्रदेश में नैपोलियन की असाधारण सफलतायें

प्रधान कारण :

(अ) फ्रांस के शत्रुओं में आस्ट्रिया, सार्डिनिया तथा इंग्लैंड अब भी शेष थे। इंग्लैंड का शक्तिशाली बेड़ा चिन्ता का विषय।

(ब) फ्रांसीसी शासन की दृष्टि में प्राकृतिक सीमाओं का महत्व।

(स) कार्नो का आस्ट्रिया पर आक्रमण करने का आयोजन

जूर्दाँ } ब्लैक फारेस्ट तथा डैन्यूब के मार्ग से
मोरो } भेजे गये।

बोनापार्ट — इटैली भेजा गया।

प्रसिद्ध घटनायें :

१७९६ बोनापार्ट ने इटैली पर आक्रमण किया—सार्डिनिया निवासियों को अस्ट्रिया के निवासियों से अलग कर दिया—प्रथम को परास्त करके, सन्धि करने को विवश कर दिया—चेरास्को की सन्धि—सेवाय व नीस पर फ्रांसीसियों का अधिकार।

बोनापार्ट मीलन के दक्षिण-पूर्व की ओर गया—अस्ट्रिया निवासी उसे छोड़ कर मान्टोवा की ओर भाग गया—लोदी का युद्ध—लोम्बार्डी पर नैपोलियन का अधिकार—मीलन पर अधिकार—मान्टोवा का घेरा—

१७९७ अस्ट्रिया के सेनाध्यक्षों ने चार बार उसके बचाने की कोशिश की परन्तु चारों बार निराशा मिली—लियोबन तथा कैम्पोफार्मियो की सन्धियां।

(अ) लोम्बार्डी तथा बेल्जियम फ्रांस को मिले।

(ब) उत्तरी इटैली में सिस-एल्पिन गण-राज्य की स्थापना।

(स) वेनिस के लगभग सम्पूर्ण राज्य तथा उसके अधीन देशों पर आस्ट्रिया का अधिकार (वेनीशियन गण-राज्य का अन्त)

(द) होली रोमन सम्राट से सन्धि की शर्तें निश्चित करने को रास्तात में कांग्रेस का आयोजन।

फ्रांसीसियों द्वारा स्थापित गण-राज्य :

१७९५ बटेवियन गण-राज्य—हालैंड
१७९७ सिस-एल्पिन गण-राज्य—उत्तरी इटैली
१७९८ हैलवेटिक गण-राज्य—स्विटजरलैंड
रोमन गण-राज्य—रोम (पोप फ्रांस का बन्दी)
लिगूरियन गण-राज्य—जेनोआ
पार्थिनोपियन गण-राज्य—नैपिल्ज

इटैली के युद्ध का नैपोलियन पर प्रभाव :

उसके गौरव में असीम वृद्धि—कुछ बातों में उसका जीवन बादशाह के समान—अर्वाचीन युग का हैनिबल।

उसकी सफलताओं के कारण :

(अ) उसकी व्यक्तिगत विशेषतायें—उसकी मित्रमण्डली।

(ब) नैपोलियन की सेना जनता की सेना थी। उसका अनुशासन—उसके ऊँचे आदर्श।

(स) इटैली में उसके अगणित समर्थक तथा शुभचिन्तक थे।

१७९७ फ़्रूक्तीदौर का आकस्मिक वज्र प्रयोग :

बोनापार्ट ने आजरो को फ्रांस भेज कर संचालकवर्ग की सहायता की।

(२२) मिस्र और सिरिया

पूर्वी देशों का आकर्षण :

इंग्लैंड को परास्त करना नैपोलियन के जीवन का महान् उद्देश्य—एक उपाय भारत विजय करना—अतः मिस्र पर आक्रमण—बाल्यकाल ही से पूर्वी देशों का आकर्षण—पूर्व ही से फ्रांसीसियों की दृष्टि मिस्र पर—

१७९८—९९ मिस्र का युद्ध :

१७९८ वहाँ पहुँच कर तुर्की पर आक्रमण हो सकता था—दक्षिण-पूर्व से अस्ट्रिया पर आक्रमण भी सम्भव था।

१७९८ नैपोलियन तूलों से रवाना हुआ—उसके साथ विद्वानों तथा विज्ञान विशारदों की मंडली—सेंट जोन के नाइटों से माल्टा ले लिया—

बोनापार्ट ने मेम्लूक जाति के बादशाह को पिरामिडों के युद्ध में परास्त किया—उसने मिस्रवासियों को भिन्न रीतियों से प्रसन्न करने का प्रयत्न किया।

नेल्सन ने फ्रांसीसी बेड़े की खोज की—उसे नील नदी के युद्ध में परास्त किया।

१७९९ बोनापार्ट सिरिया की ओर बढ़ा—एकर में उसे पराजय मिली—मिस्र लौट आया—जीर्ण शीर्ण अवस्था में होते हुये भी उसने तुर्की सेना को परास्त किया।

१७९९ बोनापार्ट अपनी सेना को मिस्र में छोड़ कर फ्रांस लौट आया।

मिस्र के आक्रमण का महत्व :

(अ) नैपोलियन की महत्ता में कमी न हुई।

(ब) विद्या और विज्ञान की उन्नति—नील की घाटी के भग्नावशेष—अन्य अनुसंधान—

(२३) सन् १७९९ ई० का संविधान तथा द्वितीय यूरोपीय संघ का युद्ध

ब्रूमेयर का आकस्मिक शासन परिवर्तन :

१७९९ नैपोलियन ने सीएयेज़ तथा लूसीन की सहायता से स्वयं को फ्रांस का स्वामी बना लिया।

नवीन संविधान :

३ कौंसल :

नेपोलियन स्वयं प्रथम कौंसल—सर्वशक्तिमान्—सेना पर भी उसका अधिकार—द्वितीय तथा तृतीय कौंसल केवल सहायक—संविधानीय वेष में निरंकुश शासन पर महाशक्तिशाली व कठोर।

सहायक सभायें :

(i) कौंसिल आव स्टेट— प्रथम कौंसल की ओर से नियुक्ति—प्रतिदिन के शासन सम्बन्धी विषयों का निरीक्षण—बिलों का पेश करना—

(ii) सिनेट—पदाधिकारियों तथा ट्रिबुनेट व विधान-सभा के सदस्यों की नियुक्ति—

(iii) ट्रिबुनेट—क़ानूनी प्रस्तावों पर वादविवाद—

(iv) विधान-सभा—कानूनी प्रस्तावों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करती थी।

१७९९–१८०१ द्वितीय यूरोपीय संघ का युद्ध :

इंग्लैंड
रूस
तुर्की
आस्ट्रिया
पुर्तगाल
} फ्रांस के विरोधी

१७९९ रूसी व आस्ट्रिया सेनाओं ने उत्तरी इटैली पर अधिकार कर लिया—नोवी का युद्ध—फ्रांसीसियों ने जेनोआ में शरण ली—मासीना ने रूसियों को ज़ूरिच के युद्ध में परास्त किया—ब्रून ने ड्यूक आव यार्क को शस्त्र डालने पर मजबूर किया—रूसी युद्ध से पृथक हो गये।

१८०० बोनापार्ट (प्रथम कौंसल) ने इटैली पर आक्रमण किया—मीलन पर अधिकार—मारेंगो का प्रसिद्ध युद्ध—आस्ट्रिया की सेनायें मिन्चो नदी के पूर्व

१८०० में भाग गईं—उत्तरी इटैली पर फ्रांसीसियों का अधिकार—अँगरेजों ने माल्टा ले लिया।

१८०१ ल्यूनेवील की सन्धि :

(१) आस्ट्रिया के शासक ने कैम्पोफ़ोर्मियो की शर्तों को पुनः स्वीकार किया।

(२) फ्रांस की पूर्वी सीमा राइन नदी तक पहुंच गई।

(३) जिन शासकों को इस प्रकार हानि उठानी पड़ी उनकी क्षतिपूर्ति जर्मनी में की गई।

(४) आस्ट्रिया ने नैपोलियन द्वारा स्थापित गण-राज्यों को स्वीकार कर लिया।

इंग्लैंड पुनः फ्रांस के विरुद्ध अकेला रह गया।

द्वितीय सशस्त्र निर्हस्तक्षेपी संघ :

रूस डेनमार्क स्वीडन प्रशा	इंग्लैंड के विरोध में

उसका शीघ्र ही अन्त हुआ। कारण :—

(अ) डेनिश बेड़े की बरबादी

(ब) ज़ार पाल की मृत्यु—

१८०२ आमीएँ की सन्धि :

(१) इंग्लैंड ने लंका व त्रेनीडाद को छोड़ कर समस्त जीते हुये औपनिवेशिक प्रदेशों को लौटाना स्वीकार किया।

(२) माल्टा सेंट जोन के नाइटों को तथा माइनरका स्पेन को लौटा दिये गये।

(३) नैपोलियन ने मिस्र की सेना को लौटाना स्वीकार कर लिया। इंग्लैंड ने भी ऐसा ही किया।

आमीएँ की सन्धि अस्थायी प्रमाणित हुई।

(२४) फ्रांस का पुनर्निर्माण

नैपोलियन के शासन के सूत्र वाक्य :

(अ) प्रतिभा (ब) व्यापकता (स) कार्यक्षमता।

उसके सुधार :

(अ) पेरिस को सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया :

(ब) स्थानीय शासन का सुधार : (अत्यन्त केन्द्रीय स्वरूप)—

प्रान्त (Departments)—प्रीफेक्ट

जिले (Arrondissements)—उप-प्रीफेक्ट

कम्यून (Communes)—मेयर

(स) भूमि का बन्दोबस्त :

राज्यक्रांति के समय की व्यवस्था को स्थापित रक्खा—कृषकों की कृतज्ञता।

(द) आर्थिक सुधार :

करों की वसूली—मितव्ययता—पथभ्रष्ट पदाधिकारियों को दण्ड—बैंक ऑव फ्रांस।

(य) धार्मिक प्रबन्ध :

धर्म का महत्व—सुव्यवस्थित चर्च की स्थापना—कन्कार्डेट (Concordat)—चर्च पर शासन का प्रभाव।

(र) क़ानूनी-ग्रन्थ :

सिविल कोड (Civil Code), कोड ऑव सिविल प्रोसीडियोर (Code of Civil Procedure), कोड ऑव क्रिमिनल प्रोसीडियोर (Code of Criminal Procedure), पैनल कोड (Penal Code) तथा कमर्शियल कोड (Commercial Code)।

(ल) शिक्षा सम्बन्धी सुधार :

प्रारम्भिक स्कूल, माध्यमिक अथवा ग्रामर स्कूल, हाई स्कूल, विशेष स्कूल, फ्रांस का विश्वविद्यालय, नार्मल स्कूल।

(व) सार्वजनिक हित के कार्य :

अगणित सड़कें, पुल व नहरें आदि का निर्माण—बन्दरगाहों का सुधार आदि।

(श) कला की उन्नति :

बहुमूल्य उदाहरणों का संग्रह—मिस्र में कला की उन्नति—पेरिस व शाही महलों की सुन्दरता आदि।

औपनिवेशिक साम्राज्य की योजना :

लूसियाना की प्राप्ति—हेति द्वीप पर अधिकार करने की चेष्टा—असफलता—

नैपोलियन का राज्याभिषेक :

१७९९ प्रथम कौंसल (१० वर्ष)

१८०२ प्रथम कौंसल (आजीवन)

१८०४ फ्रांस का सम्राट—जनता द्वारा स्वीकृति—अन्य शक्तियों की स्वीकृति—राज्याभिषेक—पोप की उपस्थिति।

(२५) नैपोलियन की शक्ति का शिरोबिन्दु

युद्ध के पुनः प्रारम्भ होने के कारण :

(१) नैपोलियन की दृष्टि में युद्ध का महत्व

(२) आमीएँ की सन्धि का अस्थायी स्वरूप—उसकी विजयों के कारण शक्ति संतुलन अव्यवस्थित—इंग्लैंड के निवासी भयभीत—

(अ) नवीन सहा-राज्यों पर पूर्ण अधिकार

(ब) पीडमॉंट का फ्रांस में सम्मिलित किया जाना

(स) स्विट्ज़रलैंड के मामलों में हस्तक्षेप।

(३) नेपोलियन की औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने की आकांक्षा—हेति अथवा सां दोमिंगो का मामला।
(४) उस पर मिस्र तथा भारत के विषय में अँगरेजों का सन्देह
(५) अँगरेज व्यापारियों के लिये सुविधाओं की कमी
(७) भागे हुये फ्रांसीसियों का नेपोलियन के विरुद्ध प्रचार
(७) अँगरेजी पत्रों द्वारा उसका अपमान
(८) अँगरेजों ने माल्टा नहीं लौटाया था।

इंग्लैंड पर आक्रमण करने की तैयारियां :

तीन आवश्यकतायें—शक्तिशाली सेना, पर्याप्त नौकायें तथा शक्तिशाली जहाजी बेड़ा।

१८०४ बूलों की स्थल सेना—
फ्रांसीसी जलसेना ब्रेस्त तथा तूलों के बन्दरगाहों में।

अँगरेजी तैयारियां :

अपरिमित उत्साह, स्वयंसेवक, मार्तेलो दुर्ग, जहाजी बेड़े का उपयुक्त वितरण—नतीजा फ्रांसीसी बेड़े इंगलिश चैनल में प्रवेश न कर सके—बूलों की सेना का पूर्व की ओर प्रस्थान।

१८०५ तीसरा यूरोपीय संघ :

इंग्लैंड
आस्ट्रिया
रूस
स्वीडन
} फ्रांस के विरोधी

युद्ध की प्रमुख घटनायें :

१८०५ उल्म के युद्ध में आस्ट्रियन सेनापति मैक की पराजय—नैपोलियन का वियेना में प्रवेश—ट्रैफलगार के युद्ध में फ्रांस तथा स्पेन के बेड़ों की पराजय—आस्टरलिट्ज के युद्ध में आस्ट्रिया तथा रूस की पराजय।

प्रेसबर्ग की सन्धि :

(१) आस्ट्रिया ने वेनेशिया तथा डलमेशिया फ्रांस को दिये
(२) उसने तिरोल तथा स्वेबिया नैपोलियन के मित्र बवेरिया को दिये
(३) उसने अन्य देश बादन तथा वूर्टम्बर्ग को दिये।

१८०६ होली रोमन साम्राज्य का अन्त :

उसके स्थान पर राइन का संघ (सोलह राज्य)

१८०६ प्रशा के विरुद्ध युद्ध :

फ्रेडरिक विलियम रूस से मिल गया—नैपोलियन से लौट जाने को कहा—

ऐना तथा ओर्स्टेट में प्रशा की पराजय—नैपोलियन का बर्लिन में प्रवेश—बर्लिन डिक्री।

१८०७ रूस के विरुद्ध युद्ध : (तीसरे संघ का युद्ध जारी रहा)

आइलो तथा फ्रीडलांट में रूस की पराजय।

१८०७ टिलसिट की सन्धि :

(१) प्रशा के राज्य के पश्चिमी भाग को पृथक करके वेस्टफेलिया का राज्य बनाया गया—शासक जेरोम बोनापार्ट।
(२) उसके पूर्वी भाग को पृथक करके 'ग्रांड डची आव वारसा' की स्थापना की गई—शासक सेक्सनी का ड्यूक।
(३) उसकी सेना घटा कर ४२ हजार कर दी गई।
(४) उसे असह्य युद्ध का हर्जाना देना पड़ा।
(५) नैपोलियन तथा जार की मित्रता—जार ने उसकी तिजारती व्यवस्था (Continental System) को स्वीकार कर लिया।

नैपोलियन का गौरव :

गत दस वर्षों में इंग्लैंड चौथी बार अकेला रह गया—यूरोप में नैपोलियन का आतंक—महान् साम्राज्य—भिन्न शासक उसके मित्र।

पोप उसका मित्र—उसके सम्बन्धी ऊँचे पदों पर आसीन—
इटैली—यूजीन बोआरने राजपाल (नैपोलियन बादशाह)
इलीरिया के प्रान्त—सेनापति मारमो
नेपिल्स—जोजेफ बादशाह
हालैंड—लूई बादशाह
टस्कनी—बहिन ऐलिस ग्रांड डचैज
क्लीव्ज—मूरा ड्यूक

तैलिरेंद, बर्तिये तथा बर्नेदोत भी शासक बनाये गये—केवल लूसीन का भाग्य सोता रहा।

(२६) नैपोलियन का पतन

पतन के कारण :

(१) नैपोलियन की सीमित शक्तियाँ :

वह वृद्ध, स्थूल शरीर तथा विलासप्रिय होता जाता था। उसने अन्य लोगों से परामर्श करना भी छोड़ दिया था।

(२) सेना की गुप्त कमजोरियाँ :

बलात् भर्ती का महत्व—भिन्न जातियों के सैनिक—उनका अन्य देशों पर आश्रित होना—वहां राष्ट्रीय जागृति।

(३) *महाद्वीपी व्यवस्था (Continental System) :*

बर्लिन, मीलन, फौंतेनब्लो आदि की घोषणायें—उनका अनुसार विशेष आदेशों (Orders in Council) द्वारा। इंग्लैंड तथा फ्रांस पर प्रभाव—अन्य देशों पर प्रभाव।

१८०८–१४ (४) *स्पेन तथा पुर्तगाल का युद्ध :*

फ्रांस की सेनाओं तथा जनरलों का विनाश—अतुलित धनराशि की बरबादी—राष्ट्रीय जागृति—दक्षिण में व्यस्त रहने से मध्य यूरोप में नैपोलियन की कमजोरी।

१८१२ (५) *रूसी संघर्ष :*

उसका बुरा प्रभाव—पराधीन देशों को प्रोत्साहन।

१८१३ (६) *प्रशा का स्वाधीनता संग्राम :*

उसका कुप्रभाव।

१८१३–१५ (७) *चौथे यूरोपीय संघ का युद्ध :*

(८) *भिन्न देशों की राष्ट्रीय जागृति :*

उसका प्रभाव।

(९) *फ्रांस का थक जाना :*

भिन्न देशों में उसकी असह्य हानियाँ।

(१०) *अंगरेजों की समुद्री शक्ति :*

महाद्वीप का घेरा—व्यापार तथा कलाकौशल की उन्नति—धन की वृद्धि—शत्रु के उपनिवेशों पर अधिकार।

१८०८–१४ पुर्तगाल तथा स्पेन का युद्ध :

१८०७ पुर्तगाल पर नैपोलियन का अधिकार—राजवंश का ब्राजील में शरण लेना—

१८०८ स्पेन का राजवंश नैपोलियन के अधिकार में—जोजेफ बोनापार्ट की नियुक्ति—राष्ट्रीय जागृति—

१८०८ पुर्तगाल में आर्थर वेलेजली का आगमन—विमीरो का युद्ध—जूनो की पराजय—स्पेन में जोजेफ की पराजय—नैपोलियन स्पेन में—मूर का कोरूना की ओर भागना—

१८०९ कोरूना का युद्ध—फ्रांसीसियों की पराजय—मूर युद्ध में मारा गया। वेलेजली का स्पेन में प्रवेश परन्तु वापस जाना।

१८१०–१८१४ अन्य घटनायें—

१८१४ वेलिंगटन का फ्रांस पर आक्रमण।

१८०९ आस्ट्रिया से युद्ध :

नैपोलियन का अधिकार वियेना पर—आस्पर्न के युद्ध में उसकी

पराजय—वाग्राम के युद्ध में महान् विजय—शनब्रुन की सन्धि—आस्ट्रियन साम्राज्य के बड़े भाग पर अन्य देशों का अधिकार—

१८१० नैपोलियन ने मेरी लुईज से विवाह किया।

१८१२ रूसी संघर्ष :

नैपोलियन की महती सेना—नीमन नदी को पार करना—रूसियों की लुका छिपी की युद्ध प्रणाली (Guerilla Warfare)—नैपोलियन का विलना, स्मोलेंस्क तथा बोरोडीनो के मार्ग से मास्को पहुँचना।

नैपोलियन मास्को में ५ सप्ताह तक ठहरा—तत्पश्चात् वापसी—घोर संकट—सैनिकों की असीम कठिनाइयां, बरबादी—६ लाख मनुष्यों में से केवल २० हजार लौटे—रूसी संघर्ष का बुरा प्रभाव।

१८१३ चतुर्थ संघ :

इंग्लैंड
रूस
प्रशा
स्वीडन
आस्ट्रिया
} फ्रांस के विरोधी

१८१३ स्वाधीनता संग्राम :

ड्रेस्डन के युद्ध में नैपोलियन की विजय—लीपजिग के युद्ध में पराजय—नैपोलियन राइन नदी की ओर भागा—युद्ध के परिणाम—

१८१४ फ्रांस पर आक्रमण :

तीन सेनायें उत्तर व पूर्व से बढ़ीं—वेलिंगटन दक्षिण की ओर से—नैपोलियन ने यथाशक्ति उनका सामना किया—पेरिस पर शत्रुओं का

१८१४ अधिकार—नैपोलियन का प्रथम निर्वासन।

१८१५ सौ दिन का संघर्ष :

लीनी तथा कात्रब्रा के युद्ध—वाटरलू का युद्ध—द्वितीय निर्वासन—

१८२१ सेंट हेलीना में मृत्यु—

फ्रांस के भाग्य का निर्णय :

१८१४ पेरिस की प्रथम सन्धि—उचित शर्तें—सन् १७९२ की सीमायें—न किसी प्रकार का युद्ध का हर्जाना और न फ्रांस में शत्रु सेनाओं की आवश्यकता—

१८१५ पेरिस की दूसरी सन्धि—मित्र राष्ट्रों के दृष्टिकोण में परिवर्तन—केवल सन् १७८९ की सीमायें—क्षतिपूर्ति तथा शत्रु सेनाओं की नियुक्ति—विद्या व कला की वस्तुयें अन्य देशों को लौटा देनी पड़ीं।

(२७) वीएना की कांग्रेस

मित्र शक्तियों के प्रतिनिधि—आस्ट्रिया का प्रधान मन्त्री मैटरनिक आस्ट्रिया—[illegible] एलेक्जेंडर प्रथम, टेलीरेंड, कैसलरे तथा विलिंगटन आदि। आस्ट्रिया का सम्राट फ्रांसिस प्रथम तथा प्रशा का सम्राट फ्रेडरिक विलियम भी उपस्थित थे।

मार्ग निर्देशन के सिद्धान्त :

(१) प्राचीन राजाओं तथा शासकों को पुनः स्थापित करना।

(२) प्राचीन व्यवहार तथा प्रथा के अनुसार निर्णय करना।

निर्णय :

(१) आस्ट्रिया के आधीन 'राइन के तट' को रखा गया—

(२) आस्ट्रिया को लोम्बार्डी तथा वेनीशिया वापस मिल गये।

(३) प्रशा को राइन के किनारे की अधिकतर भूमि मिली—उसे स्वीडिश पोमेरेनिया, सैक्सनी तथा पोलैंड के भाग और वेस्टफेलिया भी मिले—

(४) रूस के अधिकार में पोलैंड का सबसे बड़ा भाग रहा—उसे फिनलैंड भी दिया गया—

(५) स्वीडन का अधिकार नार्वे पर हो गया—

(६) हालैंड का अधिकार बेल्जियम (आस्ट्रियन नेदरलैंड्स) पर हो गया।

(७) सार्डिनिया को पीडमोंट, नीस तथा सेवाय वापस मिले—उसे जीनोआ भी दिया गया।

(८) ग्रेट ब्रिटेन के अधिकार में माल्टा, मारीशस, केप आव गुड होप तथा लंका आदि छोड़ दिये गये।

(९) स्विट्ज़रलैंड का संघ पुनः स्थापित कर दिया गया।

(१०) नेपिल्स तथा स्पेन के शासकों को उनके सिंहासन पुनःप्राप्त हुये।

(११) पोप को उसका राज्य वापस मिला।

दो अन्य निर्णय :

(१) अन्तर्राष्ट्रीय नदियां सब राष्ट्रों के लिए खोल दी गईं।

(२) दासों का व्यापार समाप्त कर दिया जायेगा।

समालोचना :

(१) कांग्रेस के निर्णय शासकों के पक्ष में थे, न कि राष्ट्रों के पक्ष में।

(२) बेल्जियम हालैंड से मिला दिया गया था।

(३) नार्वे स्वीडन से मिला दिया गया था।

(४) [illegible] करने के अधिकारी रहे।

(५) [illegible]

(६) [illegible]

[illegible]

(२) शासकों की सूची

होली रोमन साम्राज्य

जोज़ेफ़ द्वितीय १७६५—१७९० ल्योपोल्ड द्वितीय १७९०—१७९२

फ्रांसिस द्वितीय १७९२—१८०६

आस्ट्रिया

जोज़ेफ़ द्वितीय १७८०—१७९० ल्योपोल्ड द्वितीय १७९०—१७९२

फ्रांसिस प्रथम (आर्चड्यूक) १७९२—१८०४ (Emperor) १८०४—१८३५

प्रशा

फ्रेडरिक द्वितीय १७४०—१७८६ फ्रेडरिक विलियम द्वितीय १७८६—१७९७

फ्रेडरिक विलियम तृतीय १७९७—१८४०

फ्रांस

बादशाह (बूरबन) :

सोलहवाँ लूई — १७७४—१७९२

प्रथम गण-राज्य — १७९२—१८०४

कौंसलों का शासन :

प्रथम कौंसल : नेपोलियन बोनापार्ट — १७९९—१८०४

प्रथम साम्राज्य :

नेपोलियन प्रथम — १८०४—१८१४
तथा मार्च-जून, १८१५

बादशाह (बूरबन) :

अठारहवाँ लूई — १८१४—१८२४
सिवा मार्च-जून, १८१५

दसवाँ चार्ल्स — १८२४—१८३०

ग्रेट ब्रिटेन

बादशाह :

जार्ज तृतीय — १७६०—१८२०

मुख्य प्रधान मन्त्री :

लार्ड नार्थ	१७७०–१७८२
शेलबर्न	१७८२–१७८३
छोटा पिट	१७८३–१८०१
	१८०४–१८०६
लिवरपूल	१८१२–१८२७

बेल्जियम

स्पेन का प्रभुत्व १५०४–१७१३ आस्ट्रिया का प्रभुत्व १७१३–१७९७
फ्रांस का प्रभुत्व १७९७–१८१५ हालैंड का प्रभुत्व १८१५–१८३०
बादशाह ल्योपोल्ड प्रथम १८३१–१८६५

सार्डिनिया

विक्टर एमेडीयस तृतीय १७७३–१७९६ चार्ल्स ऐमेनुअल चतुर्थ १७९६–१८०२
विक्टर ऐमेनुअल प्रथम १८०२–१८२१

दो सिसलियों का देश

फर्डिनेंड प्रथम (बूरबन वंश) १७५९–१८२५

केवल नेपिल्स

जोज़ेफ़ बोनापार्ट (बोनापार्टिस्ट) १८०६–१८०८
मूरा (बोनापार्टिस्ट) १८०८–१८१४

स्वीडन

गस्तेवस तृतीय १७७१–१७९२ गस्तेवस चतुर्थ १७९२–१८०९
तेरहवाँ चार्ल्स १८०९–१८१८

डेनमार्क

क्रिश्चियन सप्तम १७६६–१८०८ फ्रेडरिक षष्ठ १८०८–१८३९

स्पेन

चार्ल्स चतुर्थ (बूरबन) १७८८–१८०८ जोज़ेफ़ (बोनापार्टिस्ट) १८०८–१८१४
फ़र्डिनेंड सप्तम (बूरबन) १८१४–१८३३

पुर्तगाल

मेरिया प्रथम — १७७७–१८१६

नेदरलैंड्स

विलियम पञ्चम — १७५१–१७९५

(बटेवियन प्रजातन्त्र, १७९५–१८०६)

लुई बोनापार्ट — १८०६–१८०९

(फ्रांस से सम्मिलित, १८०९–१८१४)

तुर्की

अब्दुल हमीद प्रथम — १७७४–१७८९

सलीम तृतीय — १७८९–१८०७

मुस्तफ़ा चतुर्थ — १८०७–१८०८

महमूद द्वितीय — १८०८–१८३९

रूस

कैथरिन द्वितीय — १७६२–१७९६

पॉल — १७९६–१८०१

सिकन्दर प्रथम — १८०१–१८२५

पोप

पायस षष्ठ — १७७५–१८००

पायस सप्तम — १८००–१८२३

(३) वंशावली

बूर्बन वंश (फ्रांस, स्पेन तथा नेपिल्ज़ में)

तेरहवाँ लूई
फ्रांस का बादशाह (१६१०-१६४३)
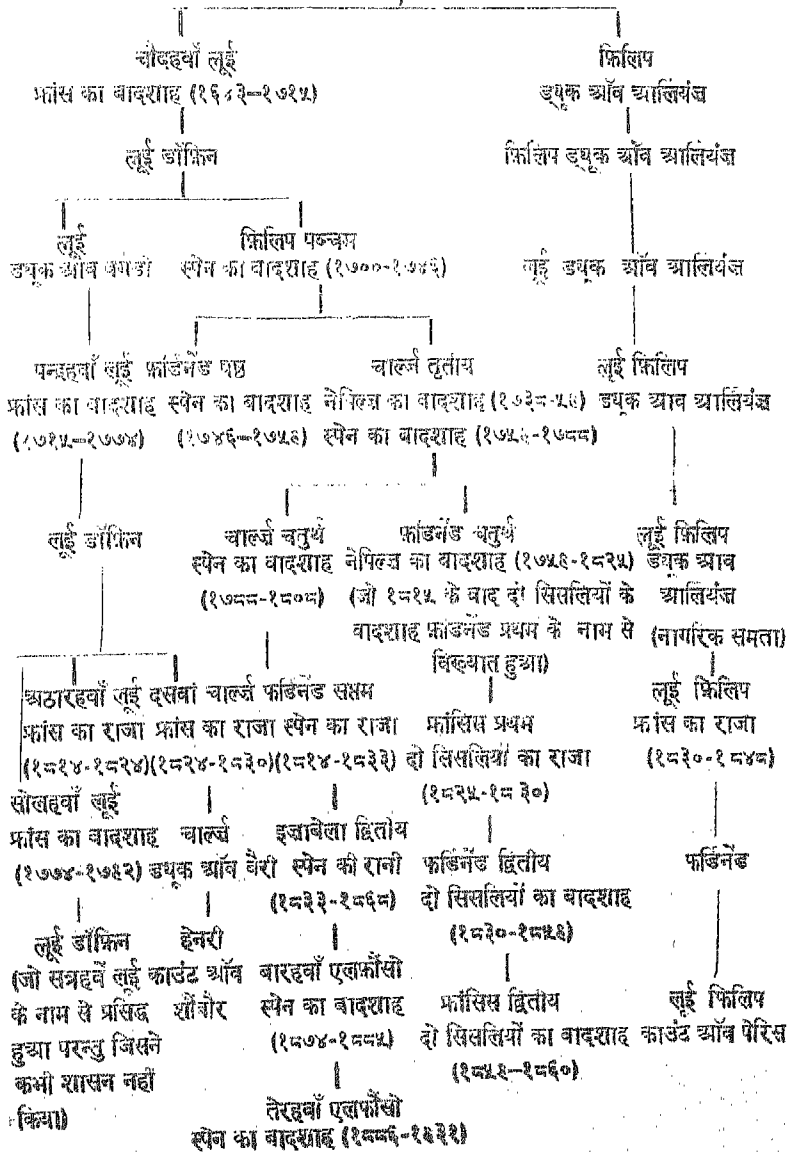
सेवाय का वंश

चार्ल्स ऐमैनुअल प्रथम
ड्यूक ऑफ सेवाय
(१५८०-१६३०)

- विक्टर ऐमेडीयस प्रथम
  ड्यूक ऑफ सेवाय (१६३०-१६३७)
  - चार्ल्स ऐमेडीयस द्वितीय
    ड्यूक ऑफ सेवाय (१६३८-१६७५)
    - विक्टर ऐमेडीयस द्वितीय
      ड्यूक ऑफ सेवाय (१६७५-१७३०)
      सार्डिनिया का बादशाह (१७२० १७३०)
      - चार्ल्स ऐमैनुअल तृतीय
        सार्डिनिया का बादशाह (१७३०-१७७३)
        - विक्टर ऐमेडीयस तृतीय
          सार्डिनिया का बादशाह (१७७३-१७९६)
          - चार्ल्स ऐमैनुअल चतुर्थ
            सार्डिनिया का बादशाह
            (१७९६-१८०२)
          - विक्टर ऐमैनुअल प्रथम
            सार्डिनिया का बादशाह
            (१८०२-१८२१)
          - चार्ल्स फेलिक्स
            सार्डिनिया का बादशाह
            (१८२१-१८३१)
- अन्य सन्तान
  - चार्ल्स ऐल्बर्ट
    सार्डिनिया का बादशाह
    (१८३१-१८४९)
    - विक्टर ऐमैनुअल द्वितीय
      सार्डिनिया का बादशाह
      (१८४९-१८६१)
      इटैली का बादशाह
      (१८६१-१८७८)
      - हम्बर्ट प्रथम
        इटैली का बादशाह
        (१८७८-१९००)
        - विक्टर ऐमैनुअल तृतीय
          इटैली का बादशाह
          (१९००-१९४६)
          - हम्बर्ट द्वितीय
            इटैली का बादशाह
            (१९४६)

रोमानौफ वंश

कैथरिन द्वितीय
(१७६२–१७९६)

पॉल
१७९६–१८०१
(वध कर दिया गया)

सिकन्दर प्रथम (१८०१-१८२५)

निकोलस प्रथम (१८२५-१८५५)

सिकन्दर द्वितीय
१८५५-१८८१

कौंस्टैंटाइन
पोलैंड का राजपाल

अन्य संतान

सिकन्दर तृतीय
१८८१-१८९४

अन्य सन्तान

ओल्गा=जार्ज
(यूनान का बादशाह)
१८६३-१९१३

निकोलस द्वितीय
१८९४-१९१७
(अपनी स्त्री तथा बालकों सहित वध कर दिया गया)
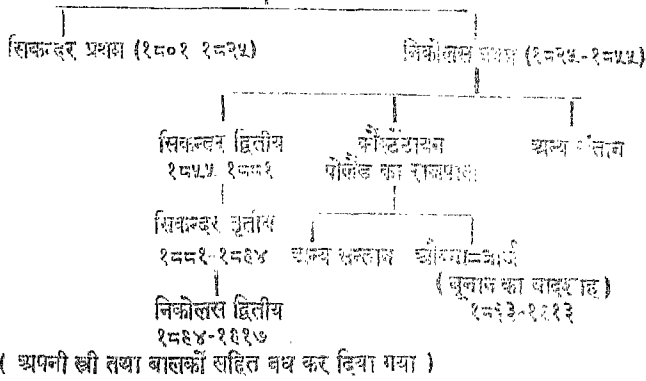
होहेनज़ोलर्न वंश

फ्रैडरिक विलियम प्रथम
प्रशा का बादशाह (१७१३-१७४०)

फ्रैडरिक द्वितीय (महान्)
प्रशा का बादशाह
(१७४०-१७८६)

आगस्टस

फ्रैडरिक विलियम द्वितीय
प्रशा का बादशाह (१७८६-१७९७)

फ्रैडरिक विलियम तृतीय
प्रशा का बादशाह (१७९७-१८४०)

फ्रैडरिक विलियम चतुर्थ
(१८४०-१८६१)

विलियम प्रथम
प्रशा का बादशाह (१८६१-१८८८)
जर्मनी का सम्राट (१८७१-१८८८)

फ्रैडरिक तृतीय
जर्मनी का सम्राट (१८८८)

विलियम द्वितीय
जर्मनी का सम्राट (१८८८-१९१८)

बोनापार्ट वंश

कार्लो मेरिया बोनापार्ट=लेटीजिया रेमोलिनो

- जोजेफ — नेपिल्ज़ का बादशाह १८०६-१८०८, स्पेन का बादशाह १८०८-१८१४
- नैपोलियन=(१) जोजेफायन=आलेक्सौंद्र दि बोआर्नें; (२) मेरी लूईज़ आॅव आस्ट्रिया — फ्रांस का सम्राट १८०४-१८१५
  - (मेरी लूईज़ से) नैपोलियन द्वितीय — रोम का बादशाह रीचसटाट १८—-१८३२
  - (जोजेफायन व आलेक्सौंद्र दि बोआर्नें से) यूजीन — डयूक आव लूचनटबर्ग, १८२४
  - (जोजेफायन व आलेक्सौंद्र दि बोआर्नें से) ओर्तौंस
- लूसीन — सन्तान
- ऐलिस
- लूई=ओर्तौंस — हालैंड का बादशाह १८०६-१०
  - लूई नैपोलियन — नैपोलियन तृतीय, फ्रांसीसियों का सम्राट १८५२-१८७०
    - नैपोलियन यूजीन लूई — मृत्यु १८७९
- पॉलिन=(१) जनरल लेकरेक, (२) प्रिंस बोर्गीज़
- करोलीन=मूरा — नेपिल्ज़ का बादशाह १८०८-१८१५ — सन्तान
- जैरोम=(१) एलिज़बेथ (२) बूर्टम्बर्ग की राजकुमारी — वेस्ट-फेलिया का बादशाह — सन्तान

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०	२६	हैहैनज़ोलिरन	होगेनज़ोलर्न
४०	२१	अक्टूबर सन् १७६५ ई०	जून सन् १७६३ ई०
६१	२६	शारलोत कोर्डे	शारलोत कोर्दे
६५	२४	सर	सिर
६०	२३	स्वीकृति	स्वीकृत
१३२	७	संघानीय	गणतन्त्रवादी
१६१	१६	प्रतिनिधि	सदस्य
१६१	१५	कम्यूम	कम्यून
२२६	७	वलिदान	बलिदान
२५२	१४	किन्तु	तत्पश्चात्
	१३	जा रहा	जा रहे
	३	मिस्रवासियों	सियों
	३१	मे	
३३५	३	संधि	संघ